८९७

प्रकाशक
मन्त्री, अखिल भारत सर्व सेवा संघ
राजघाट, काशी

•

पहली बार : [illegible]
प्रतियाँ : [illegible]
मूल्य : तीन रुपया

•

मुद्रक :
पं. पृथ्वीनाथ भार्गव
भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, वाराणसी

प्रकाशकीय

यह बड़े हर्ष का विषय है कि सर्व-सेवा-संघ की ओर से महादेवभाई की डायरियाँ हिन्दी में प्रकाशित होने जा रही हैं। महादेवभाई और गांधीजी का सम्बन्ध भारत में कौन नहीं जानता? दोनों नाम राष्ट्रीय इतिहास में अमिट रहेंगे। सन् १९१७ में जब महादेवभाई गांधीजी के पास आये, तब से उन्होंने नियमित रूप से अपनी डायरी लिखी और सन् १९४२ में आगा खाँ महल में वे जब गांधीजी की गोद में सर रखकर गये, तब तक उनका डायरी लिखने का सिलसिला बराबर जारी रहा।

महादेवभाई और गांधीजी का सम्बन्ध दो अभिन्न हृदयों का सम्बन्ध था। महादेवभाई की डायरी का मतलब है, गांधीजी की डायरी। महादेवभाई की इन डायरियों में आपको गांधीजी की राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय नेताओं से मुलाकात मिलेगी। गांधीजी ने बीमारी में, सन्निपात में कुछ कहा होगा, तो उसका उल्लेख भी इसमें मिलेगा। गांधीजी के ऐतिहासिक और जगप्रसिद्ध व्याख्यान इन डायरियों में हैं। अगर राह चलते गांधीजी ने किसी बच्चे के साथ थोड़ा विनोद किया है, तो वह भी इस डायरी में प्रतिबिम्बित हुआ है। इतिहास में इस प्रकार के डायरी-लेखन का नमूना सिर्फ एक ही मिलता है और वह है अंग्रेज विद्वान् बोसवेल का, जिन्होंने डॉ॰ जॉनसन के जीवन के बारे में लिखा है। लेकिन जॉनसन के लेख और महादेवभाई की डायरियों में उतना ही अन्तर है, जितना डॉ॰ जॉनसन के जीवन और गांधीजी के जीवन में। अपने अनेक कामों के बीच जब कभी थोड़ी-सी फुरसत मिली है, महादेवभाई ने गांधीजी के वचनों के उपरान्त अन्य सामग्री से अपनी डायरियों को समृद्ध किया है। महादेवभाई के समान विशाल अध्ययन करनेवाले लोग हमारे देश में कम

ही मिलगे। समय-समय पर महादेवभाई ने अपनी डायरियों में अपने व्यापक पठन के सम्बन्ध में कुछ आलोचना भी लिखी है। कभी किसी नये स्थान पर गये तो उस स्थान का वर्णन भी किया है। कभी किसी नये व्यक्ति से मिले तो उसका थोड़ा परिचय-चित्रण भी किया है और इन छोटे-छोटे परिच्छेदों में महादेवभाई की उच्च कोटि की साहित्यिक प्रतिभा प्रकट हुई है।

सन् १९१७ से १९४२ तक की डायरी यानी भारत के अहिंसक राष्ट्रीय आन्दोलन का एक जीता-जागता दिलचस्प इतिहास। गांधीजी के विचारों के अभ्यन्तरतल में प्रवेश करते हुए तथा उनसे मिलनेवाले तथा पत्र-व्यवहार करनेवाले हजारों लोगों का सहजस्फूर्त वर्णन कर महादेवभाई ने उस समय के राष्ट्र-मानस का जो चित्र खींचा वह अपने में ही एक विशेषता है।

कुल मिलाकर महादेवभाई की डायरी के प्रकाशन से न सिर्फ भारत के, किन्तु जगत् के साहित्य को लाभ होगा।

यह दुर्भाग्य का विषय रहा कि स्व. महादेवभाई अपनी डायरियों को स्वयं सम्पादित न कर सके। एक कर्मयोगी की तरह वे काम करते हुए हमारे बीच से उठ गये। अपने मित्र के अधूरे काम को पूरा करने की जिम्मेवारी स्व. नरहरिभाई परीख ने मित्र-धर्म के पालन की दृष्टि से उठायी। अपनी प्राणघातक बीमारी से जूझते हुए भी उन्होंने औसत ५ पृष्ठों की सात डायरियों का सम्पादन पूरा किया। यह काम अपने में ही बहुत बड़ा काम था। लेकिन अभी तो वैसे ही लगभग १५ और खण्डों का सम्पादन बाकी है।

महादेवभाई के सुपुत्र श्री नारायणभाई देसाई ने डायरियों का हिन्दी संस्करण प्रकाशित करने का अधिकार सर्व-सेवा-संघ को निःशुल्क दिया, यह उनका सौजन्य है। संघ उनकी इस कृपा के लिए आभारी है। भविष्य में ये सारे खण्ड प्रकाशित करने का काम संघ ने अपने हाथ में लिया है। सम्पादन व प्रकाशन के इस भगीरथ-काम में समय लगेगा। किन्तु आशा है कि उदार पाठक इस विलम्ब के लिए क्षमा करेंगे।

डायरी का यह प्रथम खण्ड सन् १९१७ से १९१९ तक, तीन वर्षों का है। डायरी का प्रारम्भ सन् १९१७ से ही होता है। नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद से गुजराती में पाँच खण्ड और हिन्दी में तीन खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। नवजीवन द्वारा प्रकाशित हिन्दी के तीनों खण्ड सन् १९३२ और १९३३ के हैं। ये खण्ड भी क्रमानुसार प्रकाशित होंगे। नवजीवन प्रकाशन ने गुजराती के चौथे और पाँचवें खण्डों का हिन्दी अनुवाद हमें भेज दिया और इस कारण सर्व-सेवा-संघ अत्यधिक विलम्ब से बच सका, इसके लिए संघ नवजीवन ट्रस्ट का आभारी है।

हर खण्ड लगभग ५ पृष्ठों का होगा। दूसरा खण्ड भी प्रेस में जा रहा है।

आशा है, इस महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक डायरी का देशव्यापी स्वागत होगा।

वीर जयन्ती
२ १ ६१

राधाकृष्ण बजाज

अनुक्रम

श्री महादेवभाई देसाई

जन्म
१ जनवरी १८९२

अवसान
१५ अगस्त १९४२

प्रस्तावना

नवम्बर १९१७ में महादेवभाई बापू के साथ हुए। मालूम होता है, तभी से उनका डायरी रखने का विचार था। शुरू शुरू में वे बापू के लिखे महत्त्वपूर्ण पत्रों की नकल अपनी डायरी में कर लेते। बाद में बापू के उद्‌गारों, उनके साथ समय-समय पर होनेवाली बातचीतों और महत्त्वपूर्ण घटनाओं को भी अपनी डायरी में लिखने लगे। यह डायरी १३ नवम्बर १९१७ से ११ दिसंबर १९१९ तक के समय की है। इसमें बहुत-से दिन ऐसे आते हैं, जिनकी डायरी नहीं लिखी गयी। १ सितम्बर १९१९ के बाद ९ जनवरी १९२० की डायरी लिखी गयी है। स्वाभाविक ही यह उतनी विस्तारपूर्वक नहीं लिखी गयी है जितनी यरवडा जेल की डायरी जिसके तीनों भाग प्रकाशित हो चुके हैं। साथ ही यह भी ध्यान रखने की बात है कि यह महादेवभाई के प्रयत्न का आरम्भ है। फिर भी इस डायरी में जो बहुसंख्यक पत्र हमें मिलते हैं, उनसे इस बात का अत्यन्त स्पष्ट दर्शन हो जाता है कि देश में आकर काम शुरू करते समय गांधीजी के सामने कैसे-कैसे प्रश्न आये, जीवन के लिए बनाये हुए अपने दर्शन की दृष्टि से उन्होंने इन प्रश्नों को किस ढंग से देखा और किस तरह हल करने का प्रयत्न किया। इस प्रकार विद्यार्थी को इसमें बड़ी रोचक और मूल्यवान् सामग्री मिलती है और साधारण पाठक को भी बहुत कुछ जानने-सोचने को मिलता है।

जब चम्पारन की लड़ाई और उसकी जाँच का काम पूरा हो चुका था, कमेटी की सिफारिशों के अनुसार बनाये गये कानून को अंतिम रूप देना ही बाकी था और वहाँ के किसानों में पैदा हुई जागृति को कायम रखने और उसकी ताकत बढ़ाने का प्रयत्न करने के लिए बापूजी ने वहाँ रचनात्मक काम शुरू कर दिया था, उसी समय से यह डायरी शुरू होती है।

डायरी में कुछ ही पत्र ऐसे हैं जिनसे चम्पारन के काम की कल्पना हो सकती है। जिज्ञासुओं को इसकी विस्तृत जानकारी के लिए श्री राजेन्द्र बाबू की 'चम्पारन का सत्याग्रह' नामक पुस्तक पढ़नी चाहिए।

चम्पारन का काम पूरा भी नहीं हुआ था, गांधीजी का अभी वहाँ रहना जरूरी ही था—यद्यपि ऐसी स्थिति आ गयी थी कि वे बीच-बीच में बाहर हो आयें तो वहाँ के कार्यकर्ता काम चला सकें—कि इतने में गुजरात में दो बड़े काम गांधीजी के सामने आ पड़े: १ फसल मारी जाने के कारण खेड़ा जिले की लगान स्थगित कराने की लड़ाई और २ अहमदाबाद में महँगाई के कारण मिल-मजदूरों की अपनी मजदूरी बढ़वाने की लड़ाई। दोनों लड़ाइयों के प्रमाणित इतिहासों की पुस्तकें—श्री शंकरलाल परीख कृत 'खेड़ा की लड़ाई' और महादेवभाई कृत एक धर्मयुद्ध—हमारे पास हैं। इस डायरी में उनसे संबंध रखनेवाले बापू के कुछ पत्र हैं, जिनसे उन पर नया प्रकाश पड़ता है, और यह मालूम होता है कि बापूजी का अन्तर किस ढंग से काम कर रहा था।

मिल-मजदूरों की लड़ाई के बारे में अहमदाबाद के कलेक्टर ने बापू के सामने अपने हृदय के उद्‌गार प्रकट किये थे कि 'मिल-मालिकों और मजदूरों के बीच इतने स्नेह से हुई लड़ाई मैं अपने जीवन में पहले-पहल यहीं देख रहा हूँ।" बापू कहते हैं: 'मुझे भी ऐसा लगता है कि दोनों पक्षों के बीच इतना अच्छा संबंध कभी नहीं देखा। (पृष्ठ ७२)। यह चीज बापू द्वारा मिल-मालिकों को खास तौर पर श्री अम्बालालभाई को लिखे पत्रों से बहुत साफ दिखाई देती है (देखिये पृष्ठ २१ तथा ७६)। इस उपवास के सिलसिले में बापू के किये उपवास का रहस्य भी इस डायरी से विशेष समझ में आता है। एक पत्र में वे लिखते हैं: 'अहमदाबाद की उपवास में मुझे जीवन के कीमती-से-कीमती सबक मिले। उपवास के दिनों में प्रेम की शक्ति का जैसा चमत्कारिक प्रदर्शन हुआ वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। × × × वे चार दिन मेरे लिए शांति के, धन्यता के और आध्यात्मिक उन्नति के थे। इन दिनों जाने की मुझे जरा भी इच्छा नहीं हुई। (पृष्ठ

१ २)। एक और पत्र में वे लिखते हैं : 'इस उपवास को मैं अब तक का अपना सबसे बड़ा कार्य मानता हूँ। इस उपवास के समय मुझे जो शान्ति मिली, वह अलौकिक थी (पृष्ठ ११८)। इस उपवास की आवश्यकता और दूसरी तरफ उसमें रहा दोष आश्रम की सुबह की प्रार्थना में उन्होंने सुन्दर ढंग से समझाया है। इसके लिए तो डायरी के पृष्ठ ८५ से पृष्ठ ९२ (१७ और १८ मार्च '१८ की पूरी डायरी) पढ़ने चाहिए। श्री रेवदासभाई को एक पत्र में वे लिखते हैं : 'मैंने ३५ फीसदी एक दिन से अधिक के लिए नहीं लिया, इसका रहस्य समझना आसान है। मैं अधिक खींच ही नहीं सकता था। मालिकों ने मजदूरों की मजबूती के कारण नहीं दिया, बल्कि मेरे उपवास के कारण दिया, यह वे अभी तक मानते हैं। अगर मैं अधिक माँगता, तो वह मेरा अत्याचार होता। जब मैं अधिक माँग सकने की स्थिति में था, तब मैंने कम-से-कम लिया, यह मेरी सरलता, मेरी नम्रता और मेरी विवेक-बुद्धि को सूचित करता है। उपवास न किया होता, तो मजदूर हार ही जाते। उपवास से ही वे टिके रहे। ऐसी टेक के लिए कम-से-कम माँग ही उचित मानी जा सकती है। ऐसी टेक के अक्षरार्थ का पालन हो सकता है। यह हुआ और मेरे उपवास में जो दोष थे, वे मेरी कम-से-कम माँग के कारण हलके हो गये—बहुत हलके हो गये। ×××'

खेड़ा-जिला सत्याग्रह के मामले में भारत-सेवक-समाज के सदस्य श्री देवधर (पृष्ठ ९८) तथा श्री जोशी (पृष्ठ १ ४) को लिखे और इसी तरह नरम विचार के श्री नटराजन् तथा श्री व क ठाकोर (पृष्ठ ११६ ११७) को लिखे पत्र खास तौर पर पढ़ने योग्य हैं। श्री देवधर से बापू कहते हैं : 'आप यह क्यों समझ लेते हैं कि जितना अधिकारी दें उतना ही हम ले सकते हैं? यह क्यों नहीं मानते कि जितना पाने के हम अधिकारी हैं, उतना हमें मिलना ही चाहिए? श्री नटराजन् और श्री व क ठाकोर दोनों को किसानों को लगान न चुकाने की सलाह देना समझदारी की बात मालूम नहीं होती थी। श्री नटराजन् यह कहते थे कि स्थानीय सरकार न माने, तो वाइसरॉय के पास जायें, सारे हिन्दुस्तान का लोकमत

चामत कीजिये, ब्रिटिश लोकमत से अपील कीजिये। इस बोझ गरीब किसानों को राहत देने के लिए और भूखों न मरने देने के लिए हम चन्दा करें। परन्तु ऐसा उग्र उपाय काम में नहीं लेना चाहिए। उन्हें सत्याग्रह शब्द से न भड़ककर खुद खेड़ा ज़िले में आकर जाँच करने और किसान कितनी प्रामाणिकता से लड़ाई लड़ रहे हैं, यह प्रत्यक्ष देखने का निमन्त्रण दिया और श्री ठक्कर को सत्याग्रह का अर्थ और उसकी आवश्यकता का प्रतिपादन करनेवाला पत्र लिखा। जब यह लड़ाई हो रही थी, उस अरसे में कमिश्नर मि॰ प्रेट को बहुत-से पत्र लिखने पड़े थे। परन्तु खेड़ा के प्रश्न को अलग रखकर सरकारी अफसरों की गलत कार्य-पद्धति को सुधारने और जनता को भी उलटे रास्ते जाने से रोकने का उपाय सत्याग्रह ही है, यह बतानेवाला एक सुन्दर पत्र लिखा है (पृष्ठ ७३-७५)। यह खास तौर पर पढ़ने योग्य है। इस डायरी में हमें यह देखने को मिलता है कि बापूजी का सत्याग्रह का प्रयोग नया होने के कारण वे लोगों को लोक-नेताओं को और सरकारी अफसरों को उसे समझाने का एक भी अवसर हाथ से नहीं जाने देते थे।

यह समय पहले महायुद्ध (१९१४-१९१८) का था। जिस समय खेड़ा की लड़ाई हो रही थी उसी समय वाइसराय ने युद्ध-परिषद् की और उसमें बापू को निमन्त्रण दिया। बापूजी दिल्ली हो गये परन्तु तिलक महाराज और मिसेज बेसेंट को उसमें नहीं बुलाया गया था। साथ ही सरकार ने अली-भाइयों को नजरबन्द कर रखा था। जनता के सबसे अधिक विश्वस्त और महासमर्थ नेताओं के बिना युद्ध-परिषद् का उद्देश्य सफल नहीं हो सकता, इस कारण और ब्रिटिश-सरकार ने तुर्कों को दिये खुले वचनों का भंग करके कुछ देशों के साथ छिपे तौर पर कौल-करार किये थे इस नैतिक कारण से भी बापूजी परिषद् में भाग लेना नहीं चाहते थे। इस बारे में उन्होंने चीफ सेक्रेटरी सर क्लॉड हिल के मार्फत वाइसराय को पत्र लिखा (देखिये पृष्ठ १२९-१२)। बाद में वाइसराय के साथ उनकी मुलाकात हुई। इस मुलाकात के

ग्रन्थ में बापूजी के शब्दों में 'उनकी व्यावहारिक बुद्धि ने उनकी न्याय वृत्ति पर विजय प्राप्त की।' और उन्होंने युद्ध-परिषद् में केवल भाग ही नहीं लिया बल्कि फौजी भरती के काम में पूरी मदद देना भी मंजूर किया। फौजी भरती के काम में बिना शर्त सहायता देना तो मंजूर किया परन्तु उन्होंने वाइसराय को यह बताते हुए एक पत्र परिषद् के अन्त में लिखा कि हिन्दुस्तान की परिस्थिति कैसी है और हिन्दुस्तान की आकांक्षाएँ क्या हैं? (देखिये, पृष्ठ १४-४५)। बापूजी के शब्दों में इस पत्र में 'धर्म, सत्याग्रह का रहस्य और सारे आदर्श दे दिये गये हैं।' वाइसराय के नाम का यह पत्र और सैनिक भरती के सिलसिले में हुई चर्चा इस डायरी का सबसे महत्व का भाग माना जायगा। आप अहिंसाधर्मी होकर सैनिक भरती का काम कैसे कर सकते हैं? इस प्रश्न की चर्चा उसी समय नहीं, परन्तु उसके बाद भी होती रही है। बापू के विचार उत्तम ढंग से मि एस्थर को लिखे एक पत्र में व्यक्त हुए हैं (देखिये, पृष्ठ २१६-२१२)। उसमें से और उनके अन्य पत्रों में से सैनिक-भरती में भाग लेने के कारण बताने वाले थोड़े से उद्धरण नीचे दिये जाते हैं:

"जो जाति लड़ने के लिए अयोग्य है, वह न लड़ने के गुणों के बारे में अपने अनुभव का प्रमाण नहीं दे सकती। इससे मैं यह अनुमान नहीं लगाना चाहता कि हिन्दुस्तान को लड़ना ही चाहिए। मगर मैं इतना जरूर कहना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान को लड़ने की कला आनी चाहिए।'

"अहिंसाधर्म का पालन करनेवाला अपने जैसा मैंने हिन्दुस्तान में कोई देखा ही नहीं। मैं तो प्रेम से भरा हुआ हूँ। पैसे अमीरों के पास मेरे जितने किसीने नहीं देखे, पैसे ही उनके पुरुष भी मेरे जितने किसीने नहीं जाने।"

"जिसे शस्त्र-कला सीखनी है, जिसे मारना जानना है, उसे मैं हिंसा करना भी सिखाऊँगा। इस समय मैं कुछ न कर सकूँ, तो

आपको यह समझना चाहिए कि मेरी तपश्चर्या थोड़ी है। जिसे मारे बिना मरना न आवे उसे मारकर मरना सिखना चाहिए।"

"मैंने अपना नाम सैनिक भरती के काम में दिया, उसी समय पता किया था कि मैं दोस्त या दुश्मन किसीको नहीं मारूँगा। लेकिन जिन लोगों को लड़ने में आपत्ति न हो, किन्तु कायरता या धर्मों के प्रति द्वेष के कारण जो लड़ने को तैयार न हों, उनके प्रति मेरा क्या कर्तव्य है? क्या उन्हें मुझे यह नहीं कहना चाहिए, आप मेरा मार्ग न अपनाते हों तो आपको अपनी कायरता या द्वेष जो कुछ हो उसे छोड़ देना चाहिए और लड़ना चाहिए? जो आदमी मारने की शक्ति नहीं रखता उसे आप अहिंसा नहीं सिखा सकते?"

"हिंसक मनुष्यों को अपनी हिंसा कम-से-कम हानिकारक ढंग से करना सिखाकर उसके सिखाने की क्रिया में ही अहिंसा के सद्गुण समझाने मे शायद मैं सफल हो जाऊँ। शायद इसी तरह मैं अहिंसा के सिद्धान्त का अधिक अच्छी तरह प्रचार कर सकूँ।

"अहिंसा का अर्थ है, मारने या हानि पहुँचाने की इच्छा को मिटा देना। अहिंसा ऐसे ही मनुष्यों के प्रति बरती जा सकती है, जो हमसे सब तरह घटिया हों। इसका अर्थ यह हुआ कि पूर्ण अहिंसा धर्मी को अन्तिम पूर्णता प्राप्त करनी चाहिए। तो क्या इसका अर्थ यह हुआ कि हम उसको पूरे प्रेमधर्मी बनने से पहले वैसी बनने का प्रयत्न करना चाहिए? नहीं। यह अनावश्यक है। इतना काफी है कि हम दुनिया के सामने अडग खड़े रह सकें। इस प्रकार की हिम्मत हममें होना बिलकुल जरूरी है। कुछ लोगों में यह हिम्मत तभी आ सकती है, जब पहले वे लड़ने की तालीम हासिल कर लें।"

"हमारी जनता को जबरन निःशस्त्र कर दिया गया है। परन्तु उसके दिल से मारने की इच्छा जरा भी नहीं गयी। × × ×

हिन्दुस्तान के लिए अधिक-से अधिक यही कहा जा सकता है कि यहाँ कुछ व्यक्तियों ने दूसरे देशों से अहिंसा के सिद्धान्त को लोकप्रिय बनाने के अधिक बड़े प्रयत्न अधिक सफलता के साथ किये हैं। परन्तु इस पर से यह राय बनाने का कारण नहीं है कि लोगों में अहिंसा के सिद्धान्त की जड़ें गहरी जम गयी हैं।"

"अहिंसा का पाठ तो उस मनुष्य को सिखाना है, जिसका जीवन जोश से उमड़ रहा हो और जो अपने विरोधी के सामने छाती खोलकर सीधा खड़ा रह सकता हो। मेरे खयाल से अहिंसा को पूरी तरह से समझने के लिए और अच्छी तरह पचाने के लिए शारीरिक साहस का विकास होना अनिवार्य है।"

"किसी भी मनुष्य के मन में अहिंसा यानी पूर्ण प्रेम का सिद्धान्त बैठाने के लिए प्राणवान् शरीर द्वारा उसके मन के अच्छी तरह परिपक्व होने तक मुझे प्रतीक्षा करनी होगी।"

इतना कहने के बाद वे अपने सामने उपस्थित होनेवाली कठिनाइयाँ पेश करते हैं :

"इस विचार को व्यवहार में किस तरह परिणत किया जाय ? प्राणवान् शरीर होने का मतलब क्या ? हिन्दुस्तानियों को शस्त्र धारण करने की तालीम में किस हद तक जाना पड़ेगा ? क्या हर एक व्यक्ति को इस तालीम में पास होना पड़ेगा ? या इतना काफी है कि स्वतंत्रता का वातावरण उत्पन्न हो जाय और लोगों में हथियार उठाये बिना भी अपने आसपास के वातावरण से ही आवश्यक साहस आ जाय ? मैं मानता हूँ कि दूसरा विचार सही है।"

फिर यह समझाते हैं कि अपने सिद्धान्त की पुष्टि के लिए युद्ध का भी वे किस तरह उपयोग कर लेना चाहते थे।

"जब मैं हरएक हिन्दुस्तानी से सेना में भरती होने के लिए कहता हूँ, तब साथ-साथ उसे यह भी कहता रहता हूँ कि जो सेना

में भरती होते हैं, वे खून की प्यास बुझाने को नहीं, बल्कि मौत का डर न रखना सीखने को भरती होते हैं। × × × सैनिक भरती के अपने हरएक भाषण में सैनिक के कर्तव्यवाले भाग पर मैंने सबसे अधिक ज़ोर दिया है। मेरा एक भी भाषण ऐसा नहीं हुआ, जिसमें मैंने कहा हो कि 'तुम जर्मनों को मारने के लिए जायें।' मेरे सभी भाषणों की ध्वनि यह है कि 'हम भारत और साम्राज्य की खातिर लड़ाई में जायें और मरें। मेरी माँग के जवाब में खूब अधिक भरती हो जाय और हम सब भारत में जाकर लड़ाई का पलड़ा जर्मनी के विरुद्ध बदल सकें तो मेरा ख्याल है कि भारत को हमारी बात की सुनवाई कराने का अधिकार प्राप्त हो जायगा और वह स्थायी सुधार करा सकेगा। अब आगे कल्पना कीजिये कि निर्भय मनुष्यों की सेना खड़ी करने में मैं सफल हो जाऊँ और ये लोग खाइयों में पहुँच जायें और प्रेमपूर्ण हृदयों से अपनी बन्दूकें पटककर जर्मनों को चुनौती दें कि अपने मानव-बन्धुओं पर आप गोली चलायें तो मैं कहता हूँ कि जर्मन-हृदय भी पिघल जायगा। मैं जर्मनों पर यह आरोप लगाने से इनकार करता हूँ कि वे केवल राक्षसी वृत्तिवाले ही हैं।"

'इस प्रकार इन सब बातों का अर्थ यह हुआ कि अपवाद स्वरूप परिस्थिति में एक आवश्यक बुराई के तौर पर युद्ध का आश्रय लेना पड़ सकता है, जैसे हम अपने शरीर का आश्रय लेते हैं। अगर रह युद्ध हो तो युद्ध को भी मानव जाति की भलाई में बदला जा सकता है। परन्तु अहिंसावादी युद्ध के प्रति तटस्थता से देखता हुआ खड़ा नहीं रह सकता। उसे अपना चुनाव कर ही लेना चाहिए। या तो वह युद्ध में सक्रिय सहयोग दे या युद्ध का सक्रिय विरोध करे।"

ऊपर के उद्धरण मुझे युद्ध और सैनिक-भरती के बारे में इस डायरी में प्रकट किये गये बापू के विचारों का सार मालूम होते हैं। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि इनमें या डायरी के इस विषय के सभी

पत्रों में बापूजी अपने मनोभाव प्रकट कर ही सके हैं। ऊपर के विचारों में बापू इतना कहते हैं कि 'अपवादस्वरूप परिस्थिति में एक अनिवार्य बुराई के रूप में युद्ध का आश्रय लेना पड़ता है।' उन्हीं पत्रों के शब्दों को लेकर कोई यह परिणाम निकालने की कोशिश करे तो शायद निकाल सकता है कि 'युद्ध अनिवार्य है और उससे समाज का भला भी हो सकता है।' परन्तु बापू ने जो खुद ही कहा है, उसे ध्यान में रखना है कि 'मैं नये अनुभवों में से गुजर रहा हूँ। मैं अपने आन्तरिक विचारों को व्यक्त करने की बड़ी कोशिश कर रहा हूँ। कुछ चीजें अभी तक मुझे साफ दिखाई नहीं देती हैं। जो चीजें मेरे मन में साफ हो गयी हैं, उन्हें दूसरों से कहने के लिए मैं शब्द ढूँढ़ रहा हूँ। प्रकाश और मार्ग-दर्शन के लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। एक दूसरी बात यह भी ध्यान में रखनी चाहिए कि *उस समय बापू सहयोगी थे, ब्रिटिश-साम्राज्य पर उनका* विश्वास था। वे स्वयं ही कहते हैं: 'मैं इंग्लैंड से चिपटा हुआ हूँ। इसका कारण इतना ही है कि मैं मानता हूँ कि वह दरअसल में बुरा नहीं है। साथ ही मैं यह भी मानता हूँ कि हिन्दुस्तान दुनिया को अपना संदेश इंग्लैंड द्वारा अधिक अच्छी तरह दे सकेगा। दूसरी तरफ, हिन्दुस्तान को निःशस्त्र करने का इंग्लैंड का कृत्य उसकी घमंडी और हमें भाग न लेने देनेवाली सैनिक-नीति और हिन्दुस्तान के धन और कला का अमीरों के व्यापारिक लोभ की वेदी पर किया गया बलिदान, इन सब बातों को मैं इतना धिक्कारता हूँ कि मुझमें उपर्युक्त श्रद्धा न होती तो मैं कभी का विद्रोही बन गया होता।' और विद्रोही बन जाने के बाद *इंग्लैंड के प्रति वह सद्भाव तो बना ही रहा,* जिससे सन् १९३९ में दूसरा विश्वयुद्ध छिड़ जाने पर वे इंग्लैंड को समस्त नैतिक सहायता देने को तैयार हो गये थे।

बच्चों को अहिंसा की शिक्षा किस ढंग से दी जाय, यह प्रश्न किशोरलालभाई को लिखे पत्र में उठाकर वे कहते हैं: "अहिंसा के इस नये दीखनेवाले स्वरूप से मैं तो कई प्रकार के प्रश्नों के जाल में

फँस गया है। सभी गुत्थियों की एक ही गुरु-कुंजी (मास्टर की) नहीं मिली। वह मिलनी ही चाहिए।'

साधारण मनुष्य के लिए यह कहा जा सकता है कि वह सार्वजनिक रूप में कुछ बोलकर या लिखकर अपने जो विचार प्रकट करता है, उससे दरअसल वह छोटा होता है। क्योंकि वह अपने विचार इस तरह बाद वाली से प्रकट करता है, जिससे उसका उद्देश्य या उसका अच्छा पहलू उपस्थित हो। किन्तु ऐसे विरले ही महानुभाव होते हैं, जो अपने बोलने और लिखने से कहीं अधिक महान् होते हैं। उनके अन्तर के गहरे भाव प्रकट करने में भाषा असमर्थ सिद्ध होती है। बापूजी के बारे में यह कहा जा सकता है कि उनके जो भाषण और लेख हमारे पास हैं, उनकी अपेक्षा वे बहुत बड़े थे। उनके भाषणों और लेखों से हमें उनके व्यक्तित्व उनके विचारों और भावनाओं का पूरा दर्शन नहीं हो सकता। हिन्दुस्तान के लोगों को अहिंसा की शक्ति समझाने के लिए और अहिंसा-परायण बनाने के लिए ही उन्होंने सेना में भरती होने की सलाह दी। इसके लिए वे अपने कारण ठीक तरह से शब्दबद्ध न भी कर सके हों, परन्तु इससे उनकी अहिंसा की उपासना को आँच नहीं आती। उन्होंने अपने जीवन द्वारा निर्भयता प्रेम आत्मौपम्य, ईश्वरशरण जैसे जिन महान् गुणों का पाठ संसार को पढ़ाया है, उनके द्वारा हमें उनकी अहिंसा का दर्शन करना है।

जिस समय सैनिक-भरती का काम हो रहा था, उस समय देश के सामने राजनैतिक सुधारों की 'माण्ट-फोर्ड योजना' आयी। उसी वक्त यह कोशिश हो रही थी कि संभव हो तो देश के सभी राजनैतिक दल एक होकर इस विषय में अपनी माँग पेश करें। इसके लिए अगस्त में बम्बई में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ। उससे पहले सब दलों की एक परिषद् हुई जिसमें भाग लेने का नरम-दल और गरम-दल दोनों की तरफ से बापूजी से बहुत आग्रह किया गया। परन्तु चूँकि बापू को निश्चास

हो गया था कि वे अपने विचार किसी भी दल से स्वीकार नहीं करा सकते, इसलिए फौजी-भरती का काम छोड़कर इतने दिन नष्ट करना उन्हें ठीक न लगा। वे नरम-दल या गरम-दल किसीके भी सम्मेलन में नहीं गये। वे कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में भी उपस्थित नहीं हुए। उन्होंने नरम-दल के नेता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को (पृष्ठ २५८–९), श्री समय को (पृष्ठ २७१-७४) तथा श्री चक्रवर्ती को (पृष्ठ २७४-७५) और इसी तरह गरम-दल के नेता तिलक महाराज को (पृष्ठ २७५ ७६) जो पत्र लिखे थे वे पठनीय हैं। दोनों दल सैनिक-भरती के काम में और मांटफ़ र्ड योजना में सुधार करवाने के मामले में जहाँ तक बापूजी जाना चाहते थे, वहाँ तक जाने को तैयार नहीं थे।

डायरी का यह पहला भाग बड़ी धारा-सभा में अप्रैल आन्दोलन पर वाइसराय द्वारा दिये गये भाषण के जवाब में बापू ने 'यंग इंडिया' में जो लेख लिखा उसके साथ समाप्त होता है। इसके बाद दूसरे भाग का आरम्भ ९ जनवरी १९२ को अहमदाबाद की हठी सिंहवाड़ी में 'हंटर-कमेटी के समक्ष बापू की बयानी से आरम्भ होगा। रौलट-बिल को 'गहरे रोग की निशानी' बतलाकर इसके विरुद्ध सत्याग्रह अस्त्र का आविष्कार करते हुए बापू ने सत्याग्रह के जो महत्त्वपूर्ण रहस्य प्रकट किये सत्याग्रह विरोधियों या उसके प्रति शंका रखनेवालों का कैसा सुन्दर समाधान किया और सत्याग्रह की तैयारी के जो-जो साधन बतलाये, उनकी एक झाँकी इस ग्रंथ में पाठकों को मिलेगी। यह सत्याग्रह शुरू होने के पूर्व ही सरकार द्वारा अप्रैल में जान-बूझकर उभाड़े गये बम्बई के आतंक पर जब वाइसराय ने बड़ी धारा-सभा में दंभपूर्ण भाषण दिया और ब्रिटिश-सरकार की तरफ़दारी रखते हुए भी बापू ने उन्हें कैसा सच्चा जवाब दिया, यह एक ऐतिहासिक वस्तु है। इसी सिलसिले में लाला लाजपत राय द्वारा बापू को भेजा गया पत्र भी इतिहास को एक नया मोड़ देता है।

इसके अलावा अपने कुटुम्बीजनों पुत्रों और आश्रमवासियों को लिखे गये पत्र, विनोबा का पत्र (पृष्ठ १९–४१), दूध न लेने के व्रत के

कारण अत्यन्त कष्ट भोग रहे थे, तब बकरी का दूध लेने की छूट व्रत में से निकाल रखने के बा के सुझाव से बकरी का दूध लेने लगे, उस बारे में मगनलालभाई को लिखा पत्र (पृष्ठ २ ९-११)। आश्रम को अपनी बड़ी-से-बड़ी कृति मानना (पृष्ठ १११) त्याग अगर छोटा-मोटा दीप नहीं (पृष्ठ ११५), त्याग से शून्य नहीं रह जाता है (पृष्ठ ४१०-११), अज्ञान कभी न छिपाया जाय (पृष्ठ ४११ १४)—ये सब इस डायरी के शिक्षाप्रद और रोचक भाग हैं। अब तक प्रकट न हुई, ऐसी बहुत-सी बातों से डायरी भरी हुई है।

खेड़ा जिले की लड़ाई के सिलसिले में बापूजी द्वारा प्रकाशित पत्रिकाएँ तथा फौजी-भरती सम्बन्धी पत्रिकाएँ, हिन्दू-मुसलिम एकता का व्रत, स्वदेशी व्रत, सत्याग्रह आश्रम का माप्य, सत्याग्रह की व्याख्या, हार्निमैन के निर्वासन पर प्रकाशित पत्रिकाएँ परिशिष्ट में दी गयी हैं।

२८-७-५ —नरहरि परीख

डायरी प्रथम खण्ड

[१३ ११-'१७ से १९१९ तक]

जळो ते जाणीव जळो ते शहाणीव ।
राहो माझा भाव विठ्ठलपायीं ।
जळो ते आचार, जळो ते विचार ।
राहो मन स्थिर विठ्ठलपायीं ॥

—तुकाराम

भावार्थ

आग लगे उस ज्ञान में आग लगे उस चातुर्य में
मेरी भक्ति दृढ़ रहे श्री विठ्ठल के चरणों में ।
आग लगे उस आचार में आग लग उस विचार में
मेरा चित्त स्थिर रहे श्री विठ्ठल के चरणों में ॥

—तुकाराम

Like most human things, discipleship has its good and its evil, its strong and its poor and dangerous side but it really has a good and strong side—its manly and reasonable humility the enthusiasm of having and recognizing a great master, and doing what he wanted done.

—DEAN CHURCH

अन्य अनेक मानव वस्तुओं की भाँति शिष्य भाव के भले और बुरे, मजबूत-कमजोर और भयानक पहलू हैं । पर वस्तुत उसका एक उत्तम और मजबूत पहलू है—उसकी पुरुषार्थपूर्ण और युक्तिसंगत नम्रता एक महान् गुरु की प्राप्ति और उसे स्वीकार करने का उत्साह तथा उसकी इच्छा के अनुकूल बरतना ।

—डीन चर्च

मिस ऐस्थर फेरिंग* को लिखे गये पत्र से :

¶'सफर में भटकते रहने के कारण तुम्हारे पत्र का जवाब नहीं दे सका —। यह कहना कि इस संसार में पूर्णता प्राप्त करना संभव नहीं ईश्वर से इनकार करने के बराबर है। हमारे लिए सर्वथा निर्दोष होना संभव नहीं। स्पष्ट है कि यह कथन जीवन की एक अवस्था के लिए ही है। मनन के द्वारा और यम-नियम के पालन से हम मनुष्यों को हमेशा ऊँचे-से ऊँचा चढ़ते देखते हैं। चढ़ने की शक्ति की सीमा बाँधना जरूरी नहीं है। मुझे तो जीवन में बिलकुल दिलचस्पी न रहे, अगर ऐसा लगे कि मैं इस संसार में संपूर्ण प्रेम प्राप्त नहीं कर सकूँगा। मुद्दे की बात यह कि हमारी प्रेम की शक्ति सतत बढ़ती रहती है। यह क्रिया बहुत धीमी जरूर है। जो आदमी हमें अच्छा काम करने से भी रोके उसे हम कैसे चाह सकते हैं? फिर भी ऐसे अवसरों पर ही हमारी सच्ची परीक्षा होती है। आशा है, तुम्हारा चित्त अब बिलकुल शांत हो गया होगा।

"भगवान् करे आश्रम के प्रति तुम्हारा प्रेम तुम्हें अपने कर्तव्य-पालन के प्रयत्न में बल दे। आश्रम का उद्देश्य हमें यह सिखाता है कि

---

* यह बहन डेन्मार्क की हैं। वहाँ से हिन्दुस्तान की सेवा करने के लिए एक डेनिश मिशन के साथ यहाँ आयी थीं। बापू के संसर्ग में आने के बाद मिशन में बने रहना उन्हें पसन्द नहीं आया और १९१९ में मिशन से मुक्त हो गयीं। थोड़ा समय शान्तिनिकेतन में और थोड़ा आश्रम में बिताकर वे स्वदेश गयीं। उन्होंने एक हिन्दुस्तानी भाई से प्रेम से शादी की है।

¶ जिस मूल अंग्रेजी पत्र का अनुवाद दिया गया है वह अधूरा है यह बताने के लिए आगे भी इस जगह यह चिह्न लगाया गया है।

अपने हिस्से में आया हुआ काम हम खूब ध्यान और सावधानी से करें। हमारी इच्छायें (कितनी ही शुद्ध होने पर भी) पूरी न हों तो उससे हम तनिक भी न भकरायें। हमारा सोचा नहीं, बल्कि उसीका सोचा पूरा हो।

बापू"

१५ ११ १७

नववर्ष सं० १९७४ मोतीहारी

आश्रम में मगनलालभाई को लिखते हुए :

"'आज के मंगल-प्रसंग पर तुम्हें मैं क्या दूं? किसकी तुममें मुझमें, बहुतों में कमी है वही देने का प्रयत्न कर रहा हूं। वह मिल गया, तो सब कुछ मिल गया। किसीमें हो, वही दे सकता है। इस न्याय से तो मैं क्या दूं? किन्तु हम एक साथ ही माँगें।

'यद्यपि मैं मनुष्य और देवता की वाणी बोलूं पर मुझमें प्रेम न हो तो मैं ढोल या खाली घड़े के समान हूं। यद्यपि मैं भविष्यवाणी कर सकूं, मुझे पूर्ण ज्ञान हो, मुझमें पर्वतों को खिसका सकने की श्रद्धा हो पर प्रेम न हो तो मैं तिनके के बराबर हूं। अगर मैं अपना सब कुछ गरीबों को खाने के लिए दे दूं और अपना शरीर भी जला डालूं, पर मुझमें प्रेम न हो, तो मेरे कार्य से कुछ भी लाभ न होगा।

"प्रेम बहुत सहन करता है; जहाँ प्रेम है वहाँ दया है। प्रेम में द्वेष की गुंजाइश ही नहीं, प्रेम में अहंभाव नहीं प्रेम में मद नहीं प्रेम में अयोग्यता नहीं, प्रेम स्वार्थी नहीं प्रेम जल्दी नहीं चिढ़ता, प्रेम को बुरे विचार नहीं आते प्रेम अन्याय से प्रसन्न नहीं होता। प्रेम सत्य से ही प्रसन्न रहता है, प्रेम सब कुछ सहन करता है, सब कुछ मान लेता है। प्रेम आशामय है, सब कुछ सह लेता है। प्रेम कभी निष्फल नहीं होता पर भविष्यवाणी झूठी हो जाती है, वाचा बंद हो जाती है और ज्ञान का नाश हो जाता है।

"जब मैं बालक था, तब बालक की तरह बोलता था। बालक के बराबर मेरी समझ थी और बालक की तरह सोचता था। जब बड़ा हुआ, तो मैंने बचपन छोड़ दिया। अभी तो हम पर पर्दा पड़ा होने से धुंधला देखते हैं। बाद में तो हम अपने सामने खड़े होकर देख सकेंगे। अभी तो मुझे थोड़ा ज्ञान है। फिर मैं जैसे ही पहचाना जाऊँगा, वैसे ही पहचानूँगा। अंत में, श्रद्धा, आशा और प्रेम ये तीन चीजें ही स्थायी हैं। उनमें भी प्रेम श्रेष्ठ है।'

"इसे पढ़ना, इस पर विचारना और फिर पढ़ना। इसका अंग्रेजी पढ़कर उसका हिंदी करना। जैसे भी हो, भरीमर तो प्रेम की अंजली लूट कर लेना। मीरा को प्रेम की कटारी लग गयी थी वैसी कटारी हमारे भी हाथ लगे और उसे झेलने का बल हममें आ जाय, तो हम दुनिया को हिला दें। यह चीज मुझमें होते हुए भी मैं हर वक्त उसका अभाव अनुभव करता रहता हूँ। कमी तो मुझमें बहुत है। कभी-कभी अचल पत्थर की तरह हो जाता हूँ। अक्सर ही जो प्रेम से मुझे रोकते थे, उनके लिए मेरे पास समय नहीं था। इसलिए मन ही मन जला करता था। यह कोई प्रेम की निशानी नहीं। यह तो 'अधजल गगरी छलकत जाय' जैसी बात है। नया वर्ष तुम्हारे लिए लाभदायी सिद्ध हो। अपनी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विभूतियाँ बढ़ाकर उन सबको तुम भारत के चरणों पर प्रेम-भाव से रख दो यही मेरी इच्छा है और यही आशिष।

बापू के आशीर्वाद"

"चि हरिलाल

आज दीवाली है नया वर्ष तुम्हें सफल हो तुम्हारी शुभेच्छायें पूरी हों और तुम सबके चारित्र्य की पूँजी बढ़े, यही मैं चाहता हूँ। यही सच्ची लक्ष्मी है, उसका पूजन करने में ही कल्याण है। मेरी भगवान् से प्रार्थना है कि यह सत्य तुममें अधिकाधिक स्फुरित हो।

बापू के आशीर्वाद'

२१ १२ १७
मोतीहारी

हरमन कालनबकˣ को पत्र :

¶ "प्रिय मित्र

"इन दिनों मैं बहुत अनियमित हो गया हूँ। मैं इतना घूमता हूँ कि स्नेह-पत्र लिखने का अवकाश ही नहीं मिलता, खास तौर पर जब ये पत्र गलत जगह जाते हैं। तुम्हारी तरफ से पिछले तीन महीनों में मुझे सिर्फ तीन ही पत्र मिले हैं। हाँ पोलाक और मिस विंटरबॉटम तुम्हारे बारे में मुझे जरूर लिखते हैं। तुमसे मिलने को मेरा जी कितना छटपटाता है! यहाँ मुझे आये दिन नये-नये अनुभव होते जा रहे हैं। इन सबमें तुम्हें हिस्सेदार बनाने की बड़ी इच्छा होती है। किन्तु इस राक्षसी युद्ध का कोई अन्त ही दिखाई नहीं देता। युद्ध की तमाम बातों से तो वेदनाएँ बढ़ती ही हैं। फिर भी समस्त मानव-प्रवृत्तियों की तरह इसका भी अन्त तो होगा ही। हमारी मित्रता बिलकुल निकम्मी होगी अगर वह स्थान और काल का अन्तर सहन न कर सके। इतने लम्बे उकतानेवाले वियोग से तो वह और भी दृढ़ और विशुद्ध होनी चाहिए। आखिर यह क्षणभंगुर शरीर ही क्या है? कल मैं पवन की लहरों में सामने के वृक्षों को देखता बैठा रहा। मैंने देखा कि नित्य परिवर्तनशील इन महान् वृक्षों में ऐसी कोई चीज है, जो चिरकाल तक टिकी रहती है। हरएक पत्ते का अपना अलग जीवन होता है। वह गिर पड़ता और सूख जाता है, किन्तु पेड़ जिन्दा रहता है। हरएक वृक्ष भी समय के असर से या घातक कुल्हाड़ी से मौत का शिकार होता है; किन्तु जंगल जिसका वह पेड़ एक

ˣ दक्षिण अफ्रीका में बापू के बड़े मित्र हरमन। वे भी बापू के साथ ही यहाँ आनेवाले थे। लेकिन जर्मन होने से महायुद्ध के कारण उन पर लगा प्रतिबन्ध था इसलिए नहीं आ सके। सन् १९२ में वे कुछ दिनों के लिए यहाँ आ गये थे।

खिलता है, जीवित रहता है। हम भी मानव-वृक्ष के ऐसे पत्ते ही हैं। हम मुरझा जाते हैं, तो भी हममें जो सनातन तत्त्व है, वह अनन्त काल तक बिना किसी परिवर्तन के कायम रहता है। कल शाम को इस तरह सोचते हुए मुझे बड़ा आश्वासन मिला। मुझे तुम्हारी याद आ गयी और बड़ा दुःख हुआ। किन्तु मैंने तुरन्त ही अपने पर काबू कर लिया और अपने आपसे कहा : 'मैं जानता हूँ कि मेरा मित्र उसका यह शरीर नहीं, किन्तु उसके भीतर रहनेवाली आत्मा है।'

प्यार,
तुम्हारा पुराना मित्र"

भाई अमृतलाल सुखलालचन्द को :

"मेरी प्रवृत्तियाँ बढ़ती जा रही हैं। मेरा भार बढ़ा हुआ है, इस बीच मेरे जो-जो आदर्श हैं उनकी जानकारी देश को करा देने में मैं अपने-आपको लगा रहा हूँ।'

"मुझ भाई अम्बालालजी,

"आपके व्यापार के कार्य में जरा भी बीच में पड़ने की इच्छा नहीं होती। फिर भी भाई कृष्णलाल का जो पत्र आज मिला है, वह ऐसा है कि मुझसे लिखे बिना नहीं रहा जा सकता। मेरा ख्याल है कि श्रीमती अनसूया बहन को रावटिर भी डाकेवालों को संतुष्ट करना चाहिए। यह मानने का कोई कारण नहीं कि एक विभागवालों को सन्तुष्ट करने से दूसरे विभागवाले पीछे पड़ेंगे। पीछे पड़ें तो भी उस समय उचित कदम उठाया जा सकता है। मालिक मजदूरों को दी पैसा देकर खुश क्यों न करें? उनका असंतोष दूर करने का एक ही राजमार्ग है : उनके जीवन में प्रवेश कीजिये और प्रेमरूपी रेशम की डोरी से उन्हें बाँधिये। हिन्दुस्तान के लिए इसमें जरा भी अतिशयता नहीं है। पैसे का उपयोग भी आखिर तो देश के लिए ही है। उनके खातिर खर्च करोगे, तो जरूर

यह चुकता हो जायगा। बहन का दिल भाई कैसे दुखाये? और वह भी अनसूया बहन जैसी बहन का? मुझे तो उनकी आत्मा अत्यन्त पवित्र दिखाई दी है। उनका वचन आपके लिए कानून बन जाय, तो भी अधिक नहीं होगा। इस प्रकार आप पर दो दोहरा बोझ है। नौकरों को खुश करना और बहन का आशीर्वाद लेना। मेरी धृष्टता भी दोहरी है। मैंने एक ही पत्र में व्यापार और कौटुम्बिक व्यवहार दोनों में दखल दिया है। मुझे क्षमा कीजिये।

मोहनदास गांधी का
वन्दे मातरम्"

११ १ १८
मोतीहारी

"भाईश्री ५ चिमनलाल (चिनाईवाला)

"आपका पत्र मिला। मजदूर वर्गमात्र की मदद देना हमारा काम है, इसमें मुझे कोई शक नहीं। परन्तु सहकारी आन्दोलन में मेरी विशेष श्रद्धा नहीं है। मुझे लगता है कि हमारा प्रथम कार्य मजदूर वर्ग की स्थिति का सर्वांग अध्ययन करना है। वे क्या कमाते हैं? कहाँ रहते हैं? कैसे रहते हैं? कितना खर्च करते हैं? कितना बचाते हैं? कितना कर्ज करते हैं? कितने बच्चे हैं? उनका किस तरह पालन किया जाता है? वे शुरू में क्या थे? उनकी स्थिति में परिवर्तन कैसे हुआ? अब उनकी क्या हालत है?—इन सब प्रश्नों का उत्तर जाने बिना एकदम सहकारी समिति बनाना जरा भी उचित नहीं मालूम होता। हमें इस वर्ग के भीतर प्रवेश करने की जरूरत है। ऐसा करें तो बहुत-सी उलझनें बहुत थोड़े समय में दूर की जा सकती हैं। अभी तो मैं तुम्हें उनसे घुलने-मिलने और उनकी स्थिति जानने की सलाह देता हूँ। मिलेंगे तब इस बारे बात करेंगे।

१६ १ १८
मोतीहारी

भाईश्री रुद्र,*

"यह पत्र मैं भाई देसाई से लिखवा रहा हूं। क्योंकि मेरी बायीं तरफ बड़ा दर्द हो रहा है। इसलिए लिखने को बहुत जी नहीं करता। आपसे मुझे मिल सके, तो हमारी प्रांतीय भाषाओं के बारे में जल्दी में लिखा हुआ पत्र नहीं किन्तु उनके लिए उत्साहपूर्ण और सुंदर समर्थन मुझे चाहिए, जिसका मैं लोगों की कर्तव्य-बुद्धि जाग्रत करने में उपयोग कर सकूं। आप पढ़ाई देशी भाषाओं में रखें और परीक्षा में उत्तर अंग्रेजी में लिखने की बात रखें, यह किसलिए? हरएक विद्यार्थी को किसलिए अंग्रेजी पढ़नी ही चाहिए? क्या इतना काफी नहीं है कि हरएक प्रान्त में कुछ आदमी अंग्रेजी की विशेष शिक्षा प्राप्त कर लें जिससे वे नये विचारों और वैज्ञानिक खोजों का ज्ञान देशी भाषाओं के द्वारा आम जनता में फैला सकें? तभी हम अपने लड़के-लड़कियों को नये ज्ञान से तर-बतर कर सकेंगे और जो नवजीवन हमने पिछले साठ वर्षों में नहीं अनुभव किया, उसे अनुभव कर सकेंगे। मुझे यह अधिकाधिक प्रतीत होता जा रहा है कि हमारे बच्चे देशी भाषाओं में शिक्षा पाने लगेंगे, तभी वे अलग-अलग विज्ञानों की बातें पचा सकेंगे। इस अत्यन्त आवश्यक सुधार के लिए अधकचरे कदम उठाने से काम नहीं चलेगा। जब तक हम यह स्थिति प्राप्त नहीं कर लेंगे तब तक मुझे

---

* दिल्ली में कैम्ब्रिज मिशन की तरफ से चलनेवाले सेंट स्टीफेंस कॉलेज के प्रिंसिपल। वे कॉलेज के पहले ही हिन्दुस्तानी प्रिंसिपल हुए थे। मिस्टर एण्डूज ने हिन्दुस्तान में अपना कार्यारम्भ इसी कॉलेज में प्रोफेसर के रूप में शुरू किया था। मिशनरी कॉलेज होते हुए भी उसमें सर्व धर्म-समभाव का वातावरण था और राष्ट्रीयता को भी प्रोत्साहन दिया जाता था। आचार्य सुशीलकुमार रुद्र का परिचय बापू को एण्डूज के मार्फत हुआ था। वह दिल्ली में बापू उन्हींके यहां ठहरते थे।

डर है कि अपने लिए विचार करने का काम हमें अंग्रेज लोगों को ही करने देना पड़ेगा और हमारा काम गुलामों की तरह उनकी नकल करना ही रहेगा। जब तक यह बहुत ही जरूरी और महत्त्व का हेरफेर नहीं हो जाता, तब तक स्वराज्य की कोई भी योजना इस भारत को टस नहीं सकेगी। आपका भी इस मामले में मेरे जैसा ही खयाल हो, तो ऊपर के विचार आप अपनी भाषा में प्रकट करनेवाला पत्र मुझे लिख भेजिये।

"कलकत्ते में बड़ा मजा आया, लेकिन कांग्रेस के मंडप में नहीं। सारा मजा मंडप के बाहर रहा। कविवर और उनकी मंडली ने 'डाकघर' नाटक खेला जिसे देख मैं मुग्ध हो गया। यह लिखते समय भी कवि की मनोहर और मीठी आवाज मेरे कानों में गूँज रही है। बीमार बच्चे का अभिनय भी उतना ही सुन्दर रहा। बंगला संगीत ने मुझे मोह लिया। यद्यपि मुझे अधिक सुनने को नहीं मिला, फिर भी जितना सुना, उसका मेरे ज्ञान-तन्तुओं पर, जो हमेशा खिंची हुई स्थिति में रहते हैं, बड़ा आरामदेह असर हुआ।

"आपको यह जानकर आनन्द होगा कि सोशल सर्विस कान्फ्रेन्स में मैंने अपने अध्यक्ष-पद के अधिकार का पूरा उपयोग किया। बंगाली जीवन में जो बहुतेरा अच्छा है, उसका आशिक बनकर मैंने बंगाली मांसीभक्षता के बारे में कड़े शब्द बोलने की छूट पा ली। श्रोताओं में से किसीको यह बुरा न लगा। मेरी आलोचनाओं की वे कद्र करते दीख पड़े। अपने भाषण की प्रति आपको भेज रहा हूँ। अलबत्ता, मैंने मुँह से जो व्यक्तिगत अपील की वह इसमें नहीं है।

"अपने अनुभवों का दसवाँ हिस्सा भी मैंने आपको नहीं बताया। किन्तु भाई देसाई मुझे याद दिला रहे हैं कि एक और अनुभव तो मुझे आपको बताना ही चाहिए। वहाँ 'मानव दया-संघ (ह्यूमेनिटेरियन लीग) की बैठक में मैं गया था। उसमें भी मैं अध्यक्ष था। मुझे लगा कि कालीघाट पर होनेवाली आसुरी पूजा के बारे में अगर मैं न बोलूँ तो मैं खुद

अपने और श्रोताओं के प्रति वफादार न रहूँगा। इसलिए मैं तो कुछ भी लाग-लपेट न रखकर साफ-साफ बोला। बोलते समय श्रोताओं की ओर बराबर देखता रहा। कह नहीं सकता कि मेरे कहने का उन पर असर हुआ या नहीं, लेकिन इस विषय की अच्छी तरह छानबीन कर मैंने अपना जी हलका कर लिया। मुझमें पूरी शक्ति हो, तो घाट पर आनेवाली गली के नुक्कड़ पर खड़ा रहूँ और हरएक स्त्री-पुरुष को धर्म के नाम पर ईश्वर का द्रोह करने से रोकूँ।

"देशी भाषाओं के संबंध का आपका पत्र इसलिए लौटा रहा हूँ कि आपकी रमरय शक्ति को ताजा करने के लिए आपके काम आवे।

आपका
मो क गांधी

१८-१ १८
मोतीहारी

'भाई कल्याणभाई,

'आपका पत्र मिला। रास्ते दो ही दिखाई देते हैं। एक उत्तम रास्ता है। वह यह है : इस बहन को अपनी विद्या का शुद्ध उपयोग करके भाग्य से मिले हुए पति को सुधारने की कोशिश करनी चाहिए। ऐसे काम पहले स्त्रियों ने किये हैं और आज यह बहन भी यदि इतना साहस करे, तो सारे प्राणी तुरन्त सुखी हो सकते हैं। इस कार्य के लिए उस बहन को धार्मिक ज्ञान होना चाहिए। अगर इतनी संपत्ति उसके पास न हो, तो उसे निडर होकर अपने पति के पास जाने से साफ इनकार कर देना चाहिए। अगर अपने पिता के यहाँ जबरदस्ती होने की संभावना हो, तो उसको घर छोड़ देने का अधिकार है और किसी मित्र को उसकी देख-भाल करनी चाहिए। अगर देहात में उसे अपनाया न जा सके, तो उसे बाहर ले जाना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी मित्रता का

उपयोग उस धन की रक्षा के लिए करें। उत्तम रास्ता पहला है। उसे आजमायें।"

२१ १ १८

एक पत्र है :

"मेरे मानपत्रों और लेखों की पुस्तक० के लिए प्रस्तावना कौन लिखे अथवा प्रस्तावना चाहिए या नहीं, इस प्रश्न का निर्णय छपवानेवाले का नाम और उद्देश्य जानने के बाद किया जा सकता है। अगर रुपये कमाने की खातिर पुस्तक बेचनेवालों की फर्म उसे छपवाये, तो उसके लिए घरौकिनी की प्रस्तावना की जरूरत होगी। यदि भावुक वैष्णव छपवाये, तो जरूर रणछोड़ भाई के पास जायें। मुझे न जानने वाले भी किसी तटस्थ आदमी के हाथ मेरी रचनाएँ लगी हों और वह उनके समर्थन में दो शब्द चाहे तो मेरे मित्र को अर्थात् डॉक्टर मेहता को ढूंढे। अगर आप या मथुरादास मालिक बन जायें तो प्रस्तावना की जरूरत ही नहीं। अभी फिलहाल तो वेशिया के तर्कश के जानकारों की तरह मेरी गिनती है। इसलिए मेरा यह मूल्य छीन लेने की जरूरत बिना ऊपर के कारणों के नहीं रहती। जहाँ ज्वार आ रहा हो, वहाँ मेरे विचारों के समुद्र में जितने आदमी डुबकी लगा सकें उतने जल्दी से लगा लें यही छापने का वास्तविक हेतु है। मुझे तो उन विचारों पर मोह है, इसलिए आम तौर पर उनका लाभ जितने लोग ले सकें उतनों को देने की इच्छा होती है। इस प्रकार इसे छपवाने में अभी तो मैं भी प्रेरक हूँ। ऐसी स्थिति में प्रस्तावना की जरूरत ही क्या ? मेरा आचरण ही शुद्ध प्रस्तावना है। जो पढ़ सके, वह पढ़कर देख ले।

मेसर्स शिगिचर एरड कम्पनी मथुरा को लिखा गया पत्र :

¶ "जिन लोगों ने बुनाई छोड़ दी है, उनका धन्धा पुनर्जीवित करने के लिए मैंने यह पद्धति अपनायी है कि इन्हें सस्ते-से-सस्ते बाजार-भाव से

---

० श्री मथुरादास त्रिकमदास द्वारा सम्पादित 'महात्मा गांधीजी की विचार-सृष्टि' (गुजराती)।

सूत मुहैया किया जाय। जुलाहों को सहूलियत रहे, इस तरह की किस्तों में वे सूत के दाम चुका दें। इस पैसे पर ब्याज न लिया जाय। इस पद्धति से वे औसतन १७ रुपया माहवार तक कमाई कर सकते हैं। ये जुलाहे अपना सारा समय बुनाई में नहीं देते और बहुत मोटा कपड़ा बुनते हैं। इससे ज्यादा कमाने की उनकी इच्छा भी नहीं। इतने में उनकी जरूरतें पूरी हो जाती हैं। मैं जानता हूँ कि जुलाहा होशियार हो, बारीक सूत बुने और थोड़ी कारीगरी भी करे, तो २५ रुपया महीना कमा सकता है। मेरी राय में अगर किसी जुलाहे को अपना धन्धा छोड़ना पड़ता है, तो उससे राष्ट्र को उतनी हानि होती है, और जितने जुलाहों को हम फिर से धन्धे में लगा देते हैं उतना राष्ट्र को लाभ होता है। आप कोई भी योजना शुरू करें, किन्तु मैं चाहता हूँ कि समय-समय पर मुझे अपनी हलचलों से परिचित रखियेगा।

सेवक

मो० क० गांधी”

काका का पत्र : प्रोफेसर* जेल में गये, इसमें सत्याग्रह कैसा? अपील क्यों नहीं की? इत्यादि।

१४। १। १८

उत्तर :

“मनुष्य पर जब अभियोग लगाया जाता है, तब या तो वह अपराधी होता है या निर्दोष। अगर अपराधी हो, तो वह प्रायश्चित्तस्वरूप जेल में जाय और निरपराध हो तो न्यायाधीश को शिक्षा देने के लिए जेल में

---

* पत्रालय के उद्घाटन के समय एक बार जुलूस निकला। उसमें आचार्य कृपालानी घोड़े पर बैठे थे। उन पर लापरवाही से हाँकने (rash driving) का अभियोग लगाकर उन्हें तीन सप्ताह की [illegible] की सजा दी गयी थी। यह पत्र इस घटना को ध्यान में रखकर लिखा गया है। आचार्य कृपालानी को आश्रम में हम लोग प्रोफेसर कहते थे।

जाय। अगर सारे निर्दोष लोग अपनी निर्दोषिता बताकर जेल में जाना पसन्द करें, तो अन्त में निर्दोष को शायद ही जेल हो। इतना तो साधारण दृष्टि से हुआ। प्रोफेसर के मामले में बहुत-सी विशेषताएँ हैं। उनका मामला कोई चोरी को देखी से रोकने का नहीं था। यह तो बहाना मिल गया। इस मामले का हेतु यही था कि किसी भी प्रकार मुझे और मेरे द्वारा इस आन्दोलन को अप्रिय बनाया जाय। मुझ पर कुछ न किया जा सके और मेरे आदमी पर किया जा सके, तो भी प्रतिपक्षी को आनन्द मिलेगा ऐसी मान्यता इसके पीछे थी। ऐसे समय प्रोफेसर को जेल में जाकर अपना स्वरूप दिखाना आवश्यक था। फिर यहाँ की प्रजा जेल में जाने से बहुत डरती है। उसे निर्भय बनाने का यह सुन्दर अवसर मिला। इसे छोड़ा नहीं जा सकता। खुद प्रोफेसर के लिए भी अनायास प्राप्त होनेवाले अनुभव को छोड़ देना ऐसा ही होता जैसे लक्ष्मी तिलक लगाने आये, तब मुँह छिपा लिया जाय। खुद कष्ट भोगकर अन्याय का मुकाबला करना ही सत्याग्रह है। न्यायाधीश का निर्णय केवल अन्याय था। जेल में जाने का दुःख उठाकर प्रोफेसर ने सत्याग्रह किया। अपील करना सत्याग्रह का विषय ही नहीं। शुद्ध सत्याग्रह में चर्चा की गुंजाइश ही नहीं। हम जो सत्याग्रह देख रहे हैं, वह शुद्ध नहीं, मिश्रित है। मिश्रता हमारी कमजोरी का माप है और उसकी निशानी है। जब शुद्ध सत्याग्रह होगा, तब दुनिया उसका आश्चर्यजनक प्रभाव देखेगी, यह मेरा दृढ़ विश्वास है। इसलिए सत्याग्रह की दृष्टि से तो अपील करनी ही नहीं थी, किन्तु अपील न करने में सत्याग्रह का शुद्ध पालन गौण हेतु था। मेरा खयाल है कि मामला इतना कमजोर था कि हमने अपील वगैरह करके उसे बड़ा रूप नहीं दिया, इसलिए हम न्यायाधीश का पक्षपात और मूर्खता दोनों आसानी से दिखा सके हैं। फिर यह गारण्टी तो कोई वकील दे नहीं सका कि अपील में जीतेंगे ही। वकीलों को मैंने बता दिया कि अपील आप अपनी जोखिम पर करेंगे। अगर हारकर आओगे, तो जरूर दोष दूँगा। इस मुकदमे में अपील नहीं हो सकती थी नजरसानी

(रिवीज़न) ही हो सकती थी। नजरसानी में ऊपर की अदालत भी हकीकत में नहीं पड़ती, सिर्फ कानून की भूल ही सुधारती है। इस मामले में कानून की खिड़की की गुंजाइश नहीं थी। तुम देखोगे कि इसमें सत्याग्रह और संसार जिसे 'व्यवहार' कहता है, उस व्यवहार-न्याय की भी रक्षा हुई है।"

"चि० जमनादास,

"तुम अपना काम छोड़कर मेरे पास रहने से कुछ पा नहीं सकोगे। थोड़े दिन बाद तुम ही ऊब जाओगे और छोड़ा हुआ कर्तव्य याद करोगे।

"इसलिए तुम्हें वहीं रहकर आनन्द खोजना है। इस समय मेरे पास रहने की तुम्हारी इच्छा एक प्रकार का विषय है। और जिस तरह विषय को भोगने के बाद उसमें थकान और निराशा उत्पन्न होती है, उसी तरह अभी मेरे पास थोड़े समय रहने के बाद निराश हो जाओगे। यह आदर्श अपने सामने रखो कि किसी दिन मेरे पास आना है। इस बीच प्राप्त हुए कामों को पूरा करके आने के योग्य बनो।'

"भाईश्री कुलकर्णी,

'आपको मैंने अपना पिछला पत्र डाक में छोड़ा तब आपका भेजा हुआ साहित्य मैंने पढ़ तो लिया था किन्तु मुझे अपने प्रयोगों से विमुख करने के लिए वह काफी विश्वास दिलानेवाला नहीं था। आप कहते हैं, वह सच हो भी सकता है और नहीं भी। नमक तमाम रोगों का इलाज हो तो उसका उपयोग दुगुना या चौगुना कराने के लिए मेहनत करने में कोई कसर न रखनी चाहिए। मुझे तो प्लेग वगैरह रोग नमक के प्रयोग से सफल रूप में मिटने के आँकड़े चाहिए। निरामिष-आहार संबंधी पुस्तकों में नमक के प्रयोग के विरुद्ध मैंने काफी पढ़ा है, इसीलिए मैंने अपने पर ही प्रयोग करना शुरू किया। लगभग सात बरस पहले कस्तूरबा सख्त रक्त स्राव से बीमार थीं। क्यूनी के कटिस्नान के प्रयोगों से और सुराक के कई प्रयोगों से मैं उसका उपचार कर रहा था। तब मैं लगभग निराश हो

गया, तब मुझे विचार आया कि डॉ॰ बॉलिंग ने नमक के और डॉ॰ हग ने दाल के विरुद्ध जुद्ध छेड़ा है। इसलिए इन्हें छुड़वाने का प्रयोग करूँ। डॉ॰ बालेस की दलील यह है कि नमक उत्तेजक और सूजन पैदा करने वाला है। वह खाद्य न होने के कारण बिना पचे ही बाहर निकल जाता है और निकलते समय काफी नुकसान करता है। यह पाचन-रस की ग्रंथियों को जरूरत से ज्यादा उत्तेजित करता है। मेद में सूजन लाता है और मनुष्य को जरूरत से ज्यादा पिला देता है। इस प्रकार यह (पाचन के) अवयवों पर जरूरत से ज्यादा बोझ डालता है और खून को कमजोर करता है। सब लोगों की तरह कस्तूरबाई और मैं नमक को पसंद करनेवाले थे। उसे अच्छी मात्रा में लेते थे। मैंने अपने मन से दलील की कि शरीर को जो नमक मिलता है, वही शायद उसकी बीमारी को लंबा करने के लिए जिम्मेदार है। दाल के मामले में मैंने भी दलील की उसमें उतरने की कोई जरूरत नहीं देखता। उस समय मैं खुद काफी स्वस्थ था। स्वास्थ्य के कारण मुझे कोई हेरफेर करने की जरूरत नहीं थी। फिर भी मैंने देख लिया कि मैं नमक और दाल न छोड़ूँ, तो कस्तूरबाई को पैसा करने के लिए न समझा सकूँगा। इसलिए ये दोनों चीजें मैंने छोड़ दीं और कस्तूरबाई से भी छुड़वा दीं। उसके उपचार में मैंने और कोई परिवर्तन नहीं किया। एक हफ्ते में ही खून बंद हो गया और उसका परिणामकर वैसा शरीर भरने लगा। तब से अभी तक मैं नमक नहीं खाता। किन्तु कस्तूरबाई को तो नमक की आदत ऐसी पड़ी थी कि उसे छोड़ देने की जरूरत न रहने पर वह उसके लालच से मुकाबला न कर सकी। इसलिए पूरी तरह अच्छी हो जाने के बाद उसने नमक लेना शुरू कर दिया। अब भी समय-समय पर जब उसे रक्तस्राव हो जाता है, तब नमक छोड़ देने और घर्षण-स्नान करने से वह बिलकुल अच्छी हो जाती है। अपने प्रयोग के इन सात वर्षों में मैंने दमा और फेफड़ों की दूसरी व्याधियोंवाले रोगियों का इलाज बिना नमक की खुराक देकर किया और उसके हमेशा अच्छे ही परिणाम निकले हैं। अपने विषय में मैं कह सकता हूँ कि भिन्न-भिन्न लोगों के संपर्क में

खाया है, नमक न लेने के कारण उन सबसे मैंने कोई ज्यादा बीमारी नहीं भोगी। मैं मानता हूँ कि बिना नमक की खुराक से अपने ब्रह्मचर्य-व्रत के पालन में मुझे काफी मदद मिली है। ये सारे अनुभव मेरे सामने मौजूद होने के कारण नमक को आपकी आग्रहपूर्ण हिमायत से मुझे जरा आघात लगता है।

'हाँ, मैं अपने शरीर में एक बड़ा परिवर्तन देखता हूँ और उसके बारे में मैंने डॉक्टरों के साथ चर्चा भी की है। किन्तु वे उस पर कोई प्रकाश नहीं डाल सके। मुझे कोई चोट लग जाती है, तो वह पहले से बहुत जल्दी अच्छी हो जाती है। लम्बे उपवास के बाद भी मुझे बहुत अधिक थकावट महसूस नहीं होती। लेकिन मालूम पड़ता है कि मैं शायद 'ग्रीन स्टिक' (Green stick) हो गया हूँ। मेरी चमड़ी बहुत नाजुक और कच्ची हो गयी है। छुरी से दूसरी किसी चीज की अपेक्षा इसे ज्यादा आसानी से काटा जा सकता है। यद्यपि मैं हमेशा नंगे पैर चलता हूँ फिर भी मेरे पैर के तलवे औरों की तरह कठिन और मोटे नहीं हो जाते। मेरे मसूड़े नरम हो गये हैं और मुँह में जो थोड़े से दाँत हैं वे उपयोग की अपेक्षा शोभा के लिए ही अधिक हैं। क्या यह भी संभव है कि यह नाजुकपन बिना नमक की खुराक का परिणाम हो? अलबत्ता, अपने जीवन में मैंने और बहुत-से परिवर्तन किये हैं, इसलिए अकेले नमक को इसके लिए जिम्मेदार मानना मुश्किल है। अपने शरीर की इस खराबी के प्रति—अगर उसे खराबी माना जा सकता हो तो—मेरा ध्यान न खिंचा होता, तो और बहुत-से कामों के कारण, जिनका मैंने अनुभव किया है मैं बिना नमक की खुराक की बड़ी जोरदार हिमायत करता। अगर आपसे मुझे कोई प्रकाश डालनेवाली मदद मिले तो कम-से-कम थोड़े समय के लिए तो भी मैं नमक खाना शुरू करना पसंद करूँ और अपने शरीर पर उसके क्या परिणाम होते हैं, यह देखूँ।

'अपना प्रयोग थोड़े समय के लिए बन्द रखना बुद्धिमानी है या नहीं

इसकी चर्चा डॉक्टर देव के साथ कर रहा था कि इतने में आपका पत्र आ गया। उस पर से मैंने अपना पिछला पत्र आपको लिखा। इस मामले में आपके पास निश्चित जानकारी हो और आप वैज्ञानिक दृष्टि रखने के इतने आग्रही हों कि उत्साह के आवेग में भी सत्य के मार्ग से जरा भी विचलित होने से इनकार करें, तो मैं प्लेग की जाँच के लिए और इस बात की खोज करने के लिए कि मनुष्य के भोजन में नमक का सच्चा मूल्य कितना है, आपकी सेवाओं का उपयोग करना खूब चाहूँगा। आपकी बतायी हुई पुस्तकें जुटाने की कोशिश करूँगा।

सेवक

मो० क० गांधी"

१७-१ १८

"भाई श्री मावलंकर,

"खेड़ा संबंधी प्रेसनोट की सभा के लिए तैयार किये गये जवाब के मसविदे के बारे में आपका पत्र मिला। हमारे जवाब का पहला भाग मुझे अच्छा लगा। आखिरी भाग उतना ही कमजोर है। मैं उसे सुधारने की झंझट में नहीं पड़ता। खेड़ा जिले के बाहर की सभा खेड़ा जिले के बारे में कुछ नहीं कर सकती, सरकार के इस कथन का जवाब अधिक जोरदार दिया जा सकता है। सभा का कोई भी सदस्य खेड़ा जिले से न आया हो तो भी गुजरात के किसी भी हिस्से के लिए सरकार को लिखने का सभा को अधिकार है। इतना ही नहीं उसका फर्ज भी है। जाँच करनेवाली कमेटी के सदस्यों के नाम देने की जरूरत थी। नये (जूनियर) और पुराने (सीनियर) कर्मचारियों में जो भेद करके बताया गया है, वह अनुचित है। हमने अनजान में यह मान लिया दीखता है कि पुराने कर्मचारी होते, तो वे ठीक और उचित जाँच करते। हमारा दावा तो यह है कि सरकार के कर्मचारी उसके अपने कर्मचारी होने के कारण ही अनुभवी और अपनी

जिम्मेदारी समझनेवाले प्रजाजनों की अपेक्षा कम विश्वासपात्र हैं। क्योंकि (कर्मचारियों को) उनके स्वार्थ के लिए ही सिखा जाता है और उनकी आदत जनता की बात ठुकराने की होती है। जब जनता के नेताओं में स्वार्थ नहीं होता, तब वे तटस्थ होते हैं और इस ज्ञान के कारण कि उनसे होनेवाली भूल दरगुजर नहीं की जायगी, उनकी जाँच ज्यादा निश्चित होती है। ये सारी बातें हमारे लिए अच्छी तरह बताने जैसी थीं। इस झगड़े में हम (जनता को) शिक्षित करना चाहते हैं और यह दिखाना चाहते हैं कि जैसे सरकार अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए उत्सुक है, वैसे ही हम भी अपनी प्रतिष्ठा के रक्षार्थ उत्सुक हैं। सरकार अक्सर अपनी प्रतिष्ठा अपनी सत्ता के जोर से कायम रखती है। हम केवल अपने न्यायपूर्ण कार्य से कायम रखें। जनता को इस तरह का विस्तृत अनुभव और निश्चित पथ-दर्शन मिले, तो उससे उसे स्वराज की बड़ी तालीम मिलेगी। इसीलिए मैं इस ढंग तक आलोचना में उतरा हूँ।

"दूसरी बात कहने की मुझे यह सूझी है कि ऐसे समय तुरंत किये हुए काम का मूल्य नापा जा सकता है। दूसरे सारे काम छोड़कर भी कमेटी को तुरंत मिलना चाहिए। सार यह कि कमेटी अपना काम मुल्तवी हरगिज नहीं रख सकती। कमेटी में ऐसे होशियार और जिम्मेदार आदमी होने चाहिए जो जिस समय चाहें हाजिर हो सकें। अगर हमारा मामला सच्चा हो, तो उसमें हजारों गरीब आदमियों की रक्षा समायी हुई है। जैसे हम अपने निजी स्वार्थ के लिए सब कुछ छोड़ देने का न्याय स्वीकार करते हैं, वैसा ही इस सार्वजनिक स्वार्थ की खातिर करने को बँधे हैं। यह हरएक सार्वजनिक कार्य करनेवाले का भाव भी होना चाहिए। मेरा खयाल है कि हमारा जवाब बहुत देर से गया माना जायगा। अक्सर सरकार अधिक सावधान होने के कारण ही सार्वजनिक आन्दोलन को दबा सकती है। 'सोनेवाले को नहीं, किन्तु जागनेवाले को ही न्याय मिलता है' यह अदालत में कहने का ही वाक्य नहीं, बल्कि हर व्यवहार में लागू होता है।

इसकी चर्चा टॉटनहम टेंम के साथ कर रहा था कि इतने में आपका पत्र आ गया। उस पर से मैंने अपना पिछला पत्र आपको लिखा। इस मामले में आपके पास निश्चित जानकारी हो और आप वैज्ञानिक दृष्टि रखने के इतने आग्रही हों कि उत्साह के आवेग में भी सत्य के मार्ग से ज़रा भी विचलित होने से इनकार करें, तो मैं प्लेग की जाँच के लिए और इस बात की खोज करने के लिए कि मनुष्य के जीवन में नमक का सच्चा मूल्य कितना है, आपकी सेवाओं का उपयोग करना शुरू चाहूँगा। आपकी बतायी हुई पुस्तकें ढूँढ़ने की कोशिश करूँगा।

सेवक

मो॰ क॰ गांधी"

१७। १८

"भाई श्री मावलंकर

"सेवा संबंधी प्रेसनोट की सभा के लिए तैयार किये गये जवाब के मसविदे के बारे में आपका पत्र मिला। हमारे जवाब का पहला भाग मुझे अच्छा लगा। आखिरी भाग उतना ही कमज़ोर है। मैं उसे सुधारने की झंझट में नहीं पड़ता। खेड़ा ज़िले के बाहर की संस्था खेड़ा ज़िले के बारे में कुछ नहीं कर सकती, सरकार के इस ख़याल का जवाब अधिक ज़ोरदार दिया जा सकता है। सभा का कोई भी सदस्य खेड़ा ज़िले से न आया हो, तो भी गुजरात के किसी भी हिस्से के लिए सरकार को लिखने का सभा को अधिकार है। इतना ही नहीं, उसका फ़र्ज़ भी है। जाँच करनेवाली कमेटी के सदस्यों के नाम देने की ज़रूरत थी। नये (जूनियर) और पुराने (सीनियर) कर्मचारियों में जो भेद करके बताया गया है, वह अनुचित है। हमने जनवरी में यह मान लिया दीखता है कि पुराने कर्मचारी होवें, तो वे बारीक और उचित जाँच करते। हमारा दावा तो यह है कि सरकार के कर्मचारी उसके अपने कर्मचारी होने के कारण ही अनुभवी और अपनी

तो सन्तव्य होती है। एक लाख रुपये इकट्ठे करके लगान अदा करने में कुछ रहस्य तो जरूर दीखता है, किन्तु ऐसा प्रयोग सरकार के लिए किसी काम का नहीं। किसानों की तरफ से हम कर चुकायें, इससे सरकार को कुछ भी दुख होगा, यह मुझे नहीं दीखता। किन्तु किसानों के लिए मवेशी बेचना तोड़े के चने चबाने जैसा है। सत्याग्रह का उद्देश्य *लोगों को साहसी और स्वतन्त्र बनाना है इनकी नाक रखना नहीं।* डर के मारे या हमारा अविश्वास करके कायर बनकर लोग रुपया अदा कर दें तो वे अदा करने लायक होंगे। विश्वासपात्र बनने के लिए हमें अधिक कोशिश करनी चाहिए। यह सत्याग्रह का प्रशस्त मार्ग है। मेरे पास एक लाख रुपये हों तो मैं लोगों से घर-घर जाकर कहूँ कि अपने ढोर बिकने देना, पर तुम बिना ब्याज के उधार लेकर भी रुपया मत देना। जब नीलाम हों तब एक लाख रुपये में लोगों के ढोर ले लूँ और जो ऐन मौके पर *अडिग खड़े रहे हों,* उन्हें समय आने पर वापस सौंप दूँ। लोगों से यह न कहूँ कि मैं उनके ढोर बचा लूँगा। यह ऐसा समय है कि यदि कार्य सांगोपांग सफल हो तो सरकार को लगभग माफी माँगनी पड़े।

मेरा यह सब लिखना समय बीत जाने के बाद की समझदारी लगती, इसलिए उसका मूल्य थोड़ा है। आप समय पर जो उचित प्रतीत हो, वही करते रहें। मुझे आपके कार्य को दूर से जाँच करने का अमूल्य लाभ मिलता है और आपको अनुभव मिलता है कि इस दुनिया में सब मनुष्यों के बिना काम चलाया जा सकता है।'

मिस पैटरन* का पत्र :

"'मिस्टर गोविन्द कहते हैं कि मणिलाल की उम्र इतनी बड़ी हो जाने पर भी उनकी शादी नहीं हुई, इसलिए वे बहुत दुःखी हैं। आप इनका क्या करनेवाले हैं? उसे क्या हमेशा कुँआरा रहना है?"

इसके संबंध में मणिलाल को इस प्रकार लिखा :

---

* दक्षिण अफ्रीका के साथी और 'इंडियन ओपीनियन' की छपाई के काम में मदद देनेवाले मि. ... की बहन। बापू जिन्हें 'देवीबहन' कहते थे।

"देवीबहन लिखती हैं कि तुमने डाम० के समक्ष विवाह न होने पर असंतोष प्रकट किया है। अपने विचार मेरे सामने रखने में कोई अड़चन न समझना। तुम मेरे कैदी नहीं, बल्कि मित्र हो। मैं एक सलाह दूंगा। उस पर विचार करके तुम्हें सूझे, सो रास्ता लेना। मैं चाहता हूँ कि मेरे डर से तुम कोई पापकर्म न करो। मैं चाहता हूँ कि मेरा या और किसीका भय तुम्हें न हो।

"मेरे विचार के अनुसार तो तुम शादी कर ही नहीं सकते। उसमें तुम्हारा प्रेम है। अगर यह स्थिति असह्य हो, तो तुम्हें जब वहाँ से छुट्टी मिल सके, तब यहाँ आकर विचार करना। यह स्पष्ट है कि वहाँ तो कुछ भी नहीं होगा। मैं मानता हूँ कि तुम्हें विवाह करना ही होगा, तो तुम्हारे लिए कन्या मिल जायगी। मैं यह मान लेता हूँ कि विवाह की खातिर ही तुम वहाँ का काम नहीं छोड़ोगे। 'इंडियन ओपीनियन' को व्यवस्थित करके ही तुम शादी का विचार कर सकते हो। अपना आनन्द न छोड़ना। स्वप्नावस्था में न रहना। हम हवाई वस्तुओं की इच्छा करते हैं। यह जानकर कि सभी नहीं मिल सकतीं, शान्ति रखना। जो कुछ करना है सो शुद्ध और मुझे रूप में करना है, यह निश्चय रखना। फिर तो सब कुशल ही है।

'मोहम्मद अली के मामले में मुझे शायद बड़ी लड़ाई में पड़ना पड़े। कोई फैसला नहीं हुआ।

बापू के आशीर्वाद"

इसी संबंध में मिस श्लेसिन को लिखा :

प्रिय देवी,

'मणिलाल का मामला दुःखदायक है। मैंने उसे आश्वासन का पत्र लिखा है। कुछ अधिक मन. यह अविवाहित जीवन बिता सके, तो फिर उसे अभ्यास हो जायगा। मैंने उसे लिखा है कि वह अपने का

---

* दक्षिण अफ्रीका के एक साथी।

बिलकुल स्वतंत्र मनुष्य माने और मेरी सलाह को एक मित्र की सलाह ही समझे। अभी तुम सबकी अग्नि-परीक्षा हो रही है। भगवान् करे, तुम सब आँच आये बिना इसमें से निकल आओ।

"यहाँ मेरे सामने सत्याग्रह की तीन लड़ाइयाँ आकर खड़ी हैं। इनमें से आखिर कौन-कौन-सी लड़ाई लड़नी पड़ेगी, कहना मुश्किल है। किन्तु अभी तो मेरा सारा समय इसीमें जाता है और मुझे सतत रेल-यात्रा करनी पड़ती है। यह यात्रा बहुत थकानेवाली है, पर किये बिना छुटकारा नहीं।

प्यार,
तुम्हारा भाई"

१-२-१८

आश्रम से प्रभुदास का पत्र : "देवदास काका के बिना आश्रम में अच्छा नहीं लगता। बापू, आप नहीं होते हैं, तब आश्रम सूना-सूना लगता है। आश्रम में बिलकुल जी नहीं लगता।"

इसके उत्तर में :

"मैं चाहता हूँ कि तुम यह पता लगा सको कि मेरे बिना भी आश्रम में बहुत कुछ है। मेरा शरीर यहाँ होने से ही अगर आश्रम में जीवन दिखाई देता हो, तो वह विषम स्थिति है। क्योंकि शरीर तो आखिर नष्ट होगा ही। अगर आत्मा की उपस्थिति वहाँ मालूम होती है, तो वह सदा वहाँ निवास करती है। हम जिस पर प्रेम रखते हैं, उसके शरीर की आसक्ति ज्यों-ज्यों छोड़ते हैं त्यों-त्यों प्रेम विशुद्ध और विस्तीर्ण होता है। आश्रम में जैसा वातावरण उत्पन्न करने के लिए हम सब प्रयत्न करते हैं वही वातावरण अगर हम अपने लिए निर्माण कर सकें, तो आश्रम सूना न लगे। इतना ही नहीं, उसमें सामाजिक वातावरण भी जल्दी पैदा हो।

'यह पत्र अनायास तुम्हारी बुद्धि के बाहर लिखा गया है। जो न समझ सको वह चि० मगनलाल को पूछकर समझ लो, औरों का भी

दिवीवहन लिखती हैं कि तुमने साम* के समक्ष विवाह न होने पर असंतोष प्रकट किया है। अपने विचार मेरे सामने रखने में कोई अड़चन न समझना। तुम मेरे कैदी नहीं, बल्कि मित्र हो। मैं एक सलाह दूंगा। उस पर विचार करके तुम्हें सूझे, सो रास्ता लेना। मैं चाहता हूँ कि मेरे डर से तुम कोई पापकर्म न करो। मैं चाहता हूँ कि मेरा या और किसीका भय तुम्हें न हो।

"मेरे विचार के अनुसार तो तुम शादी कर ही नहीं सकते। उसमें तुम्हारा श्रेय है। अगर यह स्थिति असह्य हो, तो तुम्हें जब वहाँ से छुट्टी मिल सके, तब यहाँ आकर विचार करना। यह साफ है कि वहाँ तो कुछ भी नहीं होगा। मैं मानता हूँ कि तुम्हें विवाह करना ही होगा तो तुम्हारे लिए कन्या मिल जायगी। मैं यह मान लेता हूँ कि विवाह की खातिर ही तुम वहाँ का काम नहीं छोड़ोगे। 'इंडियन ओपीनियन' को व्यवस्थित करके ही तुम शादी का विचार कर सकते हो। अपना आनन्द न छोड़ना। स्वप्नावस्था में न रहना। हम हजारों वस्तुओं की इच्छा करते हैं। यह जानकर कि सभी नहीं मिल सकतीं शान्ति रखना। जो कुछ करना है सो तुम्हें और मुझे उस में करना है, यह निश्चय रखना। फिर तो सब कुशल ही है।

'मोहम्मद अली के मामले में मुझे शायद बड़ी लड़ाई में पड़ना पड़े। कोई फैसला नहीं हुआ।

बापू के आशीर्वाद"

इसी संबंध में मिस वेस्ट को लिखा :

¶| 'प्रिय देवी,

'मणिलाल का मामला दुःखदायक है। मैंने उसे आश्वासन का पत्र लिखा है। कुछ अधिक वर्ष वह अविवाहित जीवन बिता सके, तो फिर उसे अभ्यास हो जायगा। मैंने उसे लिखा है कि वह अपने को

---

* दक्षिण अफ्रीका के एक साथी।

बिलकुल स्वतंत्र मनुष्य माने और मेरी सलाह को एक मित्र की सलाह ही समझे। अभी तुम सच्ची अग्नि-परीक्षा दे रही है। भगवान् करे, तुम उस आँच आये बिना इसमें से निकल आओ।

"यहाँ मेरे सामने सत्याग्रह की तीन लड़ाइयाँ आकर खड़ी हैं। इनमें से आखिर कौन-कौन-सी लड़ाई लड़नी पड़ेगी, कहना मुश्किल है। किन्तु अभी तो मेरा सारा समय इसीमें जाता है और मुझे सतत रेल-यात्रा करनी पड़ती है। यह यात्रा बहुत थकानेवाली है, पर किये बिना छुटकारा नहीं।

प्यार,
तुम्हारा भाई"

९-२ १८

आश्रम से प्रभुदास का पत्र : "देवदास काका के बिना आश्रम में अच्छा नहीं लगता। बापू, आप नहीं होते हैं, तब आश्रम सूना-सूना लगता है। आश्रम में बिलकुल जी नहीं लगता।

इसके उत्तर में :

"मैं चाहता हूँ कि तुम यह पता लगा सको कि मेरे बिना भी आश्रम में बहुत कुछ है। मेरा शरीर यहाँ होने से ही अगर आश्रम में जीवन दिखाई देता हो, तो यह विषम स्थिति है। क्योंकि शरीर तो आखिर नष्ट होगा ही। अगर आत्मा की उपस्थिति वहाँ मालूम होती है, तो वह सदा वहाँ निवास करती है। हम जिस पर प्रेम रखते हैं, उसके शरीर की आसक्ति ज्यों-ज्यों छोड़ते हैं, त्यों-त्यों प्रेम विशुद्ध और निर्लेप होता है। आश्रम में जैसा वातावरण उत्पन्न करने के लिए हम सब प्रयत्न करते हैं, वही वातावरण अगर हम अपने लिए निर्माण कर सकें, तो आश्रम सूना न लगे। इतना ही नहीं, उसमें सामाजिक वातावरण भी जल्दी पैदा हो।

"यह पत्र अनायास तुम्हारी बुद्धि के बाहर लिखा गया है। जो न समझ सको, वह चि॰ छगनलाल को पूछकर समझ लो, औरों को भी

पढ़ा देना। क्योंकि यह पत्र ऐसा है, जिससे सभी का उपकार हो सकता है। इसे तुम संग्रह करके रखना और बार-बार पढ़कर इसका एक-एक शब्द खूब समझ लेना।

बापू के आशीर्वाद"

देवदास को एक पत्र में :

"देवा, जिस दिन तू मेरी गद्दी लेने को तैयार हो जायगा, उस दिन तुझे रोकने की ताकत किसी में नहीं होगी। मैं सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि तू खूब मजबूत बन। यह न समझना कि तुममें योग्यता नहीं है काम जैसे-जैसे आते जायेंगे, वैसे-वैसे सुलझते जायेंगे।"

एक रांची के सज्जन को :

'आश्रम में भरती हुए बिना भी जो मनुष्य आश्रम के नियमों का पालन करे वह आश्रमवासी है। और जो आश्रम में रहते हुए भी उनका जान-बूझकर उल्लंघन करे, वह आश्रम से बाहर का है।'

मिसेज जिनराजदास ने बा को अखिल भारतीय महिला-परिषद् की सदस्या बनाया और उसका कार्ड भेजा। उन्हें लिखा :

ग्रा 'कस्तूरबाई लगभग निरक्षर हैं। अपना नाम भी वे अंग्रेजी में नहीं लिख सकतीं। आपको अपने रजिस्टर की शोभा के लिए केवल नाम तो नहीं चाहिए न?'

इसके बाद मिसेज जिनराजदास का मीठा उलाहना आया। उसके उत्तर में लिखा :

ग्रा "कस्तूरबाई को अंग्रेजी में हस्ताक्षर करना न आने के बारे में लिखा वाक्य ठीक नहीं लिखा गया था। उसमें पूरा विचार नहीं आ पाया। कस्तूरबाई 'शिक्षित' शब्द के प्रचलित अर्थ में शिक्षित नहीं है। गुजराती भी लिखना-पढ़ना उसे बहुत थोड़ा आता है। कस्तूरबाई अंग्रेजी में अपने दस्तखत नहीं कर सकती यह लिखने का उद्देश्य अंग्रेजी शिक्षा को महत्त्व देनेवाले लोगों को यह बताना था कि किस संस्था के

हर सदस्य अपनी अपनी भाषा के या अभिरुचि के परिचय दें, उस संस्था की सदस्यता पाने के लिए कस्तूरभाई बिलकुल अयोग्य है।"

आश्रम के एक पहले के विद्यार्थी भाई विनायक नरहर भावे का पत्र :

१०-२-१८

"परमपूज्य बापूजी,

"मैं एक वर्ष पहले स्वास्थ्य के कारण आश्रम से चला गया था। दो-तीन महीने बाद मैं लौटकर आश्रम में आने का निश्चय था। किन्तु एक वर्ष हो गया, तो भी मेरा कोई पता ही नहीं। फलस्वरूप यह प्रश्न उपस्थित हुआ होगा कि मैं आश्रमवासी हूँ या नहीं, अथवा जीवित हूँ या नहीं। इसलिए मुझे स्वीकार करना चाहिए कि इस बारे में सारा दोष मेरा ही है। फिर भी मैंने मामा को भी एक-दो पत्र लिखे थे, उनमें लिखा था कि आवश्यकता का खयाल पड़ता हो, तो मुझे खबर लिखिए। मैं सब कुछ छोड़कर तुरत ही आ पहुँचूँगा। नहीं तो जिस काम के कारण मैं बाहर रह रहा हूँ वह काम पूरा होने के बाद मैं आश्रम में हाजिर होऊँगा। मैं आश्रम से चला गया ऐसा शक भी किसीको हुआ हो तो यह भी मेरा ही दोष है। क्योंकि पत्र न लिखने की मेरी आदत है। फिर भी मैं इतना तो लिख ही दूँ कि आश्रम ने मेरे हृदय में ऊँचा स्थान पा लिया है। इतना ही नहीं, मेरी यह दृढ़ भावना है कि मेरा जन्म ही आश्रम के लिए है। तो मैं एक वर्ष तक किसलिए बाहर रहा ?

"जब मैं हाईस्कूल में था तभी मैंने निश्चय की थी कि मुझे अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करके देश-सेवा करनी है। फिर मैं कालेज में भरती हुआ। उस समय मुझे संस्कृत का शौक लगा। किन्तु मेरे पिताजी ने मुझे फ्रेंच भाषा लेकर कालेज में प्रवेश करने की आज्ञा दी। फिर भी संस्कृत पर मेरा प्रेम कम नहीं हुआ और उस समय से ही मैंने घर पर संस्कृत-अध्ययन ही

संस्कृत का अभ्यास शुरू कर दिया। वेदान्त और तत्त्वज्ञान का अध्ययन करने का मेरा निश्चय था। आपसे इजाजत लेकर मैं वाई में मराठी हुआ, उस समय वेदान्त का अध्ययन करने का मुझे एक उत्तम अवसर मिला। वाई में नारायण शास्त्री मराठे नामक एक आजन्म ब्रह्मचारी विद्वान् वेदान्त तथा दूसरे शास्त्र पढ़ाने का काम करते हैं। उनसे उपनिषद् वगैरह पढ़ने का मुझे 'लोभ' हुआ। इस लोभ के कारण मैं वाई में अधिक समय रहा। अब यह बताता हूँ कि इस बीच मैंने क्या किया।

"जिस लोभ के लिए मैं बाहर रहा, उसके सम्बन्ध में मेरा काम इस प्रकार है : (१) उपनिषदें, (२) गीता, (३) ब्रह्मसूत्र और शांकर भाष्य (४) मनुस्मृति (५) पातंजल योगदर्शन, इन ग्रंथों का मैंने अध्ययन किया। इनके सिवा (१) न्यायसूत्र, (२) वैशेषिक सूत्र, (३) याज्ञवल्क्य स्मृति—ये ग्रंथ पढ़ लिये। अब मुझे ज्यादा पढ़ने का मोह है ही नहीं। मैं अपने-आप अधिक पढ़ सकूँगा। दूसरा काम, जिस स्वास्थ्य के लिए मैं वाई गया उसके सम्बन्ध में।

"स्वास्थ्य सुधारने के लिए पहले मैंने दस-बारह मील घूमना रखा था। बाद में छह से आठ सेर पीसना शुरू किया। आजकल तीन सौ नमस्कार और घूमना मेरी कसरत है। इससे मेरा स्वास्थ्य अच्छा हो गया है।

"भोजन के संबंध में : पहले छह महीने तक नमक खाता था मगर बाद में छोड़ दिया। मसाला वगैरह बिल्कुल नहीं खाया और आजन्म नमक और मसाला न खाने का व्रत लिया है। दूध शुरू किया। कई प्रयोग करने के बाद साबित हुआ कि दूध के बिना अच्छी तरह काम नहीं चल सकता। लेकिन यह भी छोड़ा जा सके तो छोड़ने की मेरी इच्छा है। एक महीना सिर्फ केले नीबू और दूध पर बिताया। ताकत कम हो गयी। आजकल मेरी खुराक इस प्रकार है : दूध डेढ़ सेर (साठ तोले), रोटी दो (बीस तोले ज्वार की), केले चार-पाँच नीबू एक (जब मिल

सके) । अब मैं आश्रम में आऊँगा, तब आपसे सलाह लेकर अपना आहार निश्चित करने का विचार है। स्वाद के कारण और कोई पदार्थ खाने की इच्छा नहीं होती। तो भी ऐसा लगता है कि उपर्युक्त आहार भी काफी अमीराना है। रोज का खर्च लगभग इस प्रकार है : केले और नीबू चार पैसे, ज्वार दो पैसे, दूध पाँच पैसे, कुल ग्यारह पैसे। आपसे मुझे यह जानना है कि इसमें क्या हेरफेर करना चाहिए। यह आप मुझे पत्र द्वारा लिखियेगा।

"दूसरे काम :

(१) गीताजी का वर्ग चलाया। उसमें छह विद्यार्थियों को सारी गीता अर्थ-सहित पढ़ायी यानी मुखस्थ।

(२) ज्ञानेश्वरी, छह अध्याय। इस वर्ग में चार विद्यार्थी थे।

(३) उपनिषदें नौ। इस वर्ग में दो छात्र थे।

(४) हिन्दी का प्रचार: मैं खुद ही हिन्दी अच्छी तरह नहीं जानता। फिर भी हिन्दी अखबार विद्यार्थियों को साथ लेकर पढ़ने का कार्यक्रम रखा था।

(५) दो विद्यार्थियों को अंग्रेजी।

(६) प्रवास : लगभग ४ मील (पैदल)। राजगढ़, सिंहगढ़ तोरणगढ़ वगैरह ऐतिहासिक प्रसिद्ध किले देखे।

(७) प्रवास करते समय गीताजी पर प्रवचन करने का कार्यक्रम रखा था। आज तक ५ प्रवचन हुए। अब भी मैं आश्रम में आने से पहले प्रवास करता हुआ पैदल बम्बई आऊँगा और वहाँ से रेल द्वारा आश्रम में प्रवेश करूँगा। मेरे साथ एक १६ बरस का विद्यार्थी घूमता है। उसका विचार मुझसे ही गीता पढ़ने का है। यह काम भी आजकल प्रवास में ही हो रहा है। मेरी आश्रम में प्रवेश करने की अधिक-से-अधिक मीयाद चैत्र सुदी १ तक है।

(८) वाई में 'विद्यार्थी-मण्डल' नाम की एक संस्था स्थापित की। उसमें एक वाचनालय कायम किया और वाचनालय की सहायता के लिए

पीसने का एक वर्ग रखा। उसमें १५ विद्यार्थी और मैं खुद पीसता था। जो लोग चक्की (मशीन) से पिसवा लाते हैं, उनका काम (१ सेर पर एक पैसा लेकर) करना और पैसे वाचनालय को दे देना। बड़े साहूकारों के बच्चे भी इस वर्ग में भरती हुए थे। बाईं पुराने विचार का स्थान होने के कारण और इस वर्ग में सारे भाइयों के हाईस्कूल में पढ़नेवाले लड़के होने के कारण सभी ने हमारी मूर्खों में गिनती कर ली। फिर भी यह वर्ग दो महीने चला। वाचनालय में ४ पुस्तकें जमा हो गयी हैं।

(३) सत्याग्रह-आश्रम के सिद्धान्तों का प्रचार करने की मैंने बहुत कोशिश की।

(१) बड़ोदा में १०-१५ मित्र हैं। उन सबकी लोकसेवा करने की इच्छा है। इसलिए वहाँ तीन वर्ष पहले मातृभाषा प्रचार के लिए एक संस्था स्थापित की। जब उस संस्था का वार्षिक उत्सव हुआ, तब मैं वहाँ गया। (उत्सव अर्थात् केवल संस्था के सदस्य मिलकर इस बारे में चर्चा करें कि क्या काम किया है और क्या करना है।) उस समय मैंने यह विचार रखा कि हिन्दी भाषा का प्रचार करना चाहिए। मेरा विश्वास है कि संस्था यह काम अवश्य करेगी। आपने हिन्दी-प्रचार का जो प्रयत्न शुरू किया है, उसमें बड़ौदा की यह संस्था काम करने के लिए तैयार रहेगी।

"अन्त में यह कहना जरूरी है कि मैंने सत्याग्रह-आश्रम के नियमों की दृष्टि से क्या आचरण किया।

"अस्वाद व्रत : इस बारे में आहार के विषय में लिख दिया है।

"अपरिग्रह : लकड़ी की थाली कटोरा, आश्रम का एक लोटा धोती कम्बल और पुस्तकें, बस इतना परिग्रह रखा है। कुर्ता कोट, टोपी वगैरह इस्तेमाल न करने का व्रत लिया है, इसलिए शरीर पर भी धोती। करघे पर बुने हुए कपड़े ही काम में लेता हूँ।

"स्वदेशी : विदेशी का मेरे साथ कोई वास्ता ही नहीं है। (आपके मद्रास के व्याख्यान के अनुसार व्यापक अर्थ न किया हो तभी।)

"सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य — मुझे विश्वास है कि अपनी जानकारी के अनुसार मैंने इन व्रतों का परिपालन अच्छी तरह किया है।

"अधिक क्या कहूँ? जब सपने आते हैं, तब भी एक ही विचार मन में आता है। क्या ईश्वर मुझसे सेवा करा लेगा? मैं पूर्ण श्रद्धा से इतना कह सकता हूँ। मैं आश्रम के नियमों के अनुसार (एक को छोड़ कर) चलता हूँ। इसलिए मैं आश्रम में ही हूँ। आश्रम ही मेरा साध्य है। जिस एक विषय का ऊपर उल्लेख किया गया है, वह अपना भोजन (अर्थात् रोटी) खुद बनाना है। इसका भी मैंने प्रयत्न किया, पर प्रवास में चल नहीं पाया।

"सत्याग्रह का या दूसरा (शायद रेलवे के संबंध में सत्याग्रह करना हो) सवाल उठता हो, तो मैं तुरन्त ही आ पहुँचूँगा। अन्यथा मीयाद ऊपर लिख दी है।

"अभी आश्रम में क्या हेरफेर हुए हैं और कितने विद्यार्थी हैं, राष्ट्रीय शिक्षा की योजना क्या है और मेरे आहार में क्या परिवर्तन करना चाहिए, यह जानने की मेरी प्रबल इच्छा है। आपको मुझे खुद पत्र लिखना चाहिए। यह 'विनोबा' का—आपको पितृतुल्य समझने वाले आपके पुत्र का—अत्यन्त आग्रह है।

"मैं दो-चार दिनों में यह गाँव छोड़ूँगा।"

इस पत्र को पढ़ते हुए बापूजी के मुख से इस प्रकार के उद्‌गार निकले थे: "गोरख ने मछिंदर को हरा दिया! भीम है, भीम!" दूसरे दिन सवेरे उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया:

"समझ में नहीं आता तुम्हारे लिए कौनसा विशेषण लगाऊँ। तुम्हारा प्रेम और तुम्हारा चरित्र मुझे मोह में डाल देता है। तुम्हारी परीक्षा मुझे मोह में डुबा देती है। मैं तुम्हारी परीक्षा करने में असमर्थ हूँ। तुम्हारी की हुई परीक्षा को मैं स्वीकार करता हूँ और तुम्हारे लिए पिता का पद ग्रहण करता हूँ। मालूम पड़ता है, मेरा काम तुमने लगभग पूरा कर दिया। मेरी मान्यता है कि सच्चा पिता अपने

से अधिक चरित्रवान पुत्र का जन्म देता है। सच्चा पुत्र वह है, जो पिता के किये हुए में वृद्धि करे। पिता सत्यवादी, दृढ़ और धर्मात्मा हो, तो पुत्र अपने में यह गुण और अधिक पैदा करे। मालूम होता है, तुमने ऐसा ही किया है। मुझे ऐसा तो नहीं दीखता कि यह तुमने मेरे प्रयत्न से किया है। इसलिए तुम मुझे जो पद दे रहे हो, उसे तुम्हारे प्रेम की भेंट के रूप में मैं स्वीकार करता हूँ। उस पद के योग्य बनने का प्रयत्न करूँगा और जब मैं हिरण्यकशिपु साबित होऊँ, तब भक्त प्रह्लाद की तरह मेरा सादर निरादर करना।

'तुम्हारी यह बात सही है कि तुमने बाहर रहकर आश्रम के नियमों का बहुत अच्छी तरह पालन किया है। तुम्हारे बारे के विषय में मुझे शंका थी ही नहीं। तुम्हारे लिखे हुए सन्देश मुझे मामा ने पढ़कर सुना दिये थे। ईश्वर तुम्हें दीर्घायु करे और मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा उपयोग भारत की उन्नति के लिए हो।

"तुम्हारी खुराक में हेरफेर करने लायक अभी तो कोई बात नजर नहीं आती। फिलहाल दूध नहीं छोड़ना चाहिए। बल्कि जरूरत मालूम हो तो दूध की मात्रा बढ़ा दी जाय।

'जिले के मामले में सत्याग्रह की आवश्यकता नहीं है। लेकिन इस बारे में ज्ञानवान् प्रचारकों की जरूरत है। संभव है, खेड़ा जिले के मामले में समय आने पर लड़ाई लड़नी पड़े। मैं तो अभी रमता राम हूँ। एक-दो दिन में दिल्ली जाना होगा।

"और बातें जब तुम आओगे, तब। सब तुमसे मिलने को उत्सुक हैं।

बापू के आशीर्वाद"

बाद में बापू के उद्गार :

बड़ा भारी आदमी है। मेरा खयाल रहा है कि मेरा महाराष्ट्रीयों और मद्रासियों के साथ भारी ऋणानुबन्ध है। मद्रासी तो अभी रहे नहीं, किन्तु

महात्माओं में किसीने भी मुझे निराश नहीं किया। उनमें विनोबा ने तो हद कर दी।"

पंडित हृदयनाथ कुंजरू को कुंभ-मेले के बारे में लिखा :

¶ "इस समय मैं एक बड़ी भयंकर परिस्थिति हाथ में ले रहा हूँ और उससे भी अधिक भयंकर परिस्थिति में पड़ने की तैयारी कर रहा हूँ।" इसलिए आप समझ सकेंगे कि मैं मेले में क्यों नहीं आया। हिन्दू-धर्म को उसके आसुरी और दिव्य दोनों स्वरूपों में देखने का वहाँ जो अवसर मिल सकता है, उसका मैं बहुत लाभ लेना चाहता था। मैं जानता हूँ कि मुझ पर आसुरी स्वरूप का कोई असर नहीं हो सकता। किन्तु उसके दिव्य स्वरूप का दरबार में मुझ पर जो प्रभाव पड़ा, उसका लाभ लेने की मेरी इच्छा थी। साथ ही वहाँ आपसे मिलना भी हो जाता और भारत-सेवकों को हर दूसरे महीने बीमार पड़ने की कुटेव न डालनी चाहिए, इस बारे में आपको थोड़ा उपदेश देने का मौका भी मिलता। लेकिन शायद ऐसा होना बदा नहीं था।

सेवक
मो० क० गांधी"

११ २ १८

उनकी अपनी बहन का पत्र— महँगाई और निबाह की कठिनाइयों के बारे में तथा कुछ और अधिक रुपया भेजने की व्यवस्था हो सके तो अच्छा, इस आशय का। उसका उत्तर :

"पूज्य बहन,

"तुम्हें पत्र तो नहीं लिखता, किन्तु तुम्हारी मूर्ति मेरी आँखों से घड़ी भर भी दूर नहीं रही। तुम मेरे पास नहीं हो इसका जो घाव मुझे लगा है, वह कभी भर नहीं सकता। उसे तुम्हीं भर सकती हो। तुम मेरे पास रहो, तो तुम्हारा चेहरा देखकर मुझे कुछ तो माँ की याद आये ही। इस

लिए भी तुमने मुझे दूर रखा है। तुम्हारे विरुद्ध मेरी शिकायत बन्द हो ही नहीं सकती। तुम मुझे अभिमानपूर्वक यह कहने का अवसर देती ही नहीं कि मेरी बहन भी मेरे काम में मेरी मदद कर रही है। मैं पत्र लिखूँ, तो भी अपने मन का दुःख ही बता सकता हूँ। और उसमें जैसे ताने अभी मार रहा हूँ, वैसे ताने ही मार सकता हूँ। इसलिए भी पत्र लिखने में हिचकिचाता हूँ। मैं जानता हूँ कि आजकल महँगाई है। किन्तु तुम्हें अधिक रुपया कहाँ से दूँ ? मुझे मित्र के पैसे देने हैं। मैं किस मुँह से रुपया माँगूँ ? वे भी पूछेंगे : 'तुम्हारी बहन तो तुम्हारे साथ ही होनी चाहिए।' इसका जवाब मैं क्या दूँ ? दुनिया मुझे अछूत नहीं मानती, मगर तुम्हारे लिए तो मैं अछूत हूँ। ऐसी हालत में मैं तुम्हें एक ही बात कह सकता हूँ। तुम जो कष्ट भोग रही हो, उससे ज्यादा सुविधा मैं नहीं भोग रहा हूँ। इसलिए तुम्हारे दुःख मुझे असह्य नहीं प्रतीत होते। तुम चक्की चलाकर पैसे की कमी पूरी करती हो इसमें मुझे कुछ भी शर्म नहीं लगती। मेरी तो इतनी ही प्रार्थना है कि तुममें जरा भी दया की भावना हो, तो तुम यहाँ आकर मेरे साथ रहो। मेरे काम में भाग लो। ऐसा करो, तो अभी जो तुम्हें ऐसा महसूस होता होगा कि तुम्हारे भाई नहीं है, वह स्थिति मिट जायगी। एक के बजाय बहुत-से भाई तुम्हें यहाँ दिखाई देंगे और बहुत से बच्चों की तुम माँ बन बैठोगी। यह शुद्ध वैष्णव धर्म है। जब तक तुम्हें यह न जँचे, तब तक हमें वियोग-दुःख सहन करना ही पड़ेगा।

अपने मानवे की बहू को :

"चि० निर्मला

'यह पत्र बहन रलियात को पढ़ा देना। तुम्हें तो मैं क्या लिख सकता हूँ ? तुम्हारे लिए मुझे इतने अधिक काम दिखाई देते हैं कि तुम्हारी सारी जिन्दगी आदर्श से भर जाय और तुम्हारा वैधव्य सुशोभित हो। कुछ स्त्रियाँ मुझे मदद दे रही हैं। दुर्भाग्य से तुम्हारी सहायता मुझे नहीं मिल सकती। मैं बहन रलियात को दोष देता हूँ, वैसे मैं तुम्हें दोष नहीं दे

सकूँगा। क्योंकि तुम्हें दो बुजुर्गों को खुश करना पड़ता है, पिताजी को और बहन को। किन्तु यदि तुम्हारी इच्छा मेरी सहायता करने की हो जाय, तो तुम अपने लिए इजाजत ले सकती हो। इतना ही नहीं, तुम बहन रलियात को भी यहाँ ला सकती हो; क्योंकि तुम्हारे बिना तो वह जीयेगी ही नहीं। मैं यह मानता हूँ कि किसी-न-किसी दिन तो तुम मेरे पास जरूर आओगी। तुम इतना तो समझती होगी कि अगर गोकुलदास जीता होता तो वह मुझसे एक क्षण भी दूर नहीं रह सकता था। मेरे साथ रहकर तुम गोकुलदास की आत्मा को भी शान्ति दे सकती हो।

"बा बिहार में है। अक्सर तुम्हारी याद करती है। मुझे अभी कुछ समय तक इधर ही रहना पड़ेगा।

१२ २ १८

का पत्र : अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद थोड़े ही समय में होनेवाले विवाह के लिए कन्या की याचना। एक बरस भी शोक न मनाया जा सकने के लिए ग्लानि होने पर भी सगे-संबंधियों का आग्रह अभी न मानूँ, तो गलत अर्थ लगाया जायगा, भविष्य में कन्या नहीं मिलेगी, वगैरह बहानों से अपने कार्य का बचाव। उसका उत्तर :

'भाईश्री ,

"तुम्हारा पत्र मिला। तुम पर शब्द-प्रहार करना बेकार मालूम होता है। कई बार मनुष्य अपने दोषों का वर्णन करके अपना गुणगान करता है। ऐसी ही दशा तुम्हारी है। कहा जा सकता है कि चूँकि तुममें साधारण मनुष्यों से कुछ विशेषता है, इसलिए तुम सार्वजनिक जीवन में भाग लेते हो। (परन्तु) अपने कार्य में तुम मामूली आदमियों से कुछ अधिक कमजोरी दिखा रहे हो। तुमने अपनी पहली स्त्री की मृत्यु से गहरी चोट लगने का दावा किया। तुमने बताया कि उसके अन्तिम वचनों का तुम पर गहरा असर हुआ। किन्तु तुम उस चोट को भूल गये और अन्तिम वचनों का असर उड़ गया। बड़ी वेदना से रोता हुआ आदमी एकाएक

हँसने लगे, तो वह नाटककार (अभिनेता) माना जायगा या यों कहा जायगा कि पागल होकर हँसने लगा है। तुम कल रो रहे थे, तो आज हँसने लगे। तुम्हें कौन-सा विशेषण लगाया जाय? जिस आदमी के विषय अपने वश में न रहें, जो मनुष्य जरा भी संयम न रख सके, वह क्या सार्वजनिक सेवा करने के योग्य माना जायगा? तुमसे जो घटिया आदमी सार्वजनिक कामों में पाये जाते हैं, उनसे तो तुम ठीक हो, इस तरह का बचाव देकर तुम जितने गिरे हो, उससे भी अधिक न गिरना।

"तुमने जो कदम उठाया है, वह कदम हिन्दू-पारसी के सुधार में बड़े महत्त्व का विषय है। विधवाओं के विवाह से यह ज्यादा जरूरी है कि विधुर थोड़ी मर्यादा रखें। तुम तो मूल सिद्धान्तों को भी भूल गये हो। कभी गुजरात-सेवा-मंडल बने और तुम्हें उसके साथ निकट का सम्बन्ध रखना पड़े, तो उसमें तुम्हें लिया जाय या नहीं, यह मेरे लिए बड़ा धर्म-संकट होगा। मैं तुम्हारा न्याय नहीं करूँगा, न्याय तो भगवान् ही करेंगे। किन्तु अपने जीवन के साथियों को चुनने का अधिकार मैं नहीं छोड़ूँगा।

'तुम्हारी पहली पत्नी के मरने से तुम्हें कितनी चोट पहुँची इसका अन्दाज तुमने दुनिया को क्या दिया। तुम्हारे काम से मुझ पर तो वज्र-पात हुआ है। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे और तुम्हें सद्बुद्धि दे।

मोहनदास गांधी'

प्रिंसिपल से वेस्ट के लगातार पत्र : 'इंडियन ओपीनियन चलाना कठिन है। उसे डरबन में ले जायें और व्यापार का तत्त्व अधिक दाखिल करें, तो काम चले, ऐसी उनकी राय और ऐसी खुद की राय है।' इत्यादि। उन्हें उत्तर :

'भाईश्री वेस्ट,

'मैं आशा रखता हूँ कि मेरे सब पत्र तुम्हें मिल गये होंगे। मुझे तुम्हारे दो पत्रों की पहुँच देनी बाकी है। सचमुच मुझे नहीं सूझता कि

क्या लिखूँ। बीच और भी बीर के पत्र मैंने पढ़े हैं। अपने दृष्टिकोण के अनुसार वे सही हैं। मेरी राय से तो अच्छे किसान बनकर तुम अपने आदर्शों की अधिक अच्छी उपासना कर सकोगे। मणिलाल की दीक्षान्त-वर्ग से दी हुई सलाह मुझे पसंद नहीं आयी। उसे फिनिक्स में रह कर गुजराती विभाग सँभालना चाहिए। किन्तु जैसा मैंने कहा है, अन्तिम निर्णय तुम्हारा होगा। तुम्हें जो अच्छा लगे, वही तुम्हें करना चाहिए। अपनी तरफ से तो मैं कहता हूँ कि सम्पत्ति जितनी मेरी है, उतनी ही तुम्हारी भी है। यही बात हमारे आदर्श की है।

"फिनिक्स के संबंध में इतना कहकर यहाँ की अपनी प्रवृत्तियों के बारे में कहूँगा। मैं पत्र कम लिखता हूँ — यही बताता है कि यहाँ मैं कितना काम में हूँ। मैं इतना काम करता हूँ, इससे सबको आश्चर्य होता है। किन्तु एक भी काम में ढूँढने नहीं गया। प्रवृत्तियाँ जैसे-जैसे मुझ पर आ पड़ीं, वैसे-वैसे मैंने हाथ में ले लीं। बिहार में धारा-सभा में कानून बनाने का काम हो रहा है, उस पर निगाह रखने के अतिरिक्त, वहाँ मैंने कुछ पाठशालाएँ खोली हैं। उनकी व्यवस्था देखनी पड़ती है। शिक्षक आम तौर पर विवाहित हैं। पति और पत्नी दोनों काम करते हैं। गाँव के बच्चों को हम पढ़ाते हैं। पुरुषों को स्वास्थ्य और सफाई सिखाते हैं। देहात की स्त्रियों से भी मिलते हैं। इन्हें पर्दा छोड़ देने और अपनी लड़कियों को हमारी पाठशाला में भेजने की बात समझाते हैं। दवा हम मुफ्त देते हैं। बीमारियाँ परिचित होती हैं और उनके इलाज भी परिचित और सादे होते हैं। इसलिए यह काम तालीम न पाये हुए स्त्री-पुरुषों को, अगर वे दूसरी तरह विश्वासपात्र हों, सौंपने में मुझे कोई आपत्ति नहीं दीखती। उदाहरण के लिए कस्तूरबाई एक पाठशाला में काम करती है और सबसे दवाइयाँ देती है। अब तक हम मलेरिया के तीन हजार रोगियों को राहत पहुँचा सके हैं। हम देहात के कुएँ और रास्ते साफ करते हैं और इसमें ग्रामवासियों का सक्रिय सहयोग लेते हैं। अब तक हमने तीन पाठशालाएँ खोली हैं। उनमें

लड़के और ग्यारह बरस से नीचे की लड़कियों मिलाकर २५ से ऊपर विद्यार्थी हैं। सारे शिक्षक स्वयंसेवक हैं।

"गुजरात में भी काम हो रहा है। वहाँ मेरे गोधरा और भड़ौच के भाषणों में बताया हुआ कार्यक्रम चलाया जाता है। अभी तो सत्याग्रह का एक प्रसंग नजदीक दिखाई देता है। उससे निपटने का प्रयत्न मैं कर रहा हूँ। गुजरात की प्रवृत्तियाँ विविध प्रकार की हैं। साथ ही भाई-भाइयों के छुटकारे के लिए आन्दोलन शुरू करने का विचार कर रहा हूँ। इसके सिवा गोसेवा, सफाई, राष्ट्रीय शिक्षा, हाथ की बुनाई और हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार आदि प्रवृत्तियों का विकास कर रहा हूँ। अलबत्ता आश्रम और वहाँ की राष्ट्रीय पाठशाला तो चल ही रही है।

"सौभाग्य से इन सब कामों में मुझे अच्छे साथी मिल गये हैं। इन प्रवृत्तियों के सिलसिले में मेरा काफी घूमना हो जाता है।

"आश्रम साबरमती नदी के किनारे सुन्दर स्थान पर स्थित है। हम रोज नदी में नहाते हैं। सब लड़कों को तैरना आ गया है। पाठशाला को होशियार आचार्य मिल गये हैं। वे गुजरात-कॉलेज में प्रोफेसर थे। आश्रम की व्यवस्था मगनलाल के हाथ में है। यह नहीं कहा जा सकता कि इस आश्रम और पाठशाला का भविष्य कैसा सिद्ध होगा। अभी तो ये दोनों संस्थाएँ लोकप्रिय हैं।

'इन सब प्रवृत्तियों में वहाँ के साथियों के सहयोग की इच्छा अक्सर हो आती है। किन्तु मैं जानता हूँ कि यह संभव नहीं है। फिर भी इतना तो निश्चय समझना कि एक दिन भी ऐसा नहीं जाता, जब तुममें से किसी-न-किसीका विचार मेरे मन में न आता हो। तुम्हारे युद्ध बहादुरी के काम यहाँ मुझे उचित दृष्टान्त के रूप में काम आते हैं। मैं यहाँ की अपनी प्रवृत्तियों का विकास वहाँ के अनुभव के आधार पर कर रहा हूँ।

'मिसेज वेस्ट से कहना कि वह पलभर भी यह न सोचें कि उन्हें और मम्मा को मैं भूल गया हूँ। इसी तरह मैं अपने दिये हुए वचन भी

मीठी-मीठी बातें करके और उन्हें रोज खाने का आग्रह करके, तो दूसरे दिन वल्लभभाई को नियत समय भी खाने के लिए आने का आग्रह करके, बाद वरस से गृहस्थी नहीं होते हुए भी उनके शादी न करने पर बहुत संतोष प्रकट कर तथा हमें अपनी कुछ गुप्त बातें भी कहकर चेले बनाने की उनकी जो कोशिश जारी है—यह सारी इनकी लीला का वर्णन करते हुए कोई भी मनुष्य थक जायगा। नेति नेति कहकर रुक जायगा।

रात को गुजरात-वर्नाक्युलर सोसाइटी से आते हुए, मनरएम ब्रदन के अत्यन्त आग्रह के बावजूद मोटर में न बैठकर पैदल चलना पसंद किया। रास्ते में अनेक बातों की चर्चा हुई। 'इंडियन ओपीनियन' में आनेवाले सर्वोदय के प्रकरणों पर मैं विवेचन करता हूँ। कितने ही प्रकरण अत्यन्त सुन्दर मालूम होते हैं तो कुछ बहुत कमजोर जान पड़ते हैं। आलोचना को स्वीकार करके कहने लगे: कभी-कभी बहुत जोश में आकर लिखता, तब बहुत सुन्दर चीज आ जाती। कभी कचहरी के काम से थका-मांदा मुंह लटकाकर बैठा होता और उस समय 'इंडियन ओपीनियन' के लेख के लिए कोई आ जाता तो उसे लिखवा देता। लिखाते हुए कहता भी जाता कि इनमें से यह वाक्य पसन्द नहीं। किन्तु कोई उपाय नहीं था। विचार करने का समय नहीं था। ऐसे अंशों का कमजोर ही होना संभव है।

'सेवर्स ऑफ दी वार्नामैन' की अंग्रेजी तो अद्भुत है। क्या हिन्दुस्तान की दूसरी पुस्तकें कभी उसकी बराबरी कर सकती हैं?"

बात बदली। बोले: आज एक बात से मुझे बड़ा खेद हो रहा है। मैं जान रहा हूँ। को तो ज्वालामुखी जैसा पत्र लिख चुका हूँ। उनके हृदय से जितना खेद हुआ है, उतना के हृदय से भी हो रहा है। सार्वजनिक जीवन में पड़ने के बाद, बड़े काम हाथ में लेने के बाद वैसी महान् संस्था का उच्च पद स्वीकार करने के बाद उसे अपने पैसा कमाने के काम में पड़ने का अधिकार ही नहीं हो सकता। का दोष जरूर है, किन्तु मैं का दोष देखने नहीं बैठा हूँ। मुझे तो यह बात दुःखद मालूम होती है, इसलिए कहता हूँ। मैंने तो उसके लिए यह सोचा

था कि उसने यह जीवन छोड़कर सार्वजनिक कार्य का जीवन प्रारंभ किया है। एक साल पहले जब यह बात सुनी, तब मुझे बड़ा आनन्द हुआ था। आज उतना ही खेद होता है। ऐसे लोग लोक-कार्य करने के लिए योग्य ही कैसे माने जायें ?

सवेरे के बारे में बोलते हुए कहने लगे : उसे में शामिल होने का अधिकार नहीं था। मैं ही उसे अपना जीवन अर्पण करना था। किन्तु वह वहाँ नहीं गया। उसने इस काम में कोई त्याग नहीं किया। उसकी इतना रुपया लेने की क्या योग्यता है ? १५, १० और ज्यादा-से-ज्यादा ५ । यह आज २ रुपये के बराबर ले लेता है। का काम करनेवाले की हैसियत से उसे जो सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त है और उस स्थिति से जो काम वह बना सकता है, उसे इसके बराबर समझना ही चाहिए।

राज का बोले : मैं तो किसीको अपना शिष्य समझना चाहता ही नहीं और न समझा है। किन्तु वही सब जगह यह कहता फिरता है कि मैं तो गांधीजी का शिष्य हूँ। ऐसे काम करके वह मेरे शिष्य के रूप में अपनी गिनती कैसे करा सकता है ? उसका काम क्षन्तव्य नहीं माना जा सकता। हाँ, जैसा कहता था, वैसे अगर उसे अपनी स्त्री अच्छी ही न लगती हो और उसके लिए उसके हृदय में ममता बिलकुल ही न हो, तो उसके मरने के बाद दूसरे ही दिन विवाह करने का उसे अधिकार है। परन्तु तो शोक में डूब गये थे !

१५-२ १८

आज मीरो की 'ड्यूटी ऑफ सिविल डिसओबीडिन्यन्स' (कानून का विरोध करने का धर्म) पुस्तक का बापू का 'इंडियन ओपीनियन' में दिया हुआ अनुवाद पढ़ा। यह बार-बार पढ़ने और विचार करने लायक है। यहाँ यह अवतरण दिया गया है। हिन्दुस्तान में फिर से छपवाते समय यह सारा सुधारा गया है। यहाँ सुधरे हुए रूप में दिया गया है।

प्रस्तावना

विचार, वाणी और व्यवहार में एकता कायम रखनेवाले अमेरिका के बहुत विरले साधु पुरुषों में पुरःसर हेनरी डेविड थोरो १६वीं सदी के मध्य हो गया है। सत्य की प्रबल टेक के कारण उसके विचारों में जितना ज़ोर था उतना ही उसकी वाणी और व्यवहार में भी था। उसकी रचनाएँ विचारों की खान हैं। उसके एक-एक शब्द से आग बरसती है। इसीलिए लाखों मनुष्य उन्हें पढ़ते हैं और उनका मनन करते हैं। उसके विश्वप्रसिद्ध लेख का सार देने का यह प्रयत्न है, उसका संक्षेप में प्रसंग यह है :

वह अमेरिका के संयुक्त राज्यों में से मेसेच्युसेट्स का निवासी था। इन संयुक्त राज्यों ने मैक्सिको के विरुद्ध जिस ढंग से लड़ाई की घोषणा की वह उसे न्याय के विरुद्ध मालूम होती थी। वह गुलामी की प्रथा को एक घोर और क्रूर अन्याय मानता था। चूँकि मेसेच्युसेट्स की हुकूमत गुलामी के अस्तित्व और स्वामित्व का समर्थन करती थी, इसलिए उसने निश्चय किया कि इस राज्य को कर देना बन्द करके राज्य की नीति और उसकी सत्ता का अनादर किया जाय और इस प्रकार राज्य के अत्याचार में हिस्सेदार न बना जाय। इस निश्चय के अनुसार जब कर लेने वाला आया तो उसने उससे कह दिया : 'तुम तब तक कर नहीं ले जा सकते, जब तक कि मेरे पैसे का उपयोग लड़ाई के खर्च में या गुलामों को खरीदने में होनेवाला है।" कर वसूल करनेवाला परेशानी में पड़कर पूछने लगा : 'तब मैं क्या करूँ ?' 'तुम्हें अपनी जगह से इस्तीफ़ा दे देना चाहिए, और क्या ?" इसके परिणामस्वरूप उसे जेल जाना पड़ा। जेल में उसका मित्र इमर्सन उससे मिलने गया और पूछा : "हेनरी, तुम यहाँ कैसे ?" थोरो ने जवाब दिया : 'तुम यहाँ क्यों नहीं ?' जेल में उसके मन के भीतर जो विचार आये उनका परिणाम यह पुस्तक है। इतिहासकार यह कहते हैं कि अमेरिका में गुलामी बन्द होने का मुख्य कारण थोरो का यह जेल जाना और जेल से निकलने के बाद इस लेख का प्रकाशित

होना था। लेख पढ़ने पर समझ में आ जायगा कि हमारे देश की वर्तमान परिस्थिति में यह लेख लोगों के सामने रखने का यह उपयुक्त अवसर है।

मैं पूरी तरह मानता हूँ कि लोगों पर जिस राज्य का शासन कम-से-कम हो, वह राज्य अच्छा है, अर्थात् राज्य-सत्ता एक प्रकार का रोग है और उस रोग से प्रजा जिस हद तक बची रह सके, उस हद तक उस राज्य की प्रशंसा की जा सकती है। बहुत-से लोग यह कहते हैं कि अमेरिका में सेना न हो या कम हो, तो अच्छा। यह बात ठीक है, किन्तु इस प्रकार कहनेवालों की बात मानना भूल है। वे यह कहते हैं कि राज्य-सत्ता लाभकारक है, लेकिन उसकी सेना हानिकारक है। ऐसे लोग नहीं समझते कि सेना राज्य-सत्ता का शरीर है और उसके बिना राज्य-सत्ता घड़ीभर भी नहीं टिक सकती। किन्तु हम खुद राज्य-सत्ता के दबदबे से दबे रहने के कारण इस बात को देख नहीं सकते। असल में देखा जाय, तो सेना और राज्य-सत्ता दोनों को हम—अर्थात् जनता—ही कायम रखते हैं।

इस प्रकार हमने देख लिया कि हम अपने-आपको धोखा देते रहते हैं। अमेरिका के राज्य ने अपने-आप कोई साहस किया हो, सो बात नहीं। न उसने हमें स्वतंत्र रखा और न उसने हमें कोई शिक्षा दी। आज हम जो कुछ हैं, सो राज्य के कारण नहीं, बल्कि खुद हममें जो तेज है उसके कारण हैं। उलटे, राज्य-सत्ता के कारण हमारी शिक्षा और निपुणता में कुछ-न-कुछ कमी हुई है।

इतने पर भी मैं राज्य को उखाड़ फेंकना नहीं चाहता। किन्तु आज तो मैं अच्छा शासन चाहता हूँ। यह माँग करना हर मनुष्य का कर्तव्य है। जिस देश में सब बातें बहुमत से होती हों, वहाँ यह मानना कि न्याय ही होता है, बड़ी भूल है। यह भूल न समझने से बहुत-से अन्याय होते रहते हैं। अधिक मनुष्य जो कुछ करें, सो सही ही होता है, यह विचार मूढ़ वहम है। क्या इस प्रकार का राज्य नहीं हो सकता जहाँ अधिक मनुष्यों के कहने के अनुसार अमल होने के बजाय जो सच हो, उसी पर अमल हो? क्या मनुष्यों ने शासकों को अपनी आत्मा

भेज सकती है ? ऐसा हो तो हम मनुष्य कैसे ? मैं तो कहता हूँ कि हम पहले मनुष्य और पीछे प्रजा हैं। कानून का आदर करने का गुण सीखने की मुझे कोई जरूरत नहीं मालूम पड़ती। हाँ सत्य का आदर करने की जरूरत सदा ही है। मैं एक ही कर्तव्य स्वीकार कर सकता हूँ और वह यह कि जो सत्य हो, वही मुझे करना चाहिए। कानून से मनुष्य को कभी जरा भी अधिक न्यायपरायण होता मैंने नहीं पाया, लेकिन यह तो देखा है और देखता हूँ कि आम तौर पर न्यायबुद्धिवाले मनुष्य अपने भोलेपन के कारण अन्याय फैलाने के साधन बने हैं। कानून को बेहद मानने का परिणाम हम सब यह देखते हैं कि राज्य के लड़ाई में पड़ते ही हम कठपुतलियों की तरह झट-झट सेना में भर्ती हो जाते हैं और चुपचाप अफसरों का हुक्म मानने लगते हैं। बहुत-से आदमियों का तो धंधा ही फौजी नौकरी है। फिर यह अच्छी तरह समझते हुए भी कि अमुक लड़ाई बुरी है वे उसमें लिप्त जाते हैं। ऐसे लोगों को हम मनुष्य मानेंगे या कसाई के हाथ का शस्त्र समझेंगे ? ऐसे लोग काठ या ईंट के टुकड़े के बराबर हैं। ऐसे मनुष्यों का आदर कैसे किया जा सकता है ? उनका मूल्य पशुओं से अधिक कैसे माना जा सकता है ? साथ ही बहुत-से लोग कानून के हिमायती बनते हैं, वकील बनते हैं, राजदूत बनते हैं। वे अपनी बुद्धि द्वारा राज्य की रक्षा करने का अभिमान करते हैं। किन्तु मैं देखता हूँ कि वे बिना विचारे और अनजाने शैतान की सेवा करते हैं। सच्चे मर्द तो कोई बिरले—हमारे वीर, हमारे देशभक्त, हमारे महान् सुधारक—हैं, जो सत्य से राज्य की सेवा करना चाहते हैं और जिन्हें हमेशा राज्य का विरोध करके ही यह सेवा करनी पड़ती है। आमतौर पर राज्य ऐसे लोगों को अपना दुश्मन समझता है।

समझदार मनुष्य तो मर्दों के ढंग से ही काम करेगा चोरों के मनाये नहीं नाचेगा। अमेरिका के इस राज्य को कायम रखने की जो मनुष्य कोशिश करे, उसे नामर्द समझना चाहिए। जो राज्य गुलामों पर राज्य

करता है, उसे मैं अपना राज्य नहीं मान सकता। जब बहुत जुल्म हो, तब अन्यायी राज्य का विरोध करना मनुष्यमात्र का हक है। कुछ मनुष्य कहते हैं कि अमेरिका का वर्तमान शासन ऐसा अत्याचारी नहीं है क्योंकि खुद उन पर हमला नहीं होता और दूसरों पर होता है, जिसकी ऐसा कहनेवालों को परवाह नहीं।

जैसे हर मशीन में थोड़ा-बहुत जंग होता है, वैसे ही हर राज्यतंत्र में भी होता है। उस जंग को दूर करने के लिए विरोध करने की जरूरत भले ही कभी न हो, लेकिन जब जंग ही मशीन बन जाय, जब जुल्म ही कानून का रूप ग्रहण कर ले, तब वह राज्य मर्दों को बरदाश्त नहीं हो सकता। शरीर नष्ट हो जाय, तो भी न्याय किया जाय, इस सत्य की रक्षा करनी चाहिए। मैंने डूबते हुए मनुष्य से तख्ता छीन लिया हो, तो अपने प्राणों का खतरा उठाकर भी मुझे उसे लौटा देना चाहिए। इसी तरह कभी अमेरिका का राज्य डूबता हो, तो भी उसे गुलामों को मुक्त कर देना चाहिए।

हम कहते हैं कि समाज अमुक काम के लिए तैयार नहीं, लेकिन अच्छा करने में हमेशा समय लगता है। कारण जो थोड़े-से व्यक्ति सुधार करना चाहते हैं, वे सब बहादुर नहीं होते। तुम्हारे जैसे बहादुर सभी लोग न हों, तो कोई चिन्ता नहीं; किन्तु समाज में कुछ लोग तो पूरी तरह शुद्ध होने चाहिए। जैसे खमीर का एक बूंद आटे में फैलकर सारी रोटी को फुला देता है, वैसे ही ऐसे लोग समाज में फैलकर सारे समाज को ऊपर उठाते हैं। ऐसे तो हजारों हैं, जिनके विचार गुलामी के विरुद्ध हैं, किन्तु आचरण अपने विचारों के विरुद्ध है। वे अपने को वाशिंगटन और फ्रैंकलिन के वंशज बताते हैं, पर जेब में हाथ डालकर मौज करते रहते हैं। आजकल के दयालेवक और प्रामाणिक मनुष्य कैसे हैं? वे घुलघुल मन मारते हैं, अपशोस के प्रस्ताव पास करते हैं और अर्जियाँ देते हैं; पर किसी बात में उनका मन नहीं होता। इसलिए उनमें सफलता भी क्या मिल सकती है। वे राह देखते रहते हैं कि कोई और बुराई मिटानेवाला निकल आये, तो उन्हें आंच न लगे।

दुनिया में हजार में नौ सौ निन्यानवे लोग सत्य की बातें करनेवाले होते हैं और आचरण करनेवाला एक होता है। किन्तु सत्य की बातें करनेवाले हजार लोगों से सत्य का आचरण करनेवाले एक आदमी की कीमत बहुत ज्यादा है। खजाने की रक्षा करनेवाले बहुत होते हैं, पर वे उसमें से एक पाई भी नहीं दे सकते। खजाने का मालिक एक ही होता है, फिर भी वह सब कुछ कर सकता है।

मनुष्य सत्य के पक्ष में मत दे इससे वह कोई सत्य का आचरण करनेवाला नहीं कहलाता। जब तक अपने मत को सिद्ध करने की उसमें आग नहीं होती तब तक उस मत का कोई लाभ नहीं होता। बहुमत के निर्णय पर अपना सिद्धान्त छोड़ देने के बजाय उसे अकेले लड़ना चाहिए। बहुमत से जो काम हो उसमें अपने की बात ही क्या रही? जब अधिक मनुष्य गुलामी रद्द करने की राय दें, तब यह मानना चाहिए कि गुलामी रद्द करने की बात ही नहीं रही। यह मानना चाहिए कि उसके खिलाफ लड़नेवाले एक सच्चे आदमी ने ही उसकी जड़ उखाड़ी थी।

मैं यह नहीं कहता कि मनुष्य जहाँ-तहाँ बुराई देखे, वहीं उसे दूर करने के लिए वह बँधा हुआ है। किन्तु मेरा यह निश्चित मत है कि वह खुद बुराई में भाग न लेने के लिए तो जरूर बँधा हुआ है। मनुष्य केवल विचार करे और उसके अनुसार न चले तो उसमें क्या मजा है? अगर मेरा माल कोई चुरा ले जाय तो मैं यह समझकर बैठा नहीं रहता कि ऐसा हुआ। बल्कि चोरी गये माल को पुनः प्राप्त करने और दुबारा चोरी न होने देने के लिए प्रयत्न करता हूँ। जो मनुष्य कहता है, वैसा करता है, वह अलग ही प्रकार का बन जाता है। ऐसा मनुष्य न देश की, न संबंधियों की और न मित्रों की परवाह करता है सत्य की सेवा करते हुए वह सबकी सेवा करता है।

हम यह तो स्वीकार करते हैं कि अन्यायी कानून हैं। किन्तु क्या हम उनका विरोध करेंगे? आम तौर पर लोग कहते हैं कि जब अधिक लोग उन कानूनों को नापसन्द करेंगे, तब वे रद्द हो जायेंगे। वे कहते हैं कि

यदि हम विरोध करें, तो कानून की बुराई से विरोध करने की बुराई अधिक हो जायगी। लेकिन ऐसा हो तो दोष विरोध करनेवाले का नहीं, अधिकारियों का है।

मैं पसन्द करता हूँ कि मैसेच्युसेट्स में एक हजार आदमी, एक सौ आदमी अरे दस आदमी—दस प्रामाणिक आदमी, नहीं-नहीं, एक ईमानदार आदमी—गुलामी के विरुद्ध हो कर न देकर गुलामी के साझे से निकल जाय और ऐसा करके जेल भोग ले, तो आज ही अमेरिका से गुलामी का मुँह काला हो जाय। दूसरे उसके मत के न हो जायँ तब तक उसे गुलामों पर स्वामित्व कायम रखने के पाप में शरीक नहीं होना चाहिए। क्योंकि वह अकेला नहीं है, उसके साथ भगवान है। अगर मैं औरों से ज्यादा सच्चा हूँ, तो मैं उन सबसे ऊँचा हूँ। मेरा राज्य-सत्ता से वर्षभर में एक ही बार काम पड़ता है, जब कि राज्य का प्रतिनिधि—कर वसूल करनेवाला मुझसे कर लेने आता है। उस समय मुझे उसे कर देने से इनकार करना ही चाहिए। अगर एक हजार मनुष्य कर देने से इनकार कर दें, तो इसमें कोई अत्याचार नहीं होता बल्कि राज्य जो अत्याचार करता है, कर देने से उसमें मदद मिलती है। इसलिए कर देने में ही अत्याचार है।

मैं जानता हूँ कि मैसेच्युसेट्स में एक ही सच्चा बहादुर गुलामी के विरोध में कर न देकर जेल में बैठा जायगा तो उसी दिन से गुलामों की बेड़ियाँ टूटनी शुरू हो जायँगी। जो चीज अच्छी तरह की जाय वही हुई कही जायगी पर हम तो लम्बी-चौड़ी बातें करके मानते हैं कि यही ही हमारा काम है। गुलामी मिटाने के आन्दोलन का समर्थन करनेवाले बहुत-से अखबार हैं पर मनुष्य एक भी नहीं।

जिस राज्य में लोगों को गलत तौर पर जेल में डाल दिया जाता है उसमें न्यायपरायण और अच्छे मनुष्यों का घर जेल है। इसलिए ऐसे राज्य में आज अच्छे आदमियों का निवास जेल में ही होना चाहिए। गुलामीवाले राज्य में मनुष्य जेल में ही स्वतन्त्र है, उसीमें उसकी

दुनिया में हजार में नौ सौ निन्यानवे लोग सत्य की बातें करनेवाले होते हैं और आचरण करनेवाला एक होता है। किन्तु सत्य की बातें करने वाले हजार लोगों से सत्य का आचरण करनेवाले एक आदमी की कीमत बहुत ज्यादा है। खजाने की रक्षा करनेवाले बहुत होते हैं, पर वे उसमें से एक पाई भी नहीं ले सकते। खजाने का मालिक एक ही होता है, फिर भी वह सब कुछ लुटा सकता है।

मनुष्य सत्य के पक्ष में मत दे, इससे वह कोई सत्य का आचरण करनेवाला नहीं कहलाता। जब तक अपने मत को सिद्ध करने की उसमें आग नहीं होती, तब तक उस मत का कोई लाभ नहीं होता। बहुमत के निर्णय पर अपना सिद्धान्त छोड़ देने के बजाय उसे उसके लिए लड़ना चाहिए। बहुमत से जो काम हो उसमें करने की बात ही क्या रही? जब अधिक मनुष्य गुलामी रद करने की राय दें, तब यह मानना चाहिए कि गुलामी रद करने की बात ही नहीं रही। यह मानना चाहिए कि उसके खिलाफ लड़नेवाले एक सच्चे आदमी ने ही उसकी जड़ उखाड़ी थी।

मैं यह नहीं कहता कि मनुष्य जहाँ-जहाँ बुराई देखे, वहाँ उसे दूर करने के लिए वह बँधा हुआ है। किन्तु मेरा यह निश्चित मत है कि वह बुरे कार्य में भाग न लेने के लिए तो जरूर बँधा हुआ है। मनुष्य केवल विचार करे और उसके अनुसार न चले तो उसमें क्या मजा है? अगर मेरा माल कोई चुरा ले जाय, तो मैं यह समझकर बैठा नहीं रहता कि ऐसा हुआ। बल्कि चोरी गये माल को पुनः प्राप्त करने और दुबारा चोरी न होने देने के लिए प्रयत्न करता हूँ। जो मनुष्य कहता है, वैसा करता है, वह अलग ही प्रकार का बन जाता है। ऐसा मनुष्य न देश की, न संबंधियों की और न मित्रों की परवाह करता है; सत्य की सेवा करते हुए वह सबकी सेवा करता है।

हम यह तो स्वीकार करते हैं कि अन्यायी कानून हैं। किन्तु क्या हम उनका विरोध करेंगे? आम तौर पर लोग कहते हैं कि जब अधिक लोग उन कानूनों को नापसन्द करेंगे तब वे रद हो जायेंगे। वे कहते हैं कि

यदि हम विरोध करें, तो कानून की बुराई से विरोध करने की बुराई अधिक हो जायगी। लेकिन ऐसा हो तो दोष विरोध करनेवाले का नहीं, अधिकारियों का है।

मैं निश्चय करता हूँ कि मेसेच्युसेट्स में एक हजार आदमी, एक सौ आदमी अरे दस आदमी—दस प्रामाणिक आदमी, नहीं-नहीं, एक ईमानदार आदमी—गुलामी के विरुद्ध हो कर न देकर गुलामी के साझे से निकल जाय और ऐसा करके जेल भोग ले, तो आज ही अमेरिका से गुलामी का मुँह काला हो जाय। दूसरे उसके मत के न हो जायँ तब तक उसे गुलामों पर स्वामित्व कायम रखने के पाप में शरीक नहीं होना चाहिए। क्योंकि वह अकेला नहीं है उसके साथ सदा ईश्वर है। अगर मैं औरों से ज्यादा सच्चा हूँ, तो मैं उन सबसे ऊँचा हूँ। मेरा राज्य-सत्ता से वर्षभर में एक ही बार काम पड़ता है, जब कि राज्य का प्रतिनिधि—कर वसूल करनेवाला मुझसे कर लेने आता है। उस समय मुझे उसे कर देने से इनकार करना ही चाहिए। अगर एक हजार मनुष्य कर देने से इनकार कर दें, तो इसमें कोई अत्याचार नहीं होता बल्कि राज्य जो अत्याचार करता है, कर देने से उसमें मदद मिलती है। इसलिए कर देने में ही अत्याचार है।

मैं जानता हूँ कि मेसेच्युसेट्स में एक ही सच्चा बहादुर गुलामी के विरोध में कर न देकर जेल में चला जायगा, तो उसी दिन से गुलामों की बेड़ियाँ टूटनी शुरू हो जायँगी। जो चीज अच्छी तरह की जाय वही हुई कही जायगी पर हम तो लम्बी-चौड़ी बातें करके मानते हैं कि यही हमारा काम है। गुलामी मिटाने के आन्दोलन का समर्थन करनेवाले बहुत-से अखबार हैं पर मर्द एक भी नहीं।

जिस राज्य में लोगों को गलत तौर पर जेल में डाल दिया जाता है उसमें न्यायपरायण और अच्छे मनुष्यों का घर जेल है। इसलिए मेसेच्युसेट्स में आज अच्छे आदमियों का निवास जेल में ही होना चाहिए। गुलामीवाले राज्य में मनुष्य जेल में ही स्वतन्त्र है, उसीमें उसकी

हुस्मत है। जो यह मानते हैं कि अच्छे लोग जेल चले जायेंगे, तो बाद में अन्याय के विरुद्ध लड़ाई जारी रखनेवाला कोई नहीं रहेगा। उन्हें यह पता नहीं कि लड़ाई किस तरह चलती है। उन्हें इसका अन्दाज नहीं कि अच्छाइ की सत्ता बुराई पर किस तरह चलती है। जेल में पड़ कर अन्याय के जुल्म का अनुभव करनेवाले जेल में जितना काम कर सकेंगे, उतना जेल के बाहर नहीं कर सकते। थोड़े से विरुद्ध विचार के लोग अधिक मनुष्यों के साथ जब तक सिचाते रहेंगे, तब तक वे विरुद्ध विचार के चलता ही नहीं सकते। उन्हें अपना सारा जोर विरुद्ध गति देने में लगाना चाहिए।

जब मैं अपने पड़ोसियों के साथ बातचीत करता हूँ, तो मुझे मालूम होता है कि उन्हें डर है कि वे सामना करेंगे, तो सब कुछ खो बैठेंगे, उनके बालबच्चे मारे-मारे फिरेंगे। मुझे स्वयं अगर राज्य पर अपना या अपने कुटुम्ब का इस प्रकार का आधार रखना पड़े, तो मैं तो निराश हो जाऊँ।

मेरा खयाल है कि अत्याचारी राज्य के अधीन होना शर्म की बात है। उसका सामना करना आसान और अच्छा काम है। मैंने छह वर्ष से कर नहीं दिया। इसलिए एक रात के लिए मुझे जेल में रखा गया था। जब यह सोच की गयी कि इस कैदखाने की दीवारें और लोहे के दरवाजे साबित हैं या नहीं तब मुझे राज्य की मूर्खता की कल्पना हुई। क्योंकि मुझे कैद करनेवाले तो यही समझते होंगे कि मैं केवल हाड़-मांस का बना हुआ हूँ। वे मूर्ख नहीं जानते कि मैं दीवारों से घिरा रहकर भी औरों से अधिक मुक्त हूँ। मुझे ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि मैं कैद में हूँ। मुझे तो यही जान पड़ा कि जो बाहर हैं वे कैदी की स्थिति में हैं। वे मुझसे निपट नहीं सके, इसलिए उन्होंने मेरे शरीर को सजा दे दी। ऐसा होने से मैं अधिक मुक्त हो गया और मेरे विचार उस राज्य के लिए अधिक भयंकर हो गये। मैंने देख लिया कि जैसे लड़के किसी आदमी का कुछ न बिगाड़ सकने पर उसके कुत्ते को सताते हैं, इसी तरह राज्य मेरा कुछ नहीं कर सकता, तो मेरे शरीर को हानि पहुँचाता है। साथ ही मैंने यह

भी देख लिया कि शरीर को हानि पहुँचाने में भी राज्य करता था। इसलिए मेरा राज्य के प्रति जो कुछ आदर था, वह भी जाता रहा।

° * °

एक सज्जन बड़ौदा से आये और थोड़े दिन आश्रम में रहे। बापूजी के साथ बातें की और पूरे विचार के बाद प्रतिज्ञा करके गये कि गुरुवार को आऊँगा और अपने-आपको राष्ट्रीय सेवा के लिए अर्पण करूँगा। बाद में बड़ौदा जाकर उन्होंने गुरुवार को न आने का पत्र लिखा। उसमें बताया कि बाद में सोचने से पता चला कि उनकी प्रतिज्ञा से उनके परिवार को बहुत दुःख होगा, भूखों मरना पड़ेगा, इत्यादि। उन्हें उत्तर :

"भाईश्री ५,

'आपका पत्र मेरे लिए अत्यन्त दुःखद साबित हुआ। जो बात आपने लिखी है, वह सब आपके प्रतिज्ञा करने के समय आपके ध्यान से बाहर नहीं थी। आपका सारा परिवार भूखों मरे तो भी आपका फर्ज प्रतिज्ञा का पालन करना था। ऐसे ही मनुष्यों से जनता का निर्माण होता है। दूसरी की मनुष्यों में गिनती ही नहीं की जा सकती। किसीका ऐसा दबाव नहीं था कि आप प्रतिज्ञा करें। विचार करने के लिए आपके पास समय था। हमारी उन्नति जल्दी नहीं होती इसका कारण केवल हमारी जबरदस्त कमजोरी ही है। इस पत्र का उद्देश्य यह नहीं है कि आप अब प्रतिज्ञा का पालन करें। आप आयें, तो भी अब आपका स्वीकार नहीं किया जायगा। अब आप कुटुम्ब-पालन के काम में लग जायें। जो पाप हो गया, उसका विचार करें और नम्र बनकर शान्त जीवन बितायें। फिर कभी पूर्वनिश्चय के बिना प्रतिज्ञा न करना ही आपका प्रायश्चित्त है।

मोहनदास गांधी के
वन्दे मातरम्"

"भाईश्री जमनालाल,

"आपका पत्र मिला। भाई अमृतलाल की मृत्यु के समाचार पढ़कर मन में बहुत विचार आते हैं। अभी-अभी भाई नवलराम ने खबर दी है कि आपके साथियों में से और भी प्लेग के बीमारों की सेवा करते-करते चल बसे। अगर इस तरह सेवा करते-करते सब चले जायें, तो खेद नहीं हर्ष होना चाहिए। हम सबके लिए ऐसी मृत्यु वांछनीय है। 'रण-संग्राम में प्राप्त मृत्यु से अधिक इष्ट कोई मृत्यु नहीं हो सकती', यह वाक्य यहाँ लागू होता है। शरीर तो जब जीर्ण हो जायगा तब नष्ट होगा ही। हम यह चाहते भी हैं कि वह नष्ट हो जाय। इसलिए हम मान लें कि भाई अमृतलाल मोतीलाल और उनके साथियों की आत्मायें नये और अधिक योग्य शरीर धारण करके समय आने पर हिन्दुस्तान की सेवा करेंगी।

"भाई अमृतलाल के परिवार को मेरी तरफ से आश्वासन दीजिये।

"भाई मोतीलाल की बहू को यहाँ, यहाँ तक हो सके, जल्दी भेजने के प्रयत्न में रहें, तो यह भी एक सेवा है।

मो० गांधी के वन्दे मातरम्"

१६-२-१८

"चि० देवदास

'यहाँ एक दिन के लिए आया था, उसके बजाय लगभग महीनाभर हो जायगा। आज दिल्ली जाने का विचार था, उसके बजाय अब खेड़ा के काम के लिए नडियाद जाना पड़ेगा। अगर यहाँ से छोड़कर चला जाऊँ, तो हजारों लोगों का बड़ा नुकसान होगा। लोगों का पतन हो जाय और वे बिलकुल हताश हो जायें। ऐसा मामला होने के कारण अभी तो रुक गया हूँ। उम्मीद तो ऐसी है कि मैं दस दिन में छूट सकूँगा। तुम हमेशा याद आते हो। मैं जानता हूँ कि तुम रसिक हो और सब बातों में रस ले सकते हो। तुम यहाँ होते, तो सत्य की महिमा और प्रभाव पग-पग में देखते। तुम्हारे लिए मेरे पास यही विरासत है।

मैं मानता हूँ कि यह अटूट है। जो पहचान ले, उसके लिए यह अमूल्य है। यह दूसरी कोई विरासत न मांगेगा, न चाहेगा। मैं यह समझता हूँ कि तुम इस विरासत को पहचान सके हो और उसके प्रेमी हो। आज मुझे सपना आया कि तुमने मुझे धोखा दिया। तुमने पेटी में से नोट निकालकर भुना लिये। उन्हें मनमाने ढंग से खर्च कर दिया। मुझे पता लगा। मैं घबराया, बहुत परेशान हुआ। इतने में जाग गया, तो देखा कि यह तो सपना है। ईश्वर का उपकार माना। मेरा सपना तुम पर मेरी आसक्ति का सूचक है। तुम तो यह आसक्ति चाहते हो। तुम्हें यह विराग भय नहीं रखना चाहिए कि यह आसक्ति इस जन्म में बिलकुल चली जायगी। मैं उसके प्रति समभाव रखने की बड़ी कोशिश कर रहा हूँ किन्तु तुमसे अधिक मात होने की आशा तो रहती ही है।

चि. छोटालाल और चि. सुरेन्द्र को अलग पत्र नहीं लिख रहा हूँ। तुम पढ़वाना चाहो तो पढ़वा सकते हो या खबर दे दो। यह पिता-पुत्र के पवित्र संबंध को ध्यान में रखकर लिखा गया है। इसलिए तुम ही को अपने तक रखना चाहिए, ऐसा सोचकर उन्हें न पढ़ाओ, तो भी कोई हर्ज नहीं।

बापू के आशीर्वाद"

चम्पारन की एक स्वयंसेविका बहन आनन्दीबाई को उनकी भौजाई की मृत्यु के समय मराठी में पत्र* :

'आपल्या माऊबाई वारल्या हे ऐकून अत्यन्त वाईट वाटले परन्तु आपल्याला आत्म्याची जाणीव आहे हे मला माहीत आहे यामुळे माझी खात्री आहे की जन्म आणि मरण या दोन्ही स्थिति वास्तविक पाहता एकच स्वरूपाच्या आहेत हे आपल्या तात्काळ ध्यानात येईल तथापि मृत्यूनंतर दुःख व्हावें हा मनुष्य स्वभाव पडला आहे या आपल्या दुःखात मी भागीदार होऊ इच्छितो, आणि त्या

---

* 'आपकी भौजाई चल बसीं, यह सुनकर बड़ा दुःख हुआ। किन्तु आपको आत्मा का ज्ञान है, यह मुझे मालूम है। इसलिए मुझे विश्वास है कि यह बात आपके

योगानें आपल्याला ही शांति मिळणें शक्य असेल ती मिळो. आपल्या-सारख्या ज्यांनी सेवापरायण होण्याचा निश्चय, संकल्प केला असेल त्यांना योग्य रीतीनें सतक पाळण्याचा एकच मार्ग आहे आणि तो (म्हणजे) विशेष सेवापरायण होणें हाच

आपला मोहनदास गांधी"

२१-९-१८

'नेशनल एजुकेशन प्रमोशन सोसायटी' के मंत्री की हैसियत से मि. एल्सवर्थ ने 'एजुकेशन वीक' (शिक्षा-सप्ताह) के लिए कोई लेख लिख भेजने की प्रार्थना की थी। उन्हें नीचे लिखा जवाब देने का विचार हुआ था :

"आपका पत्र मिला। अभी तो मैं बहुत कठिन मामलों में फँस गया हूँ। मुझे जब चाहूँ, तब विचार नहीं आते। किसी विषय पर लोगों को कुछ देने लायक चीज लिख सकूँ, उससे पहले मुझे अपने मन में उस विषय को रटना पड़ता है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि आपका पत्र मैं ध्यान में रखूँगा और आपको कुछ-न-कुछ भेजने का प्रयत्न करूँगा। लेकिन अधिक संभव यह है कि भेज न सकूँ। हाँ, जो काम मैंने हाथ में ले रखे हैं, वे सोचे हुए समय से पहले पूरे हो जायें, तो अलग बात है।"

बाद में मालूम हुआ कि एल्सवर्थ के पत्र में तो अधिक-से-अधिक २०-९-१८ की तारीख दी हुई थी। तब कहने लगे कि 'गंगा नहाये'। लिख दो कि :

तुरन्त ध्यान में आ जायगी कि जगत में देखा जाय, तो जन्म और मरण ये दोनों स्थितियाँ एक ही तरह की हैं। फिर भी मृत्यु के समय दुःख होना मनुष्य का स्वभाव बन गया है। आपके इस दुःख में मैं शरीक होना चाहता हूँ और इसलिए प्रार्थना करता हूँ कि आपको जितनी शान्ति मिल सकती हो मिले। आप जैसे जिन लोगों ने सेवापरायण होने का निश्चय और संकल्प किया हो, उनके लिए उचित रूप में शोक मनाने का एक ही मार्ग है और वह यह है कि वे अधिक सेवापरायण बनें।

आपका मोहनदास गांधी"

"आपका पत्र कल ही मिला। इसलिए आपकी लिखी हुई तारीख तक लेख नहीं भेजा जा सकता।"

इसी अर्से में स्वाई० को एक पत्र लिखा था। उसमें भी लिखा कि 'किसी काम से मुक्ति मिलती है, तब बड़ी राहत महसूस करता हूँ।"

मिस विंटर बॉटम† को पत्र लिखा :

''तुम्हें पत्र लिखे हफ्तों बीत गये पर इसका कारण तुम जानती हो। यहाँ की अपनी प्रवृत्तियों के बारे में कुछ लिखने से पहले मेरा विचार तुम्हारे पूछे हुए एक लम्बी प्रश्न का उत्तर देने का है। इस प्रश्न पर से मालूम होता है कि तुम इस देश की मेरी प्रवृत्तियों का बहुत बारीकी से निरीक्षण कर रही हो। लन्दन में मैं कहता था कि जनता की भलाई करने वाला सार्वभौम राज्य ही उत्तम राज्यतंत्र है। तुम यह बात मुझे याद दिला-कर पूछती हो कि मैं जो होमरूल आन्दोलन में भाग ले रहा हूँ, उसका उपर्युक्त कथन के साथ कैसे मेल बैठता है? लन्दन में मैंने जो कहा था, उस पर मैं अब भी कायम हूँ। किन्तु इस समय ऐसा राज्य-तन्त्र असंभव हो गया है। हिन्दुस्तान के लिए पार्लमेण्टरी पद्धति के शासन-तन्त्र में से गुजरने के सिवा कोई उपाय नहीं यह चीज मुझे निश्चित रूप से अनुभव होने के कारण मैं स्वाभाविक रूप में ऐसे आन्दोलन का समर्थन कर रहा हूँ, जिसके द्वारा अच्छी-से-अच्छी पार्लमेण्टरी शासन-प्रणाली प्राप्त की जा सके और वर्तमान वर्णसंकर शासन-प्रणाली को, जो न एक (पार्लमेण्टरी) है और न दूसरी (भला सार्वभौम तन्त्र), मिटाया जा सके।

"दूसरे मैं इस आन्दोलन में उसी हद तक भाग लेता हूँ, जिस हद तक मैं अपने सिद्धान्तों को, जिन्हें मैं जानता हूँ कि किसी भी राज्य को उपयोगी बनने के लिए स्वीकार करना ही पड़ेगा, लोगों से स्वीकार करा सकूँ और उन पर अमल करा सकूँ।

* चम्पारन की जाँच के लिए नियुक्त की गयी समिति के अध्यक्ष।

† इंग्लैंड की बापू की एक पुरानी मित्र और सहायक।

"नटेसन ने मेरे भाषणों का संग्रह छापा है। उसकी एक प्रति तुम्हारे पास भेजने के लिए मैंने उन्हें कहा है। उसमें यहाँ की गुजरात राजनैतिक परिषद् के अध्यक्ष की हैसियत से दिये गये मेरे भाषण का अंग्रेजी अनुवाद छपा है। मैं जो कहना चाहता हूँ, वह उसमें पूरी तरह बता दिया गया है।

"यह सोचकर कि और मामलों के बारे में भी लिख सकूँगा, पत्र लिखने में एक सप्ताह की देर की। किन्तु अब अधिक विलंब करना ठीक नहीं। सब बातें लिखने के लिए फिर कभी मौका देखूँगा।

तुम्हारा
मो० क० गांधी"

"भाई गोरधनभाई

"पूज्य अनसूयाबहन भाई शंकरलाल बैंकर और मैं अभी-अभी जुलाहों की सभा से आये हैं। जुलाहों ने कहा कि उनसे मिल-मालिक आठ आने देकर कोई लिखावट करा लेना चाहते हैं। मैंने उन्हें सलाह दी है कि वे अपने सलाहकार की सलाह लिये बिना किसी भी कागज पर दस्तखत न करें और यह भी कहा कि एक-दो दिन में हम यह सलाह देंगे कि उन लोगों को क्या उचित वृद्धि माँगनी चाहिए। अगर इस सलाह के अनुसार वे चलेंगे और उन्हें सूचित किया हुआ वेतन पसंद कर लेंगे, तो उनका भला होगा। इस काम में मैं अपनी जिम्मेदारी कब मिल मूप के सदस्यों को विनयपूर्वक बता चुका हूँ। मुझे लगता है कि पंच का सिद्धान्त बड़ा गूढ़ है और मजदूरों का विश्वास उस पर से उठ जाय, यह बिलकुल वांछनीय नहीं है। इसलिए अपने ऊपर अनायास आये हुए फर्ज को मैं छोड़ नहीं सकता। भाई शंकरलाल बैंकर और भाई वल्लभभाई पटेल भी इस विचार से सहमत हैं। मजदूरों का काम-धंधे के बिना अनिश्चित स्थिति में रहना उनके लिए, आपके लिए और सबके लिए अवांछनीय है। बम्बई की मिलों में दिये जानेवाले भाव भाई बैंकर ले आये हैं। यहाँ की मिलें जो भाव देती हैं, उनकी सूची आप मुझे तुरन्त भेज

सकें, तो आभारी होऊँगा। मिसाल के लिए किसी भी प्रकार से हमारी राय से दिये बिना अपनी राय अलग-अलग विभाग के मजदूरों के बारे में दे सकें तो मैं चाहता हूँ कि दें। अगर इनमें से कोई भी किसी बंधन के बिना सलाह-मशविरे में शामिल हो सके, तो उस हद तक हमारा प्रस्ताव अधिक ज्ञानपूर्वक पेश किया गया माना जायगा। मुझे मजदूरों के प्रति उनके मजदूर होने के कारण ही कोई खास पक्षपात नहीं है; न्याय के प्रति पक्षपात है और चूँकि वह अक्सर मजदूरों के साथ पाया जाता है, इसलिए आमतौर पर यह खयाल पैदा हुआ है कि मेरा उनके प्रति पक्षपात है। मुझसे अहमदाबाद के महान् उद्योग का अनिष्ट हो ही नहीं सकता। इसलिए मुझे आशा है कि आपकी संस्था इस कठिन काम में हमें पूरी मदद देगी। मुझे आशा है कि इस पत्र का उत्तर आप तुरन्त देंगे। मैं जल्दी इसलिए कर रहा हूँ कि मैंने हमारे सलाह-मशविरे का परिणाम हो सके, तो अधिक-से-अधिक बुधवार तक मजदूरों को बताने के लिए कहा है।

मो० क० गांधी"

२६-२-१८

आज शाम को बहुत ही लंबे विचार के बाद यह निश्चय हुआ कि फिलहाल कताई-विभागवालों को छोड़कर बुनाई-विभागवालों को सलाह दी जाय और उनकी तरफ से हमारा मास के वेतन में ३५% वृद्धि मिसाल के लिए मांगी जाय यह वृद्धि न दें, तो बुनाई-विभागवालों को हड़ताल करने दी जाय और उनके घर जाकर उनके साथ बहुत समय बिताकर, उनके अन्दर, उन्हें अपनी स्थिति कबतक मालूम न होने दी जाय। इसी विचार से बार-बार अनसूयाबहन से बापू ने कहा कि इस महल से निकलकर मजदूरनियों की बहन बनें।

खेड़ा के बारे में एक पत्र :

• "आपका गुजरात-सभा के नाम का पत्र मैंने पढ़ा है। ज्यादा विस्तार

* यह पता नहीं चलता कि यह पत्र किसको लिखा गया है।

की प्रजा के लिए काम करना हम सबका फर्ज है। मैं मानता हूँ कि यदि यह सभा यह काम न करे, तो उसे गुजरात-सभा कहा ही नहीं जा सकता।

"प्रजा को जो सलाह दी जाती है, उसकी मुख्य जिम्मेदारी मेरे सिर पर है। प्रजा का कहना है कि इस साल फसल चार आने से भी कम हुई है। सरकार मानती है कि अगर फसल चार आने से कम हो, तो प्रजा से इस वर्ष कर वसूल न करना चाहिए। सरकार प्रजा की बात न माने, तो उसके पास एक ही उपाय है कि सरकार को खुद कर न चुकाकर सरकार को अपना माल तक बेच डालने दे। अगर प्रजा ऐसा न करे, तो झूठे ठहराये जाने के लिए रुपया देने जैसी बात होगी।

"जमीन की शक्ति के अनुसार लगान लगाया जाता है। यह स्पष्ट है कि जमीन में कुछ न पका हो तो कर नहीं लिया जा सकता। सरकार ने किस्तों के बारे में कानून बनाया है। लेकिन वह मेहरबानी नहीं बल्कि केवल आवश्यकता है।

"किन्तु मैं देखता हूँ कि आपके और सभा के बीच इस मामले में मतभेद रहने की संभावना है। मतभेद को बरदाश्त करना सार्वजनिक काम करनेवालों के काम का एक अंश है। जनता के सामने दोनों मत रखे जा सकते हैं और जनता को अपना चुनाव कर लेना है।

"अन्याय के खिलाफ अपनी भावना प्रकट करने के लिए आदरपूर्वक कर न देकर सरकार द्वारा वसूल करने देने में कोई गैरकानूनी बात नहीं है, यह तो मुझे स्वयंसिद्ध जैसा लगता है।

आपका—मोहनदास"

भाई श्री देवधर,

"आपके दोनों पत्र और आपकी रिपोर्ट मुझे मिल गयी है। मेरा निश्चित विचार है कि आपने अनजाने भी लड़ाई को नुकसान पहुँचाया है और अपने-आपको मि मैड के हाथ का खिलौना बनने दिया है। आपके

इस कथन का आधार बिलकुल अधूरी जानकारी पर है कि किसानों ने फसल का अन्दाज कम लगाया है। श्री अमृतलाल ठक्कर, जिन्होंने तहसील में इस प्रश्न की जाँच की है, ऐसा नहीं मानते कि साढ़े तीन आने का हिसाब कम है। आप जानते हैं कि सरकारी अन्दाज में बाद में कमी-बेशी की गयी है।

"कुछ भी हो, क्या यह कहा जा सकता है कि काफी राहत दी गयी है? हम तो जानते हैं कि एक भी राहत अभी तक नहीं दी गयी। मैंने जब कहा कि रबी की फसल पचीस फी सदी से कम होगी, तो माफी दी जायगी, तब यह केवल हमारे साथ खिलवाड़ करता था। आप जानते हैं कि रबी की फसल में कपास, तम्बाकू, अरहर और तिलहन नहीं गिने जाते।

"और आपको रिपोर्ट प्रकाशित करने की जरूरत क्या थी? जब इस लड़ाई में मैं पड़ा हुआ हूँ, तो रिपोर्ट प्रकाशित करने के समय का निर्णय करने का काम आपको मेरे विवेक पर छोड़ देना चाहिए था।

"अन्त में आप यह क्यों समझ लेते हैं कि जितना अधिकारी दें, उतना ही हम ले सकते हैं। यह क्यों नहीं मानते कि जितना पाने के हम अधिकारी हैं उतना हमें मिलना ही चाहिए?

"मेरे ख्याल से आप जरूरत से ज्यादा काम हाथ में लेते हैं और इससे न अपने साथ और न काम के साथ न्याय कर पाते हैं। आप बीमार हैं और जितने काम हाथ में ले सकते हैं, उससे ज्यादा आपने ले रखे हैं। आपको हिम्मत के साथ कहना चाहिए था कि इस जाँच का काम मैं अपने सिर पर नहीं ले सकता। मैं जानता हूँ कि आप मेरे पत्र का अनर्थ नहीं करेंगे। मैं आपसे इतना चाहता हूँ कि जान-बूझकर आपके प्रति अन्याय नहीं करूँगा। आपके प्रति अपना आदर अपने हृदय के द्वार आपके सामने खोलकर और उसमें जो कुछ है उसे आपको देखने देकर ही दिखा सकता हूँ। और मित्र इससे अधिक नहीं कर सकता। जो इससे कम करता है वह उतना कम मित्र बनना चाहता।

"आपको मेरी प्रार्थना सुननी चाहिए और अमृतलाल को गुजरात के काम के लिए सौंप देना चाहिए। इस प्रकार यह सोसाइटी अधिक अच्छी सेवा कर सकेगी। क्योंकि गुजरात के काम में वह चमक उठेगी। भारत सभा का काम उसीसे हो सकता है जिसमें इस प्रकार की बुद्धि हो। किन्तु अस्पृश्यता का काम तो अपनी बुद्धि को रास्ता बतानेवाला हृदय जिसमें हो, उसीसे हो सकता है। अमृतलाल इस प्रकार के मनुष्य हैं।

सेवक
मो० क० गांधी"

१७-२-१८

"चि० रामदास

"आजकल मैं तुम्हारी चिन्ता करता रहता हूँ। तुम्हारे पत्रों में निराशा देखता हूँ। तुम्हें शिक्षा की कमी महसूस होती है। ऐसा भी लगता है कि तुम ठिकाने पर नहीं हो। तुम मेरे सामने होते तो अपनी गोद में लेकर तुम्हें आश्वासन देता। तुम्हें संतोष नहीं दे सकता इतनी अपनी कमी समझता हूँ। कहीं-न-कहीं मेरे प्रेम में खामी होनी चाहिए। मेरे दोष सभी अनजाने हुए होंगे यह समझकर मुझे क्षमा करना। बच्चों का माता-पिता पर क्या हक है। वे माता-पिता के पास हमेशा दीन दशा में रहते हैं। माता पिता की भूल उन्हें बर्बाद कर देती है। हमारे शास्त्रों ने माता-पिता को परमेश्वर की उपमा दी है। ऐसी जिम्मेदारी उठा सकनेवाले माता-पिता दुनिया में सदा ही जन्म नहीं लेते। माता-पिता अस्वस्थ स्थूल होने के कारण उस स्थूलता की विरासत बच्चों में आती है और इस प्रकार उत्तरोत्तर स्वार्थमय शरीर उत्पन्न होते रहते हैं। तुम अपने को अयोग्य पुत्र क्यों मानते हो? क्या तुम यह समझ सकते हो कि तुम अयोग्य होगे, तो मैं भी अयोग्य ठहरूँगा? मैं अयोग्य ठहरना नहीं चाहता, इसलिए तुम अयोग्य कैसे बन सकते हो? तुम धन प्राप्त करने का प्रयत्न करते हुए भी उसके लोभ से

सत्य को न छोड़ो। तुम विवाह की इच्छा रखते हुए भी विवेक से काम लोगे। अतः मैं तुम्हें योग्य पुत्र ही मानूँगा।

तुम मुझसे क्षमा न माँगो। मुझे तुमने असन्तोष नहीं दिया है। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने यहाँ के प्रयोग आजमाकर मेरे पास आओ। तुम्हारे विवाह में मैं भाग लूँगा। तुम्हें अध्ययन करना हो, तो मैं उसमें मदद दूँगा। तुम अपना शरीर लोहे जैसा बना लोगे, तो और चीजों से मैं निपट लूँगा। अभी तो हम सब बिखर गये हैं। तुम वहाँ, मणिलाल फिनिक्स में सेवा करता में या मीठीहरवा में, हरिलाल कलकत्ते में और मैं भटकने में। इस वियोग में देश-सेवा होगी, इसीमें आत्मा की उन्नति होगी। हो या न हो, आ पड़े वियोग को प्रसन्न चित्त से भोगना चाहिए।

बापू के आशीर्वाद'

आज सबेरे की प्रार्थना के समय अभी खेड़ा-सत्याग्रह और मजदूर हड़ताल के सिलसिले में उत्पन्न हुई परिस्थिति का वर्णन करते हुए बोले : "मैं कहता आया हूँ कि सत्याग्रह केवल सरकार के विरुद्ध ही नहीं हो सकता। सत्याग्रह किसी भी स्थिति में किसी भी वस्तु के खिलाफ हो सकता है। इसके उदाहरण हम आज देख रहे हैं। खेड़ा में सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह चल रहा है। अहमदाबाद में धनिकों के विरुद्ध सत्याग्रह चल रहा है और अस्पृश्यों के प्रश्न पर शास्त्रों के विरुद्ध सत्याग्रह चल रहा है। मेरा यह खयाल है कि इन सब मामलों में हमारी जीत ही है। सत्य हमारे साथ ही है। खेड़ा में सरकार ने उद्धतता से काम लिया है। उसके विरुद्ध सत्याग्रह किये बिना काम नहीं चल सकता था। अगर जीत नहीं होगी तो उसका कारण केवल हमारी ही अपूर्णता होगी, सत्याग्रह की अपूर्णता नहीं। बिहार में सत्याग्रह की विजय हुई उसका कारण यह था कि वहाँ काम करनेवाले मुझे बहुत ही पवित्र मिल गये थे। यहाँ मैं देखता हूँ कि इतनी पवित्रता नहीं है, फिर भी मैं सोचता था उससे अधिक मुझे मिल रहा है। अहमदाबाद में जो स्थिति हो गयी है, वह

भी सुन्दर है। कल कलेक्टर ने मुझसे एक बात कही थी। वह तुमसे कहने को जी चाह रहा है। यह बात मैंने और कहीं नहीं कही। मुझे यह बात आश्रम में कहना ठीक लगता है। कलेक्टर ने यह बात कहने भर के लिए नहीं कही बल्कि ये उसके हृदय के सच्चे उद्गार थे। उसने कहा कि मिल-मालिकों और मजदूरों के बीच इतने स्नेह से हुई लड़ाई मैं अपनी जिन्दगी में पहले-पहल यहीं देख रहा हूँ। मुझे भी ऐसा लगता है कि दोनों पक्षों के बीच इतना अच्छा सम्बन्ध कभी नहीं देखा। तुम देखते हो कि अम्बालालभाई इस लड़ाई में विरोधी पक्ष के हैं, फिर भी कल खाने को आये थे और मैंने जब फिर कहा कि कल आपको भोजन नहीं करना है, तब वे स्थिति समझ गये। वे तुरन्त समझ गये कि मैं भोजन के लिए क्यों कह रहा हूँ और फौरन ही उन्होंने मंजूर कर लिया। इससे अधिक सुन्दर और क्या हो सकता है? मेरा खयाल है कि मौके पर हममें दृढ़ता, पवित्रता और एकाग्रता होगी, तो हम हारेंगे नहीं। यह आन्दोलन जो चल रहा है, उससे मैं तुम सबको परिचित नहीं रख सकता, इसलिए अपरिचित रहने में ही तुम्हारा संयम समाया हुआ है। इतना ही है कि इस स्थिति में जरूरत पड़ने पर हम काम करने के लिए तैयार हो जायें। इसके लिए हमें अपने में दृढ़ता और संयम ही पैदा करने हैं।"

आज तीन-चार दिन से रात को बारह, साढ़े बारह बजे सोना और सबेरे तीन-चार बजे उठना हो रहा है। दिन में घड़ीभर भी झपकी लेने को नहीं मिलती। आज सुबह तड़के ही उठकर कितने ही सुन्दर पत्र लिख डाले। उनमें से एक ऊपर दिया जा चुका है, दूसरा नीचे, जिसमें अली-भाइयों का प्रश्न हाथ में लेकर भी मिल-मजदूरों की हड़ताल और खेड़ा के सवाल के कारण वहाँ स्वयं न जा सकने का दुःख करुण ढंग से प्रकट किया है। पत्र न्यू ईरा के सम्पादक जनाब रफीक कुरैशी के नाम है :

¶ 'प्रिय मित्र,

मुझे शर्म आ रही है। मैं वहाँ पहुँच जाने को अत्यन्त उत्सुक हूँ।

सत्ता के बारे में गम्भीर हो उठे हैं। वे द्रुतगति से बढ़नेवाली शक्ति हैं। ब्रिटिश सरकार की हुकूमत का भयानक पहलू लोगों को दिखाने में उन्हें किसी तरह की कठिनाई नहीं होती। लोग उन्हें अपना मुक्तिदाता समझ कर उनका स्वागत करते हैं। उनके सामने मातृभूमि के प्रेम और अधिकारियों के अविश्वास के सिवा और कुछ नहीं है। नतीजा यह होता है कि वे असंतोष फैलाते हैं। जिस तंत्र के आप प्रतिनिधि हैं, वह इस चीज को अच्छी तरह जानता है और स्वाभाविक रूप में ही यह अपमान उन्हें चुभता है। इस प्रकार दोनों के बीच का अंतर बढ़ता जाता है। मैं यह मानने की धृष्टता करता हूँ कि मैं इस खाई को पाट सकता हूँ और नव युग में प्रवेश करने से पहले होनेवाले खूनी दंगों को रोकने में सफल हो सकता हूँ। इस नवयुग में परस्पर अविश्वास और दमन लादी हुई हुकूमत के बजाय आपस के विश्वास और प्रेम के शासन की स्थापना हो यह मैं देखना चाहता हूँ। यह चीज मैं लोगों को तभी बता सकता हूँ, जब उन्हें अन्यायों को दूर करने का अधिक अच्छा और ज्यादा कारगर उपाय बता सकूँ। यह तो स्पष्ट ही है कि भय के कारण उनका अन्यायपूर्ण आज्ञाओं के सामने भी सिर झुका देना और मन में द्वेष-भाव बढ़ाते रहना बुरा है। वे गलत रास्ते जायँ और हिंसा का आश्रय लें, यह उससे भी ज्यादा बुरा है। लोगों के लिए अपनी नाराजगी दिखाने का गौरवपूर्ण, सच्चा वैध और उनकी भी उन्नति करनेवाला मार्ग यही है कि आपके जो हुक्म उन्हें अन्यायपूर्ण मालूम हों उनका वे सविनय भंग करें और इस आज्ञा-भंग की जो सजा हो, उसे शान्तिपूर्वक और विनयपूर्वक सहन कर लें। मैं यह मानने का साहस करता हूँ कि हर प्रकार के अन्याय में ऐसी सलाह लोगों को सुरक्षित रूप में दी जा सकती है। इसमें इतनी ही शर्त होगी कि इससे पहले अन्याय दूर करने के और सब उचित उपाय आजमा लिये गये हों। मैं चाहता हूँ कि जो दृष्टिकोण मैंने उपस्थित किया है उसे आप समझ सकें। यह पत्र आपको [illegible] मैंने जो धृष्टता की है, मैं जानता हूँ कि आप मुझे उ[illegible] कर देंगे। अब

क्योंकि मैंने यह पत्र खेड़ा के सवाल को अलग रखकर आपको लिखा है। संभव है, बहुत-से निर्विवाद मामलों में आपके साथ काम करने का लाभ मुझे मिले। इसलिए मेरे विचार से यह ज्यादा अच्छा है कि आप मेरे तमाम विचार जान लें।*

सेवक
मो० क० गांधी"

---

* खेड़ा सत्याग्रह के समय मि० प्रैट उत्तर-विभाग के कमिश्नर थे और सत्याग्रह की लड़ाई को दबा देने के लिए उन्होंने खूब कोशिश की थी। इसके बाद वे अपनी छुट्टी लेकर इंग्लैंड चले गये। वहाँ से लिखा हुआ उनका निम्नलिखित पत्र इस बात का सूचक है कि सत्याग्रह का सरकारी कर्मचारियों पर अन्त में कैसा असर होता था

१८-२-१९१९

प्रिय श्री गांधी,

"हिन्दुस्तान से मेरी अनुपस्थिति के दिनों में इंग्लैंड और हिन्दुस्तान के समाचारपत्रों द्वारा हिन्दुस्तान में होनेवाली घटनाओं से मैं काफी परिचित रहता हूँ। कुछ रोज पहले मैंने आपका अमृतसर-कांग्रेस का भाषण पढ़ा। उस कांग्रेस में आपने और मि० जिन्ना ने संयम और निराशा के विरुद्ध विश्वास और सहयोग की लड़ाई लड़ी है। मेरे जी में आया कि आपने जो रुख अपनाया, उसके बारे में आपको शुक्रिया और बधाई दूँ। यह मैं एक सामान्य व्यक्ति की हैसियत से लिख रहा हूँ। भूतकाल में हमारे संबंध मेलजोलवाले नहीं थे। अपने लिए कहूँ तो मुझे लगता है कि आपके विरुद्ध मैंने जो कभी विचार प्रकट किये हैं और कहीं बातें कही हैं, उनका जरा भी ख्याल नहीं किया जा सकता। किन्तु भूतकाल से वर्तमान अधिक महत्वपूर्ण है। अपने अमृतसर भाषण में आपने विश्वास और सहयोग की जिस भावना से अपना हाथ बढ़ाया है मैं उसे उसी भावना से पकड़ना चाहता हूँ। मुझे आशा है कि बहुत करके मार्च के अन्त तक मैं अहमदाबाद आ पहुँचूँगा। आपसे फिर मिलने का आनन्द प्राप्त करने के लिए मैं उत्कंठित हूँ।

आपका
एफ० प्रैट"

११ १८

श्री ब्रजप्रकाश शाहभाई को :

'प्रिय बन्धु

"आज सवेरे उठते ही मैं विचार में पड़ गया कि हम क्या कर रहे हैं। मेरे कार्य का परिणाम क्या होगा? आपके कार्य का क्या होगा? मेरे खयाल से मेरा कार्य सफल हो, तो आप मजदूरों की माँग स्वीकार कर लेंगे या अगर अन्त तक आप खिंचे रहे, तो मजदूर दूसरे धंधे में लग जायेंगे। अगर मजदूर अपना निश्चय छोड़ दें और आपका निश्चित किया हुआ वेतन मंजूर कर लें, तो मेरा कार्य असफल हुआ माना जायगा। किन्तु उपर्युक्त परिणामों से जनता को आघात नहीं पहुँचेगा।

लेकिन आपके कार्य का क्या होगा? आप सफल हो जायें तो दबे हुए गरीब श्रमिक दब जायेंगे, उनकी नामर्दी बढ़ जायगी और यह भ्रम दृढ़ हो जायगा कि रुपया सबको वश में कर सकता है। अगर आपके कार्य के बावजूद मजदूरों की वृद्धि मिल जाय तो आप और दूसरे लोग आपको असफल समझेंगे। क्या आपकी पहली सफलता वांछनीय है? क्या आप चाहेंगे कि रुपये का घमंड बढ़े? क्या आपकी यह इच्छा होगी कि मजदूर बिलकुल निःसत्त्व हो जायें? क्या आप मजदूरों से इतना द्वेष करेंगे कि उन्हें उनके हक मिलें या उसकी अपेक्षा भी उन्हें दो पैसे अधिक मिल जायें तो उस स्थिति को आप सफलता न समझेंगे? क्या आप नहीं देखते कि आपकी असफलता में ही सफलता समायी हुई है? और क्या आपकी सफलता आपके लिए भयंकर है? यदि सफल हुआ होता तो? क्या आप नहीं देखते कि आपकी सफलता से सारे संसार को आघात पहुँचेगा? यह कार्य दुरामह है। मेरे काम में सफलता मिली तो उसे सभी सफलता समझेंगे; किन्तु मेरी निष्फलता से भी किसीको आघात नहीं पहुँचेगा। इतना ही सिद्ध होगा कि मजदूर आगे बढ़ने के लिए तैयार नहीं थे। ऐसे कार्य में सत्याग्रह है। आप जरा सोचिये। अपने

हृदय में उठनेवाली बारीक आवाज को सुनिये और उसके अनुसार चलिये, यह मेरी माँग है। क्या आप यहाँ भोजन करेंगे?"

१-१-१८

जब हड़ताल चल रही थी उन दिनों की मजदूरों की सभा से घर आते समय मुसलमानों के जोश और पागलपन के बारे में बात निकलने पर ये उद्गार प्रकट किये :

"दो बातों में तो मुझे अपने मन पर बड़ी जबरदस्ती करनी पड़ती है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी का इतिहास पढ़ने के बाद ब्रिटिश-राज्य के प्रति मैं जो वफादारी रख रहा हूँ, उसमें मैं अपने पर बड़ी जबरदस्ती करता हूँ। ऊपरी तौर पर सोचने पर तो एकदम खयाल होता है कि अंग्रेजों को हिन्दुस्तान से निकाल बाहर करना ही चाहिए। किन्तु भीतर-ही-भीतर कुछ ऐसी भावना होती है कि नहीं, उनके साथ के संबंध में हिन्दुस्तान का श्रेय है। इसलिए मैं उन पर जबरदस्ती प्रेम करता हूँ। यही बात मुसलमानों के संबंध में भी है। हिन्दू और मुसलमानों को हम दो भाई कहते हैं, पर मेरी कल्पना में यह नहीं आ सकता कि ये भाई भाई हैं। मैंने हिन्दुस्तान में भी नेताओं के साथ बातें की हैं। अधिकांश तो हिन्दू-मुसलमानों की एकता में विश्वास ही नहीं रखते। हिन्दू और मुसलमान एकता की बातें करते हैं, पर हृदय से उसे मानते नहीं। किन्तु इस मामले में भी मेरे मन में भीतर-ही-भीतर यह खयाल आता है कि हिन्दू-मुसलमान कभी-न-कभी एक होंगे, उन्हें एक होना ही पड़ेगा। पुरानी बातें याद करते रहें, तब तो यह खयाल होता है कि दोनों एक नहीं हो सकते। लेकिन पिछली बातें हमें भूलनी ही चाहिए। दुनिया में ऐसा होता ही आया है। यह जबरदस्ती प्रेम करने का उदाहरण है। मैं यह मानता हूँ कि हिन्दू धर्म इतना विशाल है कि यह इसे कर सकता है। यह बात नहीं कि धर्म के भेद कभी मिट जायेंगे पर हिन्दू धर्म अपनी दया-भावना के जरिये मुसलमानों को वश में कर लेगा। हिन्दू धर्म की जड़ में यह चीज है। किन्तु यह बात तब हो, जब हिन्दू लोग इतने

ऊँचे उठें। हममें शुद्ध दया हो, तो हम मुसलमानों को आज वश में कर सकते हैं। लेकिन आज यह कहना मुश्किल है कि हिन्दू कब इस हद तक ऊँचे उठेंगे।"

स्त्रियों को अंग्रेजी पढ़ाने के बारे में रास्ते में बात निकलने पर :

"मेरे मन में कई बार प्रोफेसर कर्वे को पत्र लिखने की इच्छा होती है कि यह तो आप जुल्म कर रहे हैं। स्त्रियों के लिए अंग्रेजी ऐच्छिक हो, तब तो ठीक है पर महिला-विद्यालय में तो यह अनिवार्य है। स्त्रियों को अंग्रेजी ऐच्छिक रूप में पढ़ाने की भी मुझे जरूरत दिखाई नहीं देती। अंग्रेजी सीखने में अपरिचित शब्द रटने में इतना समय चला जाता है और इतनी मेहनत होती है कि मनुष्य दूसरे बहुत-से कामों के लिए अयोग्य हो जाता है। फिर स्त्रियों की शक्ति अंग्रेजी सीखने में खर्च हो जाय, तब तो उससे देश को भारी नुकसान होगा। पुरुषों को भी अंग्रेजी सीखने की कोई जरूरत नहीं। सिर्फ राजनैतिक पुरुषों, विदेश जानेवाले राजदूतों और साहित्य-सेवकों को अंग्रेजी सीखनी चाहिए। आम लोगों को अंग्रेजी सीखने की जरूरत नहीं। इसका अर्थ मैं यह नहीं करता कि अंग्रेजी-साहित्य में जो अच्छा है, उससे वे अपरिचित रहें। अंग्रेजी-साहित्य में जो अच्छा हो उसे जिन लोगों ने अंग्रेजी का विशेष और गहरा अध्ययन किया हो, वे हमारी भाषा में लायें और जनता के सामने रखें। यह अर्थशास्त्र की दृष्टि से भी लाभदायक है।

मार्टभी

" जीने के लिए हम इतने अधिक आतुर रहते हैं कि मौत का समय और उसमें भी प्रियजनों की मृत्यु का समय हमेशा भय उत्पन्न करता है। मुझे तो बहुत बार यही खयाल आता है कि ऐसे समय हमारी सच्ची परीक्षा के होते हैं। जिसे आत्मा का जरा भी भान हो, वह मृत्यु का स्वरूप समझता है। वह क्यों वृथा शोक करे? ये विचार नये नहीं हैं पर संकट के समय कोई उनका स्मरण कराये, तो आश्वासन

मिलता है। यह आश्वासन तुम्हें मिले, इसी उद्देश्य से यह लिखा गया है।"

मणिलाल को पत्र लिखते हुए :

० ० ०

"बिना समझे लोग मेरी पूजा करें, यह केवल परेशान करनेवाली बात है। मैं जैसा हूँ, वैसा ही लोग मुझे जानें और फिर भी मेरा आदर करें तो उसका मैं लोक-सेवा में उपयोग कर सकता हूँ। मैं अपने धार्मिक विचारों को दबाकर किसी भी प्रकार का सम्मान नहीं लेना चाहता। सदाचरण करते हुए मेरा सर्वथा तिरस्कार हो तो उसका भी मैं स्वागत करूँगा।

"हम हजारों बातें चाहते हैं, पर सब हो नहीं सकतीं। यह समझकर पूरी शांति रखनी चाहिए।"

१ ३ १८

मिसेज मिली पोलाक को पत्र :

"प्रिय मिली

"यहाँ मैं आजकल खेड़ा में सत्याग्रह और अहमदाबाद में एक बड़ी हड़ताल चला रहा हूँ। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मेरे सत्याग्रह को अब पूरा मौका मिलने लगा है। इन दो लड़ाइयों के कारण मुझे अहमदाबाद में ही रहना पड़ता है। इन बातों से सम्बन्ध रखनेवाले थोड़े कागज मैं हेनरी को सीधे भेज रहा हूँ। उनकी प्रवृत्ति को मैं ध्यान से देख रहा हूँ। इस दिशा में हेनरी जो कुछ करेंगे, उससे मुझे आश्चर्य नहीं होगा। अगर न्यूनता दिखाई देगी तो मुझे जरूर अफसोस होगा। सर विलियम वेडरबर्न की कमी उन्हें महसूस होगी, किन्तु वे अपने समय से पहले इस दुनिया से विदा नहीं हुए। तुम अम्बालालभाई को पत्र लिखती ही हो! हड़ताल के सबसे जबरदस्त विरोधी वे ही हैं।"

देवदर के पिछले पत्र का जवाब आया। सारी बात स्वीकार नहीं की। बीमारी के बारे में शिकायत। उन्हें जवाब लिखा :

"आप जरूर यहाँ आयें। हम अच्छी तरह चर्चा करेंगे। उस समय तक हमें समझ लेना चाहिए कि हमारा मतभेद है। मैं ग्रेट और भोपाल दोनों के निकट परिचय में आया हूँ। समझता हूँ कि मैं दोनों को पहचानता हूँ।

'मेरा खयाल है कि आपको आधी सहायता से हमें संतोष कर लेना पड़ेगा। जो आदमी अपने जीवन में आधे समय बीमार रहे, वह आधा ही उपयोगी है। ठीक है या नहीं? तन्दुरुस्ती अच्छी बना लेने के लिए एक बात करना जरूरी है। किन्तु आप वह करते कहाँ हैं?"

७। १८

'भाई प्राणजीवन,

खेड़ा जिले में परिणाम तो चाहे जो आये पर अधिकारी-वर्ग और प्रजा-वर्ग को भारी शिक्षा मिलती है। लोगों में बेहद जागृति आयी है। कर न देने की बात कहने में पहले राजद्रोह माना जाता था, लेकिन अब लोग निडर होकर यह बात कहने लगे हैं। शिक्षित वर्ग के लोग जो स्वयंसेवक बने हैं, उन्हें भी अलभ्य लाभ हुआ है। जिन्होंने कभी गाँव नहीं देखे थे, उन्हें लगभग ९ गाँव देखने का अवसर मिला। अभी खेड़ा जिले का काम पूरा नहीं हुआ। इसी तरह मजदूरों और मालिकों का मामला चल रहा है। हिन्दुस्तान के जीवन के हरएक विभाग में मेरा प्रवेश हो रहा है। दस हजार मजदूर शान्ति से रहे हैं और उनमें एक रुपया भी खर्च नहीं करना पड़ा यह कोई ऐसी-वैसी बात नहीं है, फिर भी सही है। लोग समझ गये हैं कि आत्मबल के बराबर दूसरा कोई बल नहीं। दोनों जगह इन दो वाक्यों पर जीत का आधार है : हमारे आधार पर नहीं, बल्कि अपने ही आधार पर तुम जीतोगे और ज्ञानपूर्वक दुःख उठाये बिना नहीं जीतोगे।"

* * *

जहाज चलने लग गये थे और स्वदेशी व्यापार जहाजों का करना चाहिए या नहीं, यह प्रश्न किया गया था। उसके संबंध में :

"तुम्हारा व्यापार में ज्यादा समय देना अच्छा है या बुरा, इसका आधार सिर्फ हेतु पर है। जीवन का कोई बीमा नहीं होता। अच्छा काम करने के लिए रुपया कमायें, पर कमाते-कमाते ही मर जायें, तो पछतावा रह जाता है। किन्तु पूँजी बढ़ाना ही जीवन का ध्येय हो, पैसे की वृद्धि करने में ही अच्छेपन की कल्पना समायी हो या व्यापार सुधारने के उद्देश्य से व्यापार को अधिक फैलाना ही कर्तव्य मान लिया गया हो, तो व्यापार बढ़ाने के सिवा कोई चारा नहीं।

"भाई मनसुखलाल,

'आपकी आलोचना से मुझे दुःख नहीं होता। काठियावाड़ का प्रश्न मुझे तुच्छ नहीं लगता। मुझे तो इतना बड़ा मालूम होता है कि अभी वह मेरी शक्ति के बाहर है। मैंने उस पर विचार न किया हो सो बात भी नहीं है। मैंने इस सवाल को विचारपूर्वक छोड़ा है। इसमें मेरी कमजोरी हो सकती है। ऐसा हो, तो मुझे बल देना चाहिए। लेकिन तुम्हारा बल देने से वह मुझमें आ जायगा ऐसी बात नहीं है। भीतर की आग चाहिए, सो नहीं है।'

१०-१ १८

आज बापू ने कौटुम्बिक बातों से मानो नहला दिया :

"हरिलाल को लिखे पत्र से हरिलाल को दुःख तो होगा। किन्तु मैं उसे और कुछ नहीं दे सकता। संसार में माता-पिता का प्रेम जैसा माना जाता है, वैसा किसीने नहीं जाना होगा। इस मामले में मेरा दावा बहुत बड़ा है। दुनिया में कोई मुझसे अधिक माता या पिता को चाहनेवाला है, ऐसा मुझसे कहा जाय तो मैं कहूँगा कि उसे मेरे पास लाओ, मैं देख लूँ। मैंने इसलिए अपने माता-पिता को वश में कर रखा था। मेरे लिए छोटे-से-छोटा काम भी नौकर-चाकरों से नहीं लेता

मुझसे ही करवाते थे। पानी की जरूरत हो या पैर दबवाने हों या कुछ भी काम हो तो मुझे ही आवाज दी जाती। मेरे प्रति उनकी आसक्ति कुछ अलौकिक थी। ऐसा पिता विरला ही होगा। मैंने जिस दिन नाटक देखा उस दिन मेरे पिता सिर पीटकर रोये थे। हमेशा की तरह मैं उनके पैर दबा रहा था। उस दिन पैर दबाते-दबाते ये विचार मन में आते रहे कि आज छुट्टी मिल जाय तो बड़ा अच्छा हो, नाटक देखने को मिले। कहने गया : 'पिताजी ' परन्तु पिताजी क्यों सुनने लगे? जान गये कि आज लड़के का चित्त कहीं-न-कहीं लगा हुआ है। दूसरी बार कहा : 'पिताजी, आज बड़ा अच्छा नाटक है', तब भी जवाब नहीं मिला। किन्तु उस दिन मुझे ऐसा मोह हो गया था कि उनके इस मौन से भी मैं नहीं चेता। तीसरी बार कहा : 'आज बड़ा अच्छा नाटक है। पिताजी, देखने जाऊँ?' 'ज जाओ' ये शब्द उनके मुँह से निकले, पर उनका अर्थ 'मत जाओ' ही था। फिर भी हम तो गये। रंगमंच का पहला ही पर्दा खुला था और मैं नाटक का मजा लेने को तैयार बैठा था। इतने में घर से एक आदमी ने आकर खबर दी : 'पिताजी तो घर पर रोकर सिर पीट रहे हैं। मैं तुरन्त बाहर आ गया। घर जाकर पिताजी से क्षमा माँगी। वे कुछ भी नहीं बोले। एक भी कड़वा शब्द नहीं कहा। खुद ने ही रोकर और सिर पीटकर अपनी नापसन्दगी बता दी। उस दिन से उनके जीवन-काल में तो मैंने कभी नाटक नहीं देखा।

'पिताजी बहुत सख्त थे। 'ऐसा तो होना ही चाहिए' यह इस तरह कैसे? 'पर्कों काम यों कैसे? सब मामलों में उनके ही इच्छानुसार होना चाहिए। गुप्त-से-गुप्त बातें हों बड़े बड़े राजनीतिक सलाह-मशविरा करने आयें, तो भी मुझे तो पास ही बिठा रखते थे। सभी काम मुझसे लेते। मैं उनकी अफीम भी घोंटता था। किसी वैद्य ने उनसे कहा था कि आप जरा-सी अफीम लिया करेंगे, तो आपमें ताकत अच्छी रहेगी। राजकोट के ठाकुर साहब भी अक्सर घर आया करते थे। एक बार राजकोट के ठाकुर की शादी थी। वे दो रानियाँ लानेवाले थे। एक कानपुर से और एक

धरमपुर से। धरमपुर का दरबार अच्छा था, इसलिए वहाँ से दीवान के लड़कों को बस्त्रालंकार आदि पोशाक बहुत अच्छी मिलती और कानपुर से उतनी अच्छी मिलने की संभावना नहीं थी। पिताजी ने कहा कि मुझे और मेरे भाई को कानपुर जाना है। घर में बड़ी चर्चा हुई। मेरी माँ कहने लगी : 'हैं, मेरे लड़के कानपुर जायें? जिस दिन कन्या का लेने जाना था उसी दिन हमें माँ ने ठाकुर साहब के पास जाने को कहा। हम तो सुबह ही ठाकुर साहब के पास जा पहुँचे। पिताजी वहाँ बैठे ही थे। उन्होंने हम पर लाल-पीली आँखें निकालीं। हम रो दिये। ठाकुर साहब ने पूछा : 'क्यों गांधी, लड़कों को डराते क्यों हो? इन लोगों की क्या माँग है?' हमने कहा : 'हम दीवान साहब के लड़के होकर कानपुर नहीं जायेंगे।' ठाकुर बोले : हाँ, अभी तो लोग शहर के बाहर भी नहीं पहुँचे होंगे। जाओ लड़को, तुम्हें तो धरमपुर ही जाना चाहिए।' किन्तु पिताजी भला क्यों मानने लगे? वे तो बोले : 'नहीं, हमें तो कानपुर ही शोभा देगा। उन्हें तो यह खयाल था कि लड़के दूसरी उम्र में सिर चढ़ जायें तो किस काम के? अंत में पिताजी का हुक्म कायम रहा और हम कानपुर गये।

'छठी और सातवीं कक्षा में मुझे छात्रवृत्ति मिलती थी। पहले वर्ष में पाँच और दूसरे में दस रुपये। किन्तु मैंने एक पैसा भी अपने पास नहीं रखा।"

मैंने लक्ष्मीदास के लड़कों की बात कही। बापू बोले : यह सारे काठियावाड़ की प्रथा है। मैं देखता हूँ कि इस तरह की प्रथाओं को देव ट्रस अच्छी तरह समझ गया दीखता है और उन पर बराबर अमल कर रहा है।

१२ । १८

श्रीमती पेतेन्ट अहमदाबाद आयीं। रात को अंबालाल के यहाँ उनको भोजन था। भोजन से पहले बातचीत हुई। उसमें मैं था। मिल-मालिकों और मजदूरों के झगड़े संबंधी बात निकली। बापूजी अम्बालाल की तरफ

देखकर श्रीमती बेसेंट से कहने लगे : "अरे, ये लोग तो मिल-मजदूरों को कुचल डालने को तैयार हो गये हैं।" इस पर अम्बालाल ने इन्हीं शब्दों में जवाब दिया : "और ये लोग मिल-मालिकों को कुचल डालना चाहते हैं। बाद में श्रीमती बेसेंट ने पूछा कि क्या आपकी सचमुच यह इच्छा है कि मैं सरकार से इस मामले में कुछ कहूँ?

बापू : नहीं। इस मामले में मैं सरकार को बिलकुल बीच में नहीं डालना चाहता। हमारे बीच पूरा-पूरा सद्‌भाव है।

इस पर श्रीमती बेसेंट बोलीं : यह तो बिलकुल असाधारण बात मानी जायगी। किन्तु मि गांधी खेड़ा के लोगों का क्या हुआ?

बापू : मेरे खयाल से इस मामले में विरोधस्थ काम में लेने में मुझे जिम्मेवरदारी करने की जरूरत नहीं। मैं कहूँगा कि सरकार ने बिलकुल मूर्खतापूर्ण रवैया अख्तियार किया है। उसे समझना चाहिए था। किन्तु हम किस हद तक छोड़ने को तैयार हो गये हैं इसे ये लोग देखते ही नहीं। हमने विशेष सावधानी रखी है कि इस लड़ाई के बारे में अखबारों में बहुत न आवे। वरना हम अखबारों में बहुत कुछ दे सकते थे। खेड़ा में असाधारण आन्दोलन हो रहा है। हम हर गाँव और हर घर में पहुँच चुके हैं। खेड़ा के किसान बड़े बहादुर हैं। यह हिन्दुस्तान के सबसे अधिक उपजाऊ प्रदेशों में से माना जाता है। यहाँ सुन्दर वृक्ष हैं। बिहार में भी वृक्ष हैं पर वे अपने आप उग आये हैं, जब कि यहाँ तो लोगों ने अपनी मेहनत से उगाये हैं। खेड़ा के किसानों ने जमीन को कसदार बनाने में अपनी सारी शक्ति लगा दी है।

आज अम्बालाल साराभाई का एक 'निजी और गुप्त' पत्र आया। लम्बा पत्र था। पढ़कर बापू ने फाड़ डाला। अनसूयाबहन के यहाँ थे। वहीं उत्तर लिखा। उत्तर मैंने सिरहाने खड़े-खड़े पढ़ लिया था। बाद में मैंने उसकी नकल करने की इच्छा प्रकट की। तो बापू कहने लगे कि इसकी नकल नहीं की जा सकती। ऐसी चीजें प्रकाशित नहीं हो सकतीं, डायरी में भी नहीं लिखी जा सकतीं। फिर मैंने कहा कि जितना मैंने याद

रखा है, उतना तो सिलूँगा। तब बोले : भले ही। यह मिल-मालिकों के 'लॉकआउट' का आखिरी दिन था। अम्बालाल ने यह आशा रखी थी कि बहुत-से बुनकर काम पर आ जायँगे। कुछ ने अम्बालाल को आशा दिलायी थी कि हम आ जायँगे। पर हुआ कुछ नहीं। कोई बुनकर न आया। अम्बालाल के पत्र का तात्पर्य यह होता कि मजदूरों ने दूसरे मजदूरों को दबाकर, जबरदस्ती करके नहीं आने दिया, इसलिए आपको उन लोगों को सूचना देनी चाहिए। बापू के पत्र का भाव इस प्रकार था :

आपका पत्र मिला और उसे पढ़कर फाड़ डाला। मैंने यह चाहा ही नहीं कि मजदूरों पर दबाव डाला जाय। मजदूरों पर दबाव डालनेवालों के संबंध में आप अधिक निश्चित बातें सिखेंगे तो मैं जरूर बन्दोबस्त करूँगा। मजदूर काम पर जायँ या न जायँ, इसकी मुझे परवाह नहीं। किसी भी आदमी को मिल में जाते हुए जबरन न रोकने की हिदायत मैं देता रहा हूँ। मैं यह चाहता ही नहीं कि मजदूर इच्छा के विरुद्ध मिल में न जायें। कोई मजदूर मिल में जाने की इच्छा प्रकट करे, तो मैं उसे खुद मिल में छोड़ आने को तैयार हूँ। मजदूर काम पर जाय या न जायें, इस बार में मैं बिलकुल बेपरवाह हूँ।

आपने मुझे ऐसा काम दिया है कि मैं आपके साथ रहने का आनंद नहीं ले सकता। आपके बच्चों से मिलने की मेरी बहुत इच्छा है, पर अभी तो यह कैसे हो सकता है? यह तो सब भविष्य की बात है।

१५-३ १८

आश्रम में प्रातःकाल की प्रार्थना के बाद प्रतिज्ञा के विषय में बोलते हुए :

मैंने अभी जो कदम उठाया है, वह बड़ा भयंकर है। किन्तु उसकी तह में बड़ा भारी विचार है। भयंकर इसलिए है कि यह सुनकर हिन्दुस्तान में मुझे जितने मनुष्य पहचानते हैं उन्हें बड़ा दुःख होगा। वे शोर मचायेंगे। लेकिन इसके साथ ही उन लोगों को मुझे अब एक सुन्दर तत्त्व समझा देने का भी अवसर मिला है। उस अवसर को मुझे न चूकना चाहिए,

इस विचार से मैंने यह कदम उठाया है। आप सबको उसका उद्देश्य समझाने के लिए मैं दो दिन से बहुत अधीर हो रहा हूँ, किन्तु ऐसा शान्ति का समय नहीं मिल रहा था। यह मुझे बहुत खटकता है कि मैं सुबह शाम प्रार्थना के समय आश्रम में नहीं रह सकता। और कल तो संगीतशास्त्री आये थे। उनका मधुर स्वर सुनने का आनन्द तो मैं हरगिज नहीं छोड़ सकता था। मैंने बहुत-से मोह छोड़ दिये हैं, पर अभी बहुत-से मोह मुझमें रह भी गये हैं। आजकल तो संगीत के बारे में मैं जितना चाहता था उतना मुझे आश्रम में मिल जाता है। इसलिए कल अनसूयाबहन का मुझे अपने यहाँ रखने का बड़ा आग्रह था, तो भी मैं यहाँ आ ही गया। ऐसे मौके पर यहाँ के संगीत से मुझे बड़ी शान्ति मिलती है। आपके सामने अपनी आत्मा उँडेलने के लिए यही ठीक अवसर है। जिस समय आप अपने कर्तव्य में लगे हुए हों, तब उससे छुड़ाकर आपको यहां इकट्ठा करना भी ठीक नहीं।

हमारे हिन्दुस्तान की प्राचीन संस्कृति से मुझे एक ऐसा तत्त्व मिला है जिसे यहाँ बैठे हुए हम थोड़े मनुष्य ही जान लें, तो भी सारे जगत् का साम्राज्य भोग सकते हैं। किन्तु उसे बताने से पहले मुझे एक बात कहनी है। इस समय हिन्दुस्तान में एक ही ऐसा व्यक्ति है, जिसके पीछे लाखों लोग पागल हैं, जिसके लिए देश के लाखों मनुष्य अपने प्राण देने को तैयार हो जायेंगे। वह व्यक्ति है तिलक महाराज। मुझे कई बार ऐसा लगता है कि तिलक महाराज के पास यह बड़ी पूँजी है, यह उनका महाधन है। उन्होंने 'गीता-रहस्य' लिखा है। किन्तु मुझे यह खयाल हुआ करता है कि उन्होंने हिन्दुस्तान की प्राचीन भावना को हिन्दुस्तान की आत्मा को नहीं पहचाना और इसीलिए इस समय देश की यह दशा है। उनके मन की गहराई में यही बात है कि हम यूरोपियनों के जैसे बन जायें। आजकल यूरोप की जैसी शोभा हो रही है—यानी जिनके मन में यूरोपीय विचार घुस गये हैं, उन्हें यूरोप जितना सुशोभित लगता है—वैसा ही हिन्दुस्तान को सुशोभित करने की उनकी मंशा है। उन्होंने कुछ वर्ष का

कारावास सहन किया यूरोप के ढंग की बहादुरी दिखाने के लिए, इस विचार से कि जो लोग इस समय हमें सता रहे हैं, वे देख लें कि हम दस बीस बरस कैसे जेल में रह सकते हैं। साइबेरिया के जेलों में रूस के बहुत से बड़े-बड़े आदमी उम्रभर सड़ते रहे, पर वे कोई आत्मज्ञान के कारण जेल में नहीं गये थे। इस तरह जीवन गँवा देना अपना परम धन बेकार गँवा देने जैसा है। तिलकजी ने यह जेल आध्यात्मिक दृष्टि से भोगा होता तो आज हालत दूसरी ही होती और उनके जेल जाने के परिणाम और ही हुए होते। मैं उन्हें यह समझाना चाहता हूँ। बहुत दफा अत्यन्त विवेकपूर्वक जितना मुझसे कहा जा सकता है, मैंने उनसे कहा है। हाँ, मैंने स्पष्ट कहा या लिखा नहीं। मैंने जो कुछ लिखा है, उसमें मेरे कहने की बात गौण जरूर रह जाती है। किन्तु तिलक महाराज की निरीक्षण शक्ति इतनी जबरदस्त है कि वे समझ जायेंगे। फिर भी यह बात ऐसी है कि कहने या लिखने से नहीं समझायी जा सकती। उसका अनुभव कराने के लिए मुझे उन्हें प्रत्यक्ष उदाहरण देना चाहिए। परोक्ष रूप में मैंने कई बार कहा है, पर प्रत्यक्ष दृष्टान्त देने का अवसर मुझे मिल जाय, तो उसे कभी नहीं छोड़ना चाहिए। यह ऐसा ही अवसर है।

ऐसे ही दूसरे व्यक्ति हैं माननीय मालवीय। हिन्दुस्तान के नेताओं में वे इस समय सबसे पवित्र पुरुष हैं—यानी राजनैतिक पुरुषों में और जिन्हें हम जानते हैं, उनमें। अज्ञात पवित्र पुरुष तो बहुत होंगे। किन्तु इतने पवित्र होते हुए भी और धर्म का ज्ञान रखते हुए भी उन्होंने हिन्दुस्तान की मध्य आत्मा को अच्छी तरह नहीं पहचाना, ऐसा मुझे लगता है। यह मैंने बरस पर टाला है। मालवीयजी यह सुनकर मुझ पर क्रोध कर सकते हैं और यह कहकर मेरा तिरस्कार भी कर सकते हैं कि यह बहुत घमंडी आदमी है। किन्तु बात बिलकुल सची है इसलिए कहते हुए मुझे जरा भी हिचकिचाहट नहीं होती। मैंने उनसे बहुत बार कहा है। उनके साथ तो मेरा बड़ा स्नेह है इसलिए उनके साथ मैंने बहुत झगड़ा भी किया है। फिर भी मेरे हार तर्क के अन्त में उन्होंने कहा है कि यह सारी

बात सही है, पर मैं उसे मान नहीं सकता। उन्हें भी प्रत्यक्ष उदाहरण देने का यह अवसर मिला है। इन दोनो को मुझे अब क्या देना चाहिए कि हिन्दुस्तान की आत्मा क्या है।

बीस दिन से मैं दस हजार मजदूरों के साथ मिलता-जुलता हूँ। उन्होंने मेरे सामने खुदा या ईश्वर को बीच में रखकर प्रतिज्ञा ली। उस समय उन्होंने उत्साह से प्रतिज्ञा ली। वे लोग कैसे भी हों पर यह मानने वाले तो जरूर हैं कि खुदा या ईश्वर है।

उनकी यह धारणा थी कि हमने बीस दिन प्रतिज्ञा का पालन किया, इसलिए भगवान् हमारी मदद जरूर करेगा। किन्तु भगवान् ने इतने अर्से में मदद नहीं दी और उनकी ज्यादा परीक्षा की, इसलिए उनकी आस्था कमजोर पड़ गयी। उन्हें यह महसूस हुआ कि इतने दिनों तक इस एक आदमी के कहने पर भरोसा रखकर हमने दुःख उठाया पर हमें कुछ न मिला। इस आदमी का कहना न माना होता और इधर-उधर किये होते, तो पैंतीस फीसदी तो क्या, उससे भी ज्यादा हमें थोड़े ही समय में मिल जाता। यह उनके मन का विश्लेषण है। मैं यह स्थिति हरगिज सहन नहीं कर सकता। मेरे सामने ली हुई प्रतिज्ञा इस तरह आसानी से तोड़ दी जाय और ईश्वर के प्रति श्रद्धा कम हो जाय तब तो धर्म का लोप हुआ ही कहा जायगा। और इस तरह जिस काम में मैं शामिल होऊँ, उसमें धर्म का लोप होता देखूं, तो मैं जी ही नहीं सकता। मुझे मजदूरों को यह समझाना चाहिए कि प्रतिज्ञा लेना क्या चीज है। इसके लिए मैं क्या कर सकता हूँ, यह मुझे उन्हें बताना चाहिए। यह न बताऊँ, तो मैं कायर कहलाऊँगा। एक कदम कदमी की बात कहनेवाला अगर एक बालिश्त भी न कूदे तो यह उसकी कायरता ही होगी। तो इन दस हजार मनुष्यों को गिरने से रोकने के लिए मैंने यह कदम उठाया है। इसलिए मैंने यह प्रतिज्ञा ली और उसका बिजली का-सा असर हुआ। मैंने यह सोचा ही नहीं था। वहाँ हजारों आदमी थे। उनकी आँखों से आँसुओं की धार बहने लगी। उन्हें अपनी आत्मा का भान हुआ,

उनमें चैतन्य जाग्रत हुआ और उन्हें अपनी प्रतिज्ञा पालने का बल मिला। मुझे एकदम विश्वास हो गया कि हिन्दुस्तान से धर्म का लोप नहीं हुआ है। लोग आत्मा को पहचान सकते हैं। यह बात तिलक महाराज तथा मालवीयजी की समझ में आ जाय, तो हिन्दुस्तान में जबरदस्त काम किया जा सकता है।

मैं इस समय आनन्दविभोर हो रहा हूँ। इससे पहले जब मैंने ऐसी प्रतिज्ञाएँ ली थीं तब मेरे मन में ऐसी शान्ति नहीं थी। शरीर की इच्छाएँ भी मुझे महसूस होती थीं। इस बार मुझे शरीर की बिलकुल मालूम ही नहीं होती। मेरे मन को पूरी शान्ति है। ऐसा जी में आता है कि अपनी आत्मा आप लोगों के सामने उँडेल दूँ। लेकिन मैं आनन्द से विह्वल भी हो गया हूँ।

• • •

अपनी प्रतिज्ञा के बारे में समझाते हुए आगे बोले :

मेरी प्रतिज्ञा मजदूरों से उनका प्रण पलवाने के लिए है, प्रतिज्ञा का मूल्य लोगों को समझाने के लिए है। देश में लोग बारे बार प्रतिज्ञा ले और बार बार तोड़ दें, यह दीन दशा का सूचक है। फिर, दस हजार मजदूर अपनी प्रतिज्ञा छोड़ें, तब तो देश की अधोगति ही हो जाय। मजदूरों का सवाल तो फिर कभी उठाया ही नहीं जा सकता। जहाँ-तहाँ यह उदाहरण दिया जायगा कि दस हजार मजदूरों ने बीस दिन तक भारी दु:ख उठाया और गांधी जैसा उनका नेता था, फिर भी वे न जीते। इसलिए मुझे यह सोचना पड़ा कि मजदूर किस तरह अपनी बात पर दृढ़ रह सकते हैं। यह मैं अपने-आपको कष्ट दिये बिना कैसे कर सकता हूँ? प्रतिज्ञा का पालन करने के लिए ऐसे कष्ट भी उठाने पड़ते हैं, यह उदाहरण उनके सामने रखना जरूरी मालूम हुआ। मैंने यह प्रतिज्ञा ली। मैं समझता हूँ कि मेरी प्रतिज्ञा दूषित है। यह संभव है कि इस प्रतिज्ञा के कारण मिल-मालिक मुझ पर दया करके मजदूरों को ३५ प्रतिशत दे दें। मेरी इच्छा तो यही

है कि उन्हें न्याययुक्त मालूम हो, तो ही वे ३५ प्रतिशत दें, चाहे वे कुछ भी न दें। फिर भी उसका स्वाभाविक परिणाम यही होगा और उस हद तक यह प्रतिज्ञा मुझे शर्मिन्दा बनानेवाली है। किन्तु मैंने दो वस्तुओं का विचार किया : अपनी शर्म और मजदूरों की प्रतिज्ञा। पलड़ा दूसरी तरफ झुका और मजदूरों के लिए मैंने अपनी शर्म सह लेने का निश्चय किया। सार्वजनिक काम करने में इस तरह की शर्म सह लेने के लिए भी मनुष्य को तैयार रहना चाहिए। इस प्रकार मेरी प्रतिज्ञा मिल-मालिकों के लिए धमकी के रूप में है ही नहीं और मैं तो यह चाहता हूं कि मिल मालिक साफ तौर पर यह बात समझें और उनकी माँग न्यायपूर्ण प्रतीत हो तभी मजदूरों को ३५ प्रतिशत वृद्धि दें। मजदूरों से भी मेरी यह प्रार्थना है कि वे जाकर मिल-मालिकों से यही कहें।

१८ । १८

प्रार्थना के समय इस प्रकार बोले :

आज दस बजे से पहले बहुत करके समझौता हो जायगा। इस समझौते पर मैं अपनी प्रमाद-रहित स्थिति में विचार कर रहा हूं। मैं कभी स्वीकार न करूं, ऐसा समझौता हुआ है। किन्तु इसमें मेरी प्रतिज्ञा का दोष है। मेरी प्रतिज्ञा में बहुत दोष रहे हैं। बहुत दोषों का यह अर्थ नहीं कि गुण कम और दोष ज्यादा हैं। किन्तु जैसे वह अनेक गुणों से भरी है, वैसे ही उसमें दोष भी बहुत हैं। मजदूरों के सम्बन्ध में वह अजरदस्त गुणोंवाली है और उसके परिणाम भी उसीके अनुसार सुन्दर हुए हैं। मालिकों के सम्बन्ध में वह दोषोंवाली है और उस हद तक मुझे झुकना पड़ा है। मालिकों पर मेरे उपवास का दबाव है। मैं इससे कितना ही इनकार करूं, तो भी उन लोगों को यह महसूस हुए बिना नहीं रह सकता और दुनिया मेरी बात मानेगी भी नहीं। मालिक मेरी इस अस्थिर दशा के कारण स्वतन्त्र नहीं रहे और कोई भी मनुष्य दब रहा हो तब उससे कुछ लिखवा लेना उससे सत करा लेना या उससे कुछ लेना न्याय-विरुद्ध है।

सत्याग्रही कभी ऐसा नहीं कर सकता और इसलिए मुझे इस मामले में झुकना पड़ा है। धर्म में पड़ा मनुष्य क्या कर सकता है! मैं थोड़ी-थोड़ी माँग करता गया। उसमें से उन्होंने खुशी से जितनी स्वीकार की उतनी ही मुझे लेनी पड़ी। मैं पूरी माँग करूं, तो वे पूरी स्वीकार कर लें। किन्तु उन्हें ऐसी स्थिति में डालकर उनसे मैं कुछ ले ही नहीं सकता। यह तो मेरे लिए उपवास छोड़कर नरक का भोजन करने के बराबर है। और अमृत का भोजन भी यथासमय ही करनेवाला मैं नरक का भोजन कैसे कर सकता हूँ!

मेरा यह खयाल है कि हमारे शास्त्रों में कुछ वचन महा अनुभव के परिणामस्वरूप लिखे गये हैं। थोरो कहता है कि जहाँ अन्याय का बोल बाला हो, वहाँ शुद्ध मनुष्य धनवान् हो ही नहीं सकता और जहाँ न्याय चलता हो, वहाँ शुद्ध मनुष्य को किसी बात की तंगी नहीं हो सकती। हमारे शास्त्रों में इससे भी ज्यादा कहा है कि जहाँ अन्याय का बोलबाला हो वहाँ शुद्ध मनुष्य जी ही नहीं सकता। इसीलिए हममें से कुछ लोग कोई प्रवृत्ति नहीं करते। प्रवृत्ति से ऊबकर वे उसे नहीं करते हों सो बात नहीं; किन्तु वे प्रवृत्ति कर ही नहीं सकते। उन्हें दुनिया में इतना अधिक दम्भ दिखाई देता है कि वे उसमें रह ही नहीं सकते। बहुत-से पाखंडियों में एक शुद्ध मनुष्य हो, तो उसे उन पाखंडियों को छोड़ देना चाहिए या खुद अशुद्ध बन जाना चाहिए। दुनिया के कुछ शुद्ध मनुष्य हिमालय या विन्ध्याचल में चले जाते हैं और शरीर को घिस कर डालते हैं। कुछ लोगों को यह शरीर मिथ्या लगता है। जो आत्मा के अमरत्व और सर्व व्यापकता में विश्वास रखते हैं, वे शरीर का वहीं त्याग कर देते हैं और केवल मोक्ष को प्राप्त करते हैं। कुछ वापस भी आ जाते हैं, किन्तु अपने को इतना शुद्ध करके कि बाद में दुनिया के दम्भ में रहकर भी वे अपना शोधा हुआ कर सकते हैं। ऐसे ज्ञानियों के साथ जब मैं अपनी स्थिति की तुलना करता हूँ, तब मैं अपने-आपको इतना पामर अनुभव करता हूँ कि कुछ न पूछिये। फिर भी मुझे अपनी शक्ति का अन्दाज न हो, तो

कम नहीं। लेकिन बाहर उसका जितना अन्दाज होना चाहिए, उससे बहुत अधिक होता है। मुझे दिनोंदिन दुनिया में इतना अधिक दम्भ मालूम होता जा रहा है कि कई बार ऐसा प्रतीत होता है कि मैं यहाँ भी ही नहीं सकता। मैंने किलिकस में कई बार कहा है कि किसी दिन मैं तुम सबके बीच न दिखाई दूँ, तो कोई आश्चर्य न करना। मुझे किसी दिन यह महसूस हो जायगा तो मैं ऐसी जगह चला जाऊँगा, जहाँ मुझे कोई न पा सकेगा। उस समय तुम घबराना मत, बल्कि मैं तुम्हारे पास ही हूँ, यह समझकर हाथ में लिये काम करते रहना।

१९। १८

का इस आशय का पत्र था कि मेरे साथ अन्याय किया गया है। यह कहकर कि मुझे सार्वजनिक कार्य में भाग लेने का अधिकार नहीं, आप मुझे दुःखी बनाते हैं। उन्हें जवाब :

'भाईश्री,

"तुम्हारा पत्र मिला। अगर तुम्हें मेरे हाथों इन्साफ मिला ही नहीं, तो मेरा त्याग क्यों नहीं करते? तुम्हें मैंने जो वचन कहे, वे सलाह के रूप में ही थे। मैंने तुमसे कहा है कि मैंने जो कुछ कहा, उसे तुम मानो, तो ही करना। तुमने मेरी सलाह पसंद की, इसीलिए सार्वजनिक काम छोड़ने का निश्चय किया। अब तुम्हें मेरी सलाह में कठोरता के सिवा और कुछ न दिखाई देता हो तो तुम मेरी सलाह को ताक में रख सकते हो। अब मेरी सलाह है कि तुम जैसे काम कर रहे थे, उसी तरह फिर करो। यह मैं रोष में नहीं लिख रहा हूँ बल्कि ठीक समझकर लिख रहा हूँ। तुममें पहले कहे हुए वचन याद रखने की शक्ति नहीं है। इसलिए मुझे लगता है कि अभी तो तुम्हें केवल अपना स्वतंत्र मार्ग ही ग्रहण करना चाहिए। इसीसे तुम्हारी उन्नति होगी। तुम मेरी सलाह को भी आज्ञा मानो और यह समझो कि उसमें से जरा भी इधर उधर नहीं हुआ जा सकता, तो तुम्हारी अधोगति होगी। मेरे लेखा से तुम्हारे लिए ठीक रास्ता

होमरूल के अपने आन्दोलन में भी जान से लग जाना ही है और उसी को महत्त्व करना है। यह निश्चित समझो कि तुम कान्फ्रेन्स वगैरह में खूब रम जाओगे तो मैं ज़रा भी गुस्सा नहीं होऊँगा। मेरी सलाह और मेरी आज्ञा के बीच भेद समझो। तब मेरी सलाह भी लेते रहना होगा। यह पत्र तुम्हारी शांति के लिए है, तुम्हें दुःखी करने के लिए नहीं।

मोहनदास गांधी '

२१ । १ । १८

बापू प्रशंसा करते समय प्रशंसा के पात्र पर हमेशा अपना सारा प्रेम उँडेल देते हैं। फिर भले ही पात्र में स्वयं उतने प्रेम की पात्रता हो या न हो इसकी चिन्ता नहीं। प्रेम का पात्र तुच्छ हो, तो भी प्रेमी उसे महान् बना सकते हैं। किन्तु क्या इससे कभी-कभी पात्र को नुकसान नहीं होता होगा? और जब इस ढंग की अत्युक्तिपूर्ण प्रशंसा बड़े समूह के सामने की जाय, तब तो कुछ लोगों को उससे क्षोभ पहुँचता है, कुछ को ऐसा महसूस होता है कि इस प्रशंसा का अधिक मूल्य नहीं। कुछ को अपमान महसूस होता भी पाया गया है। प्रोफेसर ने एकबार कहा था कि चाहे जिस मनुष्य को सुन्दर कहा जाय और फिर हमें सुन्दर कहा जाय, तब यह समझना चाहिए कि हमारे लिए भी बापूजी के दिल में बहुत कीमत नहीं है। हमें वे उसी जैसा मानते हैं।

आज एण्ड्रूज साहब के साथ बापू बातें कर रहे थे कि मैं वहाँ चाय वगैरह लेकर आ पहुँचा। मेरी तारीफ करके मुझे परेशान कर दिया :

बा० "इसका प्रेम आप पर उमड़ा पड़ता है। इसे लगता है कि इसने रामूर आप बना सकते हैं और इसकी चाय आपको पीनी चाहिए। आशा है कि इसकी मौजूदगी में इसकी तारीफ करके मैं इसे बिगाड़ूँगा नहीं। इसने आश्रम की कमी पूरी कर दी है। यह आश्रम से धन्य होने के लिए नहीं, बल्कि आश्रम को धन्य बनाने के लिए आया है।" कहते हुए मुझे शर्म आती है, पर यह बात सच है कि यहाँ कुछ लोग ऐसे हैं, जो

आश्रम को धन्य बनाते हैं, आश्रम से अपने को धन्य नहीं बनाते। ऐसे कुछ मोती मुझे मिल गये हैं। उन्हींमें से एक यह है। आपसे यह इसलिए कह रहा हूँ कि आप इनसे मिलें, इस पर अपना प्रेम बरसावें और इस पर मुग्ध हो जायें।

'अलबत्ता मगनलाल ने फिनिक्स में भीम के बराबर काम किया है। किन्तु वहाँ जितना था, उससे सौगुना भीम यह यहाँ बन गया है। उसने अपना जीवनत्याग से भर दिया है। उसने बड़े-से-बड़े त्याग किये हैं। केवल एक-दो चीजों के लिए उसने अपनी तमाम अभिलाषाओं को कुर्बान कर दिया। यह जानता है कि मेरी इन सत्याग्रह की लड़ाइयों में यह अच्छी तरह शरीक हो सकता है। फिर भी उनमें शरीक न होकर यह आश्रम का काम करता रहता है। इसमें उसका भारी त्याग है। दरअसल में यह वहाँ बैठा है। कुश्तों में भाग लेने और जेल जाने में उसे खूब आनन्द आता है, किन्तु उसने इन सब चीजों को कुर्बान कर दिया है। सिर्फ इसीलिए कि यह समझता है कि आश्रम के लिए यह अनिवार्य है। इसलिए अब उसे आश्रम नहीं छोड़ना चाहिए।'

सेवा की चर्चा निकलने पर बोले :

¶ 'यहाँ की हवा में नया जोश फैल रहा है। लोग अब समझने लगे हैं कि अपने सार्वजनिक काम उन्हें अंग्रेजों की मदद के बिना खुद ही कर लेने चाहिए। आप स्वीकार करेंगे कि एक हद तक उनकी बात सही है। कल आपका तार मिला और मैंने कुछ मित्रों के सामने उसे खोला। उस समय मैंने सुझाया कि मदद देने के लिए आपको यहाँ रख लें। मैंने सोचा कि आप आ जायेंगे तो मैं दिल्ली जा सकूँगा या मेरे बजाय आप दिल्ली चले जायेंगे। आप या तो सेवा का प्रश्न ले लें या अहिंसा-मान्यों की नजरबन्दी का सवाल ले लें। सेवा का सवाल सख्त है। अलबत्ता काम करनेवाले नैतिक दृष्टि से बिहार के काम करनेवालों के बराबर अच्छे नहीं हैं। मैं यह तो नहीं कहता कि वे झूठे हैं, किन्तु बिहार की बात ही दूसरी है। आध्यात्मिक दृष्टि से वहाँ के काम करनेवाले बहुत

ऊँचे हैं, यद्यपि यहाँ के सब काम करनेवाले बहादुर और जोशीले हैं। उनके साथ काम करने में आपको मज़ा आयेगा। खेड़ा हिन्दुस्तान के सबसे उपजाऊ प्रदेशों में से एक है। यह सुन्दर भी है। प्राकृतिक सौंदर्य यहाँ कुछ नहीं किन्तु लोगों ने अपने परिश्रम से उसे सुन्दर बना लिया है। बिहार कुदरती तौर पर सुन्दर है। बिहार कुदरत का बगीचा ही है। यहाँ लोगों ने पेड़-पौधे लगाकर उसे बगीचा बनाया है। फिर, खेड़ा के किसान शायद हिन्दुस्तान के सबसे अच्छे किसानों में माने जा सकते हैं। वे खेती की शास्त्रीय पद्धतियाँ जानते हैं। इसका भी उन्हें अच्छा अभ्यास है कि एक फसल के साथ दूसरी कौन-सी फसल ली जा सकती है। इस बात का भी उन्हें अच्छा ज्ञान है कि फसलों का हरफेर किस ढंग से किया जाय। लड़ाई की परिस्थिति बड़ा मुश्किल है। हम लगान की किस्त तो चुका सकते हैं, पर असल प्रश्न यह नहीं है। असल प्रश्न सिविलियन अधिकारियों के व्यवहार का है। हम उन्हें यह बता देना चाहते हैं कि तुम्हारा यह व्यवहार हम बरदाश्त नहीं करेंगे। वे जानते हैं कि लोग बहुत-सी आपत्तियों में फंस गये हैं। खास लगान आने के अलावा सारे ज़िले में प्लेग फैल गया है। इतने पर भी अधिकारियों को अपने जुल्म जारी रखने हैं। मैं नहीं समझता कि मेरी यह माया कहीं मानी जायगी। क्योंकि मुझे तो विश्वास हो गया है और मैं वाइसराय से भी साफ कहना चाहता हूँ कि ब्रिटिश-राज्य की जड़ सड़ने लगी है। गाँव का पटवारी उसका प्रतिनिधि है और कलेक्टर की फसल का जो अन्दाज़ वह निकालता है, उसे बड़े अधिकारी मान लेते हैं। यह स्थिति बड़ी दुःखद है। आपको भी ऐसा महसूस होगा और मैं मानता हूँ कि इस सारे काम में आप मावों का संगार करेंगे। मुझे इसके लिए बड़ी सहानुभूति है और दर्द है, किन्तु मेरे पास आपकी माया नहीं है।

२७-१ १८

मैनेजर का सुन्दर पत्र आया। उनके भाई-भावज की मृत्यु हो गयी।

उन पर आ पड़नेवाला नया दुःख, समाज-सेवा से वंचित होने का भय वगैरह।

उन्हें उत्तर दिया :

"प्रिय मित्र,

मैंने आपको जल्दी पत्र नहीं लिखा, इसके लिए माफ कीजिये। गिरधारी ने मेरा सन्देश आपसे कहा होगा। मुझे आपको शान्ति और आश्वासन देनेवाला पत्र लिखना था, इसलिए मैंने देर कर दी। अब भी ऐसा पत्र लिख सकूँगा या नहीं, इस बारे में मुझे शंका है। लेकिन अब मुझे आपको लिखने में देर नहीं करनी चाहिए। आपके हृदय की वेदना व्यक्त करनेवाला पत्र मेरी आँखों के सामने नाच रहा है। किन्तु मृत्यु हमारे प्यारे से प्यारों को एकाएक छीन ले जैसा आपके भाई के मामले में हुआ है, तो इससे हमें पंगु क्यों बन जाना चाहिए? क्या मृत्यु केवल एक परिवर्तन और विस्मरण नहीं है? वह एकाएक आ जाय तो क्या उसके स्वरूप में कोई फर्क पड़ जाता है? आपको तो यह एक सुन्दर अवसर मिला है। आपकी श्रद्धा और आपके तत्त्वज्ञान की परीक्षा हो रही है। प्रामाणिक मार्ग से कुटुम्ब के दो आदमियों का आप भरण-पोषण करें तो इसमें भी सच्ची राष्ट्र-सेवा है। कुटुम्ब का भरण-पोषण करनेवाले सभी लोग अगर कथित राष्ट्रसेवक बन जायें, तो राष्ट्र का क्या होगा?

'आपकी परीक्षा अभी होनेवाली है। और मैं जानता हूँ कि उसमें आप कच्चे साबित नहीं होंगे। आपके तमाम मित्रों की भी इस समय परीक्षा हो रही है। आप क्या करना चाहते हैं, सो बताइये। अगर आ सकें, तो मुझसे मिल जाइये। आपकी योजनाओं पर हम चर्चा कर लेंगे। यह तो आप जानते ही हैं कि मुझसे जो मदद हो सकती है, वह करने को तैयार हूँ।

खूब प्यार और सहानुभूति।

—बापू'

५-५-१८

खेड़ा के सम्बन्ध में अखबारों के लिए पत्र* लिखा। उसकी प्रतियाँ बहुतों को भेजी गयीं और कुछ को उस संबंध में पत्र भी लिखे। शास्त्रियार को इस प्रकार पत्र लिखा :

प्रि॰ "खेड़ा की परिस्थिति के बारे में शायद आपने मेरा वक्तव्य पढ़ा होगा। यह लड़ाई लोगों के बोझ को कुचल डालने के अधिकारियों के प्रयत्न के विरुद्ध है। ऐसी परिस्थिति में मैं मानता हूँ कि किसानों की मदद करने का हमारा स्पष्ट फर्ज है। युद्ध चल रहा है, इस कारण ऐसे जुल्मों पर पर्दा नहीं डाला जा सकता। लोगों के प्रति सहानुभूति दिखाने के लिए बम्बई में सार्वजनिक सभा होनेवाली है। हो सके, तो आप इस सभा में आइये और बोलिये भी।"

इसका जवाब इस प्रकार आया :

प्रि॰ "आपका नडियाद से लिखा १ अप्रैल का पत्र मुझे मिला। इस पत्र द्वारा आपने मुझे जो सम्मान दिया है, उसके बारे में क्या यह कहने की जरूरत भी है कि मैं उसकी कदर करता हूँ!

"अनुभव के कारण और स्थानीय परिस्थिति के ज्ञान के कारण जो मनुष्य मुझसे अधिक योग्यता रखते हैं, उनके निर्णय के विरुद्ध अपना निर्णय रखने की मेरी इच्छा नहीं है। किन्तु खास तौर पर महत्त्व के मामलों में अपनी बुद्धि के खिलाफ मैं कोई काम करूँ, यह तो आप कभी न चाहेंगे। मुझे साफ दिल से कहना चाहिए कि खेड़ा के प्रकरण में यह मान लें कि न्याय लोगों के पक्ष में है, तो भी सत्याग्रह के औचित्य को मेरा मन नहीं मानता।

"पर इसका यह मतलब नहीं कि मैं सरकार की दमन-नीति को पसन्द करता हूँ। कल जब मैं सर इब्राहीम रहीमतुल्ला और सर जेम्स डुबोल

---

* देखिये, परिशिष्ट १।

से मिला, तब दोनों से मैंने बहुत आग्रह के साथ कहा कि समझौते की नीति अख्तियार करना बहुत ही आवश्यक है।

'आपके बुलाते ही दौड़कर आपके पास खड़ा होने के बजाय मैं इस तरह आनाकानी करता हूँ इससे मुझे दुःख होता है। किन्तु इसके साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि जिस वस्तु को मैं हृदय से पसन्द न करता होऊँ, उसे मैं करूँ, ऐसा आप नहीं चाहेंगे।'

इसका जवाब फिर इस प्रकार लिखा :

"आपके पत्र के लिए आभारी हूँ। अपने हरएक काम के लिए आपकी सम्मति प्राप्त करने की मुझे कितनी ही उत्सुकता हो, फिर भी आपकी यह दलील मैं स्वीकार करता हूँ कि आपकी अन्तरात्मा पर किसी भी तरह का दबाव नहीं पड़ना चाहिए। मैं जानता हूँ कि जैसा का सवाल दिनोंदिन जैसे आगे बढ़ता जायगा, वैसे-वैसे उसके सम्पर्क में तो आप रहेंगे ही।"

एक पत्र भी नरगावन् को लिखा था। उसमें 'अपने विरोधी के साथ जल्दी समझौता कर डालो' का सिद्धान्त अच्छी तरह मालूम हो जाता है। उसमें रही प्रामाणिकता सामनेवाले की प्रामाणिकता पर विश्वास और अपने विचार दूसरे सब लोगों को समझाने की आतुरता साफ दिखाई देती है :

"भाईश्री नरगावन्

यह देखकर मुझे दुःख होता है कि कई बार आप जल्दी में निर्णय कर लेते हैं और दूसरे पक्ष की बात सुनने का धीरज भी नहीं रखते। आप राष्ट्र की सेवा तो करना ही चाहते हैं, किन्तु मैं यह कहने की हिम्मत करता हूँ कि आपकी इस आदत के कारण राष्ट्र-सेवा करने की आपकी शक्ति पर उसका असर पड़ता है। इस जैसा-मकरण की दो मिसाल लीजिये। आप मुझसे भिन्न मत रखें इसकी मुझे चिन्ता नहीं; उससे मुझे अपने मित्रों के विरुद्ध विचार रखने का दुःख होता है। फिर भी आप अपने विचार प्रकट कर देते हैं, इसके लिए मैं आपका आदर करता हूँ।

मगर मेरी शिकायत तो इस बात के खिलाफ है कि आप जल्दबाजी में फैसला कर लेते हैं। आप खेड़ा की लड़ाई की भीतरी बातें नहीं जानते। उनका अध्ययन करने के लिए आपके पास समय नहीं। गोधरा में राजनैतिक परिषद् हुई। उसमें आम जनता ने पहली ही बार सक्रिय भाग लिया। परिषद् के अन्त में कुछ लोगों ने नेताओं से व्यंग्य किया कि ऐसी परिषदें करने और उनमें हमें बुलाने से क्या लाभ? खेड़ा जिले में फसल लगभग मारी गयी है। लगान मुल्तवी रखने की माँग करने के किसान हकदार हैं। किन्तु, आप लोग इस मामले में क्या कर सकेंगे? सुननेवालों में से कुछ लोगों ने इस उलाहने को उचित समझकर स्वीकार कर लिया और इस प्रश्न को हाथ में लेने की जिम्मेदारी ले ली। लगान मुल्तवी रखने के लिए हजारों आदमियों के दस्तखत से अर्जी भेजी गयी। मुल्तवी रखने के लिए यह अर्जी ही काफी थी। सरकार को केवल ब्याज का नुकसान होता था, किन्तु उसके बदले में वह लोगों का सद्भाव प्राप्त कर सकती थी। लेकिन अधिकारियों ने तो उलटा और गलत मार्ग ही ग्रहण किया। उन्होंने फसल के अंदाज के नक्शे देखने शुरू किये। इन नक्शों के बारे में मैं कह सकता हूँ कि निष्पक्ष और बारीक जाँच में वे टिक नहीं सकते। राहत प्राप्त करने के जितने मार्ग खुले थे, वे सब किसान अपना चुके थे। हर बार उनके सामने ये नक्शे रख दिये जाते थे। ऐसी हालत में ये लोग क्या करते? अपने ढोर-डंगर, गृह और दूसरी संपत्ति बेचकर चुपचाप लगान चुका देते? मैं ऐसे मौके पर पहुँच गया हूँ वैसे आप भी आयें और किसानों को सलाह देने की हिम्मत करें। किसानों के पास अनाज-वनाज तो है नहीं। ऐसी स्थिति में उनसे लगान वसूल करने के लिए कैसे-कैसे उपाय काम में लिए जाते हैं, यह आपको जानना चाहिए। मेरी नजर के सामने किसानों को डराकर कायर बना दिया जाय, यह मैं चुपचाप नहीं देख सकता। आप भी नहीं देख सकते। किसानों का सरकार से यह कहना है कि 'आप हमारी अर्जियों को नामंजूर करते हैं इसलिए अब हमें लगान अदा करना ही, तो हम

न्याय पर समय लाकर या अपना मरवार भेजकर ही अदा कर सकते हैं, बिलकुल न्यायपूर्ण और सच्ची बात है और पूरी तरह वैध है। यह लड़ाई किसान कितने खुशमिजाज रहकर लड़ रहे हैं, यह तो आप यहाँ आकर ही देख सकते हैं। दिल कड़ा करके लोग हर तरह का नुकसान राजी-खुशी से बर्दाश्त कर रहे हैं, बूढ़े स्त्री-पुरुष भी इस लड़ाई में भाग ले रहे हैं। स्वेच्छापूर्वक सहन किये गये दुःखों से जनता कितनी ऊँची उठती है, इतना तो आपको देखना ही चाहिए। जब कि यही दुःख लोग अब तक अनिच्छा से सहते आये हैं, इसलिए वे बिलकुल नीचे गिर गये हैं। एक प्रकार से तो यह रोटी की लड़ाई है। एक तरफ से वैध आन्दोलन किया जाय और उसके लिए देश में राहत की प्रार्थना करनेवाली हजारों सभाएं की जायँ, तब दूसरी तरफ से आप लोग यही कहें कि पेड़-पौधे बेच दो, ढोर-डंगर बेच दो, गहना-गाँठा बेच दो, पर लगान तो चुका ही दो। तो इसका क्या अर्थ हुआ? यह तो ऐसी बात हुई कि जब लोग रोटी माँगें तब उन्हें पत्थर दिये जायँ।

"मैं चाहता हूँ कि यह पत्र आपकी आत्मा को हिला दे, जाँच करने की आपकी रुचि को उत्तेजित करे और क्षेत्र में आकर लड़ाई को अपनी आँखों देखने की आपको प्रेरणा दे। अगर आप यहाँ आकर सब कुछ देखें और रिपोर्ट दें, तो वह रिपोर्ट लड़ाई के कितनी ही विरुद्ध हो तो भी मैं न केवल उस पर विचार करने के लिए, बल्कि उसका स्वागत करने के लिए तैयार हो जाऊँगा। मुझे इतना जानने का संतोष तो रहेगा कि आपने और कुछ नहीं तो प्रश्न का भलीभाँति अध्ययन तो किया है। अपने-आपके लिए, एक मित्र के लिए और राष्ट्र के लिए इतना करना आपका फर्ज है। आप इतना कष्ट भी देने को तैयार न हों, तो लड़ाई के बारे में आपको कोई राय रखने का हक नहीं है।

"आपको इस प्रकार लिखने की मैंने जो धृष्टता की है उसके लिए आशा है, आप मुझे क्षमा करेंगे। मैंने आपसे बार बार कहा है कि आपका सहयोग प्राप्त करने और अपने काम में आपकी मदद लेने के

लिए मैं तरस रहा हूँ। पूरा विचार करने के बाद आप मुझे यह मदद न दे सकें, तो भी मुझे संतोष रहेगा। 'सत्याग्रह' शब्द से ही आपको उलटे रास्ते नहीं चला जाना चाहिए। इसका मामूली उदाहरण आपके सामने है। उसका फैसला उसके गुणों पर से कीजिये।

आपका
मो॰ क॰ गांधी"

इस संबंध में कहा गया कि नटराजन् को दुःख होगा। बापू ने पत्र को फिर पढ़कर देखा। दो वाक्य अधूरे पाये गये। मुझे थोड़ा-सा उलाहना मिला: मैं मानता हूँ कि तुम इस मामले में जरूर सूचना करोगे। तुमने सूचना क्यों नहीं की? मैंने कहा: मैंने इसे वल्लभभाई और बैंकर को पढ़ा दिया था।

बापू ने कहा: कोई बात नहीं। वे कहेंगे कि मुझे लिखना नहीं आता, किन्तु इसमें दलील ठीक-ठीक आ गयी है। यह पत्र तो उनकी बुद्धि को धक्का लगाने के लिए लिखा है, उनके मन को दुःख पहुँचाने के लिए नहीं। यह पत्र इस प्रकार प्रश्न करता है, भाई तुम्हारी बुद्धि कैसे बंद हो गयी है।

८ ४ १८

रेल में बम्बई से नडियाद आते हुए कुछ पत्र लिखे। उपवास के संबंध में मिस फेरिंग का तार और दो पत्र आये थे। मुझे उत्तर लिखने को कहा था, किन्तु मेरा पत्र असंतोषपूर्ण मालूम हुआ। स्वयं बापू ने नीचे का जवाब लिखा:

प्रिय एस्थर,

"मुझे लगता है कि तुम्हारे साथ के पत्र-व्यवहार में मैं बहुत निर्दय रूप में कारबारी बन गया हूँ। तुम्हें एकआध पंक्ति लिखता हूँ, इससे मुझे संतोष नहीं हो सकता। मेरी इच्छा तो तुम्हें एक लम्बा स्नेह-पत्र लिखने की थी; किन्तु ऐसा पत्र लिखने लायक शान्ति मुझे नहीं है और अब

ज्यादा विलम्ब करने की मेरी हिम्मत नहीं होती। मैं नहीं जानता कि अपनी हलचलों का जिनमें से एक को भी मैं ढूँढ़ने नहीं गया किस ढंग से वर्णन करूँ। वे मेरे सिर पर इतने आग्रहपूर्वक आ पड़ी हैं कि उन्हें टाला नहीं जा सकता। सब तरफ से घिरा हुआ सिपाही क्या कर सकता है? एक ही हमले का सामना करने में अपनी सारी शक्ति केन्द्रित करे, पर उसके साथ ही दूसरे हमले होते हों, तो यह कैसे हो सकता है कि वह उनकी उपेक्षा करके विनाश को निमन्त्रण दे? यह तो स्पष्ट है कि यथाशक्ति सभी हमलों का सामना करने में ही सुरक्षा है। मेरी स्थिति लगभग ऐसी ही है। चारों तरफ से आफत की पुकार मुझे बुला रही है। जब मैं उपाय जानता हूँ तब मदद देने से कैसे इनकार कर सकता हूँ?

"अहमदाबाद की हड़ताल में मुझे जीवन के कीमती-से-कीमती सबक मिले। हड़ताल के दिनों में प्रेम की शक्ति का जो चमत्कारिक प्रदर्शन हुआ, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। ज्यों ही मैंने उपवास की घोषणा की, त्यों ही मेरे सामने बैठे हुए विशाल जन-समुदाय को ईश्वर के अस्तित्व का भान हुआ। तुम्हारा तार सबसे अधिक भावनापूर्ण और सबसे अधिक सच्चा था। ये चार दिन मेरे लिए शान्ति के, धन्यता के और आध्यात्मिक उन्नति के थे। इन दिनों खाने की मुझे जरा भी इच्छा नहीं हुई।

"मैंने अखबारों को जो वक्तव्य भेजा है, उससे तुम खेड़ा का प्रकरण तो समझ सकोगी। अपने उपवास के बारे में भी मैंने एक वक्तव्य दिया था। वे वक्तव्य तुममें न देखे हों तो मुझे बताना।

'तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी। बिगड़ की शिकायतों में उपवास जैसी रामबाण दवा एक भी नहीं है।

"मुझे अहमदाबाद या साबरमती के पते से लिखना।

प्यार

बापू"

"चि० दुर्गा,

"तुम मुझे भूल गयी हो, तो मुझे ही भूल जाओ। मैं तो तुम्हें नहीं भूला। प्रानजीवनने तुम्हारा समाचार दे दिये हैं। मैंने सोचा था, उससे अधिक तुम भाई महादेव से जुदा रही हो। उससे मैंने कह दिया है कि वह वहाँ जब चाहता हो, तब आ सकता है। किन्तु तुम चाहो तो तुरन्त ही भेजने को तैयार हूँ। तुम्हें मैं इतना कहता हूँ कि भाई महादेव को यहाँ जबरदस्त अनुभव मिल रहे हैं। उनका लाभ तुम्हें भी मिलेगा। इससे संतोष करके वियोग-दुःख को शान्त कर सको तो भाई महादेव रहे। मगर उसमें एक खतरा है। अगर मैं इससे भी बड़ी लड़ाई में लग जाऊँ तो फिर तुम चाहो, तो भी वह यहाँ नहीं आ सकता। इसलिए तुमसे मिल आने का यही ठीक समय होगा। वहाँ जब गयी हो, तो तुम यहा आ सकती हो। नडियाद में तुम रह सकोगी इस बारे में मुझे शक है। जो कुछ तुम्हें यहाँ मिल रहा है, वह वहाँ हर्गिज नहीं मिलेगा। किन्तु मैं वही करना चाहता हूँ, जिससे तुम्हें खुशी हो।

मोहनदास के आशीर्वाद"

मेरे पिताजी को :

'आदरणीय भाईश्री,

"आपको लिखने का बहुत दिन से सोच रहा था, किन्तु अवकाश नहीं मिल रहा था और कुछ विस्मृति भी हो गयी थी। माफ कीजिए।

"मैं यह कहने की इजाजत चाहता हूँ कि भाई महादेव को मुझे सौंपने में आपने भूल नहीं की। उसके जीवन के विकास के लिए यह अनुभव जरूरी था। पैसा ही हमेशा सब सुख नहीं देता। भाई महादेव की ऐसी प्रकृति नहीं है कि उसे पैसा सुख दे। मुझे लगता है कि जो मान भाई महादेव पर लागू होती है वही चि० दुर्गा पर भी हो जायगी। उसे अमूल्य अनुभव मिलते रहते हैं।

"मुझे तो इसमें के मिलन से लाभ ही हुआ है। भाई महादेव ने मुझे बहुत सी झंझटों से मुक्त कर दिया है। मैं उनके जैसे सहायक

विद्वान् और प्रेमी सहायक की खोज कर रहा था। भाई महादेव ने मेरी खोज सफल कर दी है। मुझे सपने में भी खयाल न था कि कि दुर्गा का इतना अधिक सदुपयोग कर सकूँगा। ईश्वर की गति न्यारी है।

मैं चाहता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि आप इस दंपति की चिन्ता न करें और उन्हें पूर्ण आशीर्वाद दें।

आपका
मोहनदास गांधी"

१४-१८

एम. एम. जोशी ने बम्बई में इस तरह की बातें की थीं कि यह जो कहा जाता है कि हमारी जाँच और गांधी की जाँच का परिणाम एक ही है, उसका विरोध मैंने गांधी के लिहाज से नहीं किया। यह बात जमना दास की तरफ से आयी थी। बैंकर ने भी उनकी बहुत-सी बातें कही थीं। इस पर उन्हें इस प्रकार पत्र लिखा :

प्रिय मित्र

"मैंने अभी-अभी सुना कि आप मित्रों से कहते हैं कि मैंने (गांधीजी ने) जब यह कहा कि फसल के अन्दाज सम्बन्धी आपकी जाँच और मेरी जाँच का परिणाम एक ही है, तो इस बात का विरोध आपने मेरे लिहाज से नहीं किया। साथ ही आपका यह खयाल है कि मैं लोगों को नाहक जुल्म में डालता हूँ। मैंने जो कुछ सुना है, वह अगर सच हो, तो मुझे बड़ा दुःख होता है। जो सही मालूम हो उसे कहने का आपको पूरा हक है और एक मित्र के प्रति आपका यह फर्ज भी है। सार्वजनिक जीवन में तो ऐसे सैकड़ों मौके आते हैं जब मित्रों में मतभेद हो जाता है, फिर भी वे मित्र ही रहते हैं। इसलिए कृपा करके मुझे बताइये कि वहाँ कमेटी के सामने आप क्या कहते हैं। दूसरी तरह भी मुझे बताइये कि मेरी तमाम हलचलों के बारे में आपकी क्या राय है। मैं जानता हूँ कि आपकी राय प्रतिकूल हो और मैं उससे सहमत न होऊँ, तो भी आप कोई

खयाल नहीं करेंगे। इतनी बात तो आप मेरी मान ही लीजिये कि आपकी राय को मैं उचित महत्त्व दूँगा।

सेवक

मो. क. गांधी"

महत्वाकान् के पत्र का सुन्दर उत्तर आया। इस पर कहा कि देखना, ऐसा ही असर एन. एम. जोशी पर होगा।

१०-४-१८

हिन्दी-प्रचार के लिए इन्दौर-सम्मेलन में जबरदस्त काम हुआ। सुन्दर कार्यक्रम तैयार हुआ। तीस हजार रुपये जमा हुए और बाहर काम करने के लिए जानेवाले स्वयंसेवक भी तैयार हुए। इन मद्रासियों को हिन्दी का ज्ञान प्राप्त कराने के लिए छात्र-वृत्तियाँ देने की घोषणा अखबारों में प्रकाशित की गयी। उसके उत्तर में भाई अय्या का पत्र आया कि "मैं, गोमती और मेरे एक साथी हिन्दी का ज्ञान प्राप्त करके हिन्दी प्रचार के लिए योग्य बनने के इस अवसर से लाभ उठाने को उत्सुक हैं।"

इसका उत्तर दिया। बहुत जल्दी में होने पर भी यह कहकर कि इसका उत्तर दो सतरों में तो भी मुझे देना ही चाहिए, बाहर जाते जाते यह लिख डाला :

"प्रिय भाई अय्या,

तुम्हारे पत्र से मैं बहुत खुश हुआ। तुम मुझे भूलते ही नहीं, इससे मुझे तो बड़ा आश्चर्य हो रहा है। तुम, गोमती बहन और तीसरा तुम्हारी पसन्द का इससे ज्यादा क्या चाहिए? और सब बातें भाई महादेव तुम्हें लिखेंगे।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

तुरन्त हनुमन्तराव को भी इस प्रकार पत्र लिखा :

¶ "प्रिय भाई हनुमन्तराव,

"हिन्दी के मामले में अगर शास्त्रियार मेरे ही विचार के बन जायें, तो तुम्हारे बारे में मैं यह चाहता हूँ कि मेरी अपील के जवाब में तुम अपना नाम हिन्दी सीखनेवाले के रूप में दे दो और मेरी तरफ से दो और तेलुगु भाइयों को भी तुम ही पसन्द कर लो। मुझे तीन तमिल तो मिल गये हैं।"

उसी दिन बुधवार पेठ, पूना से डॉक्टर नामक का एक तार आया :

¶ "यहाँ हिन्दी की कक्षा खोलने की घोषणा माननीय बालम की अध्यक्षता में ११ तारीख की सार्वजनिक सभा में कर रहे हैं। आपके आशीर्वाद के लिए प्रार्थना है।"

जवाब के लिए उन्होंने आठ आने जमा कराये थे। बापू बड़े खुश हुए और उन्हें इस प्रकार लम्बा तार दिया

¶ "आपके प्रयत्न की पूरी सफलता चाहता हूँ। मुझे विश्वास है कि जैसे महाराष्ट्र ने और बहुत से मामलों में नेतृत्व किया है, वैसे ही राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को अपनाने में भी वह नेतृत्व करेगा और ऐसा करके अंग्रेजी के चलन के कारण देश की अपार शक्ति के हो रहे अपव्यय को राष्ट्र के खातिर बचायेगा।

पोलाक को पत्र लिखा :

¶ "प्रिय हेनरी

"मैं तुम्हें नियमित नहीं लिख सकता। लिखने का मेरे पास समय भी नहीं और शक्ति भी नहीं। मैं इस समय इतने नये-नये रचनात्मक काम हाथ में ले रहा हूँ कि दिन पूरा होने पर थककर चूर हो जाता हूँ और दूसरा कुछ भी काम करने की शक्ति रह नहीं जाती। लिखना भाषण देना और बातें करना भी मेरे लिए कष्टदायक है। मैं केवल चिंतन करना चाहता हूँ। सत्याग्रह की लड़ाई चल रही हो तब यह बहुत वेदनामय होता है। अलबत्ता यह वेदना उत्पत्तिकारक होती है। मेरे खयाल से प्रसूति की पीड़ा कुछ ऐसी ही होती होगी।

"मैं भाई देसाई से कह रहा हूँ कि तुम्हें विस्तृत पत्र लिखें।"

परमों नटराजन को लिखे गये पत्र का निम्नलिखित उत्तर आया था। बापू बड़े खुश हुए।

"प्रिय गांधीजी,

"मेरे साथ झगड़ा करनेवाले आपके ममता और प्रेमभरे पत्र का मुझ पर बड़ा गहरा असर हुआ है। मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि 'रिफ़ॉर्मर' के पिछले अंक में खेड़ा की परिस्थिति के बारे में मैंने एक और लेख लिखा है, जिससे आप मेरे दृष्टिकोण को अधिक अच्छी कद्र कर सकेंगे। मैं इस बात से तो इनकार करता ही नहीं कि फसल मारी जाने के कारण जिले के गरीब किसानों को बड़ी सख्त तकलीफ भोगनी पड़ी है। मैं यह भी नहीं कहता कि सरकार या मेरा लोगों ने उन्हें राहत पहुँचाने के लिए जो कुछ करना चाहिए, वह सब किया है। मेरा यह भी खयाल है कि स्वतंत्र सार्वजनिक जाँच के लिए मजबूत मामला साबित हो गया है। यह जाँच सरकार को करनी चाहिए और जब तक उस जाँच का परिणाम न निकले, तब तक लगान की वसूली मुल्तवी रखनी चाहिए। इन सब बातों में आपके साथ मैं सोलह आना सहमत हूँ।

किन्तु आपके साथ सहमत न होने का मेरा दुर्भाग्य इस बात में है कि किसानों को लगान अदा न करने की सलाह देने में मुझे समझदारी नहीं मालूम होती। जिस किसान के पास कुछ भी न रह गया हो, वह जरूर अपना लगान न चुकाये। अपनी अशक्ति के कारण वह लगान जमा कराने के फर्ज से मुक्त हो जाता है। किसी भी आदमी को वह बात करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता, जो उससे न हो सके। लेकिन सत्याग्रह का मार्ग तो वे लोग अपना रहे हैं, जो लगान अदा कर तो सकते हैं, पर अदा करने से इनकार करते हैं। क्योंकि वे यह मानते हैं कि उनसे लगान वसूल करने का सरकार को हक नहीं है। आप पूछते हैं कि राहत की प्रार्थना करनेवाली हजारों सभाएँ किस काम की, जब हम लोगों ने यह कहें कि हम वैध आन्दोलन चला रहे हैं, उस अर्थ में अगर तुम्हारा

पेड़-पौधे ढोर-डंगर और गहना-गाँठा सरकार ले जाय, तो भी तुम शान्ति से देखते रहो ! क्या इसका यह अर्थ नहीं होता कि जब किसीको कोई कष्ट सहन करना न पड़े, तभी वैध आन्दोलन की सिफ़ारिश की जा सकती है ? इसके सिवा, अक्सर मैंने यह कहते सुना है कि सत्याग्रह की हिमायत करनेवालों का मामला ऐसा नहीं है कि लोग या उनमें से बहुतेरे लगान जमा करने की शक्ति नहीं रखते । उनका मामला तो यह है कि किसान इसलिए लगान जमा कराने से इनकार नहीं करते कि उनके पास लगान जमा कराने का कोई साधन नहीं है, बल्कि इसलिए कि नियमानुसार किसान लगान मुल्तवी होने के हक़दार हैं और वह मुल्तवी नहीं किया जा रहा है। सरकार कहती है कि फ़सल इतनी अधिक नहीं मारी गयी है, जिससे लगान मुल्तवी करना ज़रूरी हो । थोड़े से गाँवों में ज़रूर फ़सल बिलकुल मारी गयी है और वहाँ तो लगान मुल्तवी कर ही दिया गया है। बहुत संभव है कि सरकार ने फ़सल की हानि की मात्रा का अन्दाज़ बहुत कम लगाया हो। दूसरी तरफ़ यह भी संभव है कि लोगों की तरफ़ से हद से ज्यादा हानि बतायी गयी हो। आपसे मैं यह बात छिपाना नहीं चाहता कि श्री देवधर की जाँच के परिणामस्वरूप मुझ पर और कुछ दूसरे लोगों पर यह असर हुआ है, जिसके कारण हमारे लिए इस तरह की अत्युक्ति की संभावना को अलग रखना असंभव हो गया है। कुछ भी हो जैसा मैंने ऊपर कहा है और अपने लेख में भी बताया है, स्वतंत्र जाँच के लिए इस मामले में काफ़ी कारण हैं । हमें ऐसी जाँच के लिए खूब दबाव डालना चाहिए। स्थानीय सरकार ठीक जवाब न दे तो हम पार्लमेंट के पास इंग्लैंड पहुँचें। हम सारे हिन्दुस्तान का लोकमत जाग्रत करें और उसका दबाव सरकार पर डालें। मुझे यक़ीन है कि इसमें हमें ज़रूर सफलता मिलेगी। तब तक

का मैंने अधिक विकास किया है। उस अंक की एक प्रति साथ में भेज रहा हूँ।'

११-४-'१८

आज प्रैट से मिले। उनके साथ खूब बातें कीं। उनसे कह आये कि मैं राजा होऊँ और लोगों की माँग मूर्खतापूर्ण हो, तो भी अगर वह सब लोगों की हो, तो एक बार अवश्य पूरी कर दूँ।

° ° °

दोपहर को रवाना हुए 'नाकली' की तरफ। गाड़ी में पत्र पढ़े। कुछ का, मेरे पिताजी का, बलवन्तराय का और पैट्रिक गेडीस का। उनका मुख्य लोक-साहित्य और लोकगीतों के बारे में करने का था। मुझे यह काम करने को कहा था सो रद्द कर दिया। वल्लभभाई ने जिन्ना की बात कही। दो घंटे बैठे रहे तो भी जिन्ना साहब को बात करने की फुर्सत नहीं मिली। "यह हमारे 'स्वातन्त्र्य के मेझिनी' कहलाते हैं! और फिर आपको सर्टिफिकेट दे दिया है', इस तरह के उद्गार प्रकट किये।

सरोजिनी देवी के बारे में लोग जो बातें करते हैं, उस सम्बन्ध में बापू बोले :

'मैंने तो उनकी पवित्रता के बारे में ही कहा है। मैंने उनके बारे में जो कुछ कहा है उसमें कोई वापस लेने की बात नहीं रहती। इस महिला में मैंने इतना अधिक बल और तेज देखा है कि उनके चरित्र के विषय में तो कोई शंका कर ही नहीं सकता। इस महिला में कुछ खामियाँ हैं, जैसे कि धूमधाम करने आदि की, किन्तु उसका सार्वजनिक जीवन उसकी खुराक है। मैंने तो उससे एक बार कहा था कि तुम इसे छोड़ क्यों नहीं देतीं? उसने मुझसे कहा कि इसके बिना तो मैं मर जाऊँगी। मुझे यह बिलकुल सच मालूम हुआ। इन चीजों से उसका सार्वजनिक जीवन का बोझ घटता है। वह भोली जीव है। उसका टूटन मौज उड़ाने को भी चाहता है। करोड़पति की लड़की तो नहीं है पर करोड़पति

की लड़की जैसा ऐश-आराम उसने किया है। इसलिए उसे छोड़ नहीं सकती। वह सादगी और दुःख भोगने का मायका दे आयेगी और तुरन्त तरह-तरह के व्यंजन खाने बैठ जायगी। लेकिन मुझे विश्वास है कि मुझ जैसा आदमी मिले, तो वह भोग को त्याग कर दे। वह भी ऐसी ही है। मैंने उसे पहली बार देखा तो मुझे यह खयाल हुआ कि 'इस स्त्री से कैसे काम लिया जा सकता है?' आश्रम में आयी, तो एक ही बार में उसे आश्रम का जीवन सिखा सका। इंग्लैंड में मैं जमीन पर सिर्फ दरी पर बैठकर काम करता था—अनाथ आश्रम में तो आप लोग गद्दी-तकिया देते हैं, किन्तु वहाँ गद्दी-तकिया नहीं थे। उस समय एक दिन अचानक वह आयी और मैं खा रहा था, उसीमें से लेकर खाने लगी। उससे तो उसकी सब निकलवायी ही कैसे जाय? बाद में मैं उससे सीधे सवाल पूछने लगा: 'तुम्हारा पारिवारिक जीवन कैसा है? सोती कब हो और उठती कब हो?' इसके उत्तर में उसने कहा था: 'आठ बजे उठती हूँ। बच्चे तो पहले ही उठ जाते हैं, वे छोटे-बड़े सब मेरे बिस्तर पर आकर मुझे खूब रौंदते हैं। इसे कैसी स्थिति कहा जाय? इससे अधिक माँ का प्रेम और क्या हो सकता है? हैदराबाद में भी क्या है? बच्चों के साथ उसका कैसा संबंध है? उसके नाम बच्चे जो पत्र लिखते हैं, वे कैसे होते हैं? बच्चों के नाम उसके पत्र कैसे होते हैं? मैंने देखा है, उसने बच्चों को अनेक बातों का ज्ञान कराया है। वह कैसी बहादुर है? इंग्लैंड में मेरा सेवा-दल (एम्बुलेन्स कोर) बिलकुल टूट गया, तब तक मेरे साथ अकेली वही रही थी। मेरे कहने से विलायत में दल के स्वयंसेवकों को उसने हिन्दुस्तानी में भाषण दिया था। मुझे ऐसी स्थिति कैसी समझ गयी है? मैंने उसे समझाया कि देश की ... का शौक त्याग देना चाहिए। वह मूँह उस ... और कहा: 'आपकी बात सच है।' यह स्त्री हिन्दुस्तान ... रही है और अब पहनने और मिलने की अद्भुत ... ही सर्व... रही है। हाँ, इसका

की अमर्यादित प्रतीत हो, वह हँसी-दिल्लगी करे, शरारत भी करे। किन्तु मुझे लगता है कि वह तो उसके अनुरूप ही होगा। मैं इसके पति को जानता हूँ। वह बहादुर आदमी है। उसने इसे पूरी आज़ादी दे रखी है। दोनों के बीच शुद्ध प्रेम है। मेरे ख्याल से इसके आचरण में कुछ भी गुप्त नहीं है। इसीसे इसकी शुद्धता साबित होती है। मैंने तो इस बात की खूब जाँच की है और इतना मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ। हाँ ऐब इसमें हैं, अत्युक्ति किसी भी चीज़ में कर सकती है। मेरे विषय में उसने जो कुछ लिखा है, उसके लिए मैंने उसे बहुत उलाहना दिया था। मैंने उससे कह दिया कि तुमने मेरा अपमान किया है। तुम ऐसे शब्द मेरे लिए नहीं लिख सकती। किन्तु यह तो उसके स्वभाव में है कि जिस कर की कराव में जायगी, उसीके गीत गावेगी। इस बात को छोड़ दें, तो हिन्दुस्थान के लिए ही जीनेवाली दूसरी कौन-सी स्त्री है ?"

रेलगाड़ी से उतरकर रथ में बैठे। बड़ौद गाँव के लोगों का उत्साह अपूर्व था। मंडप सुन्दर बनाया गया था। वह रथ से गाते-बजाते ले गये थे।

१९-४ १८

बातों ही बातों में बापू कहने लगे : "जर्मनी यहाँ के किनारे पर आवे तो कैसा अमूल्य अवसर है ? हम निश्शस्त्र लोगों के विरुद्ध तो वह लड़ेगा नहीं और हम उसका कहना मानेंगे नहीं।"

नडियाद में कमिश्नर की विराट् सभा थी। एक के बाद एक लोगों ने बेधड़क कहा कि हम प्रतिज्ञा का पालन अवश्य करेंगे, उसे कभी नहीं छोड़ेंगे। कलेक्टर और कमिश्नर वग़ैरह के सामने इसी सभा में गांधीजी के जयकारे लगाये गये। कमिश्नर के शब्दों में मिठास थी, अधिकारीपन का घमंड नहीं था। उन्होंने कहा : गांधी मेरे मित्र हैं। वे पवित्र आत्मा हैं। बड़े संन्यासी हैं। किन्तु सन्यासी आप लोगों को ऐसे मामलों

मैं सलाह नहीं दे सकते।' उसने किस ठंडे ढंग से बातें कीं, यह अब तक के हमारे बरताव का परिणाम है।

रूस की डाक में कितने ही महत्त्वपूर्ण पत्र थे। एक सतकन्व-राव ठाकुर का और दूसरा पैट्रिक गेडीज का। पैट्रिक गेडीज के पत्र के मुख्य मुद्दे :

"१ परिषद् सचमुच ही पूरी तरह अंग्रेजी ढंग की थी। उसमें समुचित मनुष्यों ने उचित ढंग और उचित मर्यादा के साथ प्रसंग की शोभा बढ़ानेवाले भाषण दिये।

२ यहाँ की किसी बड़ी सार्वजनिक परिषद् ने अंग्रेजों से सचमुच क्या सीखना है इसका अभी तक विचार ही नहीं किया। यहाँ तो ऐवन नदी के किनारे स्ट्रेटफर्ड में शेक्सपियर के नाटक खेले जाते हैं। आपकी नाट्य-शालाएँ इन मामलों में निष्क्रिय हैं। तुलसीदास का नाम-निशान भी नहीं है।

३ पश्चिम के उदाहरणों और पद्धतियों पर से उनके जैसा ही क्यों नहीं करते? वेल्स में हर वर्ष एक बड़ा जलसा होता है। पिछले उत्सव से पहले के उत्सव में मैं मजूद था। वहाँ मैंने लायड जार्ज को अपनी पूरी बहार में आग बरसानेवाली वाणी में बोलते सुना, क्योंकि वह अपनी मातृभाषा वेल्स में बोलता था। उसने कहा : यहाँ मैं गान आया हूँ।

४ उनके मंडप में अलग अलग संस्थाओं के लिए विभाग किये गये थे। सामूहिक संगीत में तरह-तरह के स्वरोंवाली मंडलियाँ थीं।

५ आयरिश लोग अपनी भाषा को पुनर्जीवित कर रहे हैं। उनसे आपको कितने ही मुद्दे मिल सकते हैं। उदाहरणार्थ, लम्बी छुट्टी के दिनों में वे छोटे-छोटे सम्मेलन कर लेते हैं।

६ प्रोवेन्स की मिसाल लीजिये। वहाँ के महाकवि मिस्ट्राल को वे लोग पूजते हैं। स्वीड लोगों ने मृदे मिस्ट्राल को नोबल-पुरस्कार दिया। तब इस रुपये से उसने प्रोवेन्स का संग्रहालय बनवाया। यह संग्रहालय केवल कौम की आलमारियों में रखी हुई शोभा की वस्तुओं का नहीं था।

पर असर डालना है और यथाशक्ति उसे भौतिकवाद के प्रभाव से मुक्त करना है। ऐसी सभाओं के प्रश्न में एक पहलू आर्थिक है और दूसरा धार्मिक। मैं लोगों के सामने धार्मिक पहलू रखने का प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं अपने श्रोताओं में धार्मिक पहलू के लिए कितनी दिलचस्पी पैदा कर सका हूँ, इस पर से परिषद् की सफलता का हिसाब लगाना चाहिए।

"पिछले साल हमारी कांग्रेस के लिए मैंने मंडप न बनाने देने का प्रयत्न किया था और सुझाया था कि सिर्फ सवेरे के समय मैदान में सभा हो। यह हिन्दुस्तानी तरीका होगा और यह उत्तम है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि यूनानी अर्धगोलाकार नाट्य-शाला (एम्फी थियेटर) इसीका सुधार है या और कुछ। मेरा आदर्श तो यह है कि पेड़ के नीचे खड़े रहकर लोगों के सामने बोला जाय। हजारों या लाखों लोग हों और उन तक आवाज न पहुँच सके, इसकी भी मैं परवाह नहीं करूँगा। लोग कुछ सुनने नहीं आते, देखने आते हैं और हम जितनी कल्पना कर सकते हैं, उससे वे अधिक देख जाते हैं। एम्फी थियेटर में जगह की मर्यादा तो आ ही जाती है। सबसे खूबी तो इसमें है कि असंख्य लोग वहाँ आयें और फिर भी सारा काम बिलकुल व्यवस्थित होता रहे। पुराने जमाने के धार्मिक मेले ऐसे ही होते थे। आजकल के नये सामाजिक और राजनैतिक जीवन में आप धार्मिक तत्त्व जोड़ दीजिये, तो आपको ऐसी सम्पूर्ण वस्तु मिल जायगी, जिसके द्वारा अच्छी तरह काम लिया जा सकता है।

"किन्तु यह सब मैं आपको क्यों लिखूँ ? हम दोनों खूब काम में व्यस्त हैं। पश्चिम की तूफानी वायु ने हमें घेर लिया है। सनातन स्वरूप की वस्तुओं के लिए हमारे पास फुर्सत नहीं। हमारे लिए अधिक-से-अधिक कहा जा सकता है, तो सिर्फ इतना ही कि हम सनातन के लिए तरसते हैं, यद्यपि हमारी हलचलें तो हमारे इस दावे को झूठा ही साबित करती हैं।

"आपका पत्र बहुमूल्य धन है। क्या मैं इसका सार्वजनिक उपयोग करूँ ?

"सस्ते होते हुए भी टिकाऊ मकान कैसे बनाये जा सकते हैं, यह आप मुझे बतायेंगे ? ठेठ बुनियाद से छत तक की सारी तफसील चाहिए।

सेवक

मो० क० गांधी'

बापू का एक उद्गार :

"मैंने किसी ऐसे अंग्रेज को नहीं जाना, जिसे यह खयाल होता हो कि कब क्या मिलेगा।"

मुझे (महादेव को) यह खयाल हुआ कि तब तो वे योगी हैं। हमारे लोग दीन हैं।

अमृतलाल ठाकुर के पत्र के मुद्दे :

१ 'इंडियन सोशल रिफॉर्मर में खेड़ा की परिस्थिति पर जो आमलेख है, उसमें कमेटी के सिवा सब मुद्दे ठीक मालूम होते हैं। इतना ही नहीं, वे अत्यन्त नम्रता से उपस्थित किये गये प्रतीत होते हैं।

२ हममें अधिक उत्पादन करने का कौशल नहीं है।

३ मुफ्ती और माफी के कायदे को तेज, स्वयं-संचालित और काफी मजबूत बनाने का प्रश्न बहुत बड़ा है।

४ माल-विभाग जैसे भयंकर महकमों की रचनाओं का महामारत जैसा चक्र शास्त्र-प्रयासयुक्त और टेढ़े-मेढ़े अनेकानेक उलझे-पुरे परिणाम पैदा करनेवाला है। जैसे बूढ़े बीमार का रोग मिटाने के लिए ऑपरेशन नहीं किया जा सकता जैसे गर्भवती स्त्री को तेज दवा नहीं दी जा सकती, उसी तरह ऐसे महकमों का सुधार भी तात्कालिक या जल्दी के उपायों से नहीं हो सकता।

५ साधारण बल-पराक्रम के लोभी पुरुष, हेय पैदा करने में देश-सेवा माननेवाले पुरुष और लोकप्रियता और चौकसी के भूखे पुरुष इसी तरह करते हैं। आप जो आन्दोलन उठाते हैं, वह धर्मबुद्धि से उठाते हैं, आरम्भ करने में कोई भूल हो गयी हो तो उसके मालूम होते ही तुरन्त साफ तौर पर उसे मान लेने और अपनी हलचल का रूप बदल देने में

आप कभी हिचकिचाये नहीं। इसलिए खेड़ा-प्रकरण सम्बन्धी आपकी इच्छा मेरी समझ में नहीं आती।

इसका जवाब :

"भाईश्री बलवन्तरायजी,

'आपका पत्र मिला। यह मेरे प्रति आपकी प्रीति का सूचक है। कृतज्ञ हूँ। भाई नटराजन् ने जल्दी में राय बनायी है, यह मैंने उन्हें बता दिया है। आपकी दलीलों का खण्डन करने के बजाय मैं आपको यह समझाता हूँ कि मैं 'सत्याग्रह' किसे कहता हूँ। यद्यपि मैं 'पैसिव रेसिस्टेंस' शब्द काम में लेता हूँ, किन्तु वे मेरे आशय के सूचक शब्द नहीं हैं। अंग्रेजी के 'पैसिव रेसिस्टेंस' को भूल जाइये। जिस कानून के मातहत हम कुटुम्ब में काम करते हैं, वही कानून मैं राजनैतिक मामलों में लागू करता हूँ। हिन्दुस्तान में देखता हूँ कि लोग डर के मारे काम करते हैं, डर से सच नहीं बोलते सरकार को धोखा देते हैं और अपने-आपको धोखा देते हैं। छोटे-से-छोटा पुलिस-कर्मचारी बड़े-बड़े अमलदारों की इज्जत ले सकता है। इस स्थिति से मुक्ति प्राप्त करना मैं सभी नेताओं का धर्म समझता हूँ। अधिकारी-वर्ग जनता की बात नहीं सुनते। वे अपने काम को ईश्वरी आज्ञा समझते हैं। वे यह मानते हैं कि उनका विरोध हरगिज नहीं किया जा सकता। इस मान्यता से उन्हें मुक्त करने में उनकी सेवा है और इसलिए राज्य की सेवा है। इसलिए जहाँ-जहाँ लोगों को भय से अन्याय के वश होता देखता हूँ, वहाँ उन्हें सलाह देता हूँ कि अकारण आये हुए दुःखों से छूटने का उपाय ज्ञानपूर्वक दुःख सहन करना है। यही सत्याग्रह है। दुःखों से छूटने के लिए दुःख देना दुराग्रह है, पशुबल है। बैल को जब दुःख होता है, तब वह लात या ठोकर मारता है। मनुष्य को दुःख हो तब उसे आत्मबल से दुःख का निवारण करते हुए दुःख सह लेना चाहिए।

'खेड़ा जिले की प्रजा पर इसी बार दावानल आया हो सो बात नहीं।

उसने पहले भी बहुत कष्ट सहन किये हैं। इस तरह की बातें महिलाएँ भी मेरी पत्नी के साथ करती हैं। इस बार उन्होंने लगान का कष्ट बताया। अगर लगान अदा करें, तो खुशी से नहीं; बल्कि डर से करेंगे। इसमें बहुतों को अपने मवेशी बेचने पड़ेंगे और कीमती पेड़ काटने पड़ेंगे। यह दुःख हम कैसे देख सकते हैं? मैंने यह अपनी आँखों से देखा है। इसका उपाय क्या? अर्जियाँ दूँ? वो तो कर चुका। नरपवन् कहते हैं: वाइसराय के पास जाओ, इंग्लैण्ड जाओ। इससे प्रजा को क्या राहत मिलेगी? इस बीच दुःख बढ़ जायेंगे और रुपया जमा हो जायगा। फिर क्या पुकार की जाय? समझने की बात है कि यह लड़ाई कानून तुड़वाने की नहीं बल्कि कानून के अमल के खिलाफ है। अपराधी फाँसी पर चढ़ जाय उसके बाद अपील कैसी? इस तरह तो कितने ही निर्दोष मनुष्य फाँसी पर चढ़ गये हैं, और यह हमारी गफलत से हुआ है। हमारे पास दो ही उपाय थे। जो कर वसूल करने आये, उसे डंडा मारकर निकाल दें या उससे विनयपूर्वक कह दें कि हम कर नहीं देंगे, फिर भी ले तो जायगा तो मैंने क्या अपराध किया—ऐसा सवाल तो आपके मन में नहीं उठता? उठे, तो शुरू में ही मैंने इसका उत्तर दे दिया है।

"इस लड़ाई में अनायास लोगों को धर्म, नीति, एकता, त्याग और अहिंसा की तालीम मिलती है। सरकार को लोकमत का आदर करने की शिक्षा मिलती है। इसमें द्वेष-भाव की गुंजाइश ही नहीं। सरकार को दबाकर न्याय नहीं करवाना है। उसकी न्याय-वृत्ति जाग्रत करके करवाना है। परिणाम अच्छा ही होगा। अन्त में धर्म का विजय ही होगा। लोग कमजोर होने के कारण हार जायँ तो भी क्या हुआ? किया हुआ तप व्यर्थ होता ही नहीं। गिरेंगे तो चढ़ने के लिए।

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥

"अब भी कोई गुत्थी रह जाय तो पूछ लीजियेगा।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

आप कभी हिचकिचाये नहीं। इसलिए लैंड़ा-मकरण सम्बन्धी आपकी हलचल मेरी समझ में नहीं आती।

इसका जवाब :

"भाईश्री बलवन्तरायजी,

"आपका पत्र मिला। यह मेरे प्रति आपकी प्रीति का सूचक है। कृतज्ञ हूँ। भाई नरहरभाई ने बस्ती में राम बनायी है, यह मैंने उन्हें बता दिया है। आपकी दलीलों का खण्डन करने के बजाय मैं आपको यह समझा दूँ कि मैं 'सत्याग्रह' किसे कहता हूँ। यद्यपि मैं 'पैसिव रेजिस्टैंस' शब्द काम में लेता हूँ, किन्तु वे मेरे आशय के सूचक शब्द नहीं हैं। अंग्रेजी के 'पैसिव रेजिस्टैंस' को भूल जाइये। बिना कानून के मातहत हम कुटुम्ब में काम करते हैं, वही कानून मैं राजनैतिक मामलों में लागू करता हूँ। हिन्दुस्तान में देखता हूँ कि लोग डर के मारे काम करते हैं, डर से सच नहीं बोलते सरकार को धोखा देते हैं और अपने-आपको धोखा देते हैं। छोटे-से-छोटा पुलिस-कर्मचारी बड़े-बड़े धनवानों की इज्जत ले सकता है। इस स्थिति से मुक्ति प्राप्त करना मैं सभी नेताओं का धर्म समझता हूँ। अधिकारी-वर्ग जनता की बात नहीं सुनते। वे अपने हुक्म को ईश्वरी आज्ञा समझते हैं। वे यह मानते हैं कि उनका विरोध हरगिज नहीं किया जा सकता। इस मान्यता से उन्हें मुक्त करने में उनकी सेवा है और इसलिए राज्य की सेवा है। इसलिए जहाँ-जहाँ लोगों को भय से अन्याय के वश होते देखता हूँ, वहाँ उन्हें सलाह देता हूँ कि अकारण लादे हुए दुःखों से छूटने का उपाय ज्ञानपूर्वक दुःख सहन करना है। यही सत्याग्रह है। दुःखों से छूटने के लिए दुःख देना दुराग्रह है, पशुबल है। बैल को जब दुःख होता है तब वह लात या ठोकर मारता है। मनुष्य को दुःख हो तब उसे आत्मबल से दुःख का निवारण करते हुए दुःख सह लेना चाहिए।

"खेड़ा जिले की प्रजा पर इसी वक्त राजनय बाधा हो सो बात नहीं।

आज देवदास के पत्र का उत्तर आया। देवदास ने पिछले एक पत्र में उपवास के सम्बन्ध में प्रेम से उमड़ता हुआ एक उपालम्भ दिया था, उसका जवाब :

"चि० देवदास,

'तुम्हारा पत्र मिला। मैं तुम्हें जो पत्र लिख चुका हूँ, वह मिला होगा। तुमने अपनी तन्दुरुस्ती के समाचार नहीं लिखे। बहन की सेवा कर रहे हो यह तो मुझे बहुत ही अच्छा लगता है। शास्त्रों में हम पढ़ते हैं कि शिष्य गुरु की सेवा करने निकल पड़ते थे। यह जितनी मधुर भाषा में व्यक्त किया गया है, उतना ही मनोहर और स्वाभाविक तुम्हारा कार्य है। यह सेवा तुम्हें कितने ऊँचे स्थान पर ले जायगी, इसका अन्दाज मैं तो नहीं लगा सकता।

'मैंने इस पैंतीसकी वृद्धि एक दिन से ज्यादा के लिए नहीं ली, इसका रहस्य समझना आसान है। मुझसे अधिक खींचतान हो ही नहीं सकती। मालिकों ने मजदूरों की दृढ़ता से नहीं, बल्कि मेरे उपवास के कारण यह वृद्धि दी है ऐसा वे अभी तक मानते हैं। अगर मैं इससे ज्यादा माँगता, तब तो यह मेरा अत्याचार माना जाता। जब मैं अधिक माँग सकने की स्थिति में था तब मैंने कम-से-कम लिया, यह मेरी सरलता मेरी नम्रता और मेरी विवेक-बुद्धि का सूचक है। उपवास न किया होता तो मजदूर हार ही जाते। उपवास से ही अपनी प्रतिज्ञा पर टिके रहे। ऐसी टेक के लिए कम-से-कम माँग ही उचित हो सकती है। ऐसी टेक के शब्दों का ही पालन हो सकता है, सो हुआ। और मेरे उपवास में जो दोष थे, वे मेरी कम-से-कम माँग से हलके, बहुत हलके हो गये। उपवास का रहस्य ऐस्थर बहन ने खूब समझा। उन्होंने तार में बाइबिल का एक वाक्य भेजा था। उसका अर्थ यह है : 'अपने मित्र के लिए अपने प्राण दे देने से अधिक प्रेम मनुष्य नहीं दिखा सकता।' इस उपवास को अभी तक मैं अपना सबसे बड़ा कार्य मानता हूँ। इस उपवास के समय मुझे जो शान्ति मिली, वह अलौकिक थी।

"अहमदाबाद के कार्य में जो आनन्द मुझे मिलता था, वह यहाँ नहीं मिल सकता। मन में उद्वेग रहा करता है और तरंगें उठती रहती हैं। अक्सर देखता हूँ कि लोगों ने रहस्य अच्छी तरह समझ लिया। कब कभी ऐसा आभास होता है कि नहीं समझ रहा हूँ। काम तो अच्छा ही हो रहा है, किन्तु अब मन थक गया है। मुहम्मदअली की सवारी का बोझा मुझे कुचले डालता है। हाथ में लेनी ही पड़ेगी। ईश्वर मुझे इसकी शक्ति देगा यह समझकर बैठा हूँ और इसलिए भीतर-ही-भीतर शान्ति भी महसूस करता हूँ। बा मेरे साथ हैं।

"छोटेलाल से कहना कि उसकी कसम फिर थक गयी मालूम होती है। बुनाई के काम की मुझे अधिक तफसील भेजना।

बापू के आशीर्वाद"

रात को बम्बई जानेवाले थे। कमिश्नर की अध्यक्षता सभा, किसानों की दृढ़ प्रतिज्ञाएँ—इन सब बातों से बहुत खुश हो गये थे। खूब बातें हो रही थीं। उनके दौरान में निकले हुए उद्गार :

अंग्रेजों की खूबियों का मैंने भलीभाँति अध्ययन किया और उन्हें अपने जीवन में उतारा है। इन लोगों के साथ जितनी मित्रता है मैं रखता हूँ उतनी मित्रता से कोई नहीं रखता होगा। जितने अंग्रेज मित्र मेरे हैं, उतने हिन्दुस्तान में शायद ही किसीके होंगे। अंग्रेज दीन नहीं हम दीन हैं। किसी अंग्रेज को मैंने इतना दीन नहीं देखा, जो यह सोचता हो कि कल क्या खाने को मिलेगा।

अपनी लड़ाई के दरमियान हम किसानों को समझा सकते हैं कि हम लोग स्वराज्य की लड़ाई लड़ रहे हैं। हमारी स्वराज्यनीति (स्वतन्त्र) पार्लमेंट का पहला काम हमें हमारी जमीनें दिलवा देने का होगा। लोग अपनी प्रतिज्ञा पर डटे रहेंगे, तब तो मैं जीते-जी इसे कैसे भूलूँगा!

सरकार जनता के विरुद्ध आचरण कर ही नहीं सकती।

मेरे बहनोई आर उनकी चोटी की बात छिड़ी। काठियावाड़ में दौरात्म्य तो अवश्य रहा है, परन्तु यह दौरात्म्य मृदु है। आज भी, मौसी

लड़ाई का शौर्य है। दावपेंच और प्रपंच में इस्तेमाल की हुई होशियारी है। चालबाजी और धोखाधड़ी ही रुपया कमाने का सूत्र है।

१३ ४ १८

बम्बई गये। बम्बई में कारमाइकल और दुबोले से मिले। क्या इस लड़ाई से लोगों का नीतिबल बढ़ेगा? उनकी वफ़ादारी बढ़ेगी या घटेगी? इन सवालों का जवाब उन्हें दिया। मुलाकात डेढ़ घंटे तक चली। चंदा-वरकर वगैरह से मिले।

१४ ४ १८

बम्बई से आये। सत्याग्रह का मूल प्रेम है, इस पर अत्यन्त मार्मिक उपदेश। दोपहर को स्वयंसेवकों के लिए सूचनायें लिखीं। मुहम्मदअली के बारे में मेफी को पत्र।

१५ ४ १८

बापू के उद्गार: 'आज शरीर ठीक स्थिति में आ गया है।'' प्रैट का पत्र। सभा की असफलता के कारण दुखित हुए, चिढ़ हुए, झुंझलाहट भरे उद्गार। उन्हें उत्तर:

प्रैट के भाषण का उत्तर अखबारों के लिए*। कारमाइकल को पत्र। चंदावरकर को पत्र। प्रैट के भाषण के उत्तरवाला खेड़ा की प्रजा को सन्देश*। स्वामी सत्यदेव के विषय में लेफ्टिनेंट गवर्नर को पत्र। रात को अखबारों के दोनों पत्र खुद ने देख लिये। दूसरे खानगी लगभग दस-बारह पत्र। इतना श्रमभार दूसरे को चकित कर देता है। 'आत्मा की शक्ति को पहचानना ही आत्मदर्शन है। आत्मा तो बैठी-बैठी दुनिया को हिला सकती है। मैं तो कर ही क्या रहा हूँ! इन शब्दों का साक्षात्कार।

जिसने प्रतिज्ञा नहीं ली वह बिना पतवार की नाव की तरह इधर उधर टकराता और अन्त में नष्ट हो जाता है। इन शब्दों में मुझे भी साथ ही साथ उपदेश दे दिया।

१६-४ १८

दन्तेली और चिखोदरा। चिखोदरा में अच्छी सभा। भाषण भी सभा के अनुरूप। जहाँ स्वामी दयानन्द का शासन हो, वहाँ आज भी वेद की ध्वनि होती ही होगी और यम-नियम आदि का पालन होता ही होगा। अतः प्रतिज्ञा के लिए यह तो बहुत ही अनुकूल भूमि है। इस भाव को सारे भाषण में व्यक्त किया।

नायका के भाइयों को पत्र :

"आपमें से २५ लोगों की जमीन जब्त हो जाने के समाचार मैंने अभी-अभी सुने। अगर ऐसा हुआ हो तो आपका पहला नम्बर आने पर बधाई देता हूँ। मानता हूँ कि जो जमीन जब्त हुई है, वह कागजों में ही जब्त रहेगी। फिर भी आपने तो ये सभी दुःख सहने की प्रतिज्ञा ली है। इसलिए आपको मेरे दिलासा देने की जरूरत भी नहीं रह जाती। आपको तो मुबारकबाद ही देता हूँ।

१७-४ १८

खेड़ा गये। लोगों ने काफी टाल-मटोल किया था पर सभा से कोई फल नहीं निकला। लोगों में बड़ी ही व्यापक और गहरी फूट है। जोहान्सबर्ग की डाक—मणिलाल को और मिस्टर, मिसेज और मिस वेस्ट को सुन्दर पत्र लिखे। नकल नहीं मिलती। पढ़ियार का अध्ययन-स्तोत्र पढ़ा, सुधारा और भूमिका लिखी। यह सब सभा के पहले के दो घंटों में। शाम को घर जाते हुए शंकर और मैं रास्ता भूल गये। चार मील का चक्कर खाया और मातर स्टेशन पहुँचने पर बापू से बड़ा उलाहना मिला।

१८ ४ १८

रात गये। वहाँ के सृष्टि-सौन्दर्य—कुदरत की खुली नाट्यशाला जैसे मैदान को देखकर चकित हो गये। सुन्दर मास्टर। 'लोक-संग्रह' शब्द का प्रयोग।

१९ ४ १८

नडियाद। रामनवमी। कुछ पत्र लिखे। मुख्य हनुमन्तराव को और कुछ मद्रासियों को। कुम्भकोणम् से बीस वकीलों और ग्रेजुएटों ने लिखा कि हम हिन्दी सीखने के लिए उत्सुक हैं। कोई हिन्दी शिक्षक भेज दीजिये। देवदास को भेजने का विचार।

मद्रासियों को पत्र :

"इतनी अधिक संख्या में आप लोगों के हस्ताक्षरोंवाला पत्र मिलने पर मुझे बड़ा आनन्द हुआ। वहाँ तक हो सकेगा जल्दी ही मैं आपके लिए शिक्षक भेज दूँगा। मैं किसी ऐसे अवैतनिक मनुष्य की सेवा प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा हूँ, जो इसमें प्रेम रखने के कारण हिन्दी सिखाने को तैयार हो। इस महान् राष्ट्रीय प्रयत्न की सफलता इसी पर निर्भर है कि मद्रास प्रांत में लोग कितना काम करते हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि तमिल भाई-बहन अवसर के अनुरूप ही सीखें दिखायेंगे। हम हिन्दी भाषा को हिन्दुस्तान के एक सिरे से दूसरे सिरे तक व्यवहार के लिए आममाध्यम बना दें, तो फिर राष्ट्र-सेवा करने की हमारी शक्ति की कोई मर्यादा ही नहीं रहेगी।"

सूबेदार आये, उनके साथ बातें। हमें सेना नहीं चाहिए। समस्त बम्बई से इकट्ठ होकर आवें तो उसका नैतिक प्रभाव बहुत ही उत्तम होगा। रात को 'पिल ग्रेडेड' शब्द के गुजराती (पर्याय) के लिए सूबेदार ने बड़ी माथापच्ची की। अन्त में तंग आकर बापू ने कहा : "भाई, रहने दो यह शब्द हमें नहीं ढूँढ़ना। 'गोरा' (सफेद) शब्द ठीक है।

२०-४ १८

तथा २१ ४ १८

अकबरपुर, कासोल और सामरखा : तीनों जगह सभायें। अकबरपुर में सुन्दर भाषण। अकबरपुर में कहा कि "इस लड़ाई का उद्देश्य ग्राम-पंचायतों का पुनरुद्धार करना भी है।" रास्ते में सूबेदार भी वे हो गये। रात में अहमदाबाद गये। अम्बालाल, आनन्दशंकर वगैरह से मिले। दूसरे दिन रात को लौटे। लौटते समय अहमदनगर से सत्याग्रह-पद्धति सीखने आये हुए महाराष्ट्रीय भाई के बारे में बात चलने पर बोले : "ये लोग यही समझते हैं कि यह तो एक प्रकार की मशीन चलानी है। उसे देखकर तुरन्त सीख सकते हैं। छोटे-से-छोटे व्यक्ति से लेकर बड़े तक, सभी महाराष्ट्रीयों में यह ऐब है। १८ तारीख को दिल्ली में जोशी और एक दूसरे महाराष्ट्रीय भाई आये। उन्होंने ५ मिनट में बात निपटा ली। तब एण्ड्रूज बोले : 'ये आदमी बड़े समझदार हैं। एक भी मिनट ज्यादा नहीं लेते।'" उससे बापू ने कहा : "यह महाराष्ट्र का उत्तम पहलू है।'

२२ ४ १८

सबेरे पंढोली और भुलाव गाँवों में सभायें। भुलाव में अपूर्व उत्साह। लगभग दो हजार मनुष्य। पंढोली में झाँझ-पखावज के साथ किये गये स्वागत का उल्लेख करते हुए कहा कि झाँझ-पखावज का माधुर्य और सरलता भुलाव के बैंड बाजे में नहीं थी। यही देखना है कि हमारी हलचल बैंड की तरह कृत्रिम न बन जाय। झाँझ-पखावज में प्राचीन माधुर्य सुरक्षित है। बैंड बेसुरा है। हमारा कार्य एक रागमाला और मधुर होना चाहिए बेसुरा नहीं। सुन्दर भाषण। यहाँ से आकर मिर को पाराण का और शारदराय को पत्र लिखा।

रात में बम्बई के लिए रवाना हुए। रेल में भीड़ होने के कारण अलग पड़ गये। बा से छोटेलाल और मगनभाईभाई के बीच के

१८-४-१८

रात गये। वहाँ के सृष्टि-सौन्दर्य—कुदरत की खुली नाट्यशाला जैसे मैदान को देखकर चकित हो गये। सुन्दर मापन्य। 'लोक-संग्रह' शब्द का प्रयोग।

१९-४-१८

नडियाद। रामनवमी। कुछ पत्र लिखे। मुख्य हनुमन्तराव को और कुछ मद्रासियों को। कुम्भकोणम् से बीस वकीलों और मेजुएटों ने लिखा कि हम हिन्दी सीखने के लिए उत्सुक हैं। कोई हिन्दी शिक्षक भेज दीजिये। देवदास को भेजने का विचार।

मद्रासियों को पत्र :

"इतनी अधिक संख्या में आप लोगों के हस्ताक्षरोंवाला पत्र मिलने पर मुझे बड़ा आनन्द हुआ। जहाँ तक हो सकेगा, जल्दी ही मैं आपके लिए शिक्षक भेज दूँगा। मैं किसी ऐसे अवैतनिक मनुष्य की सेवा प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा हूँ, जो इसमें प्रेम रखने के कारण हिन्दी सिखाने को तैयार हो। इस महान् राष्ट्रीय प्रयत्न की सफलता इसी पर निर्भर है कि मद्रास प्रांत में लोग कितना काम करते हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि तमिल भाई-बहन अवसर के अनुरूप ही शौर्य दिखायेंगे। हम हिन्दी भाषा को हिन्दुस्तान के एक सिरे से दूसरे सिरे तक व्यवहार के लिए आमभाषा बना दें, तो फिर राष्ट्र-सेवा करने की हमारी शक्ति की कोई मर्यादा ही नहीं रहेगी।"

सूबेदार आये, उनके साथ बातें। हमें रुपया नहीं चाहिए। सब बम्बई से इकट्ठा होकर आवे, तो उसका नैतिक प्रभाव बहुत ही खराब होगा। रात को पिछ 'व्हेल' शब्द के गुजराती (पर्याय) के लिए सूबेदार ने बड़ी माथापच्ची की। अन्त में तंग आकर बापू ने कहा : 'भाई, इसमें तो यह शब्द हमें नहीं ढूँढ़ना। 'गोरा' (सफेद) शब्द ठीक है।'

दोपहर को 'खिलाफ़त कमेटी' की सभा में गये। वहाँ से आकर भोजन किया। मैं इन्तज़ार में बैठा रहा। रात को होमरूलवालों द्वारा बुलायी हुई लड़ाई संबंधी स्थिति की सभा—माननीय पटेल अध्यक्ष थे, तिलक भी अचानक आ पहुँचे थे। पटेल ने गुजराती में भाषण आरंभ किया और सभी भाषण गुजराती और मराठी में हुए। पटेल साहब का भाषण ऐसा था, मानो मरों की मस्ती में दिया गया हो। सूबेदार, हॉर्निमन वगैरह के भाषण गालियों से भरे हुए थे। उनमें प्रैट का उपहास था। बापू का भाषण शान्त, सौम्य और युक्तिपूर्ण था।

२४ ४ १८

बम्बई में मेरा कोट करीब तथा सौ रुपये और पचीस सौ की डिपाज़िट रसीद के साथ चोरी चला गया। दूसरे दिन सबेरे मौलाना अब्दुल बारी से मिले। दोपहर को जमनादास आये थे। उनके साथ लम्बी बातें हुईं। उस दौरान में कहा : कल की सभा का सुर बिलकुल अच्छा नहीं लगा। अंग्रेज़ों को उनका नाम लेकर मज़ाक उड़ाया जाय, तो बहुत बुरा लगता है। कल की सभा में ऐसा ही हो रहा था। मुझे किसी दिन इसके विरुद्ध भी सख्त प्रहार करना पड़ेगा।

दोपहर को साढ़े चार बजे दिल्ली के लिए रवाना हुए। शाम तक खाया-पिया और इधर उधर की बातें हुईं। लखनऊ की कांग्रेस में स्वयं-सेवक था इस की जान-पहचान निकालकर एक सिंधी विद्यार्थी मिलने आया। उसे टिकट और जगह ले रखने का हुक्म दे दिया। रास्ते में वह हमारे डब्बे में आया। उसने कहा कि मैं 'इंडियन डिफेंस फोर्स' में तालीम ले आया हूँ। तुरन्त उसकी तरफ मुड़े और कहा : 'कुछ दिन मेरे आश्रम में नहीं हो आओगे? छुट्टियाँ कब शुरू होती हैं? और वहाँ जितना कुछ सीख आये हो, उतना हमारे लड़कों को सिखा दो।"

रात को मेरे पिताजी नवसारी स्टेशन पर मिले। वे मुझे देखकर बड़े प्रसन्न हुए। गाड़ी छूटते समय बापूजी ने सिर्फ इतना ही पूछा, 'क्यों

झगड़े की और दूसरी बातें सुनीं। उसे मिटाने के लिए सबेरे ही उठकर मैस में पत्र लिखते हुए मैंने देखा। पत्र इस प्रकार थे :

२१ ४ १८

"प्रिय मगनलाल,

"बा ने कहा है कि आपके और सन्तोक के बीच कुछ तकरार चल रही है। आपका मुँह भी उतरा हुआ था। मैं चाहता हूँ कि आपके बारे में ऐसा हरगिज न हो। संतोक को आप धीरज के साथ आगे बढ़ायें। अधीरता प्रेम के अभाव की सूचक है। इतना काफी है कि हम दूसरे को उसके बुरे काम में मदद न दें। आपकी चिन्ता आपको जलाती है, बढ़ने नहीं देती। इस स्थिति से अब तो आपको मुक्त हो ही जाना चाहिए।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ।
आगमापायिनो नित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥

इस श्लोक का विचार करके उसका रहस्य अपनी आत्मा में उतारें। यह श्लोक बड़ा ही शक्तिशाली है। मुझे तो इस श्लोक ने बहुत-सी चिन्ताओं के समय शान्ति दी है। भूपतराय के पारिवारिक क्लेश में संतोक का उपयोग करें। यह क्लेश दूर किया जा सकता है। दूर होना ही चाहिए।"

"प्यारी कस्तूर,

"तुम्हें मगनलाल को माँ का सुख देना है। उसमें माँ-बाप की कोख है। उसने मेरे काम को अपना बना लिया है। मेरे काम का उत्तराधिकार लेने को अभी तो मगनलाल ही तैयार है। उसे शक्ति कौन दे ? उसके दुःख से तुम रोओ। उसे तुम प्रेम से खिलाओ। उसे अनेक चिन्ताओं से बचा लो। यह तुम्हारा काम है। भूपतराम के घर में जो क्लेश है, उसे मिटाओ। मैं चाहता हूँ कि तुम ऐसे काम करती रहो। इसमें सच्ची विद्वत्ता है, बड़प्पन है। बिना किनारे की सफेद साड़ी पहनने में जरा भी हिचक नहीं माननी चाहिए। मैं जल्दी आने की कोशिश करूँगा।"

बारे में बोलते हुए सामनेवाला शर्माये, तभी तुम्हारा प्रभाव पड़ा कहा जायगा। भरसक शुद्ध वातावरण में ही रहना सीखो।

कला और नीति का सम्बन्ध जानते हुए भी नीति की दृष्टि से खराब पुस्तकों में शैली या विषय की खातिर रस लेने की अपनी प्रकृति मैंने बतायी। बापू ने फौरन ही कहा, मैं तो तुम्हारी यह प्रकृति भलीभाँति देखता ही रहा हूँ।

बापू : बम्बईवाली बोली में मुझे तो केवल बैंकर अच्छे लगे। उमर भी सच्चा है। कट्टर मुसलमान है। मुसलमानों की पसन्द-नापसन्द बड़ी तीव्र हुआ करती है। सिवा इसके वह बहुत अच्छा आदमी है बड़ा सत्कारी भी है।

हरिलाल ने एक क्षण में सारी जिन्दगी बिगाड़ डाली है। उसमें मैं अपने सारे दोष आकृति को बड़ा दिखानेवाले काँच द्वारा प्रतिबिम्बित हुए देखता हूँ। गुण आकृति को छोटे दिखानेवाले काँच द्वारा प्रतिबिम्बित हुए देखता हूँ। मुझमें जो बातें—जैसे कि उदारता—गुणरूप थीं, वे उसमें अवगुण बन गयी हैं। मुझे ऐसा महसूस होता है कि मेरे तीनों लड़कों की तरफ से होनेवाले अर्थलाभ का बदला चुकाने के लिए देवदास जनमा है।

स्टेशन पर आते-जाते बोले कि अपनी शिक्षा के खर्च के सिलसिले में चिकायत से आकर मैंने बा के सारे गहने बेच डाले। तुम्हें पता नहीं होगा कि बा के पास सिर्फ हाथों की चूड़ियाँ हैं। हरिलाल भी ऐसा कर सकता है। हम लोगों में घर का भार कम-से-कम सवा सौ रुपये के गहने बनवाता है। इसलिए कन्या के पिता को कुछ भी खर्च नहीं करना पड़ता। और कठिनाई के अवसर पर घर के ये गहने काम में लेने की मनाही नहीं होती।

रेल में भरतपुर से चंदापरकर, पराडे और परीख के साथ पहले दर्जे में चले गये। बहुत चर्चा की होगी। मैंने पूछा कि क्या आप उन्हें थोड़े-बहुत एक विचार के बना सके? तो उन्होंने मरकर कहने लगे, नहीं। कोई खास मतभेद नहीं था, यही सोचते थे कि वहाँ जाकर क्या करें।

निश्चिन्त हो गये हैं न ?" मेरे पिताजी ने तनिक रुककर कहा : "जी, हाँ।"

१५-४-१८

दूसरे दिन सबेरे पहली डाकगाड़ी में डाक लिख डाली, बाद में हरिलाल की बात निकली, सूबेदार की निकली, बैंकर की निकली और कितनों की ही निकली। हरिलाल ने कलकत्ते में मनु सूबेदार की सिफारिश से जाने को कहा और मैंने कोई विरोध नहीं किया। यह सुनकर मुझे उपदेश दिया। इस उपदेश में मेरे प्रति दिखायी गयी अपूर्व ममता, मुझे सुधारने की तीव्र इच्छा और इन दोनों बातों के सिवा मेरे स्वभाव की तलस्पर्शी परीक्षा से मैं चकित रह गया। मुझे अपनी बड़ाई से कभी जितना आनन्द नहीं हुआ, उतना इस परीक्षा से हुआ। "तुम बिलकुल भोले हो। यह मैं तुम्हारे दोष के तौर पर कह रहा हूँ, गुण के तौर पर नहीं। तुम अपने आसपास के वातावरण के अधीन हो जाते हो। वातावरण को दबाकर ऊँचा उठने की शक्ति तुम नहीं दिखाते। इसका अर्थ यह है कि तुम बुरे वातावरण में जरूर गिर सकते हो। तुम ऐसे चित्रकार के समान हो, जो बीभत्स वस्तु देखकर चित्र में बीभत्सता लाये बिना नहीं रह सकता। तुम अनुचित वातावरण में पड़ जाओ, तो उससे बिलकुल अलग हो जाने की बजाय उसमें दिलचस्पी लेते हो, रम जाते हो।

मैंने कहा : मैं मानता हूँ कि आपका यह निरीक्षण बिलकुल सही है और इसे सुधारने का प्रयत्न अच्छी तरह करूँगा। किन्तु -- औरों को मैं सुधारते बैठूँ।

बापू : दूसरों को सुधारने की बात ही क्यों है ? दुनिया में कोई दूसरे को सुधार ही नहीं सकता। अपने-आपको ही सुधारना है। अलग हो जाओ, यानी अलग रहकर ही तुम प्रभाव डालो। कुछ बातें तो तुम्हारे सामने कभी हो ही नहीं सकतीं। तुम्हारे सामने कुछ शब्दों या बातों के

मुझे हमारे बड़े आदमी बहुत छोटे मालूम होते हैं। देखिये न, लोगों की मानो इस अवसर पर कुछ हुआ ही न हो, ऐसा इनका बर्ताव देखता हूं।

मथुरा से रेल में 'हिन्दू' पत्र का प्रतिनिधि ब्यासराय साथ हो गया। उसने स्वेच्छापूर्वक और अनिवार्य सैनिक भरती की बातें कीं : आप अहिंसावादी होकर फौजी भरती को कैसे प्रोत्साहन दे सकते हैं? मुझे अपनी स्थिति समझाइये। उससे कहा : लड़ाई के विरुद्ध तो हूं ही, किन्तु जिसे लड़ना हो, उसे लड़ने के लिए जरूर कहूंगा। वह इस बात को नहीं समझा। बापू ने कहा :

¶ 'मनुष्य में जो आवेश भरे होते हैं, उन्हें मैं मानता हूं। मनुष्य मरना सीखे, उससे पहले उसमें मरने की शक्ति होनी चाहिए। कोई मुझसे सलाह पूछने आये कि लड़ना अच्छा है या नहीं, तो मैं उससे साफ कहूंगा कि नहीं अच्छा नहीं है। किन्तु कोई मन में सद्‌ प्रतीति लेकर आये कि लड़ना तो अच्छा ही है पर किसी खास मौके पर लड़ना अच्छा है या नहीं इस बारे में उसे शंका है, तो मैं उसे सलाह दूंगा कि आज की घड़ी लड़ाई में भाग लेने की है।

इतना कहने के बाद उससे पूछा कि समझे? समझे हो तो कहिये क्या समझे? उसने कुछ कह सुनाया, किन्तु मालूम नहीं पड़ा कि उसने बात समझ ली थी। तब कहने लगे :

¶ "एक सीधी मिसाल लीजिये। मेरा लड़का अगर मुझसे कहे कि वह विवाह किये बिना नहीं रह सकता। मैं साफ मानता हूं कि ब्रह्मचर्य उसके लिए उत्तम है। किन्तु मुझे उसे शादी करा देना चाहिए सिर्फ इसीलिए कि वह उल्टे रास्ते न लग जाय। उसके विवाह के बाद मैं उसे जरूर समझाऊंगा कि जहाँ तक हो सके, संयम रखो।

२६-४-'१८

रात को खूब मिलने-भेंटने के बाद सो गये। सुबह ही सुबह मुझे बुलाकर प्रवचन किया : तुमने प्रेम से किया है, इसलिए क्या कहूं!

किन्तु मुझे यह कहना पड़ता है कि आध्यात्मिक दृष्टि से तुमने बहुत बुरा काम किया। तुमने उस दिन मेरे आये बिना भोजन क्यों नहीं किया? मुझे उस दिन बड़ा कष्ट हुआ। तुमने प्रीति की भावना से न खाया हो, तो यह प्रीति व्यर्थ है। सिर्फ इस भावना से न खाया हो कि मेरे आने के बाद आनन्द से साथ खायेंगे, तो यह तो विषम-भोग करने जैसा हुआ। मुझे तुम्हें तुरत कहीं भेजना था, पर मैंने देखा कि तुमने खाया नहीं है। इस तरह मैं तुमसे कैसे काम ले सकता हूँ? तुममें अपनी बुरी आदत को भी अच्छी मानने की आदत पड़ गयी है। फलों बात नहीं हो सकती, ऐसा कैसे चल सकता है? तुम्हारे पिता और दुर्गा ने तुम्हारे साथ बहुत लाड़-प्यार किया है।

सवेरे हिल की प्रारम्भिक सभा में गये। तिलक, श्रीमती बेसेंट और अली-भाइयों के बारे में पहला झगड़ा उठाया। हिल ने पूछा : उनकी अनुपस्थिति के बारे में किसे आपत्ति है? सिर्फ बापूजी ही बोल उठे कि "मुझे आपत्ति है।" और किसीने उनका समर्थन नहीं किया। बहुत नाराज होकर आये। पत्र लिखना शुरू किया। लिखकर एण्ड्रूज को दिखाया। संशोधन-संवर्धन हुए। मथुरादास छक भी थे। पत्र लिख चुकने के बाद मालवीयजी आये।

पू॰ "प्रिय सर क्लोड हिल,

"इस बड़े महत्त्व की परिषद् में बनायी जानेवाली कमेटियों में से किसीमें भी रहने या मुख्य प्रस्ताव पर बोलने का सम्मान स्वीकार करने से मुझे इनकार करना पड़ा इसका मुझे कम दुःख नहीं हुआ।

"मेरा खयाल है कि अधिक समर्थ नेताओं को इस परिषद् से अलग रखा गया है इसलिए परिषद् ज्यादातर असफल रहेगी। श्री तिलक, श्रीमती बेसेंट और अली-भाइयों की अनुपस्थिति से परिषद् दरअसल प्रभावशाली नहीं रह जाती। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि आज की सभा में हम लोग जो उपस्थित थे, उनमें से किसीका भी प्रखर आम-

जनता पर उन नेताओं के बराबर नहीं है। परिषद् में उनको बुलवाने से इनकार करने का अर्थ इतना ही होता है कि जिन लोगों के हाथ में सरकार की बागडोर है, उन लोगों की असली इच्छा अब तक अख्तियार की गयी नीति में कोई परिवर्तन करने की नहीं है, और नीति में कोई सच्चा परिवर्तन किये बिना आप जो रियायतें देंगे, उनमें कोई शोभा या रस नहीं रहेगा। आम जनता में वे सभी वफादारी प्रकट नहीं कर सकेंगी। परिषद् का उद्देश्य अगर मैंने सही तौर पर समझा है, तो आपकी इच्छा यह है कि आम जनता पर असर डाला जाय। भारतीय नेताओं के सामने यह सवाल है कि हिन्दुस्तान के लोगों में अंग्रेजों जैसी वफादारी किस तरह पैदा की जाय। मैं नम्रतापूर्वक कहता हूँ कि जब तक आप आम जनता के विश्वस्त नेताओं पर विश्वास रखने को तैयार नहीं और उस विश्वास का जो अर्थ हो वह सब नहीं करते तब तक वफादारी पैदा करना असंभव है। अली-भाइयों के बारे में मैं बता दूँ कि लोगों के सामने उनके अपराध का कोई सबूत नहीं है। दुश्मन के साथ पत्र-व्यवहार करने के इलजाम का उन्होंने जोरदार शब्दों में इनकार किया है। वर्तमान परिस्थिति के विषय में जो मत अली-भाइयों का है, वही अधिकांश मुसलमानों का है।

"मुझे महसूस होता है कि दूसरे कारणों से भी मैं परिषद् में कोई कारगर काम नहीं कर सकूँगा। खिलाफत की डाक में आये हुए अखबार मैंने अभी-अभी पढ़े हैं। उनमें गुप्त समझौतों के बारे में पढ़ा है। जो बातें प्रकाशित की गयी हैं उन्हें पढ़कर बहुत दुःख होता है। अखबारों में बताये गये समझौते सचमुच हुए हों तो मैं नहीं जानता कि अब मैं कैसे कह सकता हूँ कि मित्र-राष्ट्रों का पक्ष बिलकुल न्यायपूर्ण है। मैं नहीं कह सकता कि इन समाचारों का असर भारत के मुसलमानों पर क्या होगा। भारत-सरकार साम्राज्य की उत्तम सेवा तभी कर सकती है, जब वह साम्राज्य सरकार को यह सलाह देने की हिम्मत करे कि इन समझौतों से उसने अपने-आपको जिस बुरी और अनीतिमय स्थिति में डाला है उसमें से वह निकल जाय। अगर यह साबित हो जाय कि अखबारों

में आया हुआ हाल बिलकुल गलत है, तो मेरे बराबर आनन्द किसीको नहीं होगा।

"जब तक स्थानीय अधिकारी अपना काम-काज उसी तरह करते रहेंगे जिस तरह वे खेड़ा में कर रहे हैं, तब तक हिंदुस्तान में भीतरी शान्ति नहीं रहेगी। मुझे विश्वास है कि वाइसराय यह तो हरगिज नहीं चाहेंगे कि लोग अन्याय और जुल्म का कोई विरोध न करें। मैं आशा रखता हूँ कि खेड़ा में लूट मचाकर लगान वसूल करने का जो इरादा रखा गया है, वह एकदम बन्द कर दिया जायगा और खेड़ा के लोगों की न्यायपूर्ण माँगें मंजूर कर ली जायँगी।

"अनिवार्य फौजी भरती शुरू करने के विरुद्ध भी सरकार को मैं अच्छी तरह चेता देना चाहता हूँ। मुझे आशा है कि हिंदुस्तान की भूमि पर यह चीज कभी सफल नहीं हो सकती। किन्तु किसी भी तरह जब तक स्वेच्छा पूर्वक भरती करने के सारे प्रयत्न ईमानदारी के साथ न कर लिये जायँ और वे असफल न हो जायँ, तब तक तो अनिवार्य सैनिक भरती हरगिज जारी न करनी चाहिए। अब तक जबरदस्ती फौजी भरती करने की जो बातें सुनी गयी हैं, उन्हें दबा रखने में नेताओं ने बहुत ही संयम से काम लिया है, यह तो आप भी स्वीकार करेंगे। मैं यह मानने का साहस करता हूँ कि अब हम मर्म-स्थान पर पहुँच चुके हैं।

अन्त में मैं कहता हूँ कि होमरूल की मजबूत तालीम आम जनता में इतनी अधिक गहरी और व्यापक हो गयी है कि निकट भविष्य में होमरूल मिल जाने के बहुत ही मजबूत आसार से कुछ भी कम होगा, तो लोगों का सच्चा सहयोग नहीं मिल सकेगा।

'अब आप समझ सकेंगे और शायद इसकी कद्र भी कर सकेंगे कि मैं कमेटियों में रहने से क्यों इनकार करता हूँ और बोलने में क्यों आना-कानी करता हूँ। मैं परिषद् में भाग न लेकर ही सरकार के प्रति अपना सद्भाव उत्तम रूप में प्रकट कर सकता हूँ।

जनता पर उन नेताओं के बराबर नहीं है। परिषद् में उनको बुलाने से इनकार करने का अर्थ इतना ही होता है कि जिन लोगों के हाथ में सरकार की बागडोर है, उन लोगों की असली इच्छा अब तक अस्तित्वकार की गयी नीति में कोई परिवर्तन करने की नहीं है और नीति में कोई सच्चा परिवर्तन किये बिना आप जो रियायतें देंगे, उनमें कोई शोभा या रस नहीं रहेगा। आम जनता में वे सच्ची वफादारी प्रकट नहीं करा सकेंगी। परिषद् का उद्देश्य अगर मैंने सही तौर पर समझा है, तो आपकी इच्छा यह है कि आम जनता पर असर डाला जाय। भारतीय नेताओं के सामने यह सवाल है कि हिन्दुस्तान के लोगों में अंग्रेजों जैसी वफादारी किस तरह पैदा की जाय। मैं नम्रतापूर्वक कहता हूँ कि जब तक आप आम जनता के विश्वस्त नेताओं पर विश्वास रखने को तैयार नहीं और उस विश्वास का जो अर्थ हो वह सब नहीं करते तब तक वफादारी पैदा करना असंभव है। अली-भाइयों के बारे में मैं कहता हूँ कि लोगों के सामने उनके अपराध का कोई सबूत नहीं है। दुश्मन के साथ पत्र-व्यवहार करने के इलजाम का उन्होंने जोरदार शब्दों में इनकार किया है। वर्तमान परिस्थिति के विषय में जो मत अली-भाइयों का है, वही अधिकांश मुसलमानों का है।

"मुझे महसूस होता है कि दूसरे कारणों से भी मैं परिषद् में कोई कारगर काम नहीं कर सकूँगा। विलायत की डाक में आये हुए अखबार मैंने अभी-अभी पढ़े हैं। उनमें गुप्त समझौतों के बारे में चर्चा है। जो बातें प्रकाशित की गयी हैं, उन्हें पढ़कर बहुत दुःख होता है। अखबारों में बताये गये समझौते सचमुच हुए हों, तो मैं नहीं जानता कि अब मैं कैसे कह सकता हूँ कि मित्र-राष्ट्रों का पक्ष बिलकुल न्यायपूर्ण है। मैं नहीं कह सकता कि इन समाचारों का असर भारत के मुसलमानों पर क्या होगा। भारत-सरकार साम्राज्य की उत्तम सेवा तभी कर सकती है, जब वह साम्राज्य सरकार को यह सलाह देने की हिम्मत करे कि इन समझौतों से उसने अपने-आपको जिस बुरी और अनीतिमय स्थिति में डाला है, उसमें से वह निकल जाय। अगर यह साबित हो जाय कि अखबारों

में आया हुआ हाल बिलकुल गलत है, तो मेरे बराबर आनन्द किसीको नहीं होगा।

"जब तक स्थानीय अधिकारी अपना कामकाज उसी तरह करते रहेंगे, जिस तरह वे खेड़ा में कर रहे हैं, तब तक हिंदुस्तान में भीतरी शान्ति नहीं रहेगी। मुझे विश्वास है कि वाइसराय यह तो हरगिज नहीं चाहेंगे कि लोग अन्याय और जुल्म का कोई विरोध न करें। मैं आशा रखता हूँ कि खेड़ा में लूट मचाकर लगान वसूल करने का जो इरादा रखा गया है, वह एकदम बन्द कर दिया जायगा और खेड़ा के लोगों की न्यायपूर्ण माँगें मंजूर कर ली जायँगी।

"अनिवार्य फौजी भरती शुरू करने के विरुद्ध भी सरकार को मैं अच्छी तरह चेता देना चाहता हूँ। मुझे आशा है कि हिंदुस्तान की भूमि पर यह चीज कभी उत्पन्न नहीं हो सकती। किन्तु किसी भी तरह जब तक स्वेच्छा-पूर्वक भरती करने के सारे प्रयत्न ईमानदारी के साथ न कर लिए जायँ और वे असफल न हो जायँ, तब तक तो अनिवार्य सैनिक भरती हरगिज जारी न करनी चाहिए। अब तक जबरदस्ती फौजी भरती करने की जो बातें सुनी गयी हैं, उन्हें दबा रखने में नेताओं ने बहुत ही संयम से काम लिया है, यह तो आप भी स्वीकार करेंगे। मैं यह मानने का साहस करता हूँ कि अब हम भय-स्थान पर पहुँच चुके हैं।

अन्त में मैं कहता हूँ कि होमरूल की मजबूत तालीम आम जनता में इतनी अधिक गहरी और व्यापक हो गयी है कि निकट भविष्य में होमरूल मिल जाने के बहुत ही मजबूत आधार से कुछ भी कम होगा, तो लोगों का अच्छा सहयोग नहीं मिल सकेगा।

"आप आज समझ सकेंगे और शायद स्वयं भी कर सकेंगे कि मैं कमेटियों में रहने से क्यों इनकार करता हूँ और बोलने में क्यों आनाकानी करता हूँ। मैं परिषद् में भाग न लेकर ही सरकार के प्रति अपना स्वभाव उत्तम रूप में प्रकट कर सकता हूँ।

"मेरी प्रार्थना है कि यह पत्र आप जल्दी-से-जल्दी वाइसराय के सामने रख दें।

सेवक
मो॰ क॰ गांधी"

पत्र पूरा हो चुकने के बाद मालवीयजी आये। मालवीयजी को चिट्ठी पढ़कर बहुत सन्तोष मालूम हुआ। उसके बारे में कोई सुझाव तो नहीं दे सके, सिर्फ अन्तिम पैराग्राफ में 'प्लीज ओब्लाइज' (कृपा कीजिये) इतना जोड़ देने की सूचना की। बापू ने इनकार कर दिया। एण्ड्रूज पत्र लेकर चले। साथ में मैं और बापूजी भी थे। मालवीयजी अपनी गाड़ी से उतरकर हमारे साथ चल रहे थे। रास्ते में अनेक बातें हुईं। यह कहा कि वे अपने लड़के को Secret of Success और Plain living and high thinking (सफलता की कुञ्जी' तथा 'सादा जीवन और ऊँचे विचार) पढ़ाते हैं और साथ-साथ महाभारत में से श्लोक भी बताते रहते हैं। एण्ड्रूज आये तो मालवीयजी ने इस पुस्तक पर भाषण दिया। बाद में रास्ते में मालवीयजी किसीसे मिलने के लिए अलग हो गये। एण्ड्रूज तो पत्र के बारे में 'कमाल का' 'भव्य' वगैरह कहते ही रहे। मालवीयजी के जाते ही बापूजी ने कहा: 'मुझे विश्वास है कि पंडितजी को पत्र पसन्द नहीं आया। यह अच्छा हुआ कि वे पत्र पूरा होने के बाद आये नहीं तो हम पूरा ही न कर पाते। पत्र को वे इतना नरम कर डालने की कोशिश करते कि उसमें कुछ रह ही नहीं जाता।

मालवीयजी के अलग होने के बाद इधर उधर की बातें हुईं। मेडन्स होटल में पहुँचे। एण्ड्रूज पत्र देने गये। पत्र देकर लौटने के बाद एण्ड्रूज ने सब बातों का वर्णन किया।

"मैं इमर्सन से रास्ते में मिला। उसने मुझसे पूछा: 'इतनी रात गये कैसे आये हैं?' मैंने कहा: 'मुझे लार्ड इर्विन से मिलना है।' वे मुझे वहाँ ले गये। वे अन्दर गये और लार्ड इर्विन से कहा कि मैं बाहर इन्तजार कर रहा हूँ। लार्ड इर्विन बाहर आये और बरामदे में कहा:

"इसलिये मि. एमरी, मैं बहुत काम में हूँ। मैं आपको एक मिनट भी नहीं दे सकता।' मैंने कहा: "मुझे एक मिनट भी नहीं चाहिए। मैं तो यह पत्र आपको हाथोंहाथ देने आया हूँ। यह बहुत जरूरी पत्र है, आशा है कि आप इसे आज रात को ही पढ़ लेंगे।'

२७-४-१८

परिषद् में नहीं गये। मेफी को भी उपर्युक्त पत्र भेज दिया। उसीके साथ निम्नलिखित पत्र लिखा:

"हाल ही में हमारी परिस्थिति में जो परिवर्तन हुए हैं, उन पर से मेरी यह राय बनी है कि अली भाइयों की मुक्ति बहुत जरूरी हो गयी है। बड़ी आनाकानी और बहुत गंभीर विचार के बाद मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि मैं परिषद् में भाग नहीं ले सकूँगा और जिस उद्देश्य से परिषद् बुलायी गयी है उस उद्देश्य को पूरा करने में मदद न दे सकूँगा। सर क्लॉ-हिल के नाम अपने पत्र में मैंने अपने कारण बता दिये हैं। उस पत्र की एक प्रति इसके साथ आपको भेजता हूँ। मैं नहीं जानता कि अभी अली भाइयों के मामले में वाइसराय साहब मुझसे मिलना चाहते हैं या नहीं। मैं २९ तारीख तक दिल्ली में ही हूँ और जरूरत हो, तो और अधिक भी ठहर सकता हूँ।

यह पत्र ११ बजे गया। दोपहर को वापस मेफी का पत्र आया। उसमें तीन बजे वाइसराय से मुलाकात करने की इच्छा प्रकट की थी। वाइसराय से मिले। दो घंटे बातचीत हुई। परिषद् से बाहर रहकर परिषद् को न तोड़िये। परिषद् में आकर परिषद् को भंग करना हो तो कीजिये। आप यहाँ आकर अपने मित्रों के सामने रख सकते हैं और उन्हें अपने पक्ष में कर सकते हैं। किन्तु क्या आपका खयाल है कि कोई आपके पक्ष में हो जायेंगे। परिषद् में आप न आयेंगे, तो हिन्दुस्तान पर बड़ा बुरा असर पड़ेगा।

गुप्त समझौतों की बात चली। वाइसराय ने कहा कि क्या आपके

इस बात का यकीन है ? दूसरे पक्ष की बात तक न सुन लें, तब तक आप कुछ नहीं कह सकते। बापू ने बिलकुल ईमानदारी से गुप्त समझौता संबंधी पैराग्राफ के बारे में बाइसराय से बात कह दी। "मुझे तो कुछ पता नहीं था। मैं अखबार नहीं पढ़ता। मुझे एण्ड्रूज ने निशान के कुछ अंक बताये। उनमें मैंने देखा और मुझे और एण्ड्रूज दोनों को महसूस हुआ कि इस मामले में आपको लिखना ही चाहिए। इसलिए मैंने आपको लिख दिया। मुझे विशेष जानकारी नहीं है। यह सही है कि मंत्रिमंडल का इस बारे में क्या कहना है, सो हमें सुनना चाहिए।'

२८४ १८

सवेरे जबरदस्त मनोमन्थन हो रहा था। परिषद् में जायें या न जायें ! एण्ड्रूज से कहा :

'मेरी व्यवहारबुद्धि मेरी न्यायबुद्धि पर विजय पाती है। मुझे गहरा घाव लगा, जब उसने कहा "किसी दिन तुम हिन्दुस्तान में अकेले रह जाओगे। कोई तुम्हारे साथ सहमत नहीं होगा और तुम्हारा साथ न देगा। तुम जो कहते हो वह अपने मित्रों को समझाने का प्रयत्न करो। फिर जो कहता हूँ, उसका तुम्हें पता चलेगा।'

परिषद् में जाने से पहले सर विलियम विन्सेन्ट से मुलाकात के लिए समय माँगने के लिए एण्ड्रूज को भेजा। एण्ड्रूज को पन्द्रह मिनट एक स्नान-घर में बिठा रखा। इसके बाद कहा कि एक-आध मिनट दे सकूँगा। एण्ड्रूज से हाथ तक नहीं मिलाया और आइये, मिं एण्ड्रूज आपके लिए मैं क्या कर सकता हूँ ?—यह कहकर बात शुरू की। इस बजे बापू उनसे मिले। बापू ने कहा : मैं आपको एक मिनट भी नहीं दे सकता ! अली-भाइयों के प्रश्न का सैनिक-भरती के प्रश्न से क्या सम्बन्ध है ? बापू ने कहा : बहुत सम्बन्ध है। अली-भाइयों की रिहाई से फौजी भरती का सारा सवाल हल हो जायगा। सर विलियम ने कहा : यह तो ठीक है, पर आपने युद्ध-प्रश्न के लिए क्या किया है ? जहाँ तक मैं जानता हूँ,

आपने स्थानीय अधिकारियों को सिर्फ खूब परेशान किया है। बापू ने कहा : मैंने इंग्लैंड में खूब काम किया है और यहाँ भी ऐसा ही काम करने की माँग की थी, किन्तु मेरी माँग नामंजूर कर दी गयी। सर विलियम बोले : सलाम। इस तरह बात खतम हुई और बापू चल आये।

परिषद् की 'कनफ्लुक्ट-समिति' में उपस्थित हुए। कुछ बोले-चाले नहीं। शाम को आकर विचार किया कि जैसा पत्र परिषद् के आरंभ में लिखा था, वैसा ही पत्र परिषद् के अन्त में भी वाइसराय को भेजा जाय। पत्र तैयार किया। सादा पत्र था। उसमें शस्त्र-कानून और प्रेस एक्ट उठा देने और स्वराज्य तुरत देने के लिए लिखा था। मालवीयजी के यहाँ रात के बारह बजे तक पत्र की चर्चा हुई। रात को मालवीयजी ने पत्र पर हस्ताक्षर करने का वचन दिया। सबेरे फिसल गये। मालवीयजी ने हस्ताक्षर नहीं किये इसलिए दूसरे सब लोगों के हस्ताक्षर करने के बावजूद पत्र न भेजने का निश्चय किया। परिषद् में उर्दू में प्रस्ताव पेश करने का निश्चय किया। पयद्रुम की अनुमति माँगने भेजा। दूसरे दिन वाइसराय ने अनुमति दी और साथ ही खबर भी भेजी :

"आप सभी मित्रों को विश्वास दिलाइये कि मुझसे जो कुछ हो सका है, वह सब मैंने किया है। जो योजना पेश की गयी है, वह पूरी तरह कामिस-लीग योजना जैसी तो नहीं है, पर तत्वतः उसके जैसी होगी। मैं आशा रखता हूँ कि अब जरा भी लेन-देन की बात और कोई भिन्न भिन्न नहीं होगी। सारी दुनिया, खास तौर पर इंग्लैंड आतुरता से प्रतीक्षा कर रहा है कि अब क्या होता है। सबकी नजर अब पर लगी है। मैं आशा रखता हूँ कि अब भी भिन्न-भिन्न नहीं होगी।

२९ ४ १८

परिषद् में दो वाक्य उर्दू में बोलकर प्रस्ताव पेश कर आये। मालवीयजी के साथ का मिलने आये। महाभारत और पुराणों में से संतति-शास्त्र पर बातें कीं। श्रीकृष्ण और सत्यभामा, पुण्डरीक और साम्ब, बाद

धर्म के ब्रह्मचर्य के फल, बंदरों और पक्षियों में प्रेमभाव, आनन्द, निर्दोष जीवन आदि विषयों पर बातें हुईं।

मालवीयजी के भाषण का जिक्र करते हुए बापू बोले : अब इनकी शक्ति खतम हो गयी है।

सर क्लॉड हिल के साथ बातें हुईं। कल के बर्ताव के लिए वह शरमाया।

वाइसराय के नाम पत्र लिखवाना शुरू किया। थोड़ी देर मुझसे लिखवाया। रात को एण्ड्रूज से। देखने लगे। एक बजे तक सुधार हुए।

वाइसराय की परिषद् में जाने का समाचार देते हुए उनके निजी मंत्री को लिखा :

"भय और कंपन के साथ एक फर्ज के खातिर मैंने परिषद् में भाग लेने का निश्चय किया है। वाइसराय के साथ मुलाकात करने के बाद और फिर आपसे मिलने के बाद मुझे महसूस होता है कि मैं और कुछ नहीं कर सकता।"

इसका उत्तर इस प्रकार आया :

'आपके भय और कंपन के साथ में वाइसराय का विश्वास नहीं। मेरा भी विश्वास नहीं।

"यह सुनकर कि आप परिषद् में भाग लेंगे वाइसराय को बहुत खुशी हुई। मैंने सर क्लॉड हिल को खबर दी है कि आप 'जनबल-समिति' में भी भाग लेंगे। उसकी बैठक ११ बजे है।

रात को वाइसराय के नाम पत्र लिखा जा रहा था कि मेफी का पत्र आया :

'प्रिय गांधीजी,

'अब मैं देखता हूँ कि आज सवेरे काम की गड़बड़ में आपके पत्र का पिछला भाग मैंने पढ़ा ही नहीं था। इसलिए मैंने आपके पहले प्रश्न—आपके भाषण संबंधी प्रश्न—का जवाब दे दिया था।

'उसके बारे में मैं कह दूँ कि आपकी उपस्थिति का और आपने जो सारे शब्द कहे और जिस ढंग से कहे, उसका वाइसराय पर बहुत ही असर हुआ है।

'युद्ध-प्रयत्न की गुंजाइश है, आपके इस खयाल से मैं बहुत प्रसन्न हुआ। इस काम की बड़ी ही जरूरत है और इसके लिए आपको हरगिज अफसोस नहीं हो सकता। अधिकार प्राप्त करने के लिए आग्रह करना उन्हें प्राप्त करने का हमेशा उत्तम उपाय नहीं होता। हम पर विश्वास होता हो तो हमारे लिए लड़िये, हमारे बारे में अधीर न बनिये।

'हम आज रात को यहाँ से जा रहे हैं। मैं किसी भी समय आपकी कुछ भी सेवा कर सकूँ तो मुझे सूचित करेंगे।

मेफी को उत्तर :

¶ "भारी काम के बोझ से दबे होने पर भी आपने मेरा पत्र फिर से पढ़ा और मुझे जवाब देने का वक्त निकाला, इससे आपकी ममता प्रकट होती है। वाइसराय साहब ने जो प्रेमभाव प्रकट किया है, उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

'आपके लिए मैं दो पत्र पूरे कर रहा हूँ। वे आपको शिमला में मिलेंगे। आपके यहाँ से रवाना होने से पहले मैं शायद ही उन्हें तैयार कर सकूँगा। एक पत्र में इस विषय की निश्चित सूचनाएँ हैं कि आप मेरी सेवाओं का किस तरह उपयोग कर सकते हैं। दूसरे पत्र में मैंने मौजूदा परिस्थिति पर अपने विचार पूरी तरह प्रकट किये हैं।

'अमीरों पर से मेरा विश्वास जल्दी हिल नहीं सकता। अधिकारों के बारे में आपने जो कुछ लिखा है उससे मैं पूरी तरह सहमत हूँ। लम्बा पत्र लिखकर आपका समय लेना मुझे ठीक नहीं लगता।

"जब कभी आपको लिखता हूँ, तब हमेशा मुझे महसूस होता है कि मैं कोई पाप कर रहा हूँ।

सेवक

मो० क० गांधी"

१०-४ १८

सबेरे भी वाडस्राय के पत्र में काट-छाँट और सुधार होने लगे, तो शाम तक चलते रहे। एण्ड्रज ने हरएक शब्द और मात्रा तक की जाँच की। अन्त में जो पत्र तैयार हुआ, उससे सभी चकित हो गये। रूद्र, एण्ड्रज वगैरह ने भव्य उत्कृष्ट, कमाल आदि विशेषणों का प्रयोग किया। रात को रेवरेण्ड आमर्लेंड को पत्र ले जाने के लिए तैयार किया। यह कहकर कि ड्योढ़े दरजे में आ सकता हूँ, सत्तर में से केवल बीस ही रुपये ले ले गये। उसी दिन शाम को सर विलियम विन्सेन्ट और मैफी को भी पत्र लिखे:

"प्रिय श्री मैफी,

"मैं चाहता हूँ कि वाइसराय साहब के नाम लिखा मेरा पत्र आप पढ़ लें और मुझे निःसंकोच तार दें कि इस पत्र को प्रकाशित करने में आपको क्या कोई आपत्ति है? उसका उद्देश्य विरोधी शक्तियों से निपटना है। मेरी स्थिति के बारे में स्पष्टीकरण पूछनेवाले पत्रों की मुझ पर झड़ी लग रही है। लोग परेशान हो गये हैं। अफवाहें जितनी हानि कर सकती हैं, कर रही हैं। मुझे इन सबसे निपटना है। मेरी इस अधीरता के लिए आप मुझे क्षमा करेंगे।

"दूसरे पत्र में मेरी सेवाएँ देने की बात है। आपको उसका जो उपयोग करना हो, कर लीजिये। जिसे लार्ड चेम्सफोर्ड तथा युद्ध-कार्य समझें, वैसा कुछ-न-कुछ करने की मेरी बड़ी इच्छा है। मुझे यह विचार आता है कि आप मुझे अपना मुख्य भरती अफसर बना दें तो मैं आप पर मनुष्यों की वर्षा कर दूँ। मेरी इस धृष्टता के लिए क्षमा कीजिये।

"कल वाइसराय बहुत भले मालूम हुए। जब मैं उनके भाषणों को ध्यान देकर सुनते देख रहा था तब मेरा सारा हृदय उनके प्रति आर्द्रित हो रहा था। उन पर और उनके व्यवहार और निष्ठावान् सेक्रेटरी आप पर

ईश्वर कृपा करे और आप दोनों की रक्षा करे। मेरा खयाल है कि आप उनके लिए सेक्रेटरी से अधिक हैं।

सेवक

मो॰ क॰ गांधी"

"प्रिय सर विलियम विन्सेन्ट,

"रविवार को मैंने आपको परेशान किया। किन्तु मैं आपके उसी उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए आपके पास आया था जिसके लिए आप अपने-आपको खपा रहे हैं। मुझे आपसे इतना ही कहना था कि अली-भाइयों के छुटकारे से फौजी भरती के काम को बड़ा वेग मिलेगा। अगर मैं ऐसा न मानता होऊँ, तो यह आशा रखना कि आप अपने समय में से मुझे एक भी मिनट दें मेरे लिए पाप होगा।

"आपने मुझसे पूछा कि क्या मैंने सरकार को एक भी रंगरूट भरती करके दिया है? मैं आपको बताता हूँ कि यह सवाल उचित नहीं था। ऐसा हो सकता है कि मनुष्य साम्राज्य की सच्ची सेवा करता हो और एक भी रंगरूट न लाये।

"मैं आशा रखता हूँ कि आप इस पत्र से नाराज नहीं होंगे किन्तु जिस मुलाकात को आपने जल्दी में गलत समझ लिया, उसकी प्रामाणिक सफाई के तौर पर इसे स्वीकार करेंगे।

सेवक

मो॰ क॰ गांधी"

उन्हीं दिनों सुना था कि रवीन्द्रनाथ टैगोर एण्ड्रूज के साथ आस्ट्रेलिया या हिन्दुस्तान के बाहर और कहीं जानेवाले हैं। समय पाया और विचार करके एण्ड्रूज कलकत्ते गये। उनके साथ कवि को निम्नलिखित पत्र भेजा :

¶ "प्रिय गुरुदेव

"एण्ड्रूज को थोड़े-बहुत समय अपने साथ रखना मुझे बहुत पसन्द होगा, फिर भी मेरा निश्चित खयाल है कि आज रात को उन्हें कलकत्ते के लिए रवाना होना ही चाहिए। मैं जानता हूँ कि आजकल आपका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता। ऐसे समय आपके पास एण्ड्रूज मौजूद रहें, तो इससे मुझे बहुत शांति रहेगी। आपको जब तक जरूरत हो, उन्हें अपने पास रखिये। हम इस समय देश में महान् परिवर्तनों के किनारे पर खड़े हैं। देश के नवजन्म के मौके पर सारे शुद्ध बल देश में मौजूद रहें तो मुझे अच्छा लगेगा। इसलिए आपको देश में ही किसी जगह आराम मिल सकता हो तो मैं आपसे और एण्ड्रूज से प्रार्थना करूँगा कि अभी आप देश में ही रहिये और समय-समय पर एण्ड्रूज की सहायता भी मुझे दिलाते रहिये। कभी-कभी उनका मार्गदर्शन मेरे लिए बड़ा कीमती साबित होता है। × × ×

सेवक
मो० क० गांधी

बारडोली को जो मुख्य पत्र लिखवाया, उसके लिए बहुतों ने कहा कि वह एक स्थायी साहित्य है। बापू ने कहा कि उसमें धर्म, सत्याग्रह का रहस्य और सभी आदर्श दे दिये गये हैं। पत्र ख़ासी की इजाज़त मिल गयी और वह प्रकाशित भी हो गया। वह निम्नलिखित है :

¶ "आप जानते हैं कि पक्का विचार करने के बाद आपको बताना मेरा फ़र्ज़ हो गया था कि २६ अप्रैल के पत्र में निर्दिष्ट कारणों से मैं युद्ध-परिषद् में उपस्थित नहीं हो सकूँगा। पर आपकी मुलाक़ात के बाद मैंने अपने मन को समझाया कि मुझे उसमें शरीक होना ही चाहिए। और किसी कारण से न सही पर आपके प्रति मेरा बहुत आदर है, इसलिए भी मुझे अवश्य भाग लेना चाहिए। शामिल न होने के कारणों में सबसे प्रबल कारण यह था कि लोकमान्य तिलक, श्रीमती बेसेंट और अली-

भाइयों को इस परिषद् में आमंत्रण नहीं था। इन्हें मैं सबसे बड़े और समर्थ लोकनेता मानता हूँ। मेरा तो अब भी यह खयाल है कि उन्हें निमंत्रण न देकर सरकार ने गंभीर भूल की है। मैं आदरपूर्वक सूचित करता हूँ कि अब जो प्रान्तीय परिषदें होनेवाली हैं, उनमें इन नेताओं को निमन्त्रण भेजकर सरकार के लिए अपनी भूल सुधार लेने की गुंजा इश है। सरकार को उनकी सलाह का लाभ प्रान्तीय परिषदों में मिल सकेगा। मेरी नम्र राय है कि आम जनता का प्रतिनिधित्व करनेवाले ऐसे प्रौढ़ नेताओं की, भले ही उनके साथ कैसा ही मतभेद क्यों न हो, कोई सरकार उपेक्षा नहीं कर सकती। साथ ही मुझे यह कहते हुए भी आनंद होता है कि परिषद् की कमेटियों में सब दलों के विचार स्वतंत्रता पूर्वक व्यक्त करने दिये गये थे। अपने लिए मैं सूचित करता हूँ कि ऊपर बताये हुए कारणों से ही, मुझे परिषद् की कमेटियों में रखकर मेरा सम्मान करने के बावजूद उनमें उपस्थित होकर मैंने अपने विचार प्रकट नहीं किये। परिषद् में भी मैं कुछ विशेष नहीं बोला। मुझे महसूस हुआ कि परिषद् के उद्देश्यों की अधिक-से-अधिक अच्छी सेवा मैं उसमें पेश हुए प्रस्ताव का केवल समर्थन करके ही कर सकूंगा। यह समर्थन मैंने मन में जरा भी गाँठ न रखकर किया है। इसी पत्र के संलग्न अलग पत्र में कुछ सूचनाएँ दे रहा हूँ। इन सूचनाओं को सरकार स्वीकार कर ले, तो मुझे आशा है कि अपने समर्थन पर मैं तुरंत अमल कर सकूँगा।

"जिस राज्य में साम्राज्य के दूसरे भागों के साथ निकट भविष्य में हम पूरी तरह हिस्सेदार बनने की आशा रखते हैं, उसे आपत्ति-काल में जरा भी आनाकानी के बिना पूरी तरह मदद देना हमारा धर्म है। किन्तु इतना मुझे स्पष्ट कर देना चाहिए कि उसीके साथ यह आशा भी लगी हुई है कि हमारी सहायता के परिणामस्वरूप हम अपने ध्येय तक जल्दी पहुँच सकेंगे। कर्तव्य का पालन करने के साथ ही उससे सम्बन्ध रखनेवाले अधि कार अपने-आप मिल जाते हैं, इस न्याय से लोगों को इतना मानने का

रूप है कि जिन सुधारों के जल्दी ही होने की आशा आपने भाषण में दिखायी गयी है, उनमें कांग्रेस और मुस्लिम लीग की मुख्य लोगों का समावेश होगा। मैं निश्चित रूप से मानता हूँ कि इस विश्वास के कारण ही परिषद् के अधिकांश सदस्य सरकार को पूरे दिल से सहयोग देने में समर्थ हुए हैं।

मैं अपने देशबन्धुओं को समझा सकूँ, तो जब तक युद्ध जारी है, तब तक कांग्रेस के सारे प्रस्ताव उससे एक ओर रखता हूँ और होमरूल या जिम्मेदार हुकूमत शब्दों का उच्चारण तक न करते हैं। तथा साम्राज्य के इस संकट के समय में सभी शक्तिशाली भारतीयों को उसकी रक्षार्थ चुपचाप कुरबान हो जाने को प्रेरित करूँ। मैं चाहता हूँ कि इतना करके ही हम साम्राज्य के सबसे बड़े और आदरणीय हिस्सेदार बन जाते हैं और रंगभेद और देशभेद तो मर ही हो जायेंगे।

'किन्तु हिन्दुस्तान के सारे शिक्षित वर्ग ने इससे कम कारगर उपाय काम में लेना तय किया है। अब यह कहना सम्भव नहीं कि शिक्षित वर्ग का आम जनता पर कोई असर नहीं है। मैं जब से दक्षिण अफ्रीका से भारत आया हूँ तभी से जनता के गहरे सम्पर्क में आता रहा हूँ। मैं आपको विश्वास के साथ बता देना चाहता हूँ कि होमरूल की आकांक्षा जनता में गहरी व्याप्त हो गयी है। कांग्रेस के पिछले अधिवेशन में मैं उपस्थित था और उस प्रस्ताव में भी मैंने भाग लिया था, जिसमें कहा गया है कि पार्लमेण्ट कानून द्वारा जो समय निश्चित करे, उसके समय के भीतर हिंदुस्तान को पूरी तरह जिम्मेदार हुकूमत दे देना चाहिए। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह बड़ा साहसी कदम है। पर उसके साथ मुझे यह भी साफ मालूम होता है कि कम-से-कम समय में होमरूल के स्पष्ट दर्शन न हुए, तो लोगों को जरा भी सन्तोष नहीं होगा। हिन्दुस्तान में ऐसे बहुत हैं, जो यह मानते हैं कि होमरूल लेने के लिए जितना त्याग किया जाय, उतना थोड़ा है। इसीके साथ वे यह समझते जितने जागृत भी हैं कि जिस साम्राज्य में वे पूरी तरह सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त करने की आशा रखते हैं, उसके लिए

कुरबानी करने को उन्हें उतना ही तैयार रहना चाहिए। इससे यह फलित होता है कि साम्राज्य को उस पर घिरे हुए खतरों से मुक्त करने के लिए हम बिना कुछ कहे-सुने पूरी तरह कुरबान हो जायें, तभी हम अपने ध्येय तक जल्दी पहुँच सकेंगे। यह सीधा-सादा सत्य स्वीकार न करना राष्ट्र की आत्महत्या करने जैसा है। हमें समझना ही चाहिए कि साम्राज्य को बचाने में हम अच्छी तरह भाग लेंगे तो इतने से ही हमारा होमरूल हमारी जेब में आ जायगा।

"इसलिए यह स्पष्ट है कि साम्राज्य के लिए जितने सैनिक दिये जा सकें, उतने हमें देने चाहिए। फिर भी आर्थिक सहायता के बारे में मैं ऐसा नहीं कह सकता। मैं लोगों की आन्तरिक अवस्था जानता हूँ और उस पर से कहता हूँ कि हिन्दुस्तान जो मदद दे चुका है, वह उसके बूते से अधिक है। यह कहते हुए मैं अपने देशबन्धुओं के बड़े बहुमत की राय व्यक्त कर रहा हूँ।

"परिषद् में मैंने और दूसरे जिन लोगों ने समर्थन किया है, उन्होंने तो मरते दम तक मदद देने का निश्चय किया ही है, किन्तु हमारी स्थिति विषम है। आज हम साम्राज्य के बराबर के हिस्सेदार नहीं हैं। हमारे बलिदानों की बुनियाद भविष्य की आशाओं पर रखी गयी है। यह आशा कैसी है यह अगर मैं साफ-साफ असंदिग्ध भाषा में न बताऊँ, तो आपके और अपने देश के प्रति बेवफा कहलाऊँगा। मैं आज सौदा नहीं करना चाहता। लेकिन आपको इतना तो जानना ही चाहिए कि हमें निराशा हुई, तो साम्राज्यसंबंधी हमारा आज तक का विश्वास एक भ्रम ही सिद्ध होगा।

"एक और बात भी कहने से मुझे नहीं चूकना चाहिए। आपने घर के झगड़े भूल जाने का कहा है। इसका अर्थ अगर यह हो कि अधिकारियों के जुल्म और दुराचार हमें बरदाश्त कर लेने चाहिए, तो यह हमारे लिए असंभव है। संगठित अत्याचार का सारी शक्ति लगा कर सामना करना मैं धर्म समझता हूँ। इसलिए आपको अफसरों को अधिकारियों से कहनी चाहिए कि वे किसी भी मनुष्य को न सतायें, लोगों

से सलाह-मशविरा कर काम करें और लोकमत का इतना आदर करें, जितना आज तक नहीं किया है। चम्पारन में सदियों से होनेवाले जुल्म का विरोध करके मैंने ब्रिटिश न्याय का सर्वोपरि-पन साबित करके दिखा दिया है। खेड़ा की जो प्रजा सरकार को गालियाँ देती थी, वह आज समझ गयी है कि जब जनता में सत्य के लिए दुःख सहने की शक्ति होती है, तब सच्ची सत्ता सरकार की नहीं, बल्कि लोगों की चलती है। आज उसमें कटुता कम हो गयी है। उसे यह अनुभव हो गया है कि जिस हुकूमत ने सविनय कानून-भंग को मान लिया वह लोकमत की सख्त उपेक्षा करनेवाली नहीं हो सकती। इसलिए मेरा यह विश्वास है कि चम्पारन और खेड़ा में मैंने जो काम किया है, वह इस युद्ध में मेरी सीधी, स्पष्ट और खास सहायता है। इस तरह का अपना काम बन्द करने के लिए अगर आप मुझसे कहें तो मैं यही मानूँगा कि आप मेरी साँस बन्द करने के लिए कहते हैं। अगर मैं शस्त्रबल के बजाय आत्मबल यानी प्रेमबल को लोकप्रिय बना देने में सफल हो जाऊँ तो मैं जानता हूँ कि हिन्दुस्तान को ऐसा बना सकूँगा, जो सारी दुनिया की कड़ी नजर हो जाने पर भी उससे लोहा ले सकता है। इसलिए कष्ट सहन करने के इस सनातन नियम को मैं अपने जीवन में गूँथने के लिए हमेशा अपनी आत्मा को कसा करूँगा और इस नियम को स्वीकार करने के लिए दूसरों को निमंत्रित करता रहूँगा। दूसरी किसी हलचल में मैं भाग लेता दिखाई दूँ तो उसका उद्देश्य भी इसी सनातन नियम की अद्वितीय श्रेष्ठता साबित करना ही है।

"अन्त में मुसलिम राज्यों के बारे में निश्चित आश्वासन देने के लिए ब्रिटिश मंत्रिमण्डल को सुझाने की आपसे प्रार्थना करता हूँ। आप जानते ही हैं कि हर मुसलमान इस विषय में चिन्तातुर है। खुद हिन्दू होकर मैं उनकी भावना के प्रति उदासीन नहीं रह सकता। उनके दुःख हमारे होने ही चाहिए। हम मुसलिम राज्यों के हकों की रक्षा करने अपने धर्मस्थानों संबंधी उनकी भावनाओं का आदर करने और हिन्दुस्तान

की होमरूल संबंधी माग को समय रहते स्वीकार करने में साम्राज्य की सुरक्षा है। यह मैं इसलिए लिख रहा हूँ कि मैं अंग्रेज जाति को चाहता हूँ और (साम्राज्य के प्रति) जो वफादारी अंग्रेजों में हो सकती है, वही वफादारी हरएक हिन्दुस्तानी में जगाना चाहता हूँ।

सेवक
मो० क० गांधी"

साथ में जो पत्र भेजा था, उसमें फौजी भरती के काम में अपनी सेवा देने के लिए सरकार से प्रार्थना की थी और दक्षिण अफ्रीका और इंग्लैंड में सेवा-दल बनाने के अपने अनुभवों को अपनी योग्यता के तौर पर पेश किया था।

१-५-१८

दिल्ली से रवाना हुए। तबीयत ठीक न होने से रातभर सोते रहे। हरिलाल को रेल में ही इस प्रकार पत्र लिखा :

"तुम्हारा पत्र मुझे दिल्ली में मिला था। तुम्हें क्या लिखूँ? तुम अपने स्वभाव के अनुसार करते हो। स्वभाव पर काबू हासिल करने में ही पुरुषार्थ है, यही धर्म है। तुम यह पुरुषार्थ करो, तो तुम्हारे सारे गुना[illegible] जायेंगे। तुम जो कहते हो कि तुमने चोरी की ही नहीं, उसे मैं मान लेता, दुनिया नहीं मानेगी। दुनिया के सामने तुम अपना [illegible] सावधान रहना। दुनिया की राय सम्हालना। तुम्हारी दुनिया तुम्हारा पेट है। अदालत में तुम्हारा न्याय हो या ना उससे डरना मत। मेरी मानो तो प्रपंच न करना। उन्हीं वकील को सब कुछ समझा देना।

तुम्हारे हाथ में हीरा था। उसे अपनी नादानी और अधीर प्रकृति से तुम गंवा बैठे हो। तुम बच्चे नहीं हो। तुममें संसार का ज्ञान कम नहीं भरा है। अगर जी भर गया हो तो पीछे लौट आना। हिम्मत न हारना। तुम सच्चे हो, तो सच पर से विश्वास न खोना। सच ही परमेश्वर है। गुण कम नहीं, दोष बहुत हैं। तुम्हारा जीवन विपरीत(?)
१

ब्रिटिश सरकार के लिए लड़ी की जाती है, सरकार का सामना करने में समर्थ होगी। हम सरकार को मदद दें या न दें, सरकार तो देश में से पाँच लाख आदमी भरती करेगी ही। तो फिर हम दूरदर्शिता से काम लेकर उसे अपनी पसन्द की सेना क्यों न दें! मैं जानता हूँ कि वर्तमान स्थिति सच्ची परीक्षा की स्थिति है। इस पर से मेरा खयाल है कि फौजी भरती का सारा काम हमारे अपने हाथ में हो तो अच्छा है। ऐसा करके हम उन दुःखों और तकलीफों से जो हम सुन रहे हैं, अपने नौजवानों को बचा सकेंगे। जैसा कि शास्त्रियार ने कहा है, यह बहुत जरूरी है कि हमारी तरफ से बहुत ही विचारपूर्वक कदम उठना चाहिए। बल्कि मैं तो इससे भी आगे बढ़ता हूँ। मेरा यह खयाल है कि परिस्थिति का निर्णय हिन्दुस्तान ही करेगा। अगर हिन्दुस्तान खतम हो जाय तो साम्राज्य का भी नाश हो जायगा। साम्राज्य का नाश होने की परवाह शायद हम न करें पर अपने देश का नाश होने की परवाह तो हमें करनी ही चाहिए। हमारे नेताओं को किसानों से कहना चाहिए कि अपने हल-जुए छोड़कर लड़ाई में आओ। यह समय लूले-लंगड़े प्रस्ताव करने का नहीं है। मेरी सूचना तो आपसे यह है कि मेरे जैसी भावना आपकी हो जाय तो आपको फौजी भरती करनेवाली समिति बनाने का निर्णय करना चाहिए। इस समिति के काम शुरू करने से पहले आप सरकार से कह सकते हैं कि वह हमारी सिफारिशों के अनुसार परिस्थिति को अनुकूल बनाये। काम करने का यही तरीका हो सकता है। जब कि हमारी परीक्षा हो रही है और होमरूलवाले कसौटी पर चढ़ रहे हैं, तब हमें गम्भीर और उत्साही बनना चाहिए। अभी हम ऐसे उत्साही मालूम नहीं होते। मेरे दिल में जो खलबली मच रही है वह मैं आपको बता रहा हूँ। अगर हम समझ लें कि इस समय हम अपना देश खोये बैठे हैं और इस संकट के समय सही कदम नहीं उठायेंगे तो हमें पराधीनता में ही रहना पड़ेगा और हमारे इतिहास की पुनरावृत्ति हमारे ही हाथों होगी। अतः हमें गंभीर बनना चाहिए और परिस्थिति अपने अनुकूल बना लेने की भरसक कोशिश करनी चाहिए।

दूसरा प्रस्ताव खेड़ा के बारे में था। सभी ने बापूजी से अपना मन चाहा प्रस्ताव पास करने को कह दिया। प्रस्ताव तैयार हुआ और पास भी हो गया। तब शास्त्रियार ने कानूनी प्रश्न (पॉइंट ऑफ आर्डर) उठाया और कहा कि नोटिस के बिना ऐसे महत्त्व के प्रस्ताव पास नहीं हो सकते। सी पी रामस्वामी ने स्वीकार किया कि नियम की रू से शास्त्रियारजी का एतराज ठीक है। किन्तु सात दिन का नोटिस नहीं दिया जा सका, इसकी सफाई देते हुए कहा कि प्रस्ताव वे खुद पेश करते हैं। बापूजी ने कहा कि इन परिस्थितियों में मैं प्रस्ताव वापस ले लेना चाहता हूँ। बार बार कहा पर किसीने नहीं माना। तब बोल उठे कि प्रस्ताव हमें मंजूर है। शास्त्रियार ने बड़े दुःख से नम्रता के साथ उठकर कहा : "मुझे अफसोस है कि मैं प्रस्ताव को अपनी सम्मति नहीं दे सकता।" रात को घर आने पर बापू बोले कि शास्त्रियार ने तो आज हद कर दी। ऐसा मालूम हुआ, जैसे उनका कलेजा कट रहा हो। किन्तु वे तो पवित्र मनुष्य हैं, इसलिए अपने पवित्र ढंग से उन्होंने विरोध किया। रात को उन्हें पत्र लिखा :

¶ "आपकी 'ना' का मेरे मन में सच्चा मूल्य था। सबकी 'हाँ' की कोई कीमत नहीं थी।"

अमृतलाल ठक्कर कहते थे कि शास्त्रियार ने भी पत्र पढ़कर कहा कि 'सिर्फ गांधी ही ऐसा पत्र लिख सकता है।' १६ आना शुद्ध प्रामाणिकता अपने में ही होना काफी नहीं है, बल्कि उसकी ही प्रामाणिकता औरों में समझकर खुश होना चाहिए, इसका यह एक सुन्दर दृष्टान्त है।

वाइसराय की स्वीकृति आ गयी। पत्र सब जगह छपने के लिए दे आया। मैं छत पर सो रहा था वहाँ से उठाकर मुझे पलँग पर सुलाया। बड़ौदा स्टेशन पर दिखाई गयी ममता पहली थी, यह दूसरी

४-५-१८

पत्र का अनुवाद डेढ़ घंटे में लिखवाया। प्रेस-नोट का उत्तर० सुधारा। सब जगह भेज दिया। रात को बीजापुर के लिए रवाना हुए।

५-५-१८

दोपहर को बीजापुर पहुँचे। हुबली से बीजापुर आते हुए रेल में अहमदनगर के कुछ वकील अपने जिले में एक आस्ट्रेलियन या अमेरिकन कम्पनी के लिए सरकार द्वारा जमीन प्राप्त कर लेने के इरादे से पैदा होनेवाले असंतोष की चर्चा करने लगे। सरकार को दी हुई अपनी अर्जी और दूसरा पत्र-व्यवहार दिखाया और परिषद् में पास करने के लिए सोचा हुआ प्रस्ताव भी बताया। इस मामले में मूल भूल यह है कि किसान अर्जें करते हैं और ये करने न चाहिए, यह भुलाया जा रहा है। बापू ने उनसे यह प्रश्न किया कि क्या आपको ऐसा नहीं लगता? मुलाकातियों को नयी दिशा सूझी। प्रस्ताव पास करने के बजाय लोगों को उनके हक समझाये जायें और लोगों को सचमुच ऐसा लगे कि उनके हक मारे जा रहे हैं, तभी उनसे अर्जी दिलवायी जाय। यह सुझाव दिया कि उनमें साफ लिखा जाय कि हम अपनी जमीन कभी नहीं छोड़ेंगे। या तो हमें कैद करो या हमारी जमीन हमारे पास रहने दो। यह करने से पहले —से मिलकर उनसे समझ लिया जाय कि उन्हें अपनी स्थिति के बारे में क्या कहना है। उनका जवाब सुन लिया जाय और बाद में उनका मुकाबला किया जाय।

एक सज्जन 'मराठा' के [illegible]—होमरूल डेपुटेशन के पासपोर्ट रद्द हो जाने के विरुद्ध सभा करने के बारे में बापू से बात करने आये।

---

* यहाँ उस [illegible] का उल्लेख है जो [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] १८ को [illegible] हुआ था। [illegible] के लिए देखिये, परिशिष्ट [illegible]

उन्हें समझाया कि सत्याग्रह करनेवाले बहुत पक्के होने चाहिए। सत्याग्रह इस ढंग का होना चाहिए कि बड़े पैमाने पर हो सके। जब तक विरोधी का कार्य पाशविक, अत्याचारपूर्ण, अनीतिमय और अन्यायपूर्ण न हो, तब तक सत्याग्रह का सवाल नहीं उठ सकता।

नौ बजे विषय-निर्वाचिनी की बैठक हुई। उसमें भरती के बारे में भी बातें होने लगीं। बापूजी ने दूसरे दिन खिलाफत-परिषद् के बारे में अपनी स्थिति बयान करना मंजूर किया। मंजूर करते समय ही कहा कि ‘‘अगर मुझे पूरा अधिकार दे दिया जाय, तो मैं एक ही सीधा-सादा प्रस्ताव पेश करूँ। उसमें किसी भी किस्म की शर्त रखी गयी, तो मैं अपनी पूरी ताकत के साथ उसका विरोध करूँगा।

रात को साढ़े नौ बजे के बाद अछूत-परिषद् हुई। श्री शिन्दे बापूजी को बड़े ही आग्रह के साथ बुला लाये थे। अनेक प्रस्ताव पास होने के बाद बहुत रात गये लगभग बारह बजे बापूजी से एक प्रस्ताव पेश करने के लिए कहा गया। प्रस्ताव इस तरह का था कि यह परिषद् कांग्रेस-लीग योजना का समर्थन करती है और यह सिफारिश करती है कि सरकार अछूतों का भी स्थान स्वीकार करेगी। प्रस्ताव पेश करने से पहले सभा के सामने देखकर बापू ने पूछा : ‘इस सभा में कितने अछूत हैं ?’ दूसरी बार पूछा, तीसरी बार पूछा; किसीने उत्तर नहीं दिया। अन्त में किसीने कहा कि एक भी अछूत नहीं है। यह सुनकर बापूजी हिन्दी में बोले :

रात के बारह-बारह बजे तक हम यहाँ क्या करते हैं ? जैसे तोता नारायण, ‘नारायण’ रटता है, वही हालत हमारी है। मैं भाई शिन्दे से कहता हूँ कि ऐसी परिषदें करना वे छोड़ दें और किसी ठोस काम में ही लगे रहें। अस्पृश्यता के पाप से मुक्ति हृदय-शुद्धि से ही मिल सकती है। हार्दिक भावना से ही काम होता है। कृत्रिमता से हमारा काम नहीं होता। अस्पृश्यता मिटाने के लिए हम अनेक प्रस्ताव पास करते हैं, किन्तु उनका कोई परिणाम नहीं होता। एक आदमी ने सर्वसम्मति से प्रस्ताव न

पास होने के लिए कहा कि यह परिषद् अव्यावहारिक है। मैं भी कहता हूँ कि यह परिषद् अव्यावहारिक है।

जब मैंने कांग्रेस-लीग योजना को मंजूर करनेवाला प्रस्ताव पढ़ा, तब मेरी यह धारणा थी कि उसका समर्थन कोई अछूत करेगा। किन्तु यहाँ अछूत तो कोई है ही नहीं। तब इस प्रस्ताव को पास करने से क्या फायदा? इस प्रस्ताव का भविष्य पर क्या असर होगा? मैं यह प्रस्ताव पेश नहीं कर सकता। यहाँ इस प्रस्ताव को पास करने का हमें कुछ भी अधिकार नहीं है। इसलिए यहाँ हम यह प्रस्ताव नहीं ला सकते। हम अपनी कृत्रिमता छोड़कर सरल बन जायँ, यही काफी है। हम वर्णाश्रम का पालन नहीं करते। ब्राह्मणों ने ब्राह्मण का धर्म छोड़ दिया है क्षत्रिय ने क्षत्रिय का कर्म त्याग दिया है, वैश्यों ने वैश्य-धर्म को तिलांजलि दे दी है और जो चीज हमारे धर्म में नहीं है उसे हम पकड़े हुए हैं। हम स्वराज्य के योग्य नहीं हैं।

जो स्वराज्य माँगते हैं वे अछूतों के लिए क्या करेंगे, यह सवाल हमें लॉर्ड सिडनहाम जैसे भाई जरूर पूछेंगे और उन्हें उत्तर देते समय हमें शर्मिन्दा होना पड़ेगा। जो स्वराज्य माँग रहा हो उसे दूसरों को स्वराज्य देना चाहिए। जो न्याय चाहता है उसे न्याय करना चाहिए यह कानून का सूत्र है। मैं आप सबसे कहता हूँ कि यह खेल छोड़कर इस मण्डप में सच्चे हृदय से प्रार्थना कर लीजिये, जिससे हमारे पाप और हमारी कठोरता नष्ट हो जाय।

१-५-१८

सबको पता था कि बापू हिन्दी-परिषद् के बारे में अपनी राय जाहिर करेंगे इसलिए सब सुनने को उत्सुक थे। बापूजी इस प्रकार बोले :

भाई, मैंने एक गम्भीर भूल की है। एक मित्र ने आकर मुझसे कहा कि बैंगलुर में दो दल हैं और उनमें मैं स्वयं तरफदारी पेश कर रहा हूँ। मुझे यहाँ हालत का पता नहीं था। यहाँ मैं झगड़े के लिए सलाह देने या

दो पक्षों की भावनाओं को समझने नहीं आया। लोकमान्य तिलक को मुझे और आपको रास्ता दिखाने के लिए यहाँ आना चाहिए था। राजनीति में मैं तीन वर्ष का बच्चा हूँ। मुझे तो अभी सब कुछ देखना, सोचना और सीखना है। इसलिए मैंने जल्दबाजी अपनायी हो, तो उसके लिए मैं आपसे माफी माँगता हूँ। सार्वजनिक सभा में मनुष्य अपने विचार खुले दिल से प्रकट करे, तो उस पर दलबन्दी पैदा करने के विचार का आरोप नहीं लगाया जा सकता। मैंने जो कार्यक्रम बना रखा है, उस पर मेरा खुद अमल करने का इरादा है। इसलिए हिन्दुस्तान के अलग-अलग भागों में कैसी भावना फैली हुई है यह जान लेने के लिए प्रतीक्षा करने की जरूरत नहीं है। किन्तु आप सब यहाँ पहले से बने हुए विचार लेकर आये हैं, इसलिए मैं अपनी स्थिति की चर्चा नहीं कर सकता। आपके साथ विचारों का लेन-देन करने आपकी भावनाएँ समझने और यह जानने में कि आपने किस उद्देश्य से निर्णय कर रखे हैं और आपके मन की तह में क्या चीज काम कर रही है, मुझे खुशी होगी। लेकिन इसके लिए जब वातावरण और शान्त होगा, तभी आऊँगा। और जब हम प्रस्तावों से बँध नहीं गये होंगे तब आपके हृदय छूने की कोशिश करूँगा। मेरे खयाल से भी केलकर ने बिलकुल सही बात कही है। इस मंजिल पर तो हमें कांग्रेस-कमेटी का प्रस्ताव स्वीकार करना चाहिए।

इसके बाद गिरमिट प्रथा रद करने के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव पेश किया और दोपहर को बीजापुर से चल दिये। गाड़ी में सोये, थकान बहुत हो गयी थी।

७-५ १८

सुबह बम्बई। दिन लोगों से मिलने में बिताया। शंकरलालभाई के यहाँ प्रेम भरा भोजन किया। रात में रवाना हुए। यहाँ से स्वामी सत्यदेव के सम्बन्ध में बिहार सरकार को एक पत्र लिखा था उसके उत्तर में बिहार

सरकार का एक सुन्दर पत्र आज की डाक में मिला। स्वामी को कैसे दफन किया गया, उनके कौनसे मामले आपत्तिजनक थे और आगे क्या होगा इसका बयान था और यह भी लिखा था कि स्वामीजी पर आप अंकुश रखते हैं, इसके लिए लेफ्टिनेण्ट गवर्नर आपके आभारी हैं।

८-२-१८

नडियाद। बातें कीं। पत्र लिखे।

मैंने बापू को एक पत्र लिखकर वल्लभभाई के साथ भेजा। उसका वल्लभभाई के हाथों ही उत्तर।

९-२-१८

"भाईश्री महादेव

"जो बात मैंने तुम पर अपने अत्यंत विश्वास के कारण कही, मुझे सपने में भी खयाल न था कि तुम उसका उलटा ही अर्थ करोगे। तुम मुझमें इतने अधिक घुल गये हो, इसके कारण मैं समझता था कि चंपारन जाने में तुम्हें आघात पहुँचेगा। किन्तु यह तुम्हारी कल्पना में भी कैसे आ सका कि तुम अपूर्ण सिद्ध हुए, इसलिए तुम्हें फेंक देने की मैंने ऐसी युक्ति ढूँढ़ी! मैंने तुम्हें ऐसा माना कि तुम्हीं मेरी आशा पूरी कर सकते हो और चंपारन तुम्हारा। मैंने यह माना है कि बड़हरवा का आश्रम दुर्गा के बूते से बाहर का नहीं। भले ही यह अन्दाज गलत हो। अभी तो तुम्हारी शान्ति के लिए इतना ही कहता हूँ कि तुम्हारी की हुई कल्पना सारी गलत है। मेरी सूचना का कारण यही है कि तुम दोनों की शक्ति के लिए मेरे मन में आदर है। तुम्हारी मदद के बिना मुझे असुविधा होगी, इसकी बात मैं पचवीभाई और देवदास दोनों के साथ कर चुका था। तुमने ऐसी स्थिति बना रखी है कि तुम्हारी जगह भरना लगभग असंभव है। पोलाक को लिखे हुए वाक्य सच ही हैं। तुमने मुझे निराश नहीं किया। तुम्हें मैंने अपने राजनैतिक कार्य के लिए, कुशलता के कारण और तुम्हारे चरित्र के

कारण पसन्द किया है। तुमने मुझे निराश नहीं किया। इसके सिवा यह बात भी है कि तुम मुझे अत्यंत प्रेम से बनायी हुई खिचड़ी खिला सकते हो। शेष मिलने पर।"

१०-५ १८

रात को अहमदाबाद आये।

११-५ १८

सवेरे मेरे मूर्खतापूर्ण पत्र पर मारपट्टा। मुझे खयाल ही न था कि तुम ऐसा अनर्थ करोगे। तुमने मेरे साथ बड़ा अन्याय किया। मैं हिन्दुस्तान में सबसे निर्भय मनुष्य माना जाता हूँ। उसे तुमने कायर बना दिया। मैं यो बात तुम्हें सीधी तरह नहीं कह सकता वह तुमसे टेढ़े ढंग से कही। तुम इतना भी नहीं समझ सके कि तुम्हें खोने में मुझे जो त्याग करना पड़ेगा वह त्याग मैं अहमदाबाद की पाठशाला के लिए करने को तैयार हुआ हूँ। मुझे विश्वास था कि मैं तुम्हें जहाँ डाल दूँगा, वहीं तुम काम पर लगाओगे। यह योग्यता समझकर तुम्हें सूचना दी थी। तुमने अपने पत्र से साबित कर दिया कि तुममें यह योग्यता नहीं है।

मैंने कहा: जब यह कहा कि नरहरि को नहीं भेजा जा सकता और मुझे भेजा जा सकता है, तब मुझे खयाल हुआ कि मेरी जरूरत बहुत कम है।

बापू: यह बात सच है। वहाँ की पाठशाला के लिए नरहरि की जरूरत है। वहाँ से उसे कैसे भेजा जाय? मैं अपने सेक्रेटरी के बिना काम नहीं चला सकता, सो बात नहीं है। मुझे अड़चन होगी मगर मैं काम चला सकता हूँ। तुम्हें दिया हुआ काम पूरा नहीं कर सकता, किन्तु अपना काम तो मैं अपने-आप चला सकता हूँ। इतना ही है कि तुम्हारे होने पर मैं जितना करूँ, उससे दुगुना करूँगा। यह त्याग करने को मैं तैयार हो गया था।

दोपहर को चिट्ठियाँ लिखीं। शाम को शहर में गये।

१३-५ १८

ईंडाकुंआ में सभा। ईंडाकुंआ से मसालाला अहमदाबाद गये। साथ में दुर्गा और बा भी थीं। रात को दुर्गादास अडवानी आये।

१४-५ १८

कठलाल में हम मरहरि के यहाँ ठहरे। बापू को सख्त लू लग गयी थी। सारे दिन गीले कपड़े में सोते रहे।

१५ ५ १८

ईंडाकुंआ के भाषण की रिपोर्ट मैंने दिखाये बिना 'क्रॉनिकल' को भेज दी, इससे बड़ा नाराज हुए। लॉकवाला की एक खराब रिपोर्ट देखी, इसलिए। आज की डाक में कुछ महत्त्व के पत्र लिखे :

डॉ॰ मेहता को :

'खेड़ा की लड़ाई के बारे में क्या लिखूँ। यह लड़ाई बड़ी जबरदस्त है। दो-तीन हजार रुपये के सफर वगैरह के खर्च से यह लड़ाई लड़ी जा सकती है, यह किसीके ध्यान में आ ही नहीं सकता। पचीस हजार रुपये इकट्ठे हुए होंगे, सो वापस दे दिये गये; और बहुत जगहों से रुपया भेजने को कहा जाता है, उन्हें मुझे इनकार लिखना पड़ता है। अगर रुपया ले लूँ तो लड़ाई बिगड़ जाय अनीति घुस जाय और लोगों की अवनति हो। रुपया न लेकर मैं इन सब बातों से बच गया हूँ और लड़ाई को शुद्ध रख सका हूँ। इस लड़ाई को सारा हिन्दुस्तान देखकर समझ सका है। शास्त्रियार नहीं समझे, इसका मुझे रंज रहा है। कालान्तर में समझ जायेंगे। वे स्वयं पवित्र आत्मा हैं, इसलिए निश्चिन्त हूँ। लड़ाई के औचित्य के बारे में मुझे कोई शंका ही नहीं है।

दामोदरदास का पत्र : बिना शर्त सहयोग के प्रस्ताव के विरुद्ध। बिना माँगे माँ भी नहीं परोसती, सरकार से माँगना ही चाहिए, इस आशय का।

आपका वाइसराय को लिखा गया पत्र तीन बार पढ़ने के बाद भी भीतरी पॉलिसी के लिए ही लिखा गया मालूम होता है।

उन्हें जवाब :

"आपका पत्र मिला। मुझे इतने खुले दिल से लिखा, इसके लिए कृतज्ञ हुआ। मेरी लिखावट में पॉलिसी की गंध तक नहीं है। मैंने सच्चा रास्ता वही लिखा है, जो मैं मानता हूँ। आपने मेरे विचारों का शुद्ध सारांश दिया है। मैं अवश्य मानता हूँ कि हम चुपचाप लाखों की आहुति दे दें, तो हमारे लिए आज ही स्वराज्य है। सो कैसे है, यह मेरा पत्र पढ़कर आप न समझ सके हों, तो मैं इस पत्र में तो समझा ही नहीं सकता। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि जब तक समझ में न आये तब तक वह पत्र पढ़ें और एक-एक शब्द पर विचार करें। वह प्रयत्न व्यर्थ नहीं होगा। वह पत्र मैंने जल्दी में नहीं लिखा। वह बहुत प्रयत्न के साथ, शुद्ध भाव से और देश के भले के लिए ही लिखा गया है। इससे भी पूरी तरह नहीं समझा सका या दो अर्थ निकलते हों, तो मैं अपनी तपस्या में इतनी कमी समझता हूँ। अगर देश मेरी योजना समझ जाय और उस पर अमल करे तो मेरा विश्वास है कि उसमें स्वराज्य का और दूसरी सैकड़ों बातों का समावेश हो जाता है। स्वराज्य दे दो, बाद में लेंगे यह कहना मुझे तो स्वराज्य का तत्त्व न समझने के बराबर लगता है। प्रतिनिधि की हैसियत से मैं इसे अपना फर्ज नहीं समझता कि वाइसराय को जितने पत्र लिखूँ, वे सब जनता के सामने रखने को बँधा हुआ हूँ। अपने जीवन में प्रतिनिधि के रूप में मैंने जो कार्य किये हैं, उनमें से ज्यादातर और मेरे खयाल से कीमती मालूम होनेवाले कार्य तो गुप्त रहे हैं और रहेंगे। वाइसराय साहब के नाम लिखा गया मेरा पहला पत्र केवल उन्हीं के लिए था। मैंने अपने कुछ उद्गार उन्हें एक सद्गृहस्थ समझकर मित्र भाव से उनके सामने उँडेल दिये। उन्हें मैं जनता के सामने हरगिज नहीं रखूँगा। उसमें रहस्यमात्र की गन्ध भी नहीं, किन्तु उसकी भाषा जनता के सामने रखने से अनर्थ हो सकता है। उसके छाप की पत्र-

भीख जितनी कही जा सकती है, उतनी मैं कह चुका हूँ। मेरा दूसरा पत्र जो कुछ मैं करना चाहता हूँ उसके बारे में है और पहले की तुलना में वह कुछ भी नहीं।"

हनुमन्तराव का पत्र। शास्त्रियार के विद्वत्-परिषद् के भाषण के संबंध में 'हिन्दू' की कड़ी आलोचना का उत्तर देने की हनुमन्तराव की प्रार्थना। 'हिन्दू' की आलोचना का मुद्दा यह था कि शास्त्रियार का भाषण कोई अच्छा भाषण नहीं था और शास्त्रियार को हम देश का प्रतिनिधि नहीं मानते। उसे लिखा :

भा० "श्री शास्त्रियार के भाषण पर 'हिन्दू' की आलोचना निन्दनीय है, और मेरे खयाल से उस पर ध्यान न देना ही उसका सबसे अच्छा जवाब है। कस्तूरी आयंगार ऐसे आदमी हैं, जिन्हें दलील या न्याय-बुद्धि की अपील से कायल नहीं किया जा सकता। उनकी अपनी कल्पनाएँ हैं। और उनसे वे इतनी दृढ़ता से चिपके रहते हैं, जो शायद ही किसी और मनुष्य में पायी जाती होगी। जो शास्त्रियार को जानते हैं, उन पर 'हिन्दू'-की आलोचनाओं का कोई असर नहीं होगा। और जो कस्तूरी आयंगार के शब्द को वेदवाक्य मानते हैं, वे और किसीकी बात नहीं सुनेंगे। हमें यह विश्वास रखना चाहिए कि शास्त्रियार अपने उच्च चरित्र और विद्वत्ता के कारण कट्टर-से-कट्टर दुश्मन के सामने खड़े रह सकते हैं। मेरा खयाल है कि जब कोई मनुष्य कसौटी पर खरा न उतर सके, तब भी शास्त्रियार अपने-आपके बारे में ठीक-ठीक हिसाब दे सकते हैं। मैं समझता हूँ, वे इस बात को जानते हैं और इसलिए बिलकुल निश्चिन्त रहते हैं। इसलिए कस्तूरी आयंगार या और किसीके भी मनमाने हमलों के लिए मुझे या तुम्हें चिन्तित होने की जरूरत नहीं। करने की बात तो यह है कि हम सब मिलकर उन्हें अपने शरीर की सँभाल रखने को मजबूर करें। मैं मानता हूँ कि उनका स्वास्थ्य ऐसा नहीं है, जो सुधर न सके।

सेवक

मोहनदास करमचन्द गांधी"

रात को गुजरात सभा की साधारण बैठक हुई। मैं नहीं जा सका। बिना शर्त सहयोग का प्रस्ताव पास हुआ।

रात को आकर खाँडवाला को पकड़ा। रिपोर्टिंग पर कुछ शिक्षाप्रद उद्गार :

क्या इसी तरह से रिपोर्ट भेजी जाती है ? आप क्या किया करते हैं ? आपको वक्त तो बहुत मिलता है। रिपोर्ट तो ऐसी होती है कि एक दिन की रिपोर्ट का दूसरे दिन की रिपोर्ट के साथ संबंध, दूसरे दिन की रिपोर्ट का तीसरे दिन की रिपोर्ट के साथ संबंध और सारी पढ़ जायें, तो उससे पूरा इतिहास बन जाय। मैं नाम भूल गया, परन्तु बहुत करके उसका नाम रसल था। उसने पेकिंग की चढ़ाई की रिपोर्ट में ऐसा हूबहू चित्र खींचा था कि सब लोग चकित हो गये। ऐडविन आर्नोल्ड ने 'आपन बाइ लैण्ड एण्ड सी' शीर्षक से जो पत्र लिखे हैं, वे भी उतने ही सुन्दर हैं। यह मानने का कोई कारण नहीं है कि तुम रसल या आर्नोल्ड नहीं बन सकते। वे लोग कुछ शुरू से ऐसी शक्ति लेकर नहीं आये थे। प्रयत्न से ही बने थे। वास्तव में तो आपको कल ऐसा पत्र लिखना चाहिए कि :

'मुझे अफसोस है कि मैं एक रद्दी रिपोर्ट से गुमराह हो गया और आपको पत्र लिखा, जिससे आपको इतना अतिशयोक्तिपूर्ण शीर्षक लगाने की प्रेरणा हुई कि 'सरकार और प्रजा के बीच की खाई बढ़ती जा रही है'।"

१६-६-'१८

दूसरे दिन इसी तरह का मसविदा सुबह में तैयार कर लिया।

प्रातःकाल ही नड़ियाद आ पहुँचे। वरिसर गाँव के लिए रवाना हुए। वहाँ अद्भुत सभा हुई। दो हजार पुरुषों और पाँच सौ स्त्रियों की उपस्थिति थी। अद्भुत स्वागत-सत्कार और अद्भुत भाषण। हम गैरहाजिर थे। यह निश्चित है कि जब भी बेवकूफी करते हैं तब निश्चय ही कोई अच्छी चीज खो बैठते हैं।

१७-५ १८

अहमदाबाद। चम्पारन के लिए रात की गाड़ी से रवाना हुए। रात को स्टेशन पर मैं और दुर्गा मिले। दुर्गा नवसारी गयी। रात रेल में।

१८-५ १८

रेल में। बजाना माँगकर दो पत्र स्याही से लिखे। एक मैफी को था : "मुझे पूरा विश्वास है कि २९ तारीख के पत्र में की गयी मेरी प्रार्थना मंजूर की जायगी। फौजी भरती की तैयारियों में मैं पूरी तरह जुट गया हूँ। किन्तु आपका जवाब आये बिना काम शुरू नहीं करूँगा।"

मगनलालभाई को प्रेम के रहस्य पर पत्र लिखा। प्रतिलिपि न रह सकी।

१९ ५ १८

रेल में। मालवीयजी इलाहाबाद में मिले। मुझ पर पानी का बड़ा उँडेलवाकर जबरदस्ती नहलवाया। गाड़ी में बैठने के बाद मुझसे पूछा : "ठंडी में पानी डलवाया ?" मुझे खयाल नहीं था। "तुम्हें ऐसी बातें भी जाननी पड़ती हैं ? तुम्हें जानना ही चाहिए कि मुसाफिरों को क्या-क्या चाहिए। जब यहाँ मनुष्य सब कुछ करने को तैयार रहते हैं, तो तुम्हें इतना तो करा ही लेना चाहिए था। मैं बाहर जाऊँ तब तुम्हें ऐसी बातें जरूर सँभाल लेनी चाहिए। यह सब तुम्हें पहले ही सीख लेना चाहिए।" मैं चुप रहा। रात को बाँकीपुर पहुँचे।

२०-५ १८

दूसरे दिन मोतीहारी के लिए रवाना हुए। ट्रेन पर देर हो जाने के कारण रास्ते में स्टीमर पर चढ़ते ही भाषण सुनना पड़ा। 'सुबह पाँच बजे बाद तुमने क्या किया ?' रात में नींद ली, मोतीहारी साढ़े तीन बजे

पहुँचे। प्रजा का शोरगुल, भव्य स्वागत। शाम को खूब बातें। स्वामीजी के साथ बातें। स्वामी का मिजाज बिलकुल बदल गया था। बापूजी के लिए उन्होंने अपूर्व आदर और भक्ति प्रदर्शित की। मेरे प्रति पहले की उपेक्षा की बजाय अत्यन्त आदर।

२१-५ १८

राजेन्द्रबाबू पटना से आये। उनके सामने गोरखबाबू के साथ बातें हुईं। हेकॉक से मिले। हेकॉक ने मुलाकात में कहा कि मेरे खयाल से आप चम्पारन का अपना काम समेट लेने के लिए आये हैं। उसे जवाब दिया :

"वह तब मेरी मौत के साथ समेटा जायगा।"

यह भी कह आये कि मैं फौजी भरती के लिए भी विशेष काफी प्रयत्न करनेवाला हूँ। दोपहर को स्वामीजी को उपवास और अहमदाबाद की लड़ाई का रहस्य समझाया। मैंने दिल्ली की कथा कही। रात को राजेन्द्रबाबू ने अपना हृदय मेरे सामने उँडेल दिया। रात को दो बजे भीतीहरवा के लिए रवाना हुए।

२९-५ १८

भीतीहरवा पहुँचे। पहले दिन डॉक्टर देव को पत्र लिखा था। उसमें उन्होंने इस बारे में लिखा था कि उन्होंने थोड़े ही दिनों में पाठशाला का मकान बना दिया : "आपके पराक्रम की बात सुन रहा हूँ।" सबेरे पहुँचे। खूब बातें हुईं। मकान देखकर बहुत खुश हो गये। दोपहर को बच्चों के साथ बातचीत। उनके दिल में यह बैठाने की कोशिश की कि "अच्छा होने के लिए शरीर, दिल और कपड़े साफ रखने चाहिए। रामायण में से भरतजी के दो छन्द बोले और बच्चों को समझाने के लिए कहा।

सियाराम प्रेम पियूष पूरन
होत जनमें न भरत को।
मुनिमन अगम यम नियम
शम दम विषम व्रत आचरत को।
दुःख दाह दारिद दम्भ दूषण
सुजस मिस अपहरत को।
कलिकाल तुलसी से शठहिं
हठि राम सन्मुख करत को।

यह समझाया कि पाठशाला का इतिहास क्या है। स्वार्थत्यागी और फकीर होने पर भी ऐसे गुरु के सामने बन जाना कि मजदूरी करने में हिचकिचाहट न हो—यह उपदेश।

रात में मुझसे कहा कि यह खण्ड भव्य है तुमने अच्छी तरह पढ़ कर देखा है? अयोध्याकाण्ड पढ़ने पर मुझे हमेशा आँसू आते हैं।

केन्द्रीय कार्यालय की बातें हुईं। "मोतीहारी में तो हमारा मकान नहीं है, परन्तु जमीन भी हमारी और मकान भी हमारा होना चाहिए। केथीड्रल का तुम्हें पता है? केथीड्रल जैसा मकान होना चाहिए, जिसमें प्रतिवर्ष वृद्धि होती रहे। एक काम के लिए अमुक भाग, दूसरे काम के लिए नया और तीसरे काम के लिए तीसरा इस प्रकार भाग बढ़ते ही रहते हैं। जैसे वेस्ट मिन्स्टर एबी महान् आल्फ्रेड राजा के समय का है और आज तक उसके रोज और विभाग बढ़ते रहते हैं वैसे ही बढ़ते रहने चाहिए। राजेन्द्रबाबू या ब्रिजकिशोर बाबू दोनों में से एक को रहने के लिए तैयार होना चाहिए।" गोरख बाबू से कहा कि जमीन लेने का आपको 'व्रत' कर लेना चाहिए कि इस महीने के भीतर जमीन लेनी ही है। मैं हँसा, तो बापू भी हँसकर कहते हैं कि "मेरे तो सब काम ऐसे ही हैं।" मुझे खेद हुआ कि दफ्तर के लिए भी जहाँ किराये की मुश्किल पड़ती है, वहाँ अपनी जमीन और

अपना मकान होने की बात ही क्या ! फिर भी मैं ही 'पोच' ठहरा। रात को बतिया पहुँचे।

२३-५-१८

बेतिया से दोपहर को मोतीहारी आये। डाक में एण्ड्रूज के दो लम्बे पत्र विलसन की गिरफ्तारी के बारे में थे। उनके प्रयत्न असफल हुए और इसलिए दिल दुःखी था।

"पिछले कुछ वर्षों में मुझे और बड़ी-से-बड़ी निराशाएँ हुई हों, तो उनमें से यह एक है। मैं वाइसराय के पास गया। उन्होंने मुझे साफ इनकार कर दिया। वे किसी तरह की जाँच करना नहीं चाहते थे।

"मैं मेस्टन से मिला। उन्होंने एकदम आपकी बातें शुरू कर दीं और आपके पत्र का क्या जवाब दिया जाय इस विषय में अपनी कठिनाइयाँ बतलायीं। उसने कहा कि ये सब मामले प्रान्तीय हैं और उसने लार्ड विलिंग्डन को लिखा है, वगैरह

"मैंने कहा कि मैं बंगाल के कितने ही नेताओं से मिला था और मैं मानता हूँ कि गांधी को वहाँ बुलाने के लिए वे बहुत इच्छुक हैं। परन्तु उसने कहा कि आपके साथ काम करना बहुत कठिन है। उसे भय है कि कोई न कोई बात ऐसी फूट निकलेगी और यह सहयोग टूट जायगा। मुझे आपसे यह कहने की जरूरत नहीं कि मैं एकदम भड़क गया और मैंने आपका बचाव किया। मेरा खयाल है कि मैं बहुत शान्ति और अच्छे ढंग से बोला। इन बातों से मुझे यह पता चला कि गुत्थी कहाँ है। उसने खेड़ा का उदाहरण दिया और इस बात पर हँसा कि आप उसे युद्ध-धर्म कहते हैं। मैं उसके साथ फिर झगड़ने को तैयार हुआ और सारी बात उसे समझायी। जब मैंने लार्ड विलिंग्डन की स्थिति उसे बतायी, तब वह जरूर कुछ हिला। लेकिन अन्ततः उसने कहा कि यह सब तो ठीक है परन्तु मैं इतना कहता हूँ कि मैं कलेक्टर होऊँ और कोई आकर मेरी लगान वसूली में दखल दे तो मैं जी-जान से उसका विरोध करूँगा।

"मुसलमानों के संबंध में मेरे सुझाव बहुत नरम और मितमाषा में थे। मैंने आपको जो पत्र दिखाया, उससे भी नरम थे। परन्तु इस पर वाइसराय तो एकदम नाराज हो उठे। उन्होंने तनकर मुझसे कहा कि "हमें युद्ध को आगे बढ़ाना चाहिए।' सरकार की जड़ता, मूर्खता, दृष्टि का अभाव और पक्का ठोस विचार करने की उपेक्षा, इन सबका उपाय उन्हें युद्ध चलाने में मिल गया है। आपकी तो उन्होंने बात ही नहीं छेड़ी!

'इस पिछले सप्ताह में जिली (पियर्सन) के विचार से मेरे मन पर बहुत खिंचाव रहा है और मैं बहुत दुःखी रहता हूँ।"

उन्हें उत्तर दिया :

"जिली की गिरफ्तारी का समाचार पढ़कर मुझे कोई आघात नहीं पहुँचा। वाइसराय की भावनाओं के प्रति भी मेरी सहानुभूति है। जब ऐसा भयंकर युद्ध हो रहा है, तब इस प्रकार के काम की जाँच करने के लिए उनसे क्यों कहा जाय? जिली को और हमको नम्रता से सहन कर लेना चाहिए। जिली के मामले में कोई सिद्धान्त का सवाल नहीं है। उसमें जातीय द्वेष का प्रश्न भी नहीं है। इसी तरह जनता की भावनाओं का भी नहीं है। अपने विचारों या कामों के लिए जेल हो जाय, तो हमें सन्तोष होना चाहिए। आवश्यक तो यह है कि जिली के साथ पत्र-व्यवहार का सम्बन्ध जोड़ा जाय। उसे जरूरत मालूम होगी, तो वह अपने छुटकारे के लिए लड़ लेगा। उसकी चिन्ता करते रहना उसके साथ अन्याय करना है। मुझे विश्वास है कि वह वहाँ भी रहेगा, सुखी ही होगा। मेरे खयाल से सार्वजनिक आन्दोलन अनावश्यक है। आप मुझसे सहमत हों तो वाइसराय को कह देने के लिए उनसे माफी माँगने का एक बहादुरीभरा पत्र लिखें। मुझे कभी-कभी महसूस होता है कि अधिकांश अंग्रेज जो हिम्मत हारकर बैठ नहीं जाते और लड़ाई का भयंकर तनाव सहन कर रहे हैं, योगी होने चाहिए। उनका यह योग अच्छे कामों में लगाया जाय तो वे मोक्ष के अधिकारी बन जायें।"

दूसरी डाक में स्वामीजी के बारे में मैफर्सन को पत्र लिखा। रीड को पत्र लिखा। पोलॉक को पत्र लिखा। दोपहर को तीन बजे बढ़हरवा के लिए रवाना हुए। ट्रेन फेल जाने के कारण व्यर्थ चक्कर खाना पड़ा और रात को ग्यारह बजे लौटे।

मोतीहारी में जमीन के बारे में तय हो गया। नींव रखने की तैयारी भी हो गयी। बापू बाग-बाग हो गये।

२४-५-'१८

जमीन ट्रस्टियों के नाम कर देने और मकान बनाने की अनुमति के लिए सुबह पत्र लिखा। मिल्कियत की बातें। कोई चौकसी हो, तो हरएक ट्रस्टी को वहां डेरा डालकर बैठ जाना चाहिए, मकान गिरायें तो दूसरा बनाया जाय, फिर गिरायें तो फिर बनाया जाय और अन्त तक पीछे न हटा जाय। ट्रस्टी के लिए यह शर्त होगी। 'ट्रस्टडीड' लिखा गया।

२५-५-'१८

हनुमन्तराव को एक लम्बा पत्र लिखा :

"मैं यह नहीं चाहता कि आप गोदावरी से सम्बन्ध तोड़ दें। बल्कि गोदावरी में रहकर ही हिन्दी का काम करें। मैं चाहता हूं कि शास्त्रियार आपको इलाहाबाद जाने की इजाजत दे दें। वहां आप एक साल रह और हिन्दी अच्छी तरह सीख लें। बाद में मद्रास जाकर अपने दूसरे कामों के साथ-साथ तेलगु भाषा में हिन्दी-प्रचार का काम करें। आप हिन्दी का अध्ययन कर लेंगे, तो अपने काम का पथ व्यापक कर सकेंगे और मौका पड़ने पर मद्रास प्रान्त से बाहर भी आम जनता का काम करने की शक्ति हासिल कर लेंगे। मैं नहीं जानता कि आपका ध्यान इस ओर गया है या नहीं। वक्त तो गया ही है। द्रविड़ों और आर्य भारतीयों के बीच न भरने वाली दरारें पड़ गयी है। इसे पाटने का छोटे-से-छोटा और आसान पुल निश्चय ही हिन्दी भाषा है। अंग्रेजी कभी उसका स्थान नहीं ले सकती। यह

शिक्षित लोगों की साधारण भाषा हिन्दी हो जायगी, तब हिन्दी शब्द भण्डार आम जनता में भी फैल सकेगा। हिन्दी में कोई ऐसी अकर्षणीय वस्तु है, जिससे वह सीखने में सबसे आसान होती है। कारण कुछ भी हो परन्तु हिन्दी व्याकरण के साथ जितनी छूट ली जा सकती है, उतनी मैंने और किसी भाषा के व्याकरण के साथ ली जाती नहीं देखी। परिणामस्वरूप हिन्दी सीखने में स्मरण-शक्ति का ही काम है। इसीलिए मैं तो यह कहता हूं कि राष्ट्रीय काम करने के लिए हिन्दी के ज्ञान की अनिवार्य आवश्यकता है। सोसाइटी का एक सदस्य हिन्दी सीख ले, इससे सुन्दर बात और क्या होगी! एक बार गोखलेजी ने मुझसे कहा था कि वे सारे सदस्यों के लिए हिन्दी अनिवार्य करना चाहते हैं और यह चाहते हैं कि सोसाइटी की बैठकों में हिन्दी ही बोली जाय। परन्तु उनकी सबसे बड़ी मुश्किल तमिल लोगों की खास तौर पर शास्त्रियार की थी। वे हिन्दी सीखने के लिए अपने को बहुत बूढ़ा समझते हैं।

"आप सत्याग्रहाश्रम को सोसाइटी से अलग मानते दीखते हैं। मैं ऐसा नहीं मानता। अपने अंतिम दिनों में गोखलेजी की ऐसी इच्छा थी कि गुजरात में मैं उसकी शाखा खोलूं और जो मात्र राजनैतिक मामलों में मुर्दा हो गया दीखता है, उसमें जीवन भरूं। इस कार्यक्रम को अमल में लाने के लिए मैंने जो मार्ग लिया है, उस पर मुझे गर्व है कुछ संगीन कारणों से सत्याग्रहाश्रम को शाखा के रूप में नहीं माना जाता यह महत्त्व की बात नहीं है। उसका काम तो यहाँ हो ही रहा है। उसमें से जितना अच्छा है, उसका श्रेय तो मेरी राय में सोसाइटी को मिलता ही है; और जितनी त्रुटियाँ हैं वे मेरी मर्यादाओं के कारण हैं। इसकी जिम्मेदारी सोसाइटी की नहीं है। समय पाकर जब मैं अपनी मर्यादाओं का पार कर सकूँगा तब आश्रम सोसाइटी में समा जायगा। वहाँ सबसे कहिये कि आप आश्रम में भरती होना चाहें तो भी आपको और किसी तरह नहीं प्रमुख सोसाइटी के एक फर्ज के तौर पर ही स्वीकार करूँगा। इन सब

बातों से आप देखेंगे कि हिन्दी सीखने के उम्मीदवार के रूप में आपका विचार करते समय यह संभावना मेरी कल्पना में भी नहीं आती कि ऐसा हठी के साथ आपका संबंध छूट जाय।

सेवक

मो॰ क॰ गांधी"

चंपारन से रवाना हुए, उस दिन से डायरी अनियमित हो गयी। चंपारन से यहाँ आते हुए घटी घटनाएँ :

रात को एक आदमी ने पटना स्टेशन पर खूब पंखा झला। बापू गाड़ी में सो गये। उसकी दरी पर उनके पैर थे और दरी खींचने से वे जाग जायेंगे, यह सोचकर उसने उन्हें नहीं जगाया और दरी छोड़कर चला गया। यह आदमी पुलिस का था और बिलकुल साधारण स्थिति का था। यह आगे की घटना से पता चलता है। बापू को बाद में बड़ी चिन्ता हुई। बापू बोले कि मौन कार्य करनेवाले हर किसी ऐसे स्थान पर हैं। मुझ पर भी इसका बड़ा असर हुआ। मन में ऐसा भी लगा कि ऐसा मूक कार्य संसार में जन्म लेकर मैंने एक भी नहीं किया। परन्तु यह प्रसंग जन-स्वभाव की विचित्रता दिखाने को लिखा है। चूँकि इस दरी की यह भी बात हो रही थी उसे एक मारवाड़ी बैठा-बैठा सुन रहा था। मुगलसराय स्टेशन पर उतरते समय वह बोला कि "यह दरी मुझे दे दीजिये न! आपको इसका क्या उपयोग है!" बापू ने कहा : "नहीं, इसे तो मालिक के पास भेजूँगा।

जब बापू दक्षिण अफ्रीका गये थे, तब एक ऐसे काम के लिए गये थे, जिसमें हिसाब का काम बहुत था। 'मैंने विरोधीपक्ष के वकील को जमा खर्च की बातें करते जो सुना तो मुझे खयाल हुआ कि इन जमा-खर्च के भेदों को कैसे हल करूँगा। मुझे तो सारी रात उसीके विचार आते रहे। निश्चय किया कि सीख ही लेना चाहिए। मैंने अपने मुवक्किल से ही हिसाबनवीस देने को कहा। मैं समझता तो बार-बार, एक बार दो

बार तीन बार पूछता और उसे पका देता। अन्त में मैं वह मामला बहुत अच्छे ढंग से पेश कर सका और जीत गया।'

गाडी के डब्बे की रचना को सिर्फ देखकर मुझसे कहने लगे: "महादेव, मैं सोचता तो अच्छा-से-अच्छा यंत्रकार बन सकता था। मैं जिस चीज को देखता हूँ, उसमें तुरन्त घुस जाता हूँ और मुझे तुरन्त उसकी रचना के गुण-दोष नजर आ जाते हैं। मैं हर किसीकी भूल पकड़ सकता हूँ। मेरा खयाल है कि डॉक्टरी करता तब तो मैं हिन्दुस्तान में पहले नम्बर का डॉक्टर माना जाता, सब मुझसे कॉपते और अनेक डॉक्टर बेईमानी करने से विरत हो जाते। मैं यह मानता हूँ कि मेरे जैसी चिकित्सा तो अब भी कोई नहीं कर सकता। मैंने जो-जो केस डॉक्टरों को सौंपे हैं, उनमें डॉक्टर मेरी चिकित्सा और देखभाल से आश्चर्यान्वित हुए हैं। मैं जाना तो चाहता था डॉक्टर बनने के लिए, परन्तु मेरे पिताजी कहते नहीं हमें यह चमड़ा नोचने का काम नहीं चाहिए। फिर भी मैंने तो जाकर शरीर शास्त्र जीवन-शास्त्र और मालिश-विद्या सीखना शुरू कर ही दिया। लेकिन रोज-रोज मेंढक चीरने का काम देखकर मेरा विचार बदल गया। मेरा खयाल है कि डॉक्टरी के अच्छे अध्ययन के लिए भी जीवित प्राणियों को चीरने की बहुत जरूरत नहीं है।

इसके बाद थोड़े समय बैठकर गम्भीर होकर मुझसे खोया हुआ रुपया लेने का आग्रह करने लगे, मुझे तरह-तरह से समझाया। पर मेरा लेने का जी नहीं हुआ इसलिए उन्होंने ज्यादा दबाव नहीं डाला और मैं बच गया।

पिछली रात जब पढ़ने में मशगूल हुआ था तब बापू से जो हुए मतहरूल हक से मेरी बातचीत हुई थी। उनमें मैंने पुनर्जन्म के बारे में शंका प्रकट की थी। उस विषय में इशारा करके कहने लगे: महादेव मुझे यह खयाल नहीं था कि तुम ऐसे होगे, पुनर्जन्म को न माननेवाले को मैं तो हिन्दू नहीं मानूँगा।

२८ ५ १८

नडियाद आये। दो दिन रहे। फुटकर कागज-पत्रों में समय बीता। वहाँ दो जगह सुन्दर भाषण दिये। ये दोनों भाषण छप गये हैं।

१०-५ १८

अहमदाबाद गये। शाम को प्रागजी के साथ निश्चय हुआ कि मुझे दुर्गा से चंपारन जाने को कहना चाहिए। प्रागजी और उनकी बहू को भी वहाँ भेजने का निश्चय हुआ। रात को से सन्देश कहलाने को कहा। 'कामातुराणां न भयं न लज्जा' यह विनिक्स के उदाहरण से समझाया।

१ से ८ ६ १८

सवेरे मैं कालियावाड़ी के लिए रवाना हुआ। वहाँ ८ तारीख तक रहा। चिट्ठी-पत्री होती रहती थी। मेरे आने के दिनों में मिपी को पत्र, दक्षिण अफ्रीका के सम्बन्ध में अखबारों में पत्र। सर ज्योर्ज बार्न्स को भी पत्र सेह का समझौता उस विषय में अखबारों में पत्र, ये सब चीजें प्रकाशित हुईं। स्वामीजी को छोड़ने के लिए बिहार सरकार को तार दिया। दुर्गा ने चम्पारन जाना मंजूर नहीं किया। बापू का उसके नाम पत्र।

८ से १२ ६ १८

बापू रात को वहाँ से बम्बई के लिए रवाना हुए। मैं भी सवेरे बम्बई पहुँचा। तिलक के साथ सलाह-मशविरा किया। प्रस्ताव पर न बोलने और बनस्त समिति में काम न करने के बारे में गवर्नर को पत्र। दूसरे दिन मुलाकात। गवर्नर की धमकी— मेरा भाषण पेम्फलेट से भी सख्त होगा। परिषद् में हुई धमाचौकड़ी। रात को गवर्नर को पत्र। पंग बराबर से मिले। दूसरे दिन पूना के लिए रवाना हुए। सर्वेण्ट्स ऑफ इंडियावाला प्रसंग। रात को शास्त्रियार का भाषण, उससे पहले पूना के

चलते थे। उस समय न विरोधी दल के आदमियों को कैसे आने दें? आने ही नहीं दिया जा सकता। तुम्हें तो वे अच्छी तरह पहचानते हैं, निष्पक्ष मानते हैं और तुममें विश्वास है इसलिए तुम्हें आने दे सकते हैं। और कोई बात नहीं। भविष्य में ऐसा नहीं होना चाहिए। मैं यह उलाहने के रूप में नहीं कहता। तुम्हें सिर्फ यह समझाता हूँ कि तुम अधिक समझदारी से काम लेते, तो अच्छा होता।

रात को अहमदाबाद के लिए रवाना हुए।

१४ १ १८

सवेरे नड़ियाद। मैं अहमदाबाद गया। रात को वापस। बम्बई के लिए रवाना हुए।

१५ १ १८

गवर्नर से मुलाकात। असफल। रात को एक बजे तक बैठकर दूसरे दिन की सभा के लिए भाषण लिखवाया। अद्भुत भाषण।

१६ १ १८

बम्बई में परिषद् हुई। तिलक को अपमान मालूम हुआ। विरोध में सभा हुई। बापू को बापू के ढंग पर सरकार के साथ सहयोग करने की शर्त पर अध्यक्ष बनाया गया। सभा विराट थी। बाद में शंकर लाल बैंकर के विचार सरकार के काम में बाधा डालनेवाले मालूम हुए। "इस परिषद् के बाद हमें सरकार पर कैसे विश्वास रह सकता है? लोगों की तो कोई मदद देने की इच्छा नहीं है। आप हमारे नेता हैं। आपके बिना हम कुछ नहीं कर सकते। अब इस काम में हमारी सेवा बन जाये। नहीं तो (होमरूल) लीग छोड़कर मैं आपके पीछे लगूँगा।" इस आशय का उनका पत्र।

उन्हें उत्तर :

"तुम्हारा पत्र मिला। यह तो मैं नहीं कह सकता कि तुम लीग को छोड़ो और मेरे साथ काम करो। परन्तु मैं यह चाहूँगा कि तुम लीग में रहकर लीग का रवैया भी शुद्ध रिया में रखो। तुम्हें तो जो दशा है, वही शुद्ध मालूम होती है। मुझे अब वह भयानक प्रतीत होती है। अगर लीग भरती के काम में भाग न ले तो वह बम्बई के प्रस्ताव के विरुद्ध आचरण था होगा। अगर लीग के सब सम्स्य यह मानते हों कि लीग में रहकर भरती के काम में भाग नहीं लिया जा सकता तो बम्बई के प्रस्ताव पास नहीं होने चाहिए थे और मुझे अध्यक्ष-पद पर बिठाना नहीं चाहिए था। मुझे सहन करके लीग ने यह तो बता दिया कि जिसे भरती का काम करना हो वह कर सकता है।

"मित्र को विश्वास है वह खास तौर पर अंग्रेज जाति के प्रति है, सो बात नहीं परन्तु मानव-जाति के स्वभाव के प्रति है। हरएक मनुष्य में कुछ-न-कुछ सचाई का अंश रहता ही है। उसको पोषण देना हमारा काम है। ऐसा करने में वह हमें धोखा दे तो इसका बुरा परिणाम वह भोगेगा हम नहीं।

"यह तो निश्चित समझ लो कि जनता की स्थिति वैसी नहीं है, जैसी कि तुम समझते हो।

"तुम जब मिलोगे तब ज्यादा समझाऊँगा। मैं मानता हूँ कि हिन्दुस्तान में लीगवालों का यह काम है कि वह इस कार्य में जुट जाय। इसके साथ ही सरकार के उतारे कामों के बारे में जो आन्दोलन करना हो सो करो। ऐसा करोगे तो दोनों कामों की रक्षा हो सकती है। होमरूल लीग भरती के संबंध में कुछ भी न करे, तो उसे भारी धक्का पहुँचेगा। × × ×

मोहनदास के वन्दे मातरम्

१७-१ १८

नडियाद आये। सैनिक भरती का सिद्धान्त समझाने के लिए अवैध सभा हुई।

१८ १ १८

अहमदाबाद आये। बम्बई का भाषण अखबारों में छपा।

शाम को गुजरात सभा की बैठक। बिलकुल मूर्खतापूर्ण बातें। सभा से बापू को बड़ा असंतोष हुआ।

१९ १ १८

आश्रम में गुरु-परिषद्। रात को घूमने गये, तब भी यही चर्चा।

२०-१ १८

मालाभाल नरहरि ने कहा कि मैं भरती होने के लिए तैयार हूँ। मणिबहन का ध्यान। रात को नडियाद आये।

२१ १ १८

सैनिक भरती के लिए अपील तैयार कर ली। उत्तम पत्रिका। दफ्तर का काम। शाम को नडियाद में सैनिक भरती की पहली सभा में जोरदार भाषण। पत्रिका का अनुवाद करने की मुझे आज्ञा।

रात को इन्दुलाल की व्याख्यानमय बातें—शास्त्रीजी के प्रसंगों के संबंध में, बैंकर के संबंध में और बापू के संबंध में। शास्त्रीजी की वाक्छटा के लिए अत्यन्त ऊँची राय। शास्त्रीजी की भक्ति और नम्रता की बातें। १६११ में उत्सव के समय सीखते हुए राजा जनक द्वारा आयोजित स्वयंवर के समय राम शिवजी का धनुष उठा सके थे इस प्रसंग को लेकर शास्त्रीजी ने कहा कि मैं गोखले की जगह नहीं ले सकता, शिवजी का धनुष उठाने में समर्थ दूसरे राम के आने में बरसों लग जायेंगे।

पत्रिका के इस वाक्य पर सुवेदार आक्षेप करने लगे। उसके जवाब में कहा : मैंने उसके जितने पुण्यकर्म देखे हैं, उतने पापकर्म भी देखे हैं। मैं यह कहता हूँ कि जैसे उसे इन पापों का बदला मिलेगा, वैसे ही उसके पुण्यों का बदला भी मिले। मैं तो हत्यारे को भी माफी दूँगा और यह कहूँगा कि उसे अपने किये हुए पुण्यों का बदला मिले। इस जाति ने हलके काम किये हैं, परन्तु उसे हलकी बात पसंद नहीं आती। इसलिए उसी जाति में अपनी जाति के किये हुए पापों के विरुद्ध बोलनेवाले निकले हैं। उसी जाति ने अनेक सुधार करने की तत्परता दिखाई है। एक सर हेनरी कैम्पबेल ने दक्षिण अफ्रीका को यूनियन दिया। यूरोप के भीतर होनेवाले महान् सुधारों की जड़ इंग्लैंड में है। दक्षिण अफ्रीका में विद्रोह का कोई चिह्न न होते हुए भी कैम्पबेल ने लॉर्ड मिल्नर को निकाला और जनता को जगाया। लाखों रुपये खर्च कर चीनी लोगों को निकाला और जनता को स्वतंत्रता दी। बहुत-सी खानों के मैनेजरों ने प्रचार किया कि चीनी लोगों को रखने से तो सत्यानाश हो जायगा। परन्तु जनता अटल रही। ऐसे अनेक उदाहरण हैं। परन्तु इससे इस जाति की पूजा करने की जरूरत नहीं। मैं इतना ही कहता हूँ कि इस जाति के जमा की तरफ भी देखना चाहिए। मैं आपसे एक ही बात पूछता हूँ। आप चाहते क्या हैं? जबतक आप साम्राज्य के बचाव के लिए लड़ने को तैयार नहीं होंगे तब तक हिस्सेदार बनने की जो बातें कहते हैं, वह दम्भ है। जनता के सामने साफ बात कहिये और उस पर अमल करिये। मौनव्रत बहुत बड़ा गुण है। आपसे बिना बोले न रहा जाय, तभी तो बोलिये और इस तरह बोला हुआ दूसरों के कानों पर पका हुआ फल बनकर पड़ेगा। *तिलक में इस जाति के लिए तिरस्कार नहीं है।* भारतीय राष्ट्रभाषा परिषद् में उन्होंने जो भाषण किया था और उसमें उन्होंने इस जाति के जो गुण गाये थे वे भुलाये नहीं जा सकते। उनके विद्वत्तापूर्ण भाषण की बात मैंने वाइसराय से भी कही थी और उनसे कहा था कि मैं आपकी स्थिति में होता तो उन्हें अपने पास ले लेता। उस भाषण में किया गया अंग्रेजों का

उपस्थित करना, उनकी भारी विद्वत्ता आदि सब बातें ऐसे शब्दों में प्रकट होती थीं, पराये के शब्दों में नहीं, परन्तु अपने शब्दों में इस ढंग से प्रकट होती थीं कि मुझे महसूस हुआ कि ये तमाम विचार, उनके पचाये हुए विचार, उनके बनाये हुए विचार हैं। उनमें प्रकट होनेवाला बुद्धि का तेज देखकर मुझे खयाल हुआ कि जब तक हमारे यहाँ ऐसे रत्न हैं, तब तक हिन्दुस्तान के लिए आशा नहीं छोड़ी जा सकती। उस भाषण में उन्होंने व्याकरण का बिगुल नहीं बजाया। भाषा की उत्पत्ति के इतिहास से लेकर वे इस बात पर आये कि व्यवहार के संबंध के लिए आम भाषा चाहिए। यह इतिहास कहते-कहते उन्होंने कहा कि "अंग्रेजों ने जो बहुत-सी सेवा की है उसमें भी उन लोगों की बड़ी सेवा तो यह है कि उन्होंने प्रांतीय भाषाओं का उद्धार किया।"

सैनिक भरती के बड़े काम में रोके रहने पर भी देवदास को हिन्दी की कक्षा के लिए सूचनाएँ भेजने का मौका नहीं चूके। सैनिक भरती का रहस्य भी साथ ही साथ समझाया :

"मैं देखता हूँ कि तुमने शिक्षा का काम ठीक तरह से हाथ में लिया है। कल मैंने कुछ सूचनाएँ भेजी हैं। व्याकरण तुरन्त सिखाना। उसमें उन्हें रस आयेगा और सबसे पहले पदों का रूप सिखाना ठीक रहेगा। उसकी तामिल के साथ तुलना करनी चाहिए। पढ़ने के लिए आनेवालों की उम्र और योग्यता की थोड़ी कल्पना मुझे देना।

"सैनिक भरती की पहली पत्रिका यहाँ प्रकाशित हुई है। उसकी तीन प्रतियाँ भेजता हूँ। अंग्रेजी अनुवाद" भी किया है। पढ़कर जो विचार आयें वे बताना। अहिंसा-धर्म को मैं आजकल कुछ दूर से ही, परन्तु मध्य स्थान में देख रहा हूँ। साथ ही साथ अपने संयम की खामियों का दर्शन भी करता रहता हूँ। इस कार्य के लिए मेरी तपस्या बहुत थोड़ी है। पहले तपस्या से जो अनुभव ज्ञान मिलता था उसका करोड़वाँ भाग भी आजकल प्रयोग से नहीं मिल सकता। पानी की हजारों बूँदों में से दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग ऑक्सीजन निकलने पर भी

यह नहीं कहा जा सकता कि पानी उत्पत्ति बनता है। यह अनुमान ज्ञान है। परन्तु दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग ऑक्सीजन लेकर मैं पानी बनाऊँ, तो यह निश्चय-ज्ञान हुआ। यह अनुभव-ज्ञान है। पानी भले ही दूसरी तरह बन सकता हो परन्तु एक ही प्रयोग से मैंने निश्चय-पूर्वक जान लिया कि उपर्युक्त मिश्रण से तो पानी बनता ही है। बहुत से कार्य हम अनुमान से करते हैं और कोई रुकावट नहीं आती। महान् कार्यों में अनुमान की त्रुटि और अनुभव की भव्यता देखी जा सकती है। इसीलिए समाधि के पालन की जरूरत है। यह अनुभव ज्ञान की एकमात्र सीढ़ी है।

बापू के आशीर्वाद'

सैनिक मराठी सम्बन्धी पवित्र साहित्य में अमर होने लायक है। उसे भेजते हुए हॉर्निमेन को लिखा गया पत्र :

"प्रिय मैं नहीं जानता कि साथ में जो अपील भेजी है, उसके पक्ष में आपकी कलम का लाभ मुझे मिल सकेगा या नहीं परन्तु लाभ मिले, तो मैं उसे बहुत कीमती समझूँगा। मुझे उसकी जरूरत है। मेरा निश्चित ख्याल है कि हम सरकार को सिपाही भेजते रहें और साथ-साथ सरकार के अन्यायों के विरुद्ध लड़ाई भी लड़ते रहें। ऐसा करने में हम सब दलवाले एकमत हो सकते हैं। सरकारी अधिकारियों की मूर्खता सैनिक मराठी के काम को मुश्किल बना रही है। परन्तु इससे मैं निराश नहीं होता। अपने से जो कुछ बन पड़े, तो सब हम कर दें। विरोध-सभा में जो प्रस्ताव पास हुए उनका मैं यह अर्थ करता हूँ।

सेवक
मो० क० गांधी"

होमरूल में शरीक हों या न हों इस बारे में विट्ठलभाई को लिखा :

'भाईश्री विठ्ठलभाई

'आपका पत्र मिला। मेरे ख्याल से आप जैसों के लिए होमरूल से बाहर रहकर सरसक सेवा करना ठीक है। इस समय होमरूल लीग की विषम स्थिति है। बाहर के झगड़ों के कारण स्थिति विषम हो सो बात नहीं है, बल्कि भीतरी झंझटें बहुत हैं। यह तय नहीं कर सके कि कौनसा रास्ता अपनाना आम-दंग करने का या मदद देने का! दंग तो बहुत कर लिया, अब उससे निवृत्ति लेकर थोड़ा रचनात्मक काम करने की जरूरत है। जब तक यह नहीं होगा तब तक लीग की सेवा-शक्ति का विकास नहीं होगा। अगर लीग को सेवा की ओर मोड़ने के लिए ही शामिल होते हों, तो जरूर हो जाइये। परन्तु लोगवाले यह नहीं चाहेंगे कि छोटे बड़े सबके साथ टक्कर लें, तो शामिल हों। किसी संस्था को तोड़ने के लिए उसमें शामिल होना तो साफ द्रोह ही होगा। स्वास्थ्य-रक्षा की कला सीख लेंगे, तो भी देश की बड़ी सेवा होगी।

'बाबमभाई का नया धंधा कैसा लगता है? वे रिक्रूटिंग सार्जेण्ट बन गये हैं।

मोहनदास के बन्दे मातरम्'

भाई मोहनदास नागजी का पत्र आया था कि विधवाओं के पुन विवाह के संबंध में जो तरह-तरह के विचार फैले हुए हैं, उनके बारे में स्पष्टीकरण कीजिये। उसका उत्तर :

'पुनर्विवाह के बारे में मेरी राय है कि पति या पत्नी के गुजर जाने पर स्त्री या पुरुष दुबारा विवाह न करे, यह जरूरी है। संयम हिन्दू-धर्म का आधार है। यों तो संयम सभी धर्मों में है। पर हिन्दू-धर्म में उसे बहुत बड़ा स्थान दिया गया है। ऐसे धर्म में पुनर्विवाह तो अपवादस्वरूप ही होने चाहिए। मेरे ऐसे विचार हैं, फिर भी जब तक बाल-विवाह होते ही रहेंगे और पुरुष स्वेच्छा से चाहे जितनी बार विवाह करते रहेंगे, तब तक कोई बाल-विधवा पुनर्विवाह करने की इच्छा करे तो उसे रोकने

की कोशिश नहीं करनी चाहिए और उसकी इच्छा का आदर करना चाहिए। बिलकुल बाल-विधवा के मन में भी मैं पुनर्विवाह करने की इच्छा का बीज नहीं डालूँगा। किन्तु अगर वह पुनर्विवाह करे, तो उस काम को पाप नहीं मानूँगा।

मोहनदास गांधी"

रेवरेण्ड हॉज के साथ चंपारन से ही बापू का बहुत अच्छा सम्बन्ध हो गया था। बापू चंपारन गये, तो उनसे न मिल सके। इस पर से उनकी तरफ से लिखा गया पत्र उनके उम्दा स्वभाव का परिचय देता है। वह पत्र :

"प्रिय मि० गांधी,

"मैं जानता हूँ कि आप चंपारन को भूलेंगे नहीं। हम आनन्दपूर्वक आपको किसी दिन पुनः प्राप्त करने की आशा रखते हैं। आपने यहाँ जो काम किया है, वह स्थायी रहेगा। उसका मूल्य जैसे-जैसे दिन बीतेंगे, वैसे-वैसे समझ में आयेगा। यहाँ मैं नये जीवन का उत्साह और पुरुषार्थ की भावना की नयी जागृति अनुभव कर रहा हूँ और इससे मेरे दिल में भविष्य के लिए बड़ी आशा बंधती है। इसे मैं आपके कार्य का सीधा परिणाम मानता हूँ और भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि अन्यत्र भी आपकी मेहनत के ऐसे ही कीमती फल निकलें। मुझे विश्वास है कि जो पाठशालाएँ आपने स्थापित की हैं उन्हें जारी रखा जा सकेगा। वे अंधकार में दीपक के समान हैं। अगर वह बुझ जायगा, तो बड़ी खेद की बात होगी। आपके जो कार्यकर्ता यहाँ आवें, उनसे आप कह दीजिए कि उनके लिए मेरे मिशन के द्वार हमेशा खुले हैं और हम उनका हार्दिक स्वागत करेंगे। हम सब एक ही महान् कार्य में लगे हुए भाई-भाई हैं। मैं आपके संपर्क में रहना चाहता हूँ। किन्तु जानता हूँ कि आपका जीवन कितना व्यस्त रहता है। इसलिए आपसे यह कहने की मेरी हिम्मत नहीं होती कि आप मुझे लिखते रहिये। फिर भी मर्तबेवार आपकी तरफ से एक-दो पंक्तियाँ भी मिल जायेंगी तो सब मनुष्यों में मैं

अपने-आपको बहुत ही भाग्यशाली समझूँगा। हम कस्तूरबाई को और आपको अपनी अंतरंग मंडली में ही समझते हैं। मुझे विश्वास है कि आप यह नहीं समझेंगे कि ऐसा मानकर हम कोई धृष्टता कर रहे हैं। हमारा घर आपके लिए सदा खुला है और हम भी किसी दिन आपसे मिलने के लिए आश्रम आने का इरादा रखते हैं। आप कहीं भी हों, वहीं हमारी प्रार्थनाएँ आपके साथ हैं। मैं आशा रखता हूँ कि कभी आप भी हमारे लिए प्रार्थना करेंगे। चंपारन की मुश्किलें आप जानते हैं, इसलिए आप इनके हल के साथ प्रार्थना कर सकेंगे। मुझे विश्वास है कि तेरा में सब ठीक हो जायगा। मेरी समझ से तो चम्पारन में भी परिस्थिति स्थिर गति से सुधरती जा रही है। मैं नहीं समझता कि बनारस के महाराज को यहाँ लाने के आन्दोलन से फिर वह सफल हो या न हो, प्रजा को जो दिशा यहाँ मिली है उस पर कोई असर पड़ सकेगा।

"मैं आशा रखता हूँ कि आप दोनों की तन्दुरुस्ती अच्छी होगी। हैवराउ आपके साथ है? बॉन कर्नल अपनी पाठशाला में रहने गया है, पर होनहार यहीं है और सदा की तरह प्रसन्न है। हम सब ईश्वर की कृपा से सकुशल हैं।"

उन्हें उत्तर :

"आपके प्रेमपूर्ण पत्र के लिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। हम अपने को आपके परिवार की अंतरंग मंडली के ही मानते हैं। आपके साथ किसी किसी दिन थोड़ा समय बिताने को मिलता था, उससे मुझे आनन्द ही होता था। आपके पत्र में मेरे साथियों का उल्लेख किया गया है और यहां की पाठशालाओं को मर म बान देन के बारे में चेतावनी दी गयी है इसलिए यह पत्र बाबू ब्रजकिशोर को भेजने की इजाजत लेता हूँ। आप जानते हैं कि डॉ. देव चम्पारन छोड़ने से पहले मोतीहारी में रहने के लिए पक्का मकान बनवा गये हैं। मील-मालिकों के कुराने में मुझे बहुत मुश्किल हो रही है। किन्तु एकमात्र युद्ध करने के बारे में मैं निराश नहीं हूँ। मैं

चाहता हूँ कि कभी-कभी आप इन पाठशालाओं को देखते रहें। खर्चे का प्रबंध करने के लिए आप बाबू गोरखप्रसाद से कह दीजिये।

"देवदास इस समय मद्रास में है। वहाँ तमिल भाई-बहनों के लिए हिन्दी कक्षाएँ चला रहा है।

"वैकम का झगड़ा कुछ समय पहले ही निपट गया है। समझौते की घोषणा करनेवाला मेरा पत्र क्या आपने अखबारों में नहीं देखा था? इन दिनों मैंने दैनिक मराठी का काम शुरू किया है। हम दोनों मिसेज हॉग को याद करते हैं। मैं आशा रखता हूँ कि उनमें पहले जैसी शक्ति आ गयी होगी।

"मुझे आशा है कि सबको जब मैं फिर मिलूँगा, तब तक उनका मेरे साथ का शर्मीलापन मिट गया होगा। मेरा इरादा तीन महीने में एक बार चम्पारन आते रहने का है।"

उसी दिन मिस श्लेशिन* को पत्र लिखा :

'प्रिय मिस श्लेशिन,

'जिस पत्र की मैं लम्बे अरसे से प्रतीक्षा कर रहा था, वह आखिर आया। हम सब तुम्हारे पत्र का इन्तजार करते ही रहते हैं।

'अलबत्ता फिनिक्स आश्रम को बेच नहीं डालना है। उसमें पाँच एकड़ जमीन की तुम्हें जरूरत हो तो मिल सकेगी। तुम्हारा सपना मुझे पसन्द है, खास तौर पर इसलिए कि उसमें हिन्दुस्तान आने की बात भी आ जाती है।

'तुम टाइपराइटर से ऊबने लगी हो यह जानकर मैं बहुत खुश हुआ।

---

*दक्षिण अफ्रीका में शुरू में बापू के दफ्तर का काम करती थीं। बाद में वे बापू की बहुत ही विश्वस्त साथी बन गयीं। सत्याग्रह की लड़ाई में उन्होंने बहुत ही मदद की। उनकी त्याग-वृत्ति, निर्भयता, प्रामाणिकता और कुशलता की प्रशंसा करते बापू कभी थकते नहीं।

"रामदास से मैंने दर्जी बनने के लिए हर्गिज नहीं कहा। इसलिए नहीं कि दर्जी के काम में कोई कलंक ही नहीं है। वह आदर्श दर्जी बन भी सकता है। किन्तु वह प्रवीण लड़का है। उसे तरह-तरह के अनुभव लेना अच्छा लगता है। अगर वह कवि बन जाय तो शब्दों का कवि नहीं बनेगा शब्दों में कवि बनेगा और वह भी काम का और कार्य में कवि बनेगा। रामदास स्वप्नदर्शी है और मुझे स्वप्नदर्शी लोग पसन्द हैं। मैं आशा रखता हूँ कि तुम उसकी मित्र और पथ-प्रदर्शक बनकर उसे सन्मार्ग पर लाओगी। मैं चाहता हूँ कि थोड़े समय तुम आकर मणिलाल के साथ रहो। वहाँ तुम अपनी पढ़ाई जारी रख सकोगी।

'वोगेल फिलिप और डोक के घर में सब लोग कैसे हैं? कभी उनसे मिलती भी हो? मेक अन्यायर कहाँ है? हिन्दुस्तानी लोगों का काम कैसा हो रहा है। अम्मी से भी कभी मिलती हो? उसे ऐसा क्यों हो गया है? मैं आशा रखता हूँ कि तुम इन सब प्रश्नों की अपने पत्रों में चर्चा करोगी। किन्तु कुछ भी न होने से थोड़ा होना अच्छा है।

'यहाँ मेरा जीवन बहुत कठिन बन गया है। मेरे ब्रह्मचारी सहकर्मी हैं ये, और यहीं तो महत्त्व के सबक तुम्हें पढ़ने चाहिए। आजकल मैं सैनिक भरती के महाकार्य में लगा हुआ हूँ। अपने काम के सिलसिले में मुझे सतत रेल-यात्रा करनी पड़ती है। एकान्त और आराम के लिए मैं बहुत तरसता रहता हूँ। लेकिन ऐसा मालूम नहीं होता कि वह किसी दिन मुझे नसीब होगा। यहाँ कस्तूरबाई का बहुत अद्भुत विकास हो रहा है। जिन चीजों के लिए वह वहाँ झगड़ती थी, उनके बारे में यहाँ उसने मन को बहुत अच्छी तरह समझा लिया है। किन्तु इन सब बातों का वर्णन मैं नहीं करूँगा। तुम्हें यहाँ आकर प्रत्यक्ष देखना चाहिए। प्यार।

मो० क० गांधी

मेस्ट को पत्र :

"भाईश्री मेस्ट,

'तुम्हारा पत्र मिला। आनन्द हुआ। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने रुपये संबंधी मामले की चिन्ता न करो। एलबर्ट मेरे भाई के समान है। कोई बात उस पर से मेरा विश्वास डिगा नहीं सकती। एलबर्ट के बारे में मैं निराश हो जाऊँ, तो मुझे दुनिया से निराश होना चाहिए। मैंने उसे लिख दिया है। मैं जानता हूँ कि प्रस्तुत परिस्थिति में जो कुछ करना उत्तम था वही उसने किया। यह जानकर मुझे खुशी हुई है कि तुम और हैम दोनों बच्चों की उचित शिक्षा के लिए बन्दोबस्त कर सके। क्या मैं हेरता को सचमुच याद आता हूँ? मुझे पता नहीं चलता कि मणिलाल को क्या हो गया है। तुम सबके लिए उसकी बहुत ऊँची राय थी। और तुम सबने भी उस पर खूब प्रेम बरसाया है। परन्तु उसका स्वभाव वहमी बनता जा रहा है। मेरा अब भी खयाल है कि वह इसे सुधार लेगा। मैं जानता हूँ कि तुम्हारा प्रेम उसके वहम को निकाल देगा। मैं आशा रखता हूँ कि तुम उसके पास जाओगे उसके साथ बातें करोगे, उससे तर्क करोगे और उसे जीत लोगे। मैं यह विचार ही सहन नहीं कर सकता कि तुम्हारे लिए मणिलाल के मन में गलत खयाल रहे।

"आजकल आश्रम के लिए नये मकान बनवाने का काम चल रहा है। मैं चाहता हूँ कि इमारती काम की देखरेख करने के लिए तुम यहाँ हो। जमीन बहुत अच्छी जगह पर है। सब कुछ मगनलाल सँभालता है। वहाँ फिनिक्स में जब मकान बन रहे थे तब जो काम एलबर्ट करता था, वही मगनलाल कर रहा है। उसे आश्रम से बाहर कोई आनन्द ही नहीं आता।

'तुम सबको प्यार।

मो० क० गांधी"

दुःख का कारण नहीं देखता। यह तो उनका स्वाभाविक धर्म ही है। उन्हें सहारे की जरूरत रहती ही है। इस अवलम्बन में स्त्रियाँ आनन्द मानती हैं, यही उनका जीवन है। हम कमाकर लाते हैं। बाहर के मसले खुद ही हल कर लेते हैं। स्त्री से कहते हैं कि इनमें तुम्हें दखल देने की जरूरत नहीं है। तुम आराम से बच्चों को सँभालो और उन्हें आनन्द से रखो। यह बिलकुल स्वाभाविक व्यवस्था है। नकरी गरीब होती है, तो क्या यह गरीबी नकरी के लिए दुःखदायी है? यह तो स्त्री के मासिक-धर्म और जनन-कार्य को भी दुःख मानने जैसी बात है। क्या इन्हें सचमुच दुःख माना जा सकता है?

मैंने कहा : नहीं, परन्तु इनके जितना ही स्वाभाविक परावलम्बन नहीं है।

बापू : इतना ही स्वाभाविक है। यह तो सच है न कि किसी भी स्त्री का आलंबन के बिना काम नहीं चल सकता? जैसी बहादुर स्त्री को भी सहारा तो चाहिए ही। पुरुष के बिना उसका काम चल ही नहीं सकता।

मैंने मिसेज बेसेंट का उदाहरण दिया, तो कहने लगे कि ठीक है। उन्होंने भी तो एक के बाद एक आधार ढूँढ़ा है और अब तो ऐसे मनुष्य को ढूँढा है कि उन्होंने अपनी कीमत घटा ली।

मैंने पूछा : कौन? सर सुब्रह्मण्य ऐयर?

बापू : नहीं वे तो बेसेंट के वश में हैं। उनका आधार सी० पी० रामस्वामी हैं। सी० पी० के तो वे इतनी वश में हैं कि पूछो ही नहीं। वह सब कुछ उनसे अपना मनचाहा कराता है। वह भी अब बेशर्म होकर कहता है कि इस काम में मैं यह कहता हूँ, बात किसलिए शंका करती हैं? तो वह तुरन्त ही मान लेती हैं। कहाँ लेडबीटर, ऑलकॉट, मैडम ब्लेवेट्स्की और कहाँ सी० पी० रामस्वामी!

रात को अहमदाबाद में होमरूल लीग की विशेष-सभा में सुन्दर

भाषण। दूसरों के बिलकुल मूर्खतापूर्ण भाषण। नड़ियाद आते हुए गाड़ी में बोले : मैं गवर्नर होऊँ, तो तुरन्त इन लोगों को कैद करूँ, ऐसे इनके भाषण थे।

रात को अहमदाबाद स्टेशन पर एक मजेदार घटना हो गयी। जोकर गाड़ी पर आया था। उसे बापू ने कहा : साहब, तीसरे दर्जे के मुसाफिरों के लिए कुछ सुविधा कीजिये।

इस पर वल्लभभाई ने कहा : तीसरे दर्जे में सफर करने लगो, तो हो सकती है। बाद में मजाक में कहने लगे : तुम रोज चालीस रुपये की सिगार पीओ, दूसरा पैसा खर्च करो और तीसरे दर्जे में बैठो, तो कितना अच्छा हो! पैसा दूसरे कामों में इस्तेमाल हो, वगैरह।

जोकर कहने लगा : मेरे रहन-सहन की बात पर आप न बोलिये। मेरी सिगार मुझे कभी-कभी एक हजार रुपया ला देती है। मेरी चाय और आइसक्रीम का प्याला मुझे कभी-कभी हजार रुपये ला देता है। इस जिन्दगी के लिए इन चीजों की जरूरत है। आपको मेरी इन बातों की क्या पड़ी है? जरूरत हो, तो रुपया माँग लीजिये। रुपया आपको किसी भी काम के लिए दे दूँगा।

इस पर मैंने बीच में ही कहा : [illegible] के लिए एक हजार रुपया दीजिये। तुरन्त एक हजार के नोट निकालकर दे दिये। कहने लगा : कितने ही हजार रुपये उड़ाये बैठा हूँ। एक हजार की क्या हिसाब है? खुशी से ले जाइये। साहब, मैंने आश्रम के नाम पर एक छोटा-सा व्यापार किया था। अब तक ठहर जाता तो आश्रम को दो हजार रुपये मिलते। पर नहीं ठहरा और जल्दबाजी की। इसलिए १५ रुपये ही मिले। ये भी ले जाइये। यह कहकर १५ रुपये निकालकर दे दिये। मुझे उसे देखकर [illegible] की लिखी हुई A merry heart goes all the day पंक्तियाँ याद हो आयीं।

२१ १ १८

सैनिक भरती के लिए रास की ओर रवाना हुए। दोपहर में पहुँचे। सुन्दर भाषण दिया। आदमी लगभग दो हजार होंगे। लड़ने के बारे में कुछ भव्य उद्गार। अहिंसा किसे सिखायी जाय? जो हिंसा नहीं जानता, वह अहिंसा का पालन क्या करेगा? गूँगा मौनव्रत की खूबी क्या समझेगा? अनेक वर्षों से लड़ने की जो शक्ति जाती रही है, जिसके लिए हमारे ऋषि-मुनि तप करते और शस्त्रास्त्र प्राप्त करने के लिए गंभीर प्रतिज्ञाएँ लेते थे हम चाहते हैं कि वह शक्ति हममें आये। स्त्रियों और पुरुषों में मनुष्यता आये, शौर्य आये। वह सब इस बार इस अवसर का लाभ उठाने से ही आ सकता है।

शाम को पादरा स्टेशन पर पहुँचे। गाड़ी चूक गये। स्टेशन पर ही सो जाना पड़ा। वल्लभभाई को प्लेटफार्म पर बिलकुल नींद नहीं आयी। बापू बड़े आराम से सोये।

२७-१ १८

प्रभात होते ही गाड़ी में महेमदाबाद। वहाँ से गुजरात सभा की नयी मंडली को लेकर पैदल सोजा गये। पताका और बैन्ड-बाजियों से मिले। उनके सम्मान में जुलूस। बापू का धर्मशाला में भाषण। भाषण के अन्त में प्रकट किये हुए गंभीर उद्गार। यह सन्ध्या-काल है। इसके बाद रात्रि आयेगी या अरुणोदय होगा, यह किसीको पता नहीं। अरुणोदय तभी देखेंगे, जब आप सत्य पर डटे रहेंगे, ईश के सामने सत्य को रखो और सत्य के खातिर चाहे जितनी कुरबानियाँ देते रहेंगे।

वहाँ से निकलकर मंडली नवागाँव की तरफ चली। तेज धूप थी और रास्ते में पत्थर काफी होने के कारण गाड़ी की खड़खड़ाहट भी बेहद थी। वल्लभभाई कहने लगे। 'आज आप नहीं सो सकते।" तुरन्त ही उस खड़खड़ाहट में भी बापू सो गये। रास्ते में तीन गाँवों में स्वागत

किया। नयागाँव छह बजे पहुँचे। दोनों पर नगाड़ेवाले बैठे थे। जुलूस गाँव के अनुसार शानदार था। ग्रामवासियों का उत्साह अपूर्व रहा। मातर लोगों के अनुसार साधारण था।

रात को रवाना होकर मारवाड़ी स्टेशन पहुँचे। स्टेशन पर बापू सिर्फ बेंच पर पड़े रहे। वहाँसे नड़ियाद के लिए रवाना हुए। नड़ियाद से दोपहर को कठलाल। कठलाल में शंकरलाल परीख ने बड़ा शानदार जुलूस निकाला। लोग भजन-मंडलियाँ और पताकाएँ लेकर आये थे। "आजे गांधीजी पधारिया छी रे, आपनी घड़ी रे आनन्दनी" यह ध्वनि घर घर कानों में पड़ती थी। अन्य व्यवस्थाओं में भी कमी नहीं थी। मुझे उस दिन लगा कि ऐसे ठाठ का वर्णन तो वाल्टर स्कॉट ही कर सकता है। वाल्टर स्काट पढ़ने का संकल्प। पंड्या के घर गये। जैसे रिसायत में बहनें कुंकुम करती हैं, उसी तरह यहाँ पंड्याजी की ११ वर्ष की बहन ने उनके गाल पर प्रेमभरी दो चपतें लगायीं। मुझे महसूस हुआ कि ऐसी चपतें खाने के लिए भी बैल बनना चाहिए। शंकरलाल परीख के यहाँ विश्राम की व्यवस्था। अत्यंत सुघड़ घर और सुन्दर बगीचा। व्यवस्था शक्ति की बहुत अच्छी छाप पड़ती थी। शाम को पंड्या को अभिनन्दन-पत्र—एक सुन्दर चौखटे में। बापू का भाषण—शंकरलाल के 'शिष्य' शब्द को ही ध्यान में रखकर। ऐसी चेतावनी देने में भी सम्मान छिपा रहता है। फिर भी उसका लाभ उठाकर भी मैं कहता हूँ कि मैं किसीका गुरु बनने के योग्य नहीं हूँ, मैं किसीका गुरु हो नहीं सकता। जो गुरु धर्म-गुरु की तलाश में हो, वह क्या गुरु होगा? अपने को शिष्य कहने से पहले अनेक बार विचार करना। शिष्य को तो गुरु के दोष की कभी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। मुझे गुरु बनना हो तो तिलों का भी त्याग करना पड़ेगा। ऐसा माना जाता है, मैं तो लाखों में एक हूँ। म मजदूर हो गया हूँ। ऐसा अवसर आता है कि मैं चूक भी कर सकता हूँ इसलिए कहना यह है कि मेरा कहा हुआ ठीक नहीं कर सकता। परन्तु बाद में तो

थोड़े ही समय पहले सत्याग्रह सीखना शुरू किया और एम. ए. की परीक्षा में भी पास हो गया। भाषण का लोगों पर अच्छा असर पड़ा।

रात को शंकरलाल के यहाँ न सोकर स्टेशन पर सोने का ही आग्रह किया और रात के ११ बजे वहाँ गये।

२१-६-१८

नडियाद में बापू को अभिनन्दन-पत्र देने के लिए सार्वजनिक सभा। दोपहर के तीन बजे तक तो खूब पत्र लिख डाले। हरिलाल के सम्बन्ध में लिख दिया कि "मुझे भी यह लड़का निर्दोष नहीं मालूम होता। आप मुझे दूर रखना चाहते हों तो उसका बरताव से न्याय करवाइये।" दोपहर को तीन बजे जुलूस निकला। नडियाद का अभिनन्दन-पत्र। सेवा धर्म के विषय में उन्नत उद्गार। वल्लभभाई के सार्वजनिक गुणगान। लड़ाई में वे उप-सेनापति थे। आश्रम के भंगी और बालकों की सेवा ही सच्ची सेवा थी। उन्होंने धर्ममय सेवा की थी। रुपये के भूखे से सम्मान का भूखा मनुष्य ज्यादा नुकसान करता है, जनता के लिए अधिक हानिकारक है।

रात को रिक्रूटिंग की ही बातें। एण्ड्रूज को लम्बा पत्र।

३०-६-१८

खाना बनाया। रात की रिपोर्ट लिखी। बापू ने पत्र लिखे। इन्दुलाल ने अंग्रेजी में अनुवाद किया। चौंककर बोले तुम लोगों ने अभी तक यह कला नहीं सीखी। इसे सुधारने लगूँ तो सारे को सुधार डालूँ। इन्दुलाल से बोले कि भाई, यह एक नया हुनर है, अभ्यास से ही सीखा जा सकता है।

१-७-१८

आश्रम में गये। आश्रम में खर्च संबंधी चर्चा। की माँ गुजर गयी। इनके लिए वे घर जाना चाहें तो केवल लोक-लाज के खातिर ही

जायेंगे। इतनी-सी बात के लिए आश्रम को अकेले किराये के ८ रुपये खर्च करने पड़ेंगे। सार्वजनिक धन का उपयोग इस तरह नहीं किया जा सकता। इसलिए यह तय हुआ कि उन लोगों को न जाने दिया जाय। दूसरे दिन भोजन करते समय यह बात कही।

२-७-१८

नडियाद में। एण्ड्रूज का पत्र। उसमें तार करने पहले के एक पत्र का उद्धरण देकर एण्ड्रूज कहते हैं कि मुझे यह डर लगता है कि आपकी प्रवृत्ति राजनीति-प्रधान हो जायगी और आप जिस ऊँचे मार्ग पर लगे हुए हैं, वहाँ से उतरकर नीची कोटि में आ जायेंगे। मैंने कहा : मुझे भी ऐसा मालूम होता है। तो कहने लगे कि एण्ड्रूज मेरा आदर्श नहीं समझते। एण्ड्रूज ऐसा मानते हैं कि मेरी राजनीति उनकी राजनीति जैसी है। इस सारी प्रवृत्ति के बावजूद मैं तो बड़ी शांति भोग रहा हूँ। आश्रम में तो मैं अभी कल ही अधिक संयम का पाठ पढ़ा आया।

पूना सेवा-सदन की आठ वर्ष की रिपोर्ट देवधर ने भेजी। उन्हें उत्तर देते हुए :

भाई श्री देवधर,

सेवा-सदन के काम की रिपोर्ट मुझे भेजी, इसके लिए आभारी हूँ। यह आपके उद्योग का, रचनात्मक प्रकार की आपकी देश-भक्ति का और आपके सेवा-प्रेम का कीर्तिस्तंभ है। उसकी प्रगति सचमुच असाधारण है। शायद सारे हिन्दुस्तान में उसके जैसी दूसरी संस्था नहीं होगी। आप अपने यहाँ से कोई स्त्री-शिक्षिकाएँ भेजने की स्थिति में हों तो मुझे चंपारन में अवन्तिकाबाई और आनन्दीबाई का स्थान लेने के लिए दो अच्छा सिखाएँ चाहिए।

कुछ सुझाव। अंग्रेजी का थोड़ा-सा ज्ञान बेकार है या उससे भी खराब है। हमारी स्त्रियों पर यह अनावश्यक भार है। जहाँ अंग्रेजी काम में लेने

की ज़रूरत न हो, वहाँ उसे काम में लेना बंद कर दें, तो निश्चित मानिये कि अंग्रेज हमारे साथ हमारी भाषा में बात करने लगेंगे। उन्हें ऐसा करना ही चाहिए। दिल्ली की परिषद् में मैं हिन्दुस्तानी में बोला, इससे लॉर्ड चेम्सफर्ड बड़े खुश हुए थे। थोड़ी-सी चुनी हुई बहनों को आप जितनी भी अंग्रेजी पढ़ा सकें, ज़रूर पढ़ाइये, ताकि वे दूसरी बहनों के लिए अंग्रेजी के सर्वोत्तम विचारों का अनुवाद करें। इसे मैं यों कहता हूँ कि मैंने भाषा के मंदेश में किफ़ायत की। मैं तो अवश्य ही अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को रखूँगा। इससे महाराष्ट्रीय बहनों के विचार अधिक उदार बनेंगे और राष्ट्रीय कार्यकर्ता की हैसियत से उनकी उपयोगिता भी बढ़ेगी, अभी तो वे भी अपनी और बहनों की तरह अपने स्थानीय क्षेत्र तक ही विचार कर सकती हैं।

"हारमोनियम कन्दरी (तंबूरेंटी या स्वरपेटी) से एक क़दम ही आगे है। मैं तो बहनों को वीणा और सितार देना पसन्द करूँगा। ये बाजे सस्ते हैं, राष्ट्रीय हैं और हारमोनियम से ऊँचे माने जाते हैं।

"बेल-बूटे काढ़ने जैसी बारीक कारीगरी के काम के बजाय हरएक बहन को हाथ-कताई और हाथ-बुनाई सिखाना मुझे ज़्यादा पसन्द होगा। आज कल दो कार्यकर्ताओं द्वारा मैं तो परखे पलवा रहा हूँ। उनसे लगभग तीन सौ बहनों को रोज़ी मिल जाती है। जब हिन्दुस्तान को अपनी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और शान्ति वापस मिल जायगी, तब ये मिलें अवश्य भूतकाल की वस्तु बन जायेंगी। उस समय जैसे हमारी रानियाँ पहले कातती थीं, उसी तरह ऊँचे नम्बर का बारीक-से-बारीक सूत कातने लगेंगी। मैं चाहता हूँ कि वह दिन जल्दी लाने में आप मदद दें। मुझे तो विश्वास है कि थोड़े ही समय में हम इन चीज़ों (कताई वगैरह) से ऊब जायेंगे।

'साधारण रवैया समय के साथ चलने का होता है। परन्तु हमें तो हमेशा अपने सामने की वस्तुओं की जाँच-पड़ताल करते और उनमें सुधार करते रहना है। हमें सदा समय के बहाव में नहीं बह जाना है। हमें तो मनुष्य की आज़ादी करनी चाहिए। मनुष्य विचारशील हो तो दौड़ते-

सोचने भी देख सकता है कि भविष्य हाथ-उद्योग का है। किसी भी तरह आप बहनों को कातने-बुनने का प्रोत्साहन देंगे, तो इससे आप कुछ खोयेंगे नहीं। नंगों को ढँकने में वे सहायक बनेंगी।

"आपने जितना चाहा था मैंने उससे बहुत ज्यादा दे दिया है। अमृतलाल और केशरीप्रसाद को देने के लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ। श्रीमती देसाई से कहिये कि मुझे आशा है वे थोड़े दिन आश्रम में आकर रह जायेंगी।

सेवक
मो० क० गांधी"

दूसरा पत्र डॉ० महता को लिखा :

"भाई श्री प्राणजीवन

"कितने ही दिनों से तुम्हें पत्र नहीं लिख सका। मुझे यहाँ की परवा लिख चाहता है उससे काम चलाता हूँ। भीख माँगने नहीं निकलता। इस समय मुझे रुपये की बड़ी जरूरत है। इमारती काम हो रहा है इसमें चालीस हजार रुपये खर्च कर चुका। साठ हजार रुपये और अवश्य खर्च करने पड़ेंगे। कम-से-कम डेढ़ सौ आदमियों का प्रबंध करना है और पैसे रुपये लगाने हैं। कपड़े का काम बहुत बढ़ता जा रहा है। अहमदाबाद की दुकान के बाद मुझे बहुत-से जुलाहों से काम पड़ा है। लगभग तीन सौ स्त्रियाँ चरखा चलाने लग गयी हैं। मेरा खयाल है कि थोड़े अरसे में हाथ का काता सूत ही मन दो मन रोज मिलेगा। ये स्त्रियाँ बेकार थीं। उन्हें ५ या मिलता है। शहर के तीस-एक जुलाहे भी काम करने लग गए हैं। इनमें कुछ ढेड़ हैं। वे मजदूरी करते थे अब स्वतंत्र धंधा कर रहे हैं। इस काम को मैं बहुत महत्त्व का समझता हूँ। इसमें भी मुझे अधिक रुपया चाहिए। मेरा अनुमान होता है कि इसमें दस हजार रुपया लगाना पड़ेगा। राष्ट्रीय पाठशाला का काम भी रखना ही जरूरी है। मुझे मालूम होता है कि इस समय भी पाठशाला के लड़के उसी श्रेणी के दूसरे लड़कों से बढ़कर

हैं। उनमें निर्ममता आदि जो गुण आ गये हैं, उन्हें तो सभी साफ तौर पर देख सकते हैं। मैं देखता हूं कि इस पाठशाला में हर महीने एक हजार रुपया लगेगा। अभी तो खर्च कम है। दोनों कामों में मैं जुट जाऊँ, तो बेशक उन्हें बहुत बढ़ा दूं। किन्तु यह नहीं होता। तो भी मैं देखता हूं कि दोनों अच्छे चल रहे हैं। तुमसे मैं अभी ही बड़ी रकम माँग रहा हूं और हमेशा के लिए चाहता हूं कि और जगह से मिलने के बाद जो कमी रहे, उसे तुम पूरी कर दो। इतना दे सको, तो देना। तब मैं निश्चिन्त हो जाऊँगा। मेरा काम पसन्द न हो तब तो मैं माँग ही नहीं सकता। लेकिन तुम इसे ठीक समझो, तो मदद देने में संकोच न करना।

मेरा भरती का काम तुम देख रहे होगे। अपने सारे कामों में इसे सबसे कठिन और बड़ा मानता हूँ। इसमें सफलता मिल जाय, तो सच्चा स्वराज्य सहज ही मिल सकता है।

मोहनदास के बन्दे मातरम्'

आज खूब विश्राम मिला, इसलिए बापू ने बहुत से पत्र लिख डाले और रमणभाई की 'राईनो पर्वत' और हास्य मंदिर' पुस्तकें पढ़ने को मँगायीं।

देवदास को पत्र :

तुम्हारे पत्र बहुत नियमित आते हैं। यह मुझे बड़ा अच्छा लगता है। मैं नियम पालन करना चाहता हूँ, परन्तु मेरे पत्रों की हमेशा प्रतीक्षा न करनी चाहिए। तुम्हारा पत्र आज नहीं मिला। मि नटेशन संबंधी लंबाई जानने लायक है। तुम्हें जैसा अनुकूल हो वैसा करना। जिस काम में तुम इस समय लगे हुए हो, वह इतने महत्त्व का है कि शायद अभी तुम्हें उसकी कल्पना भी नहीं हो सकती। साधारणतः ऐसे कामों में बहुत होशियार और बुजुर्ग आदमी को ही रखने की जरूरत है। ऐसा करने पर भी यह सवाल रहा कि मद्रास जैसी जगह में इसमें आदमी सीखने आयेंगे या नहीं। मद्रास प्रान्त को तुम हिन्दी का दान कर सको और

लोग उसे ले लें, तो एक महत्त्व का सवाल हल हो जाता है। तब यह कहा जा सकता है कि तुमने मद्रास और भारत के दूसरे भागों का संगम करा दिया। गंगा का पुल बनाने में जितनी कला और जितने धीरज की जरूरत है, उससे ज्यादा जो पुल तुम बना रहे हो, उसमें चाहिए। तुम हिन्दी को सरल और दिलचस्प बना लोगे, तो उसमें तुम्हारी चतुराई मानी जायगी। ऐसा करने के लिए तुम्हें जब फुरसत मिले तब हिन्दी गुजराती अंग्रेजी तमिल वगैरह के व्याकरण पढ़ लेने चाहिए। इससे तुम्हें कोई ऐसी सरल कुंजी मिल जायगी जिससे तुम लोगों को थोड़ा सिखाकर ज्यादा दे सकोगे। धातुओं पर से बने हुए शब्द खूब सिखा देने चाहिए। इसमें स्मरण-शक्ति पर थोड़ा बोझ पड़ता है। हिन्दीवालों को तमिल सीखने के लिए वहाँ भेजना है। उनकी सुविधाओं का विचार करने के लिए मैंने तुम्हें लिखा है। इस बारे में मि नटेशन और हनुमन्त राव वगैरह से बातें कर लेना। रेवाशंकर सोढ़ा और प्रेटम आश्रम में लौट आये हैं। यद्यपि जिम्मेदारी बढ़ गयी है, फिर भी मुझे यह पसंद है। हरिलाल राजकोट से चलकर आज रात की गाड़ी में यहाँ से गुजरेगा।

की माँ के गुजर जाने का समाचार मिला है। तुम उसे पत्र लिखना। इस घटना पर मैंने कल आश्रम में बहुत पवित्र चर्चा की। चर्चा को मैं पवित्र इसलिए कहता हूँ कि सबने बड़े विवेक और धर्म-वृत्ति से निश्चित उत्तर दिये। प्रश्न यह था : अब   माँ के मातम के लिए जाना चाहेगा। यह खर्च ८) रुपये का है। क्या आश्रम इसे उठा सकता है? क्या उसे उठाना चाहिए? जिसने देश के लिए फकीरी ले ली है, जिसने सेवा-धर्म अंगीकार किया है उसकी माँ मरती ही नहीं। क्योंकि जितनी स्त्रियाँ उसकी माँ बनने लायक हैं, वे सब उसकी माँ हैं। बाप भी नहीं मरता, क्योंकि सभी बड़े उसके पिता के समान हैं। सेवा उसकी स्त्री है। यह तो मर ही कैसे सकती है? और सारी दुनिया उसके भाई-बहन हैं। माँ का मातम मनाने जाना केवल रूढ़ि है। क्या उसका पालन करने के लिए, दुनिया के सामने झुकने के लिए आठ रुपया खर्च किया जाय? इस

प्रश्न की चर्चा की गयी। सबने शान्त भाव से जवाब दिया कि इस पर खर्च हरगिज नहीं किया जा सकता। सन्तोक और वा भी मौजूद थीं। फिर भी सबने तय किया कि इस बार यह नियम लागू न किया जाय। — और बहन की मर्जी पर छोड़ दिया जाय। बहुत करके वे जायेंगी।

'क्या वहाँ तुम कोई अखबार पढ़ते हो? यहाँ से कुछ भेज दूँ?

बापू के आशीर्वाद"

रात को हरिलाल से मिलने गये। शाम को भी स्टेशन पर गये थे, परन्तु मिले नहीं। रात को डाकगाड़ी पर भी यह समझकर गये कि मुझे जाना ही चाहिए।" हरिलाल दूसरे दर्जे में सो रहे थे। उन्हें खयाल तक नहीं था कि नडियाद में कोई उनसे मिलने आयेगा। दो-चार बातें हुई न हुई। बापू को भी बड़ी चोट पहुँची। घर आने पर उसाँसें भरते हुए सिर्फ इतना ही कहा: "लड़के का चेहरा भी बिलकुल बदल गया है।" दूसरे ही दिन देवदास को लिखा कि उसमें से माधुर्य निकल गया है। तुम इससे दुःखी न होना। परन्तु इतना समझ लो कि मनुष्य गिरने लगता है, तो फिर कितना गिरता है। उसके लिए जो अभिमान था कि वह स्वतंत्र स्वभाव का है, मालूम पड़ता है वह भी बापू के दिल से निकल गया।

'हाईनो पर्वत' पढ़ डाली। पहली बार पढ़नेवाले को जितना आनन्द हो सकता है, उतना आनन्द बापू को हुआ।

१-७-'१८

आज भी विश्राम मिला। पत्र लिखे। यह तो मर्यादार बात होगी कि रसोइये को ३६) रुपया वेतन लोगों के खर्च से दिया जाय। आज रसोइया और नौकर की व्यवस्था है ही। हाथ से भोजन बनाने का नियम हुआ। 'हास्य मंदिर' पढ़ना शुरू किया। बड़े खुश हो रहे थे। जब से रिक्रूटिंग का काम हाथ में लिया, तब से ऐसे बहुत लोगों के पत्र आया करते हैं कि अहिंसाधर्मी हिंसा का उपदेश कैसे दे सकता है। इनमें से एन्ड्रूज की चर्चा

का एक बड़ा पुरस्कर्ता बन गया। इन्हें इस बारे में लिखे गये सभी पत्र अलग छपवाने लायक हैं। मिस पेरिंग ने भी इस मामले में एक बार लिखा था :

¶ "वाइसराय के नाम आपका पत्र मैंने पढ़ा है। मैं यह नहीं समझ सकी कि सत्याग्रही के नाते आपके विचारों और भावनाओं के साथ यह कैसे सुसंगत है। या दूसरे शब्दों में कहूँ, तो जो दृढ़ रूप में अहिंसा को मानता है और जिसने सत्याग्रह के प्रयोगों के लिए अपना सारा जीवन अर्पण कर दिया है, वह औरों को किसी भी तरह युद्ध में शरीक होने और दूसरों से लड़ने के लिए कैसे कह सकता है?'

इसका उत्तर :

¶ "जो आदमी मारना चाहता है, परन्तु अपंग बना दिया जाने के कारण वैसा कर नहीं सकता, उसे मैं क्या सलाह दे सकता हूँ? म उसमें अ—अहिंसा का—सद्गुण वह समझ सके इससे पहले अपना जो हाथ वह गँवा बैठा है, वह उसे मुझे वापस दे देना चाहिए। जवान हिन्दुस्तानियों को सेना में भरती होने की सलाह मैं सदा देता रहा हूँ। परन्तु अब तक उसका सक्रिय प्रचार करने से मैंने अपने-आपको रोक रखा था। इसका कारण इतना ही था कि देश के राजनैतिक जीवन में और खुद युद्ध में काफी दिलचस्पी लेने की मुझे अन्दर से प्रेरणा नहीं हुई थी। परन्तु दिल्ली में मेरे सामने कठिन समस्या आ खड़ी हुई। मुझे एकदम सूझ पड़ा कि सेना में भरती होने के प्रश्न पर गंभीरता से विचार न करूँ, तो इसका अर्थ होगा कि मैं जीवन के सबसे बड़े सवाल को काफी महत्व नहीं देता। हमें या तो इस राज्य से मिलनेवाले सभी लाभ छोड़ देने चाहिए या युद्ध-संचालन के काम में अपनी पूरी शक्ति से उसे मदद देनी चाहिए। लाभों का त्याग करने को हम तैयार नहीं हैं। हिन्दुस्तानियों को तो दोहरा कर्तव्य-पालन करना है। वे शान्ति का सन्देश फैलाना चाहते हों, तो भी उन्हें पहले युद्ध करने की शक्ति हासिल करनी चाहिए। यह न्योता मैंने दी। यह भयंकर है पर सत्य है। जो मनुष्य लड़ने के लिए अयोग्य है, वह न लड़ने में निहित गुणों के बारे में अपने अनुभवों

का सकता नहीं दे सकती। इससे मैं यह अनुमान नहीं लगाना चाहता कि हिन्दुस्तान को लड़ना ही चाहिए। किन्तु इतना जरूर कहना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान को लड़ने की कला आनी चाहिए। अहिंसा का अर्थ है, मारने या चोट पहुँचाने की इच्छा को मिटा देना। अहिंसा ऐसे ही लोगों के प्रति की जा सकती है जो हमसे हर तरह बढ़िया हों। इसका अर्थ यह हुआ कि पूर्ण अहिंसा-धर्मी को अंतिम पूर्णता-प्राप्त होना चाहिए। तब क्या इसका अर्थ यह हुआ कि हम सबको पूरे प्रेममयी बनने से पहले सैनिक बनने की कोशिश करनी चाहिए? यह अनावश्यक है। हमारे लिए इतना काफी है कि दुनिया के सामने अहिंसा खड़े रह सकें। इस प्रकार की हिम्मत हममें होना बिलकुल जरूरी है। कुछ लोगों में ऐसा साहस लड़ने की तालीम पाने के बाद ही आ सकता है। मैं जानता हूँ कि मैंने अपनी दलील बड़े बेढंगे तौर पर पेश की है। मैं नये अनुभवों से गुजर रहा हूँ। अपने आन्तरिक विचार व्यक्त करने की मैं खूब कोशिश कर रहा हूँ। कुछ बातें मुझे अभी साफ दिखाई नहीं दे रही हैं। जो चीजें मेरे मन में साफ हो गयी हैं, उन्हें दूसरों से कहने के लिए मैं शब्द ढूँढ रहा हूँ। प्रकाश और मार्ग-दर्शन के लिए मैं प्रार्थना कर रहा हूँ और खूब विचारपूर्वक काम कर रहा हूँ। मुझे जरूर लिखना और मेरी जो दलीलें तुम्हें कच्ची लगने लायक न लगें उनके लिए हर शब्द और हर वाक्य पर लड़ना। इससे मैं अपना मार्ग खोजने में समर्थ होऊँगा।

—बापू"

इसी दिन मगनलालभाई को आश्रम की व्यवस्था निश्चित बनाने के लिए लिखते हुए नीचे के उद्‌गार प्रकट किये :

'पुस्तकें आनी ही चाहिए। दूसरा सामान भी मँगा लेने की जरूरत मालूम होती है। की भलाई का हमने दुरुपयोग किया मालूम होता है। वे आग्रहपूर्वक नहीं कहते इसलिए हम चिपटे रहते हैं। २४ घंटे की धमकी देने पर हम जो करें वह मैं चाहता हूँ कि अभी ही करो। हम खुद अपने को धमकी दें, इससे बड़ी दूसरी कोई चीज ही नहीं।"

रात को 'राइनो पर्वत' के लिए कहने लगे : वीणावती को दाखिल करके रमणभाई ने नाटक का मूल्य घटा लिया। पिछले भाग में ऐसा हो गया है मानो विधवाओं के पुनर्विवाह की पुस्तिका लिख रहे हों। इसमें शक नहीं कि नाटक उत्तम है, परन्तु यह दोष तो उसमें है। उसे खूब ऊँचा उठाया, पर आगे चलकर गिर गये।

४-७-१८

आज भी दुपहर तक विश्राम था। ठक्कर आये स्वामी आये। स्वामी के साथ सारे दिन अहिंसा और हिंसा की माथापच्ची। आज मथुरादास का एक बहुत ही चतुराई समझदारी और गहरे निरीक्षण से भरा हुआ पत्र आया। आप गये, उस समय की सभी चिट्ठियों संबंधी अपनी छाप का वर्णन किया है। अत्यन्त सूक्ष्म विवेचन किया है। उन्हें पत्र लिखा :

"चि॰ मथुरादास

"तुम्हारा पत्र मैंने बड़े ध्यान और दिलचस्पी से पढ़ा। इसे लिखने में तुमने बड़ी समझदारी से काम लिया है। इसमें जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है। भाषा विनयपूर्ण और रसमयता से भूषित है। इसलिए मुझे बड़ी मीठी लगती है। तुम्हारे पत्र से तुम्हारी निर्भयता प्रकट होती है। × × ×

कुछ-कुछ बातों का पता नहीं था। उनके लिए तुमने जो लिखा है उसका आभास था। तुमने न्याय प्राप्त कर लिया है। मेरा मन इतना नहीं था कि कोई उत्तर कर सकूँ। तुम्हारी ही हुई सलाह से मैं इस बार मैं बाद उपाय कर सकूँगा। × × ×

मेरे ऐसा मानने से इसे नुकसान नहीं पहुँचता जैसे कि तुम्हारे शरीर या पढ़ाई को धक्का नहीं पहुँचा। हम गूढ़ ऊँचे शास्त्रों को पालन करें, तो कोई अड़चन नहीं आती। जो आदमी अपना पद नम्र रखता है उसके पद में भेद बढ़ाकर कुछ नहीं सकते। फिर भी जल्दबाज़ कुछ करने से वहाँ स्थायी निश्चय नहीं कर सकते। इसी तरह हम गूढ़

"मैं जानता हूँ कि आप मेरे पत्र को पूर्णतापूर्वक नहीं समझेंगी।

सेवक

मो० क० गांधी"

¶ "भाई श्री जिना,

"मैं खूब चाहता हूँ कि फौजी भरती के मामले में आप साफ-साफ स्पष्ट हैं। क्या आप इतना नहीं देख सकते कि अगर हरएक होमरूल-लीगर सैनिक भरती करनेवाला शक्तिशाली एजेण्ट बन जाय और उसके साथ ही वैधानिक हकों के लिए लड़ता रहे, तो हम कांग्रेस-लीग योजना फिर उन परिवर्तनों के साथ, जिन पर हम सहमत हों, निश्चित रूप से पास करा सकते हैं। अगर हम सैनिक भरती करें, तो इस समय हम जितना कर सकते हैं, उससे कहीं अधिक असर कारक तरीके पर कर सकते हैं। 'पहले आप सैनिक भरती का दफ्तर खोलिए, बाद में आपको सब कुछ मिल जायगा।' हमें लोगों को यह रास्ता बताना चाहिए। इसका ख्याल नहीं करना चाहिए कि लोग हमारा कहना मानेंगे या नहीं। मैं आपसे जोरदार वक्तव्य की आशा रखता हूँ, लँगड़े वक्तव्य की नहीं।

मैं जानता हूँ कि आप इस पत्र से कुछ भी बुरा नहीं मानेंगे।

सेवक

मो० क० गांधी

आजकल जो मिलने आते हैं, उनके साथ फौजी भरती की ही चर्चा होती है। इस चर्चा के मुख्य मुद्दे :

स्वराज्य का अर्थ—इंग्लैण्ड के साथ बराबर पूरी साझेदारी। इस लड़ाई में इंग्लैण्ड की सहायता कर सकें, तो इंग्लैण्ड जो हम पर राज कर रहा है, उसके बजाय हमारा प्रभाव उस पर रहेगा। हमें फौजी तालीम लेने की जरूरत है। अहिंसा धर्म का पालन करनेवाला मैंने अपने जैसा हिन्दुस्तान में कोई देखा ही नहीं। मैं

तो प्रेम से भरा हुआ हूँ। जैसे अमीरों के पाप मेरे बराबर कोई नहीं जानता वैसे ही उनके पुण्य भी मेरे बराबर कोई नहीं जानता। जिसे शस्त्र-विद्या सीखनी है, जिसे मारना जानना है, उसे मैं हिंसा करना भी सिखाऊँगा। इस समय मैं अगर कुछ न कर सकूँ तो आप यह मानें कि मेरी तपस्या में कमी है। जिसे मारे बिना मरना न आता हो, उसे मार कर मरना सीखना चाहिए।

रंगा अय्यर नाम के एक एडवोकेट का पत्र आया। दिल्ली में मिले थे तो उन्होंने वेदा-सत्याग्रह की सहानुभूति में चालीस सभाएँ करने को कहा था। किन्तु ऐसा न कर सकने पर अफसोस जाहिर किया और वेदा की जीत पर बधाई दी। उन्हें उत्तर :

¶ "भाईश्री रंगा अय्यर,

'आपकी बधाई के लिए मैं आपका आभारी हूँ। आप देहात में चुस्त-सी सभाएँ न कर सके इस बात का मैं अनर्थ नहीं करूँगा। मैं जानता हूँ कि यह चीज कितनी मुश्किल है। फिर भी देहात में प्रवेश किये बिना हमारी होमरूल की योजनाएँ किसी काम की नहीं हैं। ग्राम जनता का पूरा विश्वास प्राप्त कर सकें, तो हम अपने ध्येय की तरफ बेरोक-टोक कूच कर सकेंगे। इतनी सीधी-सादी बात हम नहीं समझते। यह हमारी आँखों के सामने होनेवाले करुण नाटक की सबसे करुण घटना है। इससे आपको यदि निकलना हो तो अपने पत्र के बन्द हो जाने का खतरा उठाकर भी आपको हिन्दी सीख लेनी चाहिए और ग्रामवासियों के बीच रहकर काम करने लग जाना चाहिए। मैं जानता हूँ कि आपने अपने पत्र के लिए बड़ी मेहनत की है। किन्तु मैं उस परिश्रम को लगभग व्यर्थ हुआ समझता हूँ। हमने परिश्रम की जो शिक्षा प्राप्त की है, उसके सुफल हमें करोड़ों ग्रामवासियों को देने चाहिए। परन्तु हम तो अपने भीतर ही भीतर विचारों की जुगाली किया करते हैं और अँग्रेजों पर

वहीं बँधे हुए कोल्हू के बैल की तरह गोल चक्कर लगाते हुए उसी जगह रहने पर भी यह मानते हैं कि प्रगति कर रहे हैं।

सेवक
मो० क० गांधी"

१-५-१८

आज भी विश्राम। मोर्ले पढ़ा (दूसरी जिल्द)। आज गवरीभाई के पिता का एक जलता हुआ (उत्तेजनापूर्ण) पत्र आया। उन्हें लिख रखना ही लिखा

"भाई श्री मणिभाई

आपका पत्र मिल गया। आपकी भावना को समझ सकता हूँ परन्तु मैं सहायता नहीं कर सकता। समय अपना काम कर रहा है। वह आपको शान्ति देगा।"

देवदास को लिखा :

"मैं चिन्ता में पड़ गया हूँ। हमारा नियम तो तुम जानते ही हो। बीमार हरगिज नहीं पड़ना चाहिए। बीमार न होने के लिए संयम की ही जरूरत है। काफी व्यायाम और जितनी चाहिए, उतनी ही खुराक—इस तरह दोनों का ध्यान रखा जाय, तो तंदुरुस्ती हरगिज नहीं बिगड़ सकती।"

[illegible] की देशसेवा करनेवाले [illegible] को लिखा :

"[illegible] का [illegible] और [illegible] मिल रही है [illegible] कि [illegible] में [illegible]। [illegible] [illegible] है कि [illegible] [illegible]। [illegible] है उसे मैं समझ सकता हूँ। [illegible]

के लिए उदाहरण बन जायगी। आप जानते ही हैं कि नागपुर के मामले में उन्होंने कितनी भलाई से काम लिया था। आपसे उनके सहमत हो जाने से आपकी शक्ति दुगुनी हो गयी। अपने घर से ही सुधार शुरू करने का विचार न करने की हमारे सुधारकों को आदत पड़ गयी है। अब अपने-आपसे ही शुरूआत करने में हमें कठिनाई पड़ती है। परन्तु आभार मानने के लिए लिखा गया यह पत्र उपदेशात्मक हो गया। इस अपराध के लिए क्षमा कीजिये। मैं जानता हूँ कि देवदास के मामले में कोई गंभीर बात होगी, तो आप तार दे देंगे।

सेवक
मो० क० गांधी'

शास्त्रियार ने लिखा कि :

"'क्रानिकल' में देखता हूँ कि आपके प्रयत्न को अच्छी सफलता मिल रही है।"

उन्हें जवाब दिया :

"आपने 'क्रानिकल' में कौनसी रिपोर्ट पढ़ी, यह मैं नहीं जानता। रंगरूट भरती करनेवाला एक सरकारी अफसर मेरा नामराशि है। आपने जो उत्साहपूर्ण रिपोर्ट पढ़ी, वह उसकी होगी। मुझे तो अभी तक एक भी रंगरूट नहीं मिला सिवा मेरे कुछ साथियों के। वे या तो सैनिक के रूप में काम करने को या अपनी एवज में दूसरे ढूँढ़ देने के वचन से बँधे हुए हैं। काम बहुत ही कठिन है। अपनी जिन्दगी में इतना मुश्किल काम हाथ में लेने का मौका मुझे पहले कभी नहीं आया। फिर भी किसी परिणाम के बारे में पहले से कुछ कहना बहुत जल्दी होगा।

सेवक
मो० क० गांधी'

१-७-१८

एण्ड्रूज ने यह प्रश्न पूछा था कि आप अहिंसाधर्मी होकर हिंसा का उपदेश कैसे दे सकते हैं? इसका उत्तर देते हुए बापू ने एक पत्र लिखा :

¶ "जब मैंने अपना नाम सैनिक भरती के काम में दिया उसी समय मैत्री को पत्र में बता दिया था कि मैं दोस्त या दुश्मन किसीको मारने वाला नहीं हूँ। लेकिन जिन लोगों को लड़ने में आपत्ति न हो, पर जो या तो कायरता के कारण या अंग्रेजों के प्रति द्वेष के कारण लड़ने को तैयार नहीं होते उनके प्रति मेरा क्या कर्तव्य है? क्या उन्हें मुझे यह नहीं कहना चाहिए, 'आप मेरा मार्ग अपनायें तो बहुत अच्छी बात है। लेकिन मेरा रास्ता स्वीकार न हो तो आपको अपनी कायरता या द्वेष जो कुछ हो, उसे छोड़ देना चाहिए और लड़ना चाहिए?' जो आदमी मारने की शक्ति नहीं रखता उसे आप अहिंसा नहीं सिखा सकते। गूँगे मनुष्य को आप मौन की खूबी या मौन के लाभ नहीं समझा सकते। यद्यपि मैं जानता हूँ कि मौन उत्तम वस्तु है, फिर भी गूँगे आदमी की जबान खुले इसके लिए जो उपाय करने हैं, उनके करने में मुझे हिचकिचाना नहीं चाहिए। मैं किसी भी राज्यतंत्र को नहीं मानता। फिर भी स्वेच्छाचारी राज्य से शायद पार्लमेंटरी राज्य ज्यादा अच्छा होगा। हिंसक (सैनिक) मनुष्यों को अपनी हिंसा कम-से-कम हानिकारक ढंग से करना सिखाकर उनके सिखाने की क्रिया में ही अहिंसा के सद्गुण समझाने में शायद मैं सफल हो जाऊँ। मेरे ख़याल से आप मानेंगे कि इसी तरह अहिंसा या सत्याग्रह के सिद्धान्त का मैं अधिक अच्छी तरह प्रचार कर सकता हूँ। अगर मैं अपनी स्थिति अच्छी तरह स्पष्ट न कर सका होऊँ तो हो सके तो आप मुझसे मिलने आ जायें।

इसके बाद एक और पत्र इसी बारे में लिखा। उसकी नकल नहीं रह सकी। इस संबंध में एक आखिरी पत्र आज एण्ड्रूज को लिखवाया, जो बापू के विचारों को पूरी तरह प्रकट करता है।

¶ "प्रिय पार्सी,

"तुम्हारे सभी पत्र मिल गये। इन्हें मैं बहुत कीमती मानता हूँ, यद्यपि उनसे मुझे बहुत थोड़ा आश्वासन मिलता है। तुमने जो कठिनाइयाँ बतायी हैं, उनसे मेरी कठिनाइयाँ अधिक गंभीर हैं। तुमने जो कठिनाइयाँ उपस्थित की हैं उनका जवाब तो मैं दे सकता हूँ। इस पत्र में मैं अपनी कठिनाइयों को शब्दबद्ध करने का प्रयत्न करूँगा। और सब बातों को एक तरफ रखकर इन कठिनाइयों ने ही मेरा दिमाग भर दिया है। मैं दूसरे काम करता दिखाई देता हूँ, पर वे केवल यांत्रिक रूप में करता हूँ। खूब विचार करने से मेरे शरीर पर भी असर पड़ा है। किसीके साथ बात करना भी मुझे अच्छा नहीं लगता। मुझे कुछ लिखना भी अच्छा नहीं लगता मेरे ये विचार भी नहीं। इसीलिए मैं यह पत्र लिखने लगा हूँ। देखता हूँ कि अपने विचार स्पष्टता से प्रकट कर सकता हूँ या नहीं। सच तो यह है कि मैं अपनी कठिनाइयों का पार ही नहीं पा सका हूँ। तब फिर उन्हें हल करने की तो बात ही कहाँ रहती है! उनके हल होने से मेरे तात्कालिक कार्य पर कोई असर नहीं होगा। भविष्य की कुछ नहीं कह सकता। अगर मैं और जीता रहा, तो किसी भी तरह इस भेद का पता पा सकूँगा।

'तुम कहते हो कि 'भारतवासियों ने एक जाति के रूप में अतीत में पूरे ज्ञानपूर्वक हिंसा का त्याग किया था और ज्ञानपूर्वक मानवता के पक्ष में खड़े रहना पसन्द किया था। क्या यह बात ऐतिहासिक दृष्टि से सच है? मुझे तो महाभारत या रामायण में या अपने प्रिय तुलसीदास में जो आध्यात्मिक दृष्टि से वाल्मीकि से भी बहुत बढ़कर है, किसीमें भी इस चीज का नामोनिशान नहीं मिलता। इस समय मैं इन ग्रंथों के आध्यात्मिक अर्थों का विचार नहीं करता। इनमें अवतारी पुरुषों को अवश्य खून के प्यासे, वैर से भरे और दुश्मन के प्रति दयाहीन बताया गया है। शत्रु का पराभव करने के लिए उन्होंने कल्पित-शक्तियों का आश्रय लिया

अपने उदाहरण से कर दिखाया। काश, यह सच होता ! परन्तु मैं देखता हूँ कि मैंने ऐसा कुछ भी नहीं कर दिखाया। अफ्रीका में कम मित्रों ने कहा कि 'पैसिव रेसिस्टेन्स' भारतीयों ने कमजोरों के हथियार के रूप में उठाया है तब मैं इसे अपनी बदनामी समझता था और उन पर हँसता था। परन्तु ऐसा कहनेवाले सच्चे थे और मैं झूठा। मेरे अकेले के बारे में और दूसरे कुछ साथियों के बारे में यह कहा जा सकता है कि यह बलवानों का हथियार था और उसे 'सत्याग्रह' कहा जा सकता था। किन्तु अधिकांश लोगों के लिए तो यह केवल शुद्ध 'पैसिव रेसिस्टेन्स' ही था। उसका आश्रय उन्होंने इसीलिए लिया था कि उनमें हिंसा का मार्ग अपनाने की ताकत नहीं थी। इस लोक का अनुभव मुझे सेवा में बार-बार हुआ। यहाँ के लोग दुबला में अधिक मुक्त होने के कारण वे मेरे साथ कुछ भी संकोच रखे बिना बात करते हैं और मुझसे साफ कहते हैं कि यह उपाय उन्होंने इसीलिए स्वीकार किया है कि दूसरा मार्ग अख्तियार करने की उनमें शक्ति नहीं है। उस दूसरे मार्ग को वे मेरे मार्ग से बहुत ज्यादा बहादुरी का मानते हैं। मुझे भय है कि बम्पारन या सेवा के लोग निर्भय होकर फाँसी के तख्ते पर नहीं चढ़ सकेंगे और न गोलियों की झड़ी के सामने खड़े रह सकेंगे और इतनी जोखिम के सामने यह भी नहीं कह सकेंगे कि हम कर नहीं देते या तुम्हारे लिए काम नहीं करते। यह चीज मुझे उनमें दिखाई ही नहीं दी। इसलिए मेरी दलील यह है कि जब तक उन्हें अपनी रक्षा करने की तालीम नहीं मिलती, तब तक वह निर्भय-वृत्ति वे प्राप्त कर नहीं सकेंगे। अहिंसा का पाठ तो उस आदमी को देना है, जिसका जीवन बीरा से उमर रहा हो और जो अपने विरोधी के सामने छाती खोलकर सीधा खड़ा रह सके। मेरे ख्याल से अहिंसा को पूरी तरह समझने और अच्छी तरह पचाने के लिए शारीरिक साहस का पूरा विकास अनिवार्य है।

"मैं इस बात में तुम्हारे साथ सहमत नहीं हूँ कि हिन्दुस्तान अपने नैतिक बल से पश्चिम से या पूर्व से उत्तर से या दक्षिण से कितनी ही सेना उतर आये तो भी उसे अपने किनारे से पीछे हटा सकता है। हमारा यह है

कि ऐसा नैतिक बल वह किस तरह पैदा कर सकता है ? उस नैतिक बल के प्राथमिक सिद्धान्त भी वह तब समझ सकता है, जब पहले वह अपने शरीर को बलवान् बना लेगा। आज करोड़ों मनुष्य हर रोज प्रातःकाल आत्मचिन्ता के नाम की इस प्रकार हँसी उड़ाते हैं :

'तद् ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघ'

वह निष्कल ब्रह्म मैं हूँ, पंच महाभूतों से बना हुआ यह देह मैं नहीं हूँ।

'प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वम्'

मैं हर रोज सबेरे अपने हृदय में स्फुरित होनेवाले आत्मतत्त्व का स्मरण करता हूँ।

'यस्मो विभान्ति निखिला मधुरप्रहेम
यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचुः।

जिसके अनुग्रह से समस्त प्रकार की वाणी प्रकट होती हो वेद भी जिसका वर्णन 'नेति-नेति' कहकर करते हैं।

"मैं कहता हूँ कि ऊपर के श्लोक बोलने में हम आत्मचिन्ता की हँसी उड़ाते हैं, क्योंकि उसके मर्म अर्थ का कुछ भी विचार किये बिना उसे तोते की तरह रट जाते हैं। इस श्लोक में जो कुछ है उसके पूरे अर्थ का एक भी भारतीय को साक्षात्कार हो जाय तो हिन्दुस्तान पर चढ़ाई करनेवाली बलवान्-से-बलवान् सेना को हरा देने के लिए वह अकेला काफी होगा। किन्तु यह ताकत हममें आज नहीं है। और जब तक देश में स्वतंत्रता और निर्भयता का वातावरण न फैल जाय तब तक यह आ भी नहीं सकेगी। सवाल यह है कि यह वातावरण कैसे पैदा किया जाय ? जब तक देश के बड़े भाग के लोगों का यह ख्याल रहेगा कि उनमें किसी मनुष्य या पशु की हिंसा के विरुद्ध अपनी रक्षा करने की ताकत नहीं है तब तक ऐसा वातावरण पैदा नहीं हो सकता। यह तो साफ है कि एक बालक को मैं मोक्ष का अर्थ समझाऊँ उससे पहले उसमें पूर्ण मनुष्यत्व का विकास होना चाहिए। एक हद तक उसमें इस शरीर की और आत्मरक्षा की

दुनिया की आसक्ति पैदा होने देनी चाहिए। तभी इस शरीर के और दुनिया के क्षणभंगुर स्वरूप की कल्पना उसे आसानी से दे सकता हूँ और समझा सकता हूँ कि यह शरीर हमें भोग भोगने के लिए नहीं मिला, बल्कि उनसे मुक्ति पाने के लिए मिला है। इसी तरह किसी भी मनुष्य के मन में अहिंसा यानी पूर्ण प्रेम का सिद्धान्त जमाने के लिए यह मन प्राणवान् शरीर द्वारा अच्छी तरह विकसित होकर परिपक्व हो जाय, तब तक मुझे प्रतीक्षा करनी चाहिए। अब मेरी मुश्किल यहाँ पैदा होती है कि इस विचार को व्यवहार में किस तरह परिणत किया जाय ? 'प्राणवान् शरीर' होने का क्या मतलब ? हिन्दुस्तानियों को शस्त्र धारण करने की तालीम में यहाँ तक जाना पड़ेगा ? हरएक व्यक्ति को यह तालीम लेनी पड़ेगी या स्वतंत्रता का वातावरण उत्पन्न हो जाय और लोगों में हथियार उठाये बिना भी अपने आस-पास के वातावरण से ही आवश्यक साहस आ जाय, इतना ही काफी है ? मैं मानता हूँ कि दूसरा विचार सही है। इसलिए मौजूदा परिस्थिति में मेरी बात बिलकुल सच है। जब मैं हरएक हिन्दुस्तानी से सेना में भरती होने के लिए कहता हूँ, तो साथ-साथ सदा उसे यह बताता रहता हूँ कि वो सेना में भरती होते हैं, वे खून की प्यास बुझाने को नहीं बल्कि मौत का डर न रखना सीखने के लिए हैं। सर हेनरी मेईन का यह कथन देखो। उसे मोर्ले के संस्मरण (भाग दूसरा) से उद्धृत करता हूँ :

' 'दुनिया की महान् जातियों के जीवन में मृत्यु का बहुत ऊँचा स्थान है। बहादुर और उदारचित्त का यह गुण ही है कि वह जीवन से कुछ खास वस्तुओं को पहले पसन्द करेगा। उन चीजों के बारे में मनुष्य के मन में शंका नहीं होती और वह उनके लिए मरने से नहीं डरता। सच्ची स्वाभाविक बुद्धि जीवन के अंतिम ध्येय के रूप में अच्छी तरह मरने की कला सीखने के पीछे लगी रहती है। सचमुच जिसने अच्छी तरह मरना सीख लिया उसने अपना जीवन व्यर्थ नहीं गँवाया। यह जीवन का सबसे बड़ा कर्तव्य है। जिसे मरने की कला का ज्ञान हो गया है, उसीको स्वतंत्रता का भान हुआ है, वही सच्ची मुक्त-दशा में रह सकता है।

वह किसीसे डरता नहीं। वह अपनी तरह सन्तोष और शान्ति से जीवन बिता सकता है। 'जब जीवन भार-स्वरूप बन जाय, तब यह समझ लेना चाहिए कि मरने का सही अवसर आ गया है। उस समय मृत्यु आशीर्वाद के समान है और जीवन में कोई सार नहीं रह जाता। फिर मोर्ले कहता है : 'जब उसका समय आ गया तब डायर की चोटी पर चढ़ते समय केर्रेन की गति उसके शब्दों जैसी ही उम्दा और मजबूत थी।'

"सैनिक भरती के अपने हरएक भाषण में सैनिक के कर्तव्य के इस भाग पर मैंने सबसे अधिक जोर दिया है। मेरा एक भी भाषण ऐसा नहीं हुआ, जिसमें मैंने कहा हो कि 'हम जर्मनों को मारने के लिए जायें'। मेरे सभी भाषणों की ध्वनि यही है कि 'हम भारत और साम्राज्य की खातिर लड़ाई में जायें और मरें। मेरी माँग के जवाब में खूब अधिक भरती हो जाय और हम सब फ्रांस में जाकर लड़ाई का पलड़ा जर्मनी के विरुद्ध बदल सकें, तो मेरा दावा है कि भारत को हमारी बात की सुनवाई कराने का अधिकार प्राप्त हो जायगा और भारत स्थायी सुलह करा सकेगा। अब आगे कल्पना करो कि निर्भय मनुष्यों की सेना खड़ी करने में मैं सफल हो जाऊँ और ये लोग खाइयों में पहुँच जायें और प्रेमपूर्ण हृदयों से अपनी बन्दूकें पटककर जर्मनों को चुनौती दें कि अपने मानव-बन्धु हम पर गोली चलाओ तो मैं कहता हूँ कि जर्मन-हृदय भी पिघल जायगा। मैं जर्मनी पर यह आरोप लगाने से इनकार करता हूँ कि वे केवल राक्षसी वृत्तिवाले ही हैं।

इस प्रकार इन सब बातों का अर्थ यह हुआ कि अपवादस्वरूप परिस्थिति में एक आवश्यक बुराई के तौर पर युद्ध का आश्रय लेना पड़ सकता है, जैसे हम अपने शरीर का लेते हैं। अगर हेतु शुद्ध हो, तो युद्ध को भी मानव-जाति की भलाई में बदला जा सकता है। परन्तु अहिंसावादी युद्ध के प्रति तटस्थता से देखता हुआ अलग खड़ा नहीं रह सकता। उसे अपना चुनाव कर ही लेना चाहिए। या तो वह युद्ध में सक्रिय सहयोग दे या युद्ध का सक्रिय विरोध करे।

"तुम अपना यह डर बिलकुल छोड़ दो कि मैं राजनैतिक मसलों और झटपटों में फंस जाऊँगा। राजनैतिक मसले और झगड़े मुझे अनुकूल पड़ ही नहीं सकते। अभी तो मेरा उनमें पड़ना कम-से-कम संभव है। दक्षिण अफ्रीका में भी मैं उनमें बिलकुल नहीं पड़ा। वहाँ मैं राजनैतिक हलचल में पड़ा जरूर। उसका कारण यह था कि उसमें मुझे अपनी मुक्ति जान पड़ी। माडॅम्यू ने मुझसे कहा था, 'देश की राजनैतिक हलचल में आपको भाग लेते देखकर मुझे आश्चर्य होता है।' विचार करने के लिए एक क्षण का भी समय लिये बिना मैंने जवाब दिया था : 'आप मुझे इसमें देख रहे हैं, क्योंकि मैं अपना धार्मिक और सामाजिक काम इसके बिना नहीं कर सकता।' मेरा खयाल है कि अपने जीवन के अन्त तक मेरा यही जवाब रहेगा।

'अब तुम यह शिकायत नहीं कर सकोगे कि मैंने तुम्हें कागज का एक टुकड़ा ही लिखा है। पत्र के बजाय मैंने तो तुम पर एक लम्बा चौड़ा निबन्ध ही ठेल दिया है, परन्तु तुम्हें यह बताना जरूरी था कि इस वक्त मेरे मन में क्या चल रहा है। यह सब पढ़कर इस पर अपनी राय देना और मेरे जो विचार तुम्हें गलत मालूम हों, उनकी निर्दय होकर चीरफाड़ करना।

'मैं आशा रखता हूँ कि तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर रहा होगा और तुममें शक्ति आ रही होगी। यह कहने की जरूरत शायद ही होगी कि जब तुम्हारी तबीयत सफर करने लायक हो जाय, तब हम सब तुम्हारा स्वागत करेंगे। प्यार।

मोहन

७-७-१८

आज रात आश्रम में गये। आश्रम में सबसे मिलने-जुलने और बहुत से भीतरी मामलों के फैसले में समय बिताया। मजदूरों के पत्र पर बैठक हुई। संघ भाइयों के बयान लिये। रात को नडियाद आये।

८-७-१८

तड़के ही उठकर नवागाँव के लिए रवाना हुए। नवागाँव बारेजड़ी से साढ़े दस मील है। पैदल जाने का इरादा था। साथ में मूँगफली और गुड़ के ऐसे लड्डू थे जिन्हें खाकर केलनबेक खुश हो जाय और चाकलेट से उनकी तुलना करे। बापू ने सिपाहियों की तरह हाथ में डिब्बा रखकर रास्ते में खाना शुरू कर दिया। साथ ही आनन्द से कहते जाते थे : 'सिपाहीगिरी करनी है। अफ्रीका में मैंने ऐसा बहुत किया है।'

बाद में 'अमर-रस' नाटक पर बातें चलीं। बोले कि 'महादेव 'अमर रस' तो अच्छा है। बाद में श्लोक भी अच्छे आते हैं। कथानक तो निकम्मा है, परन्तु लिखावट अच्छी है। ऐसा मालूम होता है कि दौलतराम पण्ड्या स्वाभाविक लिखते हैं।

मैंने कहा : मैंने पढ़ा नहीं, इसलिए क्या कहूँ? परन्तु विशद शैली तो होनी ही चाहिए।

बापू बोले : तुम क्लिष्ट किसे कहते हो?

मैंने कहा : जो विचार अधिक सरल भाषा में रखा जा सके, फिर भी कठिन भाषा में उसे प्रकट किया गया हो और जिसमें कठिनता भूषण न होकर भारस्वरूप हो जाय वह क्लिष्ट है। और दौलतराम पण्ड्या की शैली ऐसी ही मानी जाती है।

बापू कहने लगे : नहीं, समझना मुश्किल हो उसे क्लिष्ट नहीं कह सकते।

मैंने कहा : रमणभाई में जो सरलता का गुण है वह दौलतराम पण्ड्या में है ही नहीं।

तो बोले : यह सच है। किन्तु उनकी कठिन भाषा को मैं क्लिष्ट नहीं कहूँगा, क्योंकि समझने में देर लगे इसलिए हम किसी भाषा को क्लिष्ट नहीं कह सकते।

मैंने कहा : जान-बूझकर कठिन बनाया गया हो, बिना कारण

कठिन बनाया गया हो, वह क्लिष्ट कहलाता है। विचार न समझने के कारण मणिलाल की भाषा कठिन मालूम हो सकती है, परन्तु वह क्लिष्ट नहीं है। अलंकारों के कारण कठिन मालूम होने से गोवर्धनभाई की भाषा क्लिष्ट नहीं, क्लिष्ट ही कहलाती है।

इस पर बापू बोले : हो सकता है। परन्तु क्या मणिलाल की भाषा कहीं जगह ऐसी नहीं है, जिसे सादे ढंग से प्रकट किया जा सकता था, उसे भी कठिन ढंग से प्रकट किया गया है?

मैंने कहा : नहीं।

बात यहीं रुक गयी। बाद में मैंने पूछा : अंग्रेजी लेखकों में क्लिष्ट भाषा किसकी है?

जरा विचार करके बोले : हमें क्लिष्ट लेखक पढ़ाये नहीं जाते, इसलिए क्या कहा जा सकता है?

मैंने कहा : जॉनसन तो नहीं कहा जा सकता?

वो कहने लगे : नहीं, हरगिज नहीं।

मैंने जरा हँसते-हँसते कहा : ऑस्टिन की 'ज्युरिस्प्रूडेन्स' क्लिष्ट कही जा सकती है?

बापू : मुझे तो नहीं मालूम हुई। उसका एक प्रकार का ढंग था, मगर मुझे तो उसमें बड़ा आनन्द आता था।

मैंने कहा : क्या सचमुच उसमें जासूसी जैसा मजा है?

वो बोले : नहीं। यह बात सच है कि मजा तो है ही नहीं। बाद में कहने लगे : तुमने 'स्टीवन्स डाइजेस्ट ऑफ एविडेन्स' पढ़ा है? उस पर तो मैं फिदा हूँ। हमें कानून की पुस्तकों को भी अपनी भाषाओं में लाना चाहिए। परन्तु हमारे वकीलों को गुजराती में बोलना ही कहाँ है? इन लोगों को पता ही कहाँ है कि इन पुस्तकों का गुजराती रूपान्तर कर देने से जनता की कितनी उन्नति हो सकती है? और हमारे विद्वानों के तो ऐसे सच्ची प्रवृत्ति हाथ ही नहीं आयी। रद्दी पुस्तकों का अनुवाद करते हैं, पर ऐसी कौन बात समझती है?

बापू : होंगे, परन्तु मुझे शंका है।

मैंने कहा : आप्पा तो आप यही कहना चाहते हैं न कि यह राजनैतिक पराधीनता आत्म-साक्षात्कार में भी बाधक होती है, क्योंकि आपने तो कहा ही है कि इसी कारण मैंने अपनी राजनैतिक प्रवृत्तियाँ हाथ में ली हैं।

बापू : हाँ यह बात सच है। कोई मनुष्य ऐसा निकल सकता है, जिसे बाधा न हो, परन्तु जनता का क्या हो?

मैंने कहा : किसी-किसी मनुष्य की ही बात मैं करता हूँ। जनता तो कभी भी आध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकेगी।

बापू : हाँ, जनता के संबंध में यह ठीक है। किन्तु मैं तो यह मानता ही हूँ कि ऐसा विप्लव हो रहा हो, तब अहमदाबाद में बैठा हुआ, तुम कहते हो वैसा, शास्त्री देखता ही रहे और मौनव्रतधारी हो, तो भी अपने विचार तक से वातावरण पर असर न डाले, यह हरगिज नहीं हो सकता। मैं नहीं मानता कि ऐसे पुरुष दुनिया में होंगे।

मैंने कहा : तब हम लोग यह बातचीत ही समाप्त कर दें। इसमें हम दोनों की राय मिल नहीं सकती। बाद में मैंने कहा कि आप छोटे-छोटों को निर्विन्द्रिय कहते हैं, तो क्या वे सूक्ष्मेन्द्रिय भी बने बैठे हैं?

बापू : नहीं, मैं तो जिनकी सूक्ष्मेन्द्रिय भी जाती रही हो उनके बारे में कहना चाहता हूँ। हाथ-पैर कटे हुए इन्सानों में भी मानने की निर्दयता होती ही है

मैंने कहा : इसे स्पष्ट करना होगा। क्योंकि जिसकी इन्द्रियाँ जाती रही हों उसे उन इन्द्रियों के उपयोग का विचार ही न आवे ऐसा भी कहाँ होता अवश्य है।

बापू : नहीं-नहीं नपुंसक तो अत्यन्त विषयी होते हैं।

मुझे कठिन बात तो यह लगती है कि छह महीने में ये लोग तैयार कैसे हो जायेंगे! और ऐसा भी लगा करता है कि यहाँ से छूटकर लौटेंगे के बाद भी वे तो निरुत्साह हो जायेंगे। शाम को दूसरी बातें चलीं।

मैंने कहा : बापू, मुझे तो अभी तक ऐसा लगा ही नहीं कि हमारा सोचा हुआ ठेठ सिद्ध होगा या हमें रणभूमि पर जाना पड़ेगा। हमारे रंगरूटों की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। हम जाने को तैयार होंगे, उससे पहले लड़ाई खतम हो जायगी।

बापू : इससे अच्छा और क्या हो सकता है। किन्तु हमारे लोग यह भी नहीं समझते। लेकिन इन सबसे ज्यादा तो मुसलमानों का सवाल मुझे खटक रहा है। मुसलमानों को कैसे समझाया जाय? इन लोगों में जबरदस्त तिरस्कार पैदा हुआ है। मुझे अपनी कमियाँ अधिक मालूम होती जा रही हैं। मुझे ऐसा लगता है कि मैंने बहुत पूर्णता से काम शुरू नहीं किया। अगर अलग बैठ गया होता, तो कोई दुःख नहीं था। लेकिन मैंने तो सबको उपदेश दिया है और अहिंसा समझायी है। अब मेरे उपदेशों से कोई यह मान ले कि हम तो लड़ाई में जा ही नहीं सकते, क्योंकि गांधी ने अहिंसा समझायी है, तो मुझे बड़ी चोट पहुँचेगी। इसीलिए मैंने यह काम हाथ में लिया है। मैं यह समझाने बैठा हूँ कि अहिंसा क्या है।

सुबह सात मील चलना हुआ। बहुत सी बातें हुईं। सभा न हो सकी। बातचीत का उनके मन पर जो असर हुआ, वह देवदास के पत्र से मालूम होगा। शाम को साढ़े दस मील पैदल आये। स्टेशन पर विश्राम। गाड़ी में इन्दुलाल सुधार-योजना लेकर आये उसे पढ़ा। पढ़ लेने के बाद बोले : इसमें शक नहीं कि इन लोगों ने बड़ा अपमान किया है। इसे तो लेना चाहिए। हमारी शक्ति होगी, तो इसमें से बहुत कुछ निकलवा सकेंगे, बहुत आगे बढ़ सकेंगे। हम न लेंगे, तो हमारी कमजोरी ही बढ़ी जायगी। यह सब चेम्सफोर्ड के योग्य है। चेम्सफोर्ड पर तो मैं शुरू से ही फिदा हूँ। सुधार-योजना की हम आलोचना करते रहें और रंगरूट देते रहें, तो कितना अच्छा हो! दूसरे दिन जिना को जो पत्र लिखा उसमें लिखा :

"... हम रंगरूटों की भरती करते रहें और उसीके साथ-साथ इस सुधार-योजना में रद्दोबदल कराने का आग्रह करें, तो कितनी शानदार बात रहेगी।"

आज बहुत से पत्र लिखे। उनमें से पहला मगनलाल को :

"पूज्य खुशालभाई और देवभाभी शान्त रह सकें, इसके लिए जो कुछ करना उचित हो, सो करना। प्रभुदास और वहाँ आते हैं, इसमें मुझे कुछ विपरीत परिणाम जरूर दिखाई देता है। केशू, राधा को आश्वासन पहुँचता होगा। विवेकपूर्वक सोचकर जो उचित हो, सो कर लेना।" × × ×

हरिलाल का पत्र। नरोत्तम सेठ को लिखे गये पत्र के लिए निर्दयता का आरोप, तिमूर्रिंग करने जैसी मेरी हालत नहीं, वगैरह। उसे जवाब :

"तुम्हारा पत्र मिला। मुझे जो सत्य प्रतीत हुआ, उसे कहने में मैंने निर्दयता से काम लिया हो, तो मेरा पत्र जरूर निर्दय है। मैं अभी भी कहता हूँ कि दुनिया तुम्हारी निर्दोषता कभी स्वीकार नहीं करेगी। तुमने लाचारी में कुछ भी बात कही हो, फिर भी तुम्हारे सट्टे की कसूरता नरोत्तम सेठ को नहीं हो सकती। तुमने भूल पर भूल की। अब हजार बार सोचकर भी शान्त न हुए। लेकिन तुम्हारे साथ बहस नहीं करनी चाहिए। ईश्वर तुम्हें सद्बुद्धि दे। मैंने भूल की होगी, तो मैं सुधार लूँगा। तुम अब भी बता सको तो बताओ।

"लड़ाई में तुम्हारे शरीक होने की बात मैंने समझ ली। अब मुझे तुम्हारी सच्चाई में शंका नहीं थी, तब मैंने सूचना की थी। अब मुझे नहीं लगता कि उस सूचना में कोई मजा रहा है। जब से मुझे याद रहा है, तब से मेरी क्या हालत हुई है, इसकी कल्पना तुम्हें नहीं करा सकता।

'भगवान् तुम्हारा भला करे तुम्हें सन्मार्ग दिखाये, यही मेरी इच्छा है।

बापू के आशीर्वाद।'

देवदास को पत्र :

'चि॰ देवदास

"तुम्हारा पत्र न मिलने से जो चिन्ता रहती थी, वह आज चि॰ नरोत्तम

के तार से दूर हो गयी। बीमारी का कारण ढूँढकर ऐसा करो, जिससे फिर बीमार न पड़ो। बीमारी में हिन्दी सीखनेवालों ने क्या किया? उनमें से कोई तुम्हारे पास आते थे? किसीने यह पढ़ाई जारी रखी थी?

"मुझे अभी तक एक भी रंगरूट नहीं मिला है। देश की ऐसी भयंकर स्थिति है।

"जहाँ तुमने जो तार देखा, उसमें तो धोखा था। सरकारी भरती करनेवाला कोई मेरा नामराशि है, इससे यह भूल हुई है। अभी तक की मेरी असफलता यह बताती है कि लोग मेरी सलाह मानने को तैयार नहीं हैं। लेकिन जहाँ मैं उनकी रुचि के कामों में हाथ डालता हूँ, वहाँ मेरी सेवा लेने को वे तैयार हैं। यही यथार्थ है। इस सेवा से सलाह का अधिकार पैदा होता है। तीन बरस की सेवा और वह भी अलग-अलग प्रदेशों में—यह कुछ भी नहीं है। इतने पर भी भरती के बारे में मैं और कुछ कर ही नहीं सकता। ऐसे समय में यह कर चुका, इतनी शान्ति की मुझे जरूरत थी। अब भी काम चल ही रहा है। यह तो मैंने अभी तक का परिणाम बताया है।

बापू के आशीर्वाद।"

दामोदरदास वकील के लड़के ने पत्र लिखकर अपनी छात्रवृत्ति के चार रुपये आश्रम को भेजे। उसे जवाब:

"चि० दत्तादेव,

"तुम पाँचवीं श्रेणी में पहले नम्बर से पास हुए, इस पर तुम्हें बधाई देता हूँ। मैं चाहता हूँ कि जैसे पढ़ाई में पहला नम्बर रखा है वैसे ही चरित्र में रखो।

'तुमने पहले माल की छात्रवृत्ति आश्रम को दे दी, इससे मैं खुश हुआ हूँ। तुम्हारा दान का रहस्य जब मैं आश्रम में जाऊँगा, तब समझूँगा। सिवाय तुममें अभी से इस प्रकार की परोपकार-वृत्ति भरी रहती है, यह तुम्हारे लिए ऊँचे दर्जे की विरासत है। तुम उसका विकास करना।

मोहनदास गांधी के आशीर्वाद।'

१७-७-१८

सुधार-योजना के सम्बन्ध में समझौता हो गया। मिसेज बेसेण्ट और तिलक भी उग्र उद्गार प्रकट करने के बाद नरम दल से सहमत हो गये। फिर शास्त्रियार का पत्र आया। उसमें लिखा था कि :

¶ "मिसेज बेसेण्ट और तिलक ने अखबारों में इतना सब लिखने के बाद अब आपके और मेरे पक्ष से लगभग मिलती-जुलती स्थिति स्वीकार कर ली है, यह देखकर मुझे आश्चर्य होता है। कांग्रेस से आपके अलग रहने की बातें जो खूब चल रही हैं, वे मुझे अच्छी नहीं लगतीं। मैं इन्हें समझ नहीं सकता।"

उन्हें जवाब लिखा :

¶ 'भाईश्री शास्त्रियार,

'आप बम्बई आ सके, इससे मैं बहुत प्रसन्न हुआ। मेरे खयाल से आपका कांग्रेस में जाना आपके लिए बड़ी बहादुरी का काम माना जायगा। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि पंडितजी का रवैया जैसा अखबारों में बताया गया है, वह सच हो तो मेरी उनके साथ सहानुभूति है। उनके लिए कांग्रेस के मंच पर अनुपस्थित रहना उनके जीवन का एक अत्यन्त वीरतापूर्ण कार्य माना जायगा। मुझे ऐसा ही लगता है।

'मैं उस सभा में कैसे उपस्थित रहूँ, जिसमें मैं जानता हूँ कि गलत नेतृत्व किया जानेवाला है; और प्रस्तावों को पेश करनेवाले मुख्य लोग जो बात कहते हैं उसमें उनका विश्वास नहीं और जिन प्रस्तावों के पक्ष में उन्होंने मत दिया होगा उन्हीं प्रस्तावों की वे खुद ही समाचारपत्रों में निंदा करेंगे। मैं जानता हूँ कि इस प्रश्न का दूसरा पक्ष भी है किन्तु इस समय तो मैं अलग रहने की तरफ ही झुकता हूँ।

"आपकी तबीयत अच्छी होगी।

सेवक
मो० क० गांधी'

हनुमन्तराव को पत्र लिखा :

"बहुत समय से तुम्हें पत्र लिखने का विचार कर रहा हूँ, किन्तु मैत्री मरली के लिए दौड़धूप करने के कारण मैं अपना पत्र-व्यवहार का काम अच्छी तरह नहीं सँभाल सकता। आज इस काम से छुट्टी का दिन मिल गया है और उसे मैंने चिट्ठियाँ लिखने में लगा दिया है। तुमने देवदास के लिए जो कुछ किया है और जो कर रहे हो, उसके लिए मैं अन्तःकरण से तुम्हारा आभार मानता हूँ। देवदास अपने हरएक पत्र में तुम्हारे प्रेम के बारे में लिखता है। वह कहता है कि उसकी बीमारी में तुमने उसके मित्र का काम दिया है। अब मैं तामिल सीखने के लिए हिन्दी उम्मीदवारों को चुनूँगा।

मैं जानता हूँ कि सैनिक भरती के मेरे काम से मित्रों को अलग अलग कारणों से—राजनैतिक भी और धार्मिक भी—दुःख होता है। फिर भी मैं जानता हूँ कि मेरे इस काम की निंदा करने में दोनों प्रकार के मित्रों से भूलें हो रही हैं। बड़े लम्बे पत्रों से मेरे विचार देश के सामने हैं। परन्तु मनुष्य का सच्चा न्याय तो उसके कृत्यों से करना चाहिए, उसकी वाणी से शायद ही कह हो सके। साथ ही मुझे उनकी आपत्तियों को जल्दी में रद नहीं कर देना चाहिए। वे जो कुछ कहते हैं, प्रामाणिकता से कहते हैं और प्रेम के कारण ही मेरी आलोचना करते हैं। अहिंसा के मेरे आचरण से और अहिंसा का ककहरा भी लोगों को समझाने में मुझे मिली हुई असफलता से मैं इस निष्कर्ष (सीख) पर पहुँचा हूँ कि हरएक प्रकार के मारने में हिंसा नहीं है, कभी कभी तो अहिंसा के पालन के लिए मारने की भी जरूरत पड़ सकती है। एक राष्ट्र की हैसियत से हम मारने की सच्ची शक्ति खो बैठे हैं। यह तो स्पष्ट है कि जो मारने की शक्ति गँवा बैठा हो, वह अहिंसा का आचरण नहीं कर सकता। अहिंसा में अत्यन्त ऊँचे प्रकार का त्याग समाया हुआ है। कमजोर और कायर बनी हुई जनता त्याग का यह भव्य आचरण नहीं कर सकती। जैसे चूहे के लिए यह नहीं

कहा जा सकता कि उसने किसी को मारने की शक्ति का त्याग किया है। यह बात बड़ी भयंकर लग सकती है, परन्तु बिलकुल सच है कि हमें लम्बे अर्से तक भयानक प्रयत्न करके इस शक्ति को पुनः प्राप्त करना होगा। और उसे प्राप्त करने के बाद ही इस शक्ति का सतत त्याग करके हिंसा की वासनाओं से हम दुनिया को मुक्त कर सकेंगे। यह मैं काफी असरकारक भाषा में वर्णन नहीं कर सकता कि आश्रम के सदस्यों को भी अहिंसा के बारे में अच्छी तरह समझाने में अपने को असफल पाकर मुझे कितना दुःख होता था। वे सब ऐसे नहीं थे, जो मेरी बात प्रसन्नतापूर्वक न सुनें लेकिन उस वक्त मुझे ऐसा आभास होता था और अब तो मैं साफ देख सकता हूँ कि सत्य को ग्रहण करने की उनमें शक्ति नहीं थी। यह ऐसा ही था जैसे संगीत की आदत न रखनेवाले कानों के आगे उत्तम संगीत गाया जाय। परन्तु आज आश्रम में लगभग हरएक यह बात समझ गया है और अहिंसा का अर्थ सबल का त्याग न कि दुर्बल का—इस विचार से उनमें नया तेज आ गया है। व्यवस्थित युद्ध और व्यक्तिगत लड़ाई दोनों में कोई भेद नहीं किया जा सकता। डाकुओं के मामले में भी संगठित विरोध और संगठित मारकाट हो सकती है। सर्वोत्तम योद्धा वह कहा जायगा जो चाहे कितने मनुष्यों के सामने निर्भय खड़ा रहे। उस समय उसे अपनी मारने की शक्ति का विचार नहीं आता। बल्कि उसे इस बात का बड़ा नशा होता है कि पलायन करके अपनी जान बचाना संभव होने पर भी वह खुशी से मरने को तैयार खड़ा है। मैं निश्चित रूप से मानता हूँ कि हमें अपने बच्चों को आत्मरक्षा की कला सिखानी ही पड़ेगी। मुझे यह अधिकाधिक स्पष्ट प्रतीत होता है कि अगर हम आत्म-रक्षा की शक्ति पुनः प्राप्त न कर सके, तो युगों तक स्वराज्य के लिए अयोग्य रहेंगे। इस पर से आत्मविश्वास और देश के विकास के बारे में मुझे कितनी ज्यादा कल्पनाओं पर पुनर्विचार करना पड़ा है। आज जितना मैंने कहा है, उससे ज्यादा चर्चा यहाँ नहीं करूँगा। तुम अच्छे श्रोता हो। मैं

उत्सुक हूँ कि तुम अहिंसा का यह नया विचार भलीभाँति समझ जाओ। इसमें पतन नहीं बल्कि उन्नति है। इस सोच के कारण प्रभु का जो दर्शन मुझे हुआ है, वह पहले से अनन्तगुना बढ़कर है।

सेवक
मो० क० गांधी"

१८-७-१८

आनन्दशंकर को पत्र लिखा :

"पूज्य भाईश्री,

"आपका पत्र मिला। रोग-सम्बन्धी बातें ही आयें, बीमार भी पड़ें, हमारे हाथ पर रेलगाड़ी की खिड़की गिर जाय, पैर में ठोकर लग जाय— क्या आपने अपने विस्तृत अध्ययन में से ऐसी दवा नहीं ढूँढ़ी, जिससे इन सारे दुःखों से मुक्ति मिल जाय और केवल सुख ही भोगते रहें? फिर भी क्या सचमुच इस अध्ययन से हाथ के दर्द को कुछ शान्ति मिल सकती है? या यह वैद्य ही दे सकता है? इसका जवाब जब आप अच्छे होकर मिलेंगे, तभी दीजियेगा। और मजदूर तो धीरजवाले हैं, इसलिए प्रतीक्षा करेंगे। और अगर प्रार्थना फलती हो, तो जरूर ऐसी प्रार्थना कीजिये कि आपका हाथ तुरंत फिर से काम करने लग जाय। इस बीच उनमें से अधिक को पैंतीस नहीं परन्तु पचास फीसदी वृद्धि होने लगी है। शंकरलालभाई कह रहे थे कि वे आपके कान में कुछ बात कह आयेंगे। मेरे कान में तो उन्होंने कह दी है। परन्तु आप तो उनके मुँह से ही सुनें, तो अच्छा।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

जगजीवनदास ना० मेहता बेचारे यहाँ आकर बुखार में पड़ गये। रुपयों का बटुआ चोरी चला गया। उन्हें पत्र :

"तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे कोट और रुपयों का चोरी जाना सुन कर अफसोस हुआ। दूसरी और दो [illegible] बात हो गयी। अनायास

मन में ऐसा कोई चोर है। दो-तीन बार ऐसा हो चुका है। तुम्हें किसी को चेता देना चाहिए था परन्तु किसीको नहीं सूझा।

'तुम्हारा पुस्तक बिलकुल पढ़ा गया होगा। भाई जीवराम को आज ही पत्र लिख सका हूँ। वह साथ में है। ठीक लगे, तो भेज देना।

"तुम्हारे व्यापार की स्थिति की कुछ कल्पना इस बार मुझे हुई। तुम जिस ढंग से व्यापार में लगे हुए हो वह मुझे दुःखकर प्रतीत होता है। मेरी सलाह किसी भी काम की हो, तो तुम आज ही अपना व्यापार समेट लो। अपने जिससे लिये हैं उसे लौटा दो और कोई नौकरी तलाश कर लो। तुम्हें नौकरी मिलने में तो अड़चन पड़ ही नहीं सकती। तुम्हें केवल सादा जीवन बिताना हो तो आश्रम खुला ही है। मेरा आग्रह नहीं है। संसार जिसे पुरुषार्थ मानता है, वह तुम्हें करना हो तो भले ही करो, पर अपने ही बल पर। इस काम में तुम जितनी ढिलाई करोगे, उतना ज्यादा तुम्हें पश्चात्ताप ही होगा।

"सब जगह सभी अपने ही हाथों दुःख भोगते हैं। किन्तु मैं जैसे-जैसे तुम्हारे कुटुम्ब-जाल में उतरता हूँ, वैसे ही वैसे तुम सबके बारे में या अधिक अनुभव करता हूँ। उससे तुम छूटो। साहस करने पर उसके हिस्से में जो दुःख आते हैं, उनमें से ही सन्तोष मानो। अधिक न उठाओ। सारे सम्बन्ध साफ रखो। बापा तो खुद ही दुःख के ढेर जमा करते हैं। जब धार्मिक जीवन बिताते हैं, तब इतनी लोलुपता क्यों? ऐसी लोलुपता को तुम किसलिए प्रोत्साहन दो? × × × जितनी परवाह हम भाग्यवानों की करते हैं, उतनी अपने अन्तर के उद्गारों की करें, तो हम देवताओं से भी सुखी रहें। हम घर में विद्यमान सुख को न पहचानकर चारों तरफ ढूँढ़ते हैं। तुम ऐसी तलाश में क्यों पड़ते हो?"

उनकी पत्नी के नाम :

'प्यारी बहन

"तुम्हारा दुःख मुझसे नहीं देखा गया, फिर भी मैं देख सका कि जो निर्दोष आनंद मैंने तुममें देखा वह न तो बापा में देखा और न भाई

जगजीवनदास में। इससे मेरा हृदय छिद गया है और मैंने भाई जग-जीवनदास के नाम पत्र लिखा है। उसे तुम दोनों पढ़ो, खूब सोचो और बाद में साथ-साथ पुरुषार्थ करो। यह पत्र तुम दोनों के लिए है।"

२२-७-१८

डॉ॰ मेहता को :

¶ "चौथी भरती का काम हाथ में लेने से पहले बहुत विचार किया और निश्चय किया कि यह सबसे बड़ा धर्म है। बड़ा कठिन है। जितना कठिन है, उतना ही परिणामकारी है। मुर्दों में जान डालने जैसा कठिन काम दीखता है। फिर भी प्रयत्न तो करना ही पड़ेगा। ऐसा लगता है कि इस कार्य के करने से लोगों को जबरदस्त तालीम मिल रही है। क्या इस काम के लिए जमनादास को मुक्त कर सकते हो?

"भाई पुंजाभाई

'जिसे हमने धर्म समझा है, वह धर्म नहीं है। अहिंसा के नाम पर हम भारी हिंसा करते हैं। खून से डरकर दिन-रात खून सुखाते हैं। इसलिये अहिंसा-धर्म का पालन कर ही नहीं सकते। कुछ भाजियों के शुष्क त्याग में या चींटियों को खिलाने में धर्म नहीं है। शरीर के मोह का त्याग किए बिना मोक्ष नहीं मिल सकता और आत्मा की पहचान नहीं हो सकती। आपको इस बात की प्रतीति हो जाय और आप सच्चे मोक्ष मार्ग के दर्शन करना चाहते हों तो मेरी सलाह यह है कि आश्रम का मकान बनाइये। जो मकान बनाने हैं उन्हें आप पूरे करवाइये और मगन लाल को जिम्मेदारी छोड़ दीजिये। आपको नौकर चाहिए। परमराम को रख लीजिये। मगनलाल के दुःखों की कल्पना मालूम होती है। आप जरूर विचार कीजिये। आपको हीरे की तरह ही यह धन लगे, तभी इसमें पड़िये। स्वस्थ होगा, तो आश्रम में खूब शान्ति अनुभव करेंगे। नहीं स्वस्थ होगा तो थोड़े समय में ऊब जायेंगे। आप, हेमचन्द और

मगनलाल मिलकर विचार करना । पहले तो आप अकेले ही विचार कर लीजिये ।

मोहनदास के भगवत्-स्मरण"

मिसेस पोलाक को :

¶ "जीवन-सम्बन्धी अपनी दृष्टि से मैं एक क्रान्ति में से गुजर रहा हूँ । मुझे महसूस होता है कि कुछ पुराने खाले टूट रहे हैं । किन्तु इस विषय में अधिक तब, जब मुझे अधिक समय मिलेगा ।

—भाई"

मालवीयजी के सबसे छोटे पुत्र गोविन्द मालवीय का एक पत्र आया । उसमें लिखा था कि उसे सुधार-योजना में कितना अविश्वास है, हम फौजी भरती क्यों करते हैं, कोई मदद देने की जरूरत नहीं है । उसे (हिन्दी में) उत्तर :

'तुम्हारा पत्र आने से मैं बहुत खुश हुआ । हम जिनको मुरब्बी समझते हैं उनके पास हमारा सब आवेग हम खोल सकते हैं, खोलना आवश्यक है । मुझको पत्र लिखकर तुमने उचित कार्य किया है । भरती में क्या अत्याचार होता है, वह मैं नहीं जानता हूँ । यदि ज्यादा होता होगा तो भरती में आने की मेरे लिए ज्यादा आवश्यकता है ।

"मांटेग्यु चेम्सफर्ड योजना मेरी राय से बड़ी अच्छी है । उसकी त्रुटियाँ हम आन्दोलन करके दूर करवा सकते हैं, परन्तु योजना कैसी भी हो मेरा ठीक संकल्प है कि हमें युद्ध में दाखिल होना चाहिए । हम अंग्रेज प्रजा का उपकार करने के लिए दाखिल नहीं होते हैं । लेकिन देश की सेवा करने के लिए, देश का स्वार्थ देखकर हम भरती में जाना चाहते हैं । मैं भारतवर्ष की दुर्दशा का क्या बयान करूँ ? मैं साफ देख सकता हूँ कि भारतवर्ष को सच्चे स्वराज्य की प्राप्ति नहीं हो सकती है । मैं मानता हूँ कि अब हमारे भरती में आने से हम दो काम कर सकते हैं । हममें वीरता पैदा होगी हम थोड़ी-बहुत शस्त्र-क्रिया सीख लेंगे और जिनके

साथ हम रिश्तेदार होना चाहते हैं, उनकी मदद देकर हमारी योग्यता ज्यादा सिद्ध करेंगे। उनके अत्याचारों का विरोध करना और उनके कष्ट में हिस्सा लेना, ये दोनों कार्य करना हमारे लिए योग्य हैं। मैं चाहता हूँ कि तुम इस प्रश्न पर खूब शान्ति से विचार कर लो। मेरी सलाह है, यह पत्र देवदास को भेज देना और उसके साथ भी इस विषय में वार्तालाप करना।

तुम्हारा शुभचिंतक
मोहनदास गांधी'

२४-७-'१८

बलवन्तराय ठाकुर का सुधार-योजना के बारे में एक अंग्रेजी पत्र। मिलिटरी ट्रेनिंग कॉलेज बनना चाहिए, वगैरह सुझाव। ऐसा लगता काम में लें तो कहा जा सकता है कि सुधार-योजना उनके साथ घर-संसार रचने जैसी है, ऐसे उद्‌गार। उन्हें उत्तर :

"आपका पत्र मिला। मुझे लगता है, जब हमारी पार्लमेण्ट होगी, तो फौजदारी कानून में एक दफा रखने का आन्दोलन करना पड़ेगा। दोनों के हिन्दुस्तान की एक ही भाषा जानते हुए भी अगर एक आदमी दूसरे को अंग्रेजी में लिखे या दूसरे के साथ उस भाषा में बोले, तो उसे कम-से-कम छह महीने की सख्त सजा दी जायगी। ऐसी दशा के बारे में अपनी राय बताइये और स्वराज्य न मिले, तब तक जो अपराध करें, उसके लिए क्या उपाय करना चाहिए, यह भी बताइये।

"सैनिक खर्च किस तरह घट सकता है, इसके बारे में आपकी राय समझ ली है। किन्तु अभी तो दिल्ली दूर है। जब हम स्वराज्य ले लेंगे, तब जो परिस्थिति होगी, उस पर यह बहुत कुछ निर्भर रहेगा।

"क्या स्वराज्य की तैयारी धीमे-धीमे नहीं हो सकती? मेरे खयाल से तो यह स्थिति धीरे-धीरे ही प्राप्त की जा सकती है। फिर, विवाह से पहले सगाई तो होती ही है। अंग्रेजी में तो बहुत लम्बा प्रणय-काल होता

है। विवाद का मुकाबला तो दोनों विचारों से अनुचित मालूम होता है। क्रान्ति तात्कालिक परिवर्तन है। ऐसे परिवर्तन शान्त ढंग से होते ही नहीं। इसलिए 'शान्तिमय क्रान्ति' तो परस्परविरोधी शब्द-प्रयोग है। हिन्दुस्तान शान्ति और तात्कालिक परिवर्तन दोनों चाहता है। यह कैसे सिद्ध हो !

"यह ठीक है कि आपके पत्रों का सार्वजनिक उपयोग नहीं हो सकता। हम यह चाहते हैं कि थोड़े अर्से बाद खानगी शब्द लिखने की जरूरत न पड़े।

"मैं आज गाँव में कुछ जाँच करने आया हूँ। थोड़ा समय है, इसलिए विनोद भी कर लिया है। अभी थोड़ा बाकी रह गया है। लेख की सफाई के औचित्य के बारे में अभी तक आपको शक है, तो उनकी तरफ से मैं आपको यहाँ आकर प्रत्यक्ष देखकर अपनी शंका दूर कर लेने का निमंत्रण देता हूँ। अभी तक जिनकी शंका दूर न हुई हो, ऐसे तो मेरी जानकारी में केवल आप ही हैं।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

नवागाँव में लंच विश्राम किया। लोग कोई मिलने नहीं आते थे। भरती से लूट करते थे यहाँ धर्मशाला में बहुत-सी बातें होती थीं। प्रवचन करने से विनोद मिलता था। बालमभाई कहते थे कि यहाँ 'विलायत के पत्र' पुस्तक भी पढ़ी जाती है। इस पर से सर सुब्रह्मण्यम् याद आ गये। उनको पत्र लिखा :

"प्रिय सर सुब्रह्मण्यम्

'मुझे आशा है कि इस पत्र को आप मेरी धृष्टता नहीं समझेंगे। मुझे बहुत समय से महसूस हो रहा है कि आपकी भाषा अनियंत्रित है और योगी को शोभा देनेवाली नहीं है। आपके आरोप मुझे अधिकांश बातों में विचारहीन मालूम हुए हैं। मेरी नम्र राय के अनुसार आप जितने शुद्ध हृदय और निर्भय हैं उतने ही पक्के सत्यपरायण रहे होते, तो आपने देश

की जितनी सेवा की है, उससे कहीं अधिक कर पाते। आप जैसों के लिए बिना विचारे निकाला हुआ और अनुदार शब्द अक्षम्य माना जायगा। आपकी राजनीति लोगों को केवल खुश करनेवाली नहीं, बल्कि धार्मिक है। मेरी आपसे प्रार्थना है कि देश के सामने आप भारतीय सज्जन का शुद्ध उदाहरण उपस्थित करें। ऐसा करने की आपमें शक्ति है।

सेवक

मो० क० गांधी

नवागाँव। विनोबा का पत्र। मराठी शिक्षक गुजरात में अच्छी तरह आदर्श पूरे नहीं कर सकते। महाराष्ट्र में एक पाठशाला खोलिये, इस आशय का। उसका जवाब

"तुम्हारा विचारणीय पत्र मिला।

"आदर्श जो तुमने लिखा है, वही है। यह भी सही है कि उस आदर्श को सिद्ध करने के लिए गुजराती ही शिक्षक चाहिए। परन्तु ऐसे शिक्षकों के अभाव में महाराष्ट्र के शिक्षकों का उपयोग अनुचित नहीं माना जा सकता। चरित्रहीन गुजराती शिक्षक के बनिस्बत चरित्रवान् मराठी शिक्षक भी हो तो उसे मैं अच्छा समझता हूँ। अभी तो मेरे ढंग पर पढ़ानेवाला गुजराती मिलना मुश्किल है। तुम न हो तो संस्कृत शिक्षण बन्द हो जाय या काका को फिर से सँभालना पड़े, ऐसी दीन दशा है। इसलिए अभी तो आदर्श को ध्यान में रखकर तुमको ही संस्कृत की शिक्षा देनी है।

'महाराष्ट्र में प्रवेश करने की मेरी तीव्र इच्छा है। परन्तु अभी समय नहीं है। मेरी योग्यता नहीं। इतने मनुष्य हमारे पास नहीं हैं। तुम काका और मामा मेरे सम्पर्क में आये हैं। क्या इसमें परमात्मा का कोई रहस्य नहीं होगा? भाई देशपाण्डे के साथ मेरा संबंध भारत-सेवक-समिति पर मेरी श्रद्धा महाराष्ट्र के प्रति मेरा मोह चम्पारन में महाराष्ट्रियों की दी हुई मदद, महाराष्ट्र के समीक्षकों का आना भाई कौलवाळ की बहन का

कुछ समय में होनेवाला प्रवेश, भाई नारायणराव की जान-पहचान, यह सब सूचित करता है कि महाराष्ट्र में मुझे कुछ-न-कुछ विशेष करना है। परन्तु—

'नीपजे नरथी तो कोई न रहे दुःखी,
शत्रु मारीने सहु मित्र राखे।'

(मनुष्य का बस चले, तो कोई दुःखी न रहे। शत्रु को मारकर सब मित्र को ही रखें।)

इसलिए यह कौन जानता है कि ऐसी महत्त्वाकांक्षा होने पर भी क्या होगा?

"तुम्हारी इच्छा मैं ध्यान में रखूँगा। तुम्हें अपने सहवास में रखना मैं भी चाहता हूँ, परन्तु देखता हूँ कि अभी यह नहीं हो सकता। इसमें संदेह हो ही नहीं सकता कि तुम आश्रमवासी ही हो।

—बापू"

"चि॰ देवदास,

'आज का मेरा पत्र तुम्हें भारी दुःखद समाचार देनेवाला साबित होगा। भाई सोराबजी* जोहान्सबर्ग में थोड़ी, किन्तु सख्त बीमारी भोगकर मर गये। मृत्यु के भय से तो हम थोड़े-बहुत अंश में छूट गये

---

* सोराबजी शापुरजी अडाजणिया दक्षिण अफ्रीका की लड़ाई में प्रथम श्रेणी के सत्याग्रही थे। उन्होंने लड़ाई का बहुत गहरा अध्ययन किया था। इसलिए लड़ाई के मामले में वे उसके कानूनदार बन सके थे। गांधीजी कहते हैं कि उनकी सलाह मैं हमेशा लेता था। विवेक, नम्रता और शान्ति आदि गुण उनमें थे। लड़ाई खत्म हो जाने के बाद उन्हें सत्याग्रहियों में से किसी को विलायत भेजकर बैरिस्टर बनाने के लिए डॉ॰ मेहता ने छात्रवृत्ति दी थी। उद्देश्य यह था कि वह बैरिस्टर बनकर दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी की जगह भारतीयों की सेवा कर सके। सोराबजी दक्षिण अफ्रीका में गोखलेजी के सम्पर्क में आये थे। विलायत में अधिक आये और उन्होंने गोखलेजी का भी मन हर लिया। उन्होंने उनसे भारत-सेवक-समिति में भरती हो जाने का आग्रह भी किया। बैरिस्टर हो जाने के बाद दक्षिण अफ्रीका में जोहान्सबर्ग में वकालत शुरू की। साथ ही सेवा का काम भी आरंभ किया और अपनी सच्चाई, सरलता और निष्कामता से भारतीयों में लोकप्रिय हो गये। ३५ वर्ष की उम्र में भरी जवानी में ऐन दिन और [illegible] से गांधीजी को अत्यन्त दुःख का आघात लगा था।

अपना चरित्र मजबूत बनाकर उन सबका भला कर सकते हो। मणि भाई के विरुद्ध तो तुम्हारा सत्याग्रह है ही और सत्याग्रह कभी बुरा हो ही नहीं सकता। मणिभाई के प्रति तुम्हारा वैरभाव तुम्हें बाहर नहीं रखता परन्तु उनके प्रति रहा प्रेमभाव रखता है। मीराबाई ने प्रेम-वृत्ति से अपने पति का त्याग किया और बुद्धदेव ने प्रेम के वश होकर अपनी स्त्री बी का और माता-पिता का त्याग किया। जो कुछ तुम पर लागू होता है, वही शिवाभाई पर भी होता है। मान लो तुम लड़ाई से सकुशल लौट आये। तब क्या तुम्हारी दशा नहीं बदली होगी? तब तुम बच्चों की देखभाल करने के लिए अधिक योग्य नहीं हुए होगे? हमारा लड़ाई में जाने का उद्देश्य भोग-विलास नहीं परन्तु अपनी और देश की महान् भावनाओं का प्रश्न करना है। इसमें होनेवाली भूल भी नुकसान नहीं करती।

'मुझसे मिलकर शांति प्राप्त करना असंभव है। जब तक हम मैल निकालते रहते हैं, तब तक कलकलाहट तो होगी ही। उस अशान्ति में शान्ति है यह अनुभव हमें होना चाहिए। कपड़ों को धोते समय हम पछाड़ते हैं, परन्तु जानते हैं कि ऐसा करने से सफाई होती है और इसीलिए आनन्द प्राप्त करते हैं।

मोहनदास के वन्दे मातरम्'

'चि. मगनलाल

'तुम्हें रावजीभाई ने मदद दिया। रावजीभाई को मैंने मदद दिया। मेरे वाक्य का उचित से अधिक अर्थ कर डाला।

'मेरे आदर्श नहीं बदले। हिन्दुस्तान में बहुत कड़वे अनुभव करने पर भी मेरा विश्वास ज्यों-का-त्यों है। हमें पश्चिम से थोड़ा ही सीखना है। मैंने यहाँ जो बुराइयाँ अनुभव कीं उनसे मेरे मूल विचारों में कोई फर्क नहीं पड़ा। इस लड़ाई से भी फर्क नहीं पड़ा। जो था, वह साफ हुआ है। मुझे ऐसा नहीं जान पड़ा कि हम पश्चिमी सुधार जारी करें। यह भी नहीं सोचा है कि शराब, मांसादि ग्रहण करने

पहुँचे। मुझे महसूस हो गया है कि स्वामीनारायण और वल्लभाचार्य ने हमारी मानवता का अपहरण किया है। उन्होंने मनुष्यों की रक्षक शक्ति छीन ली। लोगों ने शराब बीड़ी वगैरह का त्याग किया यह तो ठीक ही हुआ। किन्तु यह कोई साध्य वस्तु नहीं है, यह तो साधन है। बीड़ी पीनेवाले चरित्रवान् हों तो वे सत्संग करने लायक हैं और सब से बीड़ी का त्यागी व्यभिचारी हो तो किसी काम का नहीं है। स्वामीनारायण और वल्लभाचार्य का सिखाया हुआ प्रेम बेढंगा है। उससे शुद्ध प्रेम पैदा नहीं हो सकता। अहिंसा का शुद्ध स्वरूप तो उन्होंने सोचा ही नहीं। अहिंसा विषयवृत्तियों का निरोध है। उसका मुख्य प्रयोग मनुष्यों के आपसी सम्बन्धों में है। इसकी तो गंध तक उनके साहित्य में नहीं पायी जाती। उनकी उत्पत्ति हमारे विषम काल में हुई और उस वातावरण से वे मुक्त नहीं हो सके। उनका असर तुकाराम पर बहुत बड़ा हुआ। तुकाराम और रामदास का ऐसा असर नहीं हुआ। तुकाराम के अभंगों और रामदास के श्लोकों में बहुत पुरुषार्थ रहा है। वे भी वैष्णव थे। वैष्णव-सम्प्रदाय और वल्लभाचार्य तथा स्वामीनारायण की शिक्षा को मिला न दो। वैष्णव-सम्प्रदाय बहुत पुराना तत्त्व है। मैं यह बात नहीं देख सका था कि हिंसा में अहिंसा है। यह अब देखने लगा हूँ। यह बड़ा परिवर्तन हुआ है। शराब में मस्त हुए मनुष्य को अत्याचार करने से रोकने का फर्ज नहीं समझता था, महाव्यथा से पीड़ित कुत्ते के प्राण लेने की जरूरत नहीं समझी थी, पागल कुत्ते को मारने की आवश्यकता नहीं समझी थी। इन सभी हिंसाओं में अहिंसा है। हिंसा शरीर का गुण है। विषयवृत्ति का त्याग असम्भव है, परन्तु हम अपने लड़कों का पालन इस तरह नहीं करते कि वे नपुंसक हो जायें। व वासना वीर्यवान् होने पर भी अपनी विषय-न्द्रिय को रोकें तभी यह असम्भव है। इसी तरह हमारे बच्चे शरीर से बलवान् होने ही चाहिए। वे हिंस-वृत्ति का सर्वथा त्याग न कर सकें, तो उन्हें हिंसा करने देकर, लड़ने की शक्ति का उपयोग करने देकर अहिंसक बनाया जा सकता है। अहिंसा का उपदेश क्षत्रियों ने क्षत्रियों को दिया है।

"पूर्व और पश्चिम के बीच जो फर्क मैंने बताया है, वही है और वह अवश्य है। पश्चिम का सुधार निरंकुश है, हमारा संयमी है। हम हिंसा करेंगे, तो वह अनिवार्य होगी और उसका उद्देश्य लोक-कल्याण होगा। तभी पश्चिम स्वच्छंद होकर हिंसा करेगा। मैं पार्लमेण्ट वगैरह में जो भाग लेता हूँ वह नयी हलचल नहीं है। वह केवल पुरानी है और उन संस्थाओं को नियम में रखने तक ही सीमित है। मॉण्टेग्यु साहब की योजना पर मेरा लेख पढ़ोगे, तो मालूम हो जायगा। मुझे उसमें रस आ ही नहीं सकता। परन्तु उसमें भाग लेकर मैं अपने आदर्शों को फैला सकता हूँ। जब मेरे लिए अपने आदर्शों का भंग करके उसमें रहने का समय आया, तब मैंने उससे अलग रहने का विचार कर लिया।

"मेरे खयाल से मैंने इतना जो लिखा है, उससे तुम्हें उत्तर मिल जायगा। मैं एक दिन के लिए आऊँ, तब बहुत स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। इसलिए तुम्हें लिख भेजता हूँ। इससे तुम विचार कर सकोगे। और ज्यादा शंका हो तो पूछ सकते हो। मैं अभी तो नवागाँव में ही रहता हूँ। आज यहाँ से रवाना होने का विचार था, परन्तु समय पर नहीं निकला जा सकता।

बापू के आशीर्वाद"

२९-७-'१८

मगनलालभाई इलाहाबाद चले गये, तो पुंजाभाई को उनकी जगह दे दी।

उन्हें पत्र :

"शुद्ध भाईश्री पुंजाभाई,

"आपने अच्छा निश्चय किया। परमार्थ की दृष्टि से की हुई सारी कृषि निवृत्ति है और मोक्ष का कारण है। दूसरों की सेवा ही परम धर्म है। अपनी तरफ से हटाकर दूसरों की तरफ ध्यान ले जाने में पुरुषार्थ की

ज़रूरत रहती है। आश्रम में सबकी यथाशक्ति सेवा करने में तो आनन्द का पार ही न होना चाहिए। आश्रम में कोई न कोई बीमार होता ही है। दिन में उनकी खबर लेनी चाहिए और बच्चों के साथ विनोद करके उन्हें खुश रखना चाहिए। इस काम में क्लेश नहीं, मोहजन्य नहीं। आत्मा की पहचान इसी तरह की जा सकती है। आपको आसानी से इसका अनुभव हो जायगा। मेंबरशी वगैरह बीमारों के पास थोड़ा बैठने का हमेशा अभ्यास रखना।"

आचार्य रुद्र का अद्भुत पत्र।

लड़के की लड़ाई में दूसरे लेफ्टिनेण्ट की जगह मिली दामाद 'नेचरल साइन्स ट्रिपोस' में फर्स्ट क्लास आये, सुधीर का सुन्दर काम, इन सब बातों से आनन्द और उस आनन्द में भाग लेने का बापू को आमन्त्रण है।

बापू का जवाब:

पू॰ "भाईश्री रुद्र,

'आपने अपने सुख में मुझे भाग लेने दिया, इसके लिए मैं आभारी हूँ। सुधीर बड़ा मीठा और होशियार है। वह बहुत सुन्दर काम करता है। दूसरे लड़के भी अपनी-अपनी लाइन में अच्छा काम कर रहे हैं। यह आपकी व्यवस्थित तालीम का परिणाम है।

'आप मेरे फौजी भरती के काम को पसंद करते हैं, जब कि चार्ली मेरे साथ लड़ रहा है। उनके ख्याल से शायद मैं अपने-आपको भ्रम में डाल रहा हूँ। उसे यह लगता है कि मेरी इस हलचल से अहिंसा के ध्येय की मेरी उपासना को हानि पहुँचेगी। मैंने तो इसी ध्येय की उपासना के लिए यह काम हाथ में लिया है। मैं जानता हूँ कि मेरी ज़िम्मेदारी बहुत बड़ी है। जब मैं यह मानकर कि फौजी भरती का काम मेरे क्षेत्र में नहीं आ सकता आराम से बैठा हुआ था। तब भी मेरी ज़िम्मेदारी उतनी ही भारी थी। यह डर था कि मेरे वचनों पर श्रद्धा रखने

वाले इस झूठे खयाल से बिलकुल नामर्द बन जायेंगे या नामर्द रहेंगे कि यह चीज अहिंसा है। शरीर-बल की व्यर्थता हमारी समझ में आये और उस शक्ति का हम त्याग करें उससे पहले हममें मारने की पूरी शक्ति होनी चाहिए। इमामसाहब में दुश्मनों को जलाकर भस्म करने की शक्ति थी, परन्तु उन्होंने उसे काम में नहीं लिया और अपने-आपको मार डालने दिया। क्योंकि वे इतने अधिक प्रेम से भरे हुए थे। ×××

सेवक

मो० क० गांधी'

'प्रिय कस्तूर,

'मैं जानता हूँ कि तुम मेरे साथ रहने को बहुत तरसती हो, परन्तु मेरा खयाल है कि जो काम हमें करने हैं, वे करने ही चाहिए। अभी तुम्हें वहीं रहना चाहिए। इतने अधिक बच्चों को तुम अपने बच्चे समझो, तो तुम्हें बच्चों की कमी महसूस न हो। ढलती हुई उम्र में इतना तो जरूर करना चाहिए। तुम जैसे-जैसे सब पर प्रेमभाव रखोगी, सबकी सेवा करोगी वैसे-वैसे तुम्हारे भीतर आनन्द स्फुरित होगा। भोजन-काल के समय तुम्हें सब बीमारों से मिलना ही चाहिए। उनकी सेवा करनी ही चाहिए। जिनके लिए विशेष भोजन बनाना हो उनके लिए बनाना या रखना चाहिए। जो मराठी बहनें हैं उनसे मिलना चाहिए। उनके बच्चों को खेल-कूद कराना चाहिए। उन्हें लेकर घूमने जाना चाहिए। यह असर डालना चाहिए कि वे हमसे अलग नहीं हैं। उनकी हमदर्दी अच्छी बननी चाहिए।

'निर्मला के साथ अच्छी बातें यानी धर्म वगैरह की बातें करनी चाहिए। तुम उससे भागवत वगैरह पढ़वाकर सुन सकती हो। इसमें उसे रस भी आयेगा। यह निश्चित समझो कि तुम इस तरह से दूसरों की सेवा में लग जाओगी, तो मन हमेशा आनन्द में ही रहेगा। दुर्गाबाई के खाने-पीने की सँभाल तो करनी ही चाहिए।

मोहनदास

¶ "प्रिय पार्ली,

"तुम्हारा पत्र लिखने का आनन्द सदा होता है। पराजित राष्ट्र के पैगम्बर का संदेश सुनने में जापान को संकोच मालूम हुआ इसकी तह में मुझे तो बहुत गहरा अर्थ दिखाई दे रहा है। दुनिया में युद्ध सदा रहेगा। सारी मनुष्य जाति के स्वभाव में इतना परिवर्तन हो जाय इसकी संभावना दिखाई नहीं देती। मोक्ष और अहिंसा व्यक्ति ही प्राप्त कर सकेंगे। जमीन-जायदाद रखना या संतान पैदा करना अहिंसा के पूर्ण पालन के साथ असंगत है।

'दुष्कृत्य करनेवाले को मारने की जोखिम उठाकर भी अपने बाल-बच्चों की रक्षा करने में सच्ची अहिंसा समायी है। सामनेवाले मनुष्य को मारूँ नहीं और बीच में पड़कर उसके सारे प्रहार अपने ऊपर झेल लूँ तो वह सम्पूर्ण अहिंसा होगी। परन्तु हिन्दुस्तान ने तो प्लासी के रणक्षेत्र में दोनों में से एक भी काम नहीं किया। हम कायरों का एक झुंडमात्र थे। आपस में एक-दूसरे के साथ लड़ते थे। ईस्ट इंडिया कम्पनी के रुपये के भूखे थे और तुच्छ वस्तुओं के लिए अपनी आत्मा बेचने के लिए तैयार थे। आज भी हमारी दशा कम ज्यादा अंश में ऐसी ही है—ज्यादा अंश में कम अंश में नहीं। कुछ व्यक्तियों के बहादुरी दिखाने के उदाहरण होते हुए और उन दिनों के अतिशयोक्तिपूर्ण विवरणों में पीछे से सुधार हो जाने पर भी कुल मिलाकर हमने जो कंगाल प्रदर्शन किया उसमें अहिंसा नहीं थी। इसलिए जापान ने जो संकोच प्रकट किया वह मुझे तो ठीक मालूम होता है। पुराने जमाने के ईसाई पादरियों ने क्या किया था इस बारे में मुझे काफी जानकारी नहीं है। मेरा ख्याल है कि उन्होंने कमजोरी से नहीं, बल्कि बहादुरी से कष्ट सहन किये थे। प्राचीन काल के ऋषियों ने तो यह रिवाज रक्खा था कि उनके धार्मिक कर्मकांडों की रक्षा क्षत्रिय करें। विश्वामित्र के यज्ञ में राक्षसों के विघ्न डालने पर उनसे राम ने इनकी रक्षा की। बाद में विश्वामित्र को ऐसी रक्षा की जरूरत नहीं रही।

"सैनिक भरती के काम में मुझे बहुत मुश्किल होती है। किन्तु तुम मान लो कि अभी तक मुझे एक भी आदमी ऐसा नहीं मिला, जिसे मरने में आपत्ति होने के कारण भरती होने में आपत्ति है। ज्यादातर लोगों का एतराज तो यह होता है कि उन्हें मौत का डर लगता है। मौत का यह अस्वाभाविक भय राष्ट्र को बरबाद कर रहा है। इस वक्त तो मैं केवल हिन्दुओं का ही विचार करता हूँ। मुसलमान युवकों में मरने के प्रति कुछ बेपरवाही होती है। यह उनकी अद्भुत संपत्ति है।

"आज मैंने तुम्हें मुकम्मल पत्र नहीं लिखा। परन्तु अपने मनोमन्थनों की कुछ कल्पना तुम्हें दी है।

"तुम्हें पता लग गया होगा कि सोराबजी गुजर गये हैं। वे जोहान्सबर्ग में गुजरे। बहुत आशास्पद जीवन का एकाएक अन्त हो गया। ईश्वर की कला अगम्य है।

बहुत प्यार के साथ
तुम्हारा मोहन"

देवदास को :

"देहात की जिन्दगी गर्मी में तो अच्छी प्रतीत होती है, परन्तु चौमासे में अच्छी लगे या नहीं, यह सवाल है। मैं मानता हूँ कि चौमासे में हर कहीं जाना मेरे लिए तो बहुत मुश्किल हो जाय। गंदगी के प्रति मेरी अरुचि बढ़ती जा रही है घटती नहीं। पाखाना जरा भी खराब हो, तो घबरा जाता हूँ। जहाँ जंगल में जाता हूँ तो साथ में फावड़ा ले जाता हूँ। खोदने के बाद बैठता हूँ और क्रिया पूरी होने के बाद खूब मिट्टी डालकर जगह छोड़ता हूँ। देखता हूँ कि इतना-सा नियम न पालने से असंख्य रोग और करोड़ों मक्खियाँ होती हैं। मैं देखता हूँ कि जिन्हें गंदगी [illegible] वे बहुत प्रिय नहीं होते, वे तो गाँवों में कष्ट पैदा करते हैं। कल रात को दो भजन-मंडलियाँ मेरे पास आयी थीं। दोनों के साथ पाँच से दस बजे तक रहे। ढोलक, मंजीरे, करताल और एकतारे तम्बूरा थे। इसलिए उन्होंने मधुर स्वर

सकता है। उनमें छ न का तो पार ही नहीं। उसका उपयोग करते आना चाहिए। जैसे धनाकी बड़ाई अपने हमियारों को दोष देता है, वही हालत हमारी है। अब तो तुम्हें खूब लम्बा पत्र लिख डाला। उसे पढ़कर मणिलाल को भेज देना। ऐसा पत्र फिर से मैं शायद ही लिख सकूँ। सबेरे का समय है, थोड़ा-सा वक्त है, मस्तिष्क विचारों से भर रहा है। उसे थोड़ा-सा तुम्हारे सामने खाली कर दिया है। जो रस मैंने लिया है, वह तुम भी थोड़ा-बहुत चख सको, तो यह माना जायगा कि तुम्हें विद्यापद का सच्चा हिस्सेदार बनाया। जैसे हम सरकार से हिस्सा माँगते हैं, वैसे मैं भी अपने पाप का भाग तुम्हें दूँ, तो अपने भार से मुक्त हो जाऊँ।

बापू के आशीर्वाद"

नडियाद

'भाईश्री किशोरलाल,

"यह पत्र तुम्हारे और भाई नरहरि दोनों के लिए है। दक्षिणी और गुजराती सम्बन्धी भाई नारायणराव का आरोप किस हद तक सही हो उस हद तक हमें उसे दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। यह आरोप या कब है। पहला कदम तो यह है कि तुम सबको मिलकर विचार कर लेना चाहिए कि इस आरोप में कितना सत्य है। गुजराती स्त्रियों को दक्षिणी स्त्रियों के साथ खूब घुल-मिल जाने का प्रयत्न करना चाहिए, लड़के ऐसा भेद जरा भी न रखें, यह सबसे ज्यादा जरूरी है। मेरे लिखने को बड़ा रूप नहीं देना है, परन्तु उस पर यथाभर विचार करके जितना काम करना उचित हो उतना कर लेना चाहिए।

"प्रार्थना के संबंध में इतना सोचने के लिए तुम्हारे सामने रखता हूँ। हम अपनी अशक्ति का यहाँ तक विचार न करें कि कोई काम ही न कर सकें। हम शक्ति के अनुसार पढ़ायें और जितनी कमी हो, उसे प्रयत्न करके दूर करें। मुझे ही संस्कृत पढ़ानी पड़े, तो मैं इस अशक्ति का क्या उपयोग करूँ? मैं जानता हूँ कि मेरी संस्कृत संस्कृत ही नहीं कहला सकती। किन्तु दूसरा कोई न हो तो मैं जरूर पढ़ाऊँ और दिन-दिन अपनी

खामियाँ दूर करता रहूँ। परन्तु इसी तरह लोकसभा के कानून मानने में सबसे आगे बढ़ गया। तुम अपनी अशक्ति का ही विचार कर हरएक काम करने में डरते हो। आ पड़नेवाला कार्य, जितनी शक्ति हो उसीको काम में लेकर निपटा डालो, तो क्या अधिक आनंद न मिले?

"लड़के अपना बल कैसे बढ़ायें? अपना बचाव करें लेकिन उद्धत न बनें यह सिखाना बड़ा कठिन मालूम होता है। अब तक लड़कों को हम यही सिखाते थे कि जो मारे उसकी मार खाओ। क्या अब यह शिक्षा दी जा सकती है? बालक पर इस शिक्षा का क्या असर होगा? वह युवावस्था में क्षमावान् होगा या डरपोक बनेगा? मेरी अक्ल काम नहीं करती। अपनी अक्ल दौड़ाना। अहिंसा के इस नये विस्तार देनेवाले स्वरूप से मैं तो कई तरह के प्रश्नों के जाल में फँस गया हूँ। अभी गुत्थियों की एक ही गुरु-कुंजी (मास्टर-की) नहीं मिली। वह मिलनी ही चाहिए। क्या हमारे लड़कों को कोई एक तमाचा मारे, तो हम उसे बदले में दो मारना सिखावें? या अपने से कमजोर के तमाचे खा लें परन्तु अपने से बलवान् मारने आवे, तो उसका सामना करने में जो प्रहार पड़ें, उन्हें भी सहन करें? सरकारी अफसर मार मारे, तब उसका क्या करें? जब लड़के पर मार पड़े तो वह उसे सहन कर हमारी सलाह ले या जैसा मौका हो वैसा काम करे और परिणाम सहन करे? जो एक तमाचा लगावे उसके वो सहन करने का राजमार्ग छोड़ने से उपर्युक्त संकट आते हैं। पहला सरल होने से ही अच्छा हो सकता है या संकटमय मार्गों से गुजरने पर ही सही रास्ता हाथ लगेगा? हिमालय पर चढ़ने की पगडंडियाँ अनेक दिशाओं में जाती हैं कभी-कभी तो विरुद्ध दिशा में भी जाती हैं फिर भी जानकार मार्गदर्शक तो अन्त में चोटी पर ले ही जाता है। हिमालय पर सीधी लकीर से जा ही नहीं सकते। क्या इसी तरह अहिंसा का मार्ग भी विकट होगा? त्राहि माम्, त्राहि माम्।

मोहनदास के वन्दे मातरम्

¶ "प्रिय मित्री,

"सोराबजी चले गये। यह दुःखद समाचार देनेवाला तार अभी जोहान्सबर्ग से आया। इस मौत में विशेष बात नहीं है। सोराबजी जैसे बहुत-से पहले मर चुके हैं और अब भी मरते हैं। किन्तु हम सबके जीवन में सोराबजी ने इतना महत्त्वपूर्ण भाग लिया है कि उनकी अचानक मृत्यु से हमें सख्त चोट पहुँचती है। आत्मा का नाश होता ही नहीं और कर्मों का सातत्य जारी ही रहता है, इस विश्वास से ही अपने जीवन में वृत्तियाँ जारी रखने से हमें सन्तोष होता है। जब घटनाओं का उद्देश्य और औचित्य हमारी समझ में नहीं आता, तब हमें आघात पहुँचता है। परन्तु मेरा खयाल है कि ईश्वर की योजना में कुछ भी अनुचित और हेतुविहीन नहीं होता।"

¶ "भाईश्री शास्त्रियार,

"भाई ठक्कर अभी-अभी आये। वे कहते हैं कि आप फिर बीमार पड़ गये हैं। आपको ऐसे कठोर डॉक्टर की जरूरत है, जो निर्दय बनकर आपसे पूरा उपवास करावे और पानी का इलाज करे। परन्तु आज के जबरदस्त प्रयोग करते रहनेवाले डॉक्टरों से तो ऐसी हत्या के सिवा और कोई आशा नहीं रखी जा सकती, जिसे करने का उन्हें लाइसेन्स मिला हुआ है। जब-जब आपकी बीमारी की बात सुनता हूँ, तभी किसी-न-किसी डाक्टर को गोली से मार देने का जी चाहता है। फिर मेरी अहिंसा इसमें बाधक होती है। आपके और हिन्दुस्तान के लिए यह सुख की बात है कि मेरी कभी पार्लमेंट में बैठने की महत्त्वाकांक्षा ही नहीं है। नहीं तो ऐसा कानून बनवा दूँ कि जो लोग बार-बार बीमार पड़ते हों वे पार्लमेंट के सदस्य बनने के योग्य ही न माने जावें।

"पोलाक का तार साथ में भेजता हूँ। इसका पूरा अर्थ मैं नहीं समझा। परन्तु मेरा खयाल है कि (सुधार) योजना के रेत की तरह से अस्वीकृत होने का भय नहीं है।

¶ "प्रिय मिली,

'सोराबजी चले गये। यह दुःखद समाचार देनेवाला तार अभी जोहान्सबर्ग से आया। इस मौत में विशेष बात नहीं है। सोराबजी जैसे बहुत-से पहले मर चुके हैं और अब भी मरते हैं। किन्तु हम सबके जीवन में सोराबजी ने इतना महत्त्वपूर्ण भाग लिया है कि उनकी अचानक मृत्यु से हमें सख्त चोट पहुँचती है। आत्मा का नाश होता ही नहीं और कर्मों का सातत्य जारी ही रहता है, इस विश्वास से ही अपने जीवन में हस्तियाँ कायम रखने से हमें सन्तोष होता है। जब घटनाओं का उद्देश्य और औचित्य हमारी समझ में नहीं आता, तब हमें आघात पहुँचता है। परन्तु मेरा खयाल है कि ईश्वर की योजना में कुछ भी अनुचित और हेतुहीन नहीं होता।"

¶ 'भाईश्री शास्त्रियार,

'भाई ठक्कर अभी-अभी आये। वे कहते हैं कि आप फिर बीमार पड़ गये हैं। आपको ऐसे कठोर डॉक्टर की जरूरत है जो निर्दय बनकर आपसे पूरा उपवास कराये और पानी का इलाज करे। परन्तु आज के जबरदस्त प्रयोग करते रहनेवाले डॉक्टरों से तो ऐसी हत्या के सिवा और कोई आशा नहीं रखी जा सकती जिसे करने का उन्हें लाइसेन्स मिला हुआ है। जब-जब आपकी बीमारी की बात सुनता हूँ तभी किसी-न-किसी डॉक्टर को गोली से मार देने का जी चाहता है। किन्तु मेरी अहिंसा इसमें बाधक होती है। आपके और हिन्दुस्तान के लिए यह दुःख की बात है कि मेरी कभी पार्लमेंट में बैठने की महत्त्वाकांक्षा ही नहीं है। नहीं तो ऐसा कानून बनवा दूँ कि जो लोग बार-बार बीमार पड़ते हों वे पार्लमेंट के सदस्य बनने के योग्य ही न माने जायँ।

"पोलाक का तार साथ में भेजता हूँ। इसका पूरा अर्थ मैं नहीं समझा। परन्तु मेरा खयाल है कि (सुधार) योजना के देश की तरफ से अस्वीकृत होने का भय नहीं है।"

तुम्हारा स्वास्थ्य नहीं बिगाड़ा । मैंने जो कुछ किया है वह तुम्हारा भला समझकर ही किया है । क्या मेरे ऊपर का तुम्हारा गुस्सा उतारने के लिए इतना काफी नहीं है ? मेरे लिखने से तुम अधिक गुस्सा हरगिज नहीं करोगे । तुमने अपने विचार मुझे बता दिये इससे मैं प्रसन्न ही हुआ हूँ । अब सारी व्यवस्था तो तुम्हारे हाथ में आ ही गयी होगी ।'

'प्रिय कस्तूर

'तुम्हारे दुःख से मैं दुःखी होता हूँ । स्त्रियों को ले जाया जा सकता, तो मैं तुम्हें ले जाता । मेरे बाहर जाने से फिर क्यों फिरने दिया जाय ? हमने वियोग में सुख मानना सीखा है । ईश्वर की इच्छा होगी, तो फिर मिलेंगे और साथ रहेंगे । आश्रम के अनेक अच्छे काम हैं । उनके साथ तुम गूँथ जाओगी तो तुम्हें जरूर आनन्द होगा ।"

बा "प्रिय देवी *

* * *

सोराबजी की मृत्यु कितनी बड़ी मानी जायगी ! मैं दक्षिण अफ्रीका के बारे में बड़ी बेफिक्री महसूस करता था और आशा रखता था कि सोराबजी अब वहाँ आ गये हैं, इसलिए सब काम अच्छी तरह चलेगा । मेरी सारी आशाएँ मिट्टी में मिल गयी हैं । × × ×

"पता नहीं तुम सब मेरी छोटी सरनी की हलचल के बारे में क्या सोचते हो । मैं अपना सारा समय इसी काम में लगा रहा हूँ । मेरी दलीलों का सार यह है : हिंदुस्तान मारने की शक्ति खो बैठा है । मारने की शक्ति का वह स्वेच्छापूर्वक त्याग करे । इससे पहले उसे मारना सीख लेना चाहिए । संभव है, एक बार शक्ति प्राप्त कर लेने के बाद वह उसका कभी त्याग न करे । ऐसा करेगा, या वह पश्चिम के जैसा ही या ज्यादा अच्छी तरह करे, तो सभी आधुनिक स्वतंत्र देशों जैसा महा बन जायगा । प्राय

---

* डॉ॰ [illegible] के मि॰ वैद्य की बहन ।

अभी पूरी तरह नहीं समझे, इसलिए तुममें रोष रहता है। मैं अब भी कहना चाहता हूँ कि तुम सब भाइयों को जैसी सेवा मैंने की है वैसी दूसरा पिता नहीं करता। मैंने तुम्हें अपने धार्मिक अनुभवों का हिस्से दार बनाया है इससे अधिक कोई क्या कर सकता है! दूसरे माँ-बाप की तरह मैं तुम्हारा जीवन लौकिक रखकर अपना जीवन निराला बना सकता था। वैसा करता तो इस समय तुम्हारे और मेरे बीच कोई शून्यता न रहती और जैसे गोकीबहन नाम की बहन हैं, वही दशा हमारी होती। मुझसे दूसरी कोई बात न होती क्योंकि सत्य की खोज में मैं तो बहाँ हूँ, वहीं रहता और तुम उस मार्ग से बाहर होते। यह तुम्हारे लिए अच्छा नहीं था। यह बात तुम धीरज से सोचोगे, तो मेरे ऊपर का क्रोध मिटा सकोगे। देखो, हरिलाल के और मेरे बीच खाई पड़ गयी है। हरिलाल का जीवन मुझसे अलग हो गया है। पिता-पुत्र का संबंध तभी माना जा सकता है, जब दोनों का जीवन एक हो और दोनों एक-दूसरे के लिए आधारभूत हों। हरिलाल मेरे जीवन में दिलचस्पी नहीं ले सकता और मैं उसके जीवन में नहीं ले सकता। इसमें हरिलाल का दोष नहीं है। उसकी बुद्धि उसके कर्मों का अनुसरण कर रही है। मुझे हरिलाल पर गुस्सा नहीं है। परन्तु दोनों को जोड़नेवाली कड़ी टूट गयी पिता-पुत्र के जीवन का माधुर्य जाता रहा। संसार में ऐसा अक्सर होता है। मेरे बारे में असाधारण बात सिर्फ इतनी ही है कि मैं धर्म की खोज करते हुए हरिलाल को अपने साथ खींच न सका और हरिलाल अलग रह गया। हरिलाल ने अपने सेठ के लगभग तीस हजार रुपये केवल अपनी मूर्खता के कारण खो दिये हैं। सेठ को उसने चुप को बदनाम करनेवाला पत्र लिख दिया है और बेरोजगार हो गया है। मेरा लड़का माना जाता है, इसलिए आज वह जेल में नहीं है। तुम मेरे जीवन में साथ रहे हो परन्तु असंतुष्ट हो। उसमें से निकलना तुम्हें नहीं सुहाता और उसमें रहना भी बिलकुल पसंद नहीं है। इसलिए तुम शांत नहीं रह सकते। किसी भी तरह तुम संतोष रखो, तो शांत भी हो जाओ। मैंने जान-बूझकर

"चि. संतोष,

"रुखी क्यों बार-बार बीमार पड़ती ही रहती है? मेरा खयाल है कि वह जन्म से दुर्बल है। किन्तु इसका अर्थ यह हुआ कि उसकी सँभाल ज्यादा रखनी चाहिए। बच्चों का पालन-पोषण करना एक बड़ी कला है। इसमें माता-पिता को भारी व्रतों का पालन करना पड़ता है। मैं चाहता हूँ कि यह सब करके भी तुम बच्चों को अच्छा बनाओ। मैं कह चुका हूँ कि तुम्हें इमली के अभाव का दोष मालूम हो तो उसे खुराक में दाखिल कर दो। अपने ही अकेली रुखी के लिए इमली डालकर भोजन बनाओ। ऐसा करके भी उसका शरीर ठीक कर सको तो हम औरों को भी इमली देंगे। मैं चाहता हूँ कि इमली के सिवा और भी कुछ शुरू करके तुम बच्चों के शरीर बढ़िया बना सको तो बनाओ। मेरा खयाल है कि रुखी ऐसी और इतनी चीजें, जो उसे नहीं पचतीं उस वक्त तक खाती रहती है, जब तक वह बीमार नहीं पड़ जाती। इससे उसके पेट पर बोझ पड़ता है और वह बीमार हो जाती है। वह अच्छी हो जाय, तब मुख्यतः दूध, चावल और शाक पर उसे रक्खे, तो उसका ठीक हो जाना संभव है। अभी कुछ समय तक वह रोटी नहीं पचा सकती, मेरी तो यही मान्यता है। तुम को अनुभव हुआ हो सो सही है। मैं तो यह चाहता हूँ कि किसी भी तरह उसका शरीर वज्र के समान कर दो।

बापू के आशीर्वाद"

(हिन्दी में)

चि. रामनंदन

"तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे खाते रखकर तुमको मैं जाने का खर्च दे सकता हूँ। भरती में जाने के समय मैं अधिकारियों के पास से ले सकूँगा तो जाने का पैसा भेजूँगा। जब तक भरती में जाने का नहीं होगा तब तक तुमको मैं वापस नहीं बुला सकूँगा। भाई श्यामजी के बारे में बात हुई, वह [illegible] खुली थी। तुम्हारी [illegible]रिटी का बोझ आश्रम पर

रखना अनुचित है। तुम्हारी आकांक्षा मैं समझ सकता हूँ। मुझे लगता है कि जो गृहस्थ का संबंध रखना चाहते हैं, उनको आश्रम में लेना ही नहीं चाहिए। तुमको मना करना योग्य नहीं लगता, तुमको खर्च देना भी योग्य नहीं लगता—ऐसा धर्म-संकट मेरे ऊपर है। तुम ही मुझे छुड़ा सकते हो। यदि उपर्युक्त तरह से जाना चाहो तो इस पत्र को फूलचंद भाई को बतलाओ। वे तुमको जाने का खर्च देंगे।"

"भाईश्री मावजीवन,

"तुम्हारा चेचक के बारे में लिखा लेख आज पढ़ना शुरू किया। अभी थोड़ा बाकी है। बहुत लम्बा है। एक ही बात बार-बार आती रहती है। सच पूछा जाय, तो वह पेज के बाहर भी समझा जा सकता है। इतने पर भी लेख पर मेहनत तुमने खूब की है और लेख कीमती है। चेचक के टीके के अन्धविश्वासपूर्ण आग्रह के कारण कितने बच्चों का बलिदान होता होगा, इसकी कल्पना तुमने अच्छी दी है। इससे भी अधिक अच्छी कल्पना तुम दे सकते थे। शीतला की एक देवी मर गयी और उसकी जगह दूसरी परन्तु भयङ्कर देवी ने ले ली है। तुम्हारे लेख को पुस्तकाकार छपाकर हरएक म्युनिसिपैलिटी को भेंट देने की जरूरत है। तुम इस लेख को अधिक लोकोपयोगी बनाने के लिए संक्षिप्त बनाओ या इसके साथ इसके संक्षेप के रूप में दूसरा लिखो और मुझे उसके छपाने की इजाजत दो। उसका प्रचार करने की मेरी इच्छा है। तुम एक छोटा स्वतंत्र गुजराती लेख लिखो तो छपाकर उसका भी प्रचार करें। मैं आज या कल पढ़कर पूरा कर दूँगा। परन्तु यह सुझाव तुरन्त भेज देना। जरूरी समझकर लिख डाला है।

मुझे अभी थोड़ी और प्रतियाँ भेज दो। कुछ डॉक्टरों का देकर उनकी राय लेनी है।

मोहनदास के वन्दे मातरम्

इसी पर विचार नहीं किया था। मैं तो मानता हूँ कि मैं उसीकी इच्छा का, और किसीकी नहीं अनुसरण करता हूँ। वह मुझे फैले हुए घने अंधकार में से रास्ता दिखाकर पार ले जायगा।

"यह जानकर कि गुरुदेव ने खुद बच्चों को पढ़ाने का काम हाथ में लिया है, मेरा हृदय आनन्द से उमड़ रहा है। मेरे खयाल से यह काम उनके अमेरिका जाने से कहीं अधिक महत्व का है। तुम भी उनके इस काम में हिस्सा लेनेवाले हो, इससे मुझे उतना ही आनन्द होता है। ईश्वर तुम दोनों को भला चंगा रखे।

'बड़े दादा से मेरा प्रणाम कहना। प्यार।

—तुम्हारा मोहन'

७-८ १८

उनके स्वास्थ्य के लिए बापू कितनी परवाह करते हैं, इस बात की हाल ही के बहुत-से पत्र साक्षी देते हैं। यह एक और लीजिये:

¶ 'प्रिय हनुमन्तराव,

"तुम्हारी तबीयत का हाल जानकर अफसोस हुआ। हमारी सबसे बड़ी कमी यह है कि हम अपने शरीर को काफी व्यायाम नहीं देते। जब शरीर को कम व्यायाम दे सकते हों, तब खुराक हल्की लेनी चाहिए। उसमें नाइट्रोजन और चर्बीवाले पदार्थ बिलकुल न होने चाहिए। गेहूँ, चावल और साग-भाजी रहने से तबीयत अच्छी रहती है। हो सकता है कि इनसे काफी शक्ति न मिले। पर जरूरत हो तो दालें और मूँगफली और मिला ली जायें। क्या तुम बैंगलोर या नीलगिरि नहीं जा सकते? अगर जा सकते हो तो वहाँ की स्फूर्तिदायक हवा से तुममें ताजगी आ जायगी। स्नान के उपचारों और मानसिक आराम से तुम्हें कुछ फायदा होगा। किन्तु इतने से ही तुम अपना पहले-जैसा शरीर प्राप्त नहीं कर सकोगे। तुम्हें तो अभी बढ़ना चाहिए।

¶ "प्रिय चार्ली

"इस बार मैं भला बनूँगा और तुम पर तन्दुरुस्ती के मामले में ईश्वर और मनुष्य के कानून को तोड़ने का आरोप नहीं लगाऊँगा। किन्तु इसमें तो शक नहीं कि तुम्हारे लिए एक नियामक की जरूरत है। इसका शब्द काम में लें, तो यह कहा जा सकता है कि एक नर्स की जरूरत है। यह पद मैं ले लूँ, ऐसी मुझे खूब इच्छा होती है। मेरे जैसी नर्स, जो तुम पर प्रेम रखे और साथ ही डॉक्टरों की आज्ञाओं का कड़ा पालन कराये, तुम्हें कोई न मिल सके तो तुम्हें ऐसी पत्नी की जरूरत है, जो इस बात का ध्यान रखे कि तुम खुराक अच्छी तरह से लेते हो या नहीं। पेट पर पट्टी बाँधे बिना तुम्हें कभी बाहर नहीं निकलना चाहिए और मित्रों की बीमारी के समाचारों से भी बहुत अधिक चिंता नहीं करनी चाहिए। लेकिन विवाह शायद तुम्हारे लिए अब बहुत देर की चीज समझी जा सकती है। मैं खुद तुम्हारी देखभाल नहीं कर सकता, इसलिए मेरे लिए नाराज होना ही बाकी रहता है। किन्तु इससे अच्छा यह है कि मैं तुम्हारे लिए प्रार्थना करूँ, और मैं यही करूँगा। ईश्वर की अगर ऐसी इच्छा होगी, तो वह तुम्हें भला-चंगा रखेगा, ताकि तुम तगड़े होकर उसके गुणगान कर सको।

"अपने हाथ में लिये हुए काम में मैं इस तरह शान्ति से व्यवस्थित होता जा रहा हूँ, जैसे यह मेरे लिए बिलकुल स्वाभाविक हो। उनके टेढ़े मुद्दे मुझे परेशान जरूर करते हैं, परन्तु उनका विचार करना मैं अब छोड़ दूँगा। अभी तुरन्त उनका निबटारा करने की समस्या मेरे सामने नहीं है। मेरा जीवन कभी इस तरह बना ही नहीं। अपने कार्य के परिणामों से मुझे संतोष हो इस ढंग से इन्हें सोचकर काम करने का मेरा तरीका नहीं है। मैं तो अपने सामने आकर खड़े रहनेवाले काम को ही काँपते-काँपते और डरते-डरते सिर पर ले लेता हूँ। जब मैंने चम्पारन, खेड़ा, अहमदाबाद या युद्ध में (१९१४ में) अपनी सेवायें बिना शर्त दे दीं तब मैंने उनसे पैदा होनेवाली सभी संभावनाओं के

इसी पर विचार नहीं किया था। मैं तो मानता हूँ कि मैं उसीकी इच्छा का, और किसीकी नहीं, अनुसरण करता हूँ। वह मुझे फैले हुए घने अंधकार में से रास्ता दिखाकर पार ले जायगा।

"यह जानकर कि गुरुदेव ने खुद बच्चों को पढ़ाने का काम हाथ में लिया है, मेरा हृदय आनन्द से उमड़ रहा है। मेरे खयाल से यह काम उनके अमेरिका जाने से कहीं अधिक महत्व का है। तुम भी उनके इस काम में हिस्सा लेनेवाले हो, इससे मुझे उतना ही आनन्द होता है। ईश्वर तुम दोनों को भला-चंगा रखे।

बड़े दादा से मेरा प्रणाम कहना। प्यार।

—तुम्हारा मोहन"

७-८ १८

उनके स्वास्थ्य के लिए बापू कितनी परवाह करते हैं इस बात की शाख ही के बहुत-से पत्र साक्षी देते हैं। यह एक और लीजिये :

श्री "प्रिय हनुमन्तराव,

"तुम्हारी तबीयत का हाल जानकर अफसोस हुआ। हमारी सबसे बड़ी कमी यह है कि हम अपने शरीर को काफी व्यायाम नहीं देते। जब शरीर को कम व्यायाम दे सके हों, तब खुराक हल्की लेनी चाहिए। उसमें नाइट्रोजन और चर्बीवाले पदार्थ बिलकुल न होने चाहिए। गेहूँ, फल, चावल और साग-भाजी खाने से तबीयत अच्छी रहती है। हो सकता है कि इनसे काफी शक्ति न मिले। तब बादाम हों, तब दालें और मूँगफली और मिला ली जायें। क्या तुम बेंगलोर या नीलगिरि नहीं जा सकते? अगर जा सकते हो, तो वहाँ की स्फूर्तिदायक हवा से तुममें ताजगी आ जायगी। ज्ञान के उपायों और मानसिक आराम से तुम्हें कुछ फायदा होगा। किन्तु इतने से ही तुम अपना परेशानी वाला शरीर मस्त नहीं कर सकोगे। तुम्हें तो अभी रहना चाहिए।

"देवदास कहता है कि तुम उस पर बहुत प्रेम रखते हो। तुम कहीं जाओगे तब तुम्हारा अभाव उसे खटकेगा। तुम अपने साथ दूसरी पुस्तकें ले जाओ, इसकी अपेक्षा हिन्दी पुस्तकों का पहले चुनाव करना।

"जलवायु-परिवर्तन के लिए तुम कहीं भी जाओ, वहीं से मुझे लिखना।

सेवक

मो० क० गांधी"

अनसूयाबहन के नाम शंकरलाल का तार। सिंधीट कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष नियुक्त हुए। गांधीजी को आना ही चाहिए। उन्हें उत्तर:

"पूज्य बहन के नाम तुम्हारा तार पढ़ा। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी इतनी चिन्ता न करो। तुम्हारा प्रेम ही तुमसे ये उद्गार प्रकट कराता है। मैं आऊँ या न आऊँ, इन दोनों का कारण केवल देशहित ही होगा। यह तो हो ही नहीं सकता कि मैं रोष से न आऊँ। क्या तुम यह कहोगी कि मुझे आना ही चाहिए? फिर भले ही मेरा यही खयाल हो कि मेरे न आने में अधिक सेवा है।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

१-८-'१८

कल से मणिलाल नथुभाई की पुस्तकें उलटने लगे। 'कान्त' नाटक पढ़ डाला। कैसे? अच्छा नाटक है। कल्पना है, किन्तु अंग्रेजी भाव बहुत ज्यादा हैं। जहाँ-तहाँ अंग्रेजी की गूँज सुनाई देती है। उसका का पात्र अंग्रेजी नाटकों के पात्र जैसा है। पढ़कर 'रिचार्ड दी थर्ड'* अथवा 'मैकबेथ'* याद आते हैं। ८ तारीख की रात को तीन बजे तक घूमे। साथ में दुर्गा थी। विनोद में कहा: 'बूढ़ा हूँ, इसलिए मेरे साथ तो तुम घूम सकती हो। अफ्रीका और विलायत में मैं देख चुका

* इस नाम के शेक्सपियर के नाटक।

के प्रतिवाद्य उत्तर देने के लिए नारणदास को पत्र लिखा। उसमें से मुख्य उद्गार :

“मेरे दिल में जो विचार उमड़ रहे हैं उन्हें मुझे नारणदास से छिपाना नहीं चाहिए। जब मैं लाचार स्त्री-पुरुषों से मिलता हूँ, जो पहले से ही सैनिक बोझ से बिलकुल हीन नहीं थे, तब मुझे विचार आता है कि यह दशा देखकर ऊँचे स्वभाववाले अंग्रेजों को अपने हृदय की अच्छी तरह शुद्धि करनी पड़ेगी।

[illegible] का बहुत बड़ा पत्र : खूब खर्च होता है इस पर बड़ी आलोचना। बुनाई-विभाग पाठशाला वगैरह में बहुत खर्च लग चुका है और फल कुछ दिखाई नहीं देता। आश्रमवासी भी बिना नियम के भोजन खाते हैं। शिक्षक प्रौढ़ और प्रगतिशील नहीं हैं, वगैरह-वगैरह। खर्च खूब कम कर देना चाहिए। उन्हें उत्तर :

“तुम्हारी आलोचना मैं जानना ही चाहता था। यह भी ठीक नहीं हुआ कि तुमने इतना समय लिया। तुम्हारी अधिकांश आलोचनाएँ उचित हैं। अगर मैं ऐसा यह आश्रम न खोलता तो कुछ भी न होता। यह सोच रहा है कि उसमें अच्छे आदमी भरती हों। अच्छे आदमी भी दोषों से भरे हैं यह आश्रम में हुई भूलों से साबित होता है आश्रम की त्रुटियों का सबूत है। अगर मगनलाल न होता तो आश्रम की स्थापना न होती। मगनलाल की त्रुटि मेरी त्रुटियों की साक्षी है। मैंने ज्ञानपूर्वक कहा है कि मैं भी अनुभव से सीख रहा हूँ। आश्रम के प्रयोग मेरा विनोद है और मेरे प्रयोग हैं। प्रयोगों में तोड़-फोड़ होती ही है। उसमें से कभी मूल वस्तु मिल जायगी। वह ढूँढनेवाले को ही मिलेगी। तुम्हारे जैसे लड़के प्राणवायु का काम करेंगे, तो कार्बोनिक एसिड गैस दूर किया जा सकेगा। वह गैस हमेशा उत्पन्न तो होगी ही लेकिन प्राणवायु उसे हमेशा शुद्ध करेगी। जैसा विचार वैसा ही प्रभाव है। तुमने जो उद्गार मेरे पत्र में प्रकट किये हैं उन्हें मगनलाल के सामने, शिक्षकों के सामने प्रकट करो तो काम पटरी पर आ जायगा। मैं चाहता हूँ, तुम

श्री हेवर जी :

प्रिय "मिस विन्टरबॉटम ऊँचे संस्कारवाली वृद्ध महिला हैं। वे बहुत सी नैतिक हलचलों में प्रमुख भाग लेती हैं। अलबत्ता पोशाक यहाँ आपके पथप्रदर्शक मित्र और सलाहकार बनेंगी। राजनैतिक आन्दोलनों के सिलसिले में जिन अंग्रेजों को मैं जानता हूँ, उन सबके पास वे आपको ले जायेंगी। शायद वे भूल जायें इसलिए पहले ही आप उन्हें याद दिला दीजिये कि 'बनार्डो होम' नाम की विविध उद्योग सिखानेवाली पाठशाला और ऐसी ही दूसरी संस्थायें दिखाने ले जायें। कुछ संस्थायें बिलकुल नजदीक से देखने पर आपको पसन्द न भी आयें मगर आपको तो सभी को आलोचक की दृष्टि से देखना है। जो कुछ चमकता है, वह सब सोना नहीं होता।

"आपकी यात्रा सुखमय और आनन्दपूर्ण सिद्ध हो और आप सकुशल लौट आयें। मैं आशा रखता हूँ कि श्रीमती हेवर का स्वास्थ्य अच्छा हो गया होगा।

सेवक

मो० क० गांधी"

एक भाई ने भोजन के सम्बन्ध में पत्र लिखा था। उसे (हिन्दी में) विस्तृत उत्तर :

"अगर मेरी पुस्तक फिर पढ़ लेंगे, तो बहुत-से प्रश्नों का उत्तर उसीमें से मिल जायगा। मैंने कौन-से फल खाना।

ऐसाटि का प्रयोग मुश्किल बात है। मेरा अनुभव ऐसा है कि आधा पौंड से ज्यादा नहीं खाना चाहिए। ओलिव ऑइल इस मुल्क में नहीं पा सकते। इसके बदले में तिल का तेल ठीक है परन्तु ओलिव के जैसा केवल निर्दोष नहीं है। खजूर और मूँगफली कर्कश हैं ही परन्तु उन चीजों को ही खुराक बनाने से उनकी ठीक बरदाश्त हो सकती है। बादाम बहुत कम खाना चाहिए। दूध की बनी हुई बहुत चीजें खाना ठीक नहीं

है। अमरूद आदि के साथ मूँगफली खाने से ठीक निर्वाह हो सकता है। बदाम की गरज मूँगफली नहीं दे सकती। गेहूँ एक प्रकार से फल है, परन्तु मेरी पुस्तक में फल का पारिभाषिक प्रयोग किया गया है और उसकी समूल व्याख्या दी गयी है। मेरी पुस्तक में फलों की अपेक्षा तरकारी के लिए कुछ लिखा होगा; लेकिन मैं देखता हूँ, हिन्दुस्तान में तरकारी आवश्यक है। द्विदल पचने में कठिन है। ज्यादा अनुभव लेने से हिन्दुस्तान के लिए मेरी यह राय है कि हिन्दुस्तान में सबसे अच्छा आहार गेहूँ और तरकारी है। जिसको ज्यादा शारीरिक मेहनत करनी पड़ती है वह भले ही द्विदल का भी प्रयोग करे। धार्मिक दृष्टि से दूध के लिए मेरा बताया हुआ अभिप्राय कायम है। लेकिन शारीरिक दृष्टि से और हिन्दुस्तान की परिस्थिति में दूध का त्याग अशक्य लगता है। मैंने कई बरसों से दूध का त्याग किया है और आजन्म न पीने की प्रतिज्ञा है। परन्तु दूसरों को मैं दूध छोड़ने की सलाह तब तक नहीं दे सकता, जब तक कि दूध के जैसी गुणवान् वस्तु मेरे हाथ में नहीं आ जाती। मेरी उम्मीद थी कि तिल से और मूँगफली से निर्वाह हो सकेगा। एक प्रकार से निर्वाह हो सकता है; परन्तु दूध के मुकाबले में उसमें खामी भरी है।

"आपको मेरी यह सलाह है। यदि आपका शरीर आरोग्यवान् हो तो गेहूँ दूध घी आदि वस्तुओं का सामान्य उपयोग करना, एकादशी के दिनों में बिना पक के लिए गये—ऐसे फलों पर निर्वाह कर लेना, शारीरिक प्रवृत्ति आरम्भ होने के समय उपवास करना और हमेशा खुली हवा में कम-से-कम दस मील गमन का व्यायाम करना। एक प्रश्न का उत्तर रह गया। तेल के एवज में सिर्फ घी ही पच लेना एकदम ठीक है। जिसमें पशु से भरी हुई वस्तु दो-तीन दिनोंभर से ज्यादा रहने में हानि का अंदेशा रहता है। नमक का सर्वथा त्याग करने की अपेक्षा हफ्ते में दो तीन शाम तक खाना उचित लगता है। तीन दिन से मैं नमक रहने

श्री डेवर को :

प्रिय "मिस विएटरबॉटम ऊँचे संस्कारवाली एक महिला हैं। वे बहुत-सी नैतिक हलचलों में प्रमुख भाग लेती हैं। अलबत्ता पोलाक वहाँ आपके पथप्रदर्शक मित्र और सलाहकार बनेंगे। राजनैतिक आंदोलनों के सिलसिले में जिन प्रेमियों को मैं जानता हूँ, उन सबके पास वे आपको ले जायँगी। शायद वे भूल जायँ, इसलिए पहले ही आप उन्हें याद दिला दीजिये कि 'बर्नार्डो होम' नाम की विविध उद्योग सिखानेवाली पाठशाला और ऐसी ही दूसरी संस्थाएँ दिखाने ले जायँ। कुछ संस्थाएँ बिलकुल नजदीक से देखने पर आपको पसन्द न भी आवें, मगर आपको तो सभी को आलोचक की दृष्टि से देखना है। जो कुछ चमकता दीखता है, वह सब सोना नहीं होता।

"आपकी यात्रा सुखमय और आनन्दपूर्ण सिद्ध हो और आप सकुशल लौट आयें। मैं आशा रखता हूँ कि श्रीमती डेवर का स्वास्थ्य अच्छा हो गया होगा।

सेवक
मो० क० गांधी"

एक भाई ने भोजन के सम्बन्ध में पत्र लिखा था। उसे (हिन्दी में) लिखा उत्तर :

'आप मेरी पुस्तक फिर पढ़ लेंगे तो बहुत-से प्रश्नों का उत्तर उसीमें से मिल जायगा। जैसे कौन-से फल खाना।

घीआदि का प्रयोग मुश्किल बात है। मेरा अनुभव ऐसा है कि आधा औंस से ज्यादा नहीं खाना चाहिए। ओलिव ऑइल इस मुल्क में नहीं पा सकते। इसके एवज में तिल का तेल ठीक है, परन्तु ओलिव के जैसा केवल निर्दोष नहीं है। खजूर और मूँगफली कर्कश हैं ही परन्तु उन चीजों को ही मुख्य बनाने से उनकी ठीक बरदाश्त हो सकती है। बादाम बहुत कम खाना चाहिए। दूध की बनी हुई बहुत चीजें खाना ठीक नहीं

सैनिक दल बनाने का मेरा प्रस्ताव उसने स्वीकार कर लिया है। आप इस बात से सहमत होंगे कि यह काम मैं छोड़ नहीं सकता।

"किन्तु मेरा माना संभव हो तो भी मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं बहुत मददगार हो सकूँगा। मैं इस मामले में बहुत कड़े और शायद अजीब लगनेवाले विचार रखता हूँ, जिनके साथ अधिकांश मेरा सहमत न हों। मैं दृढ़तापूर्वक मानता हूँ कि और सब बातें छोड़कर हम सैनिक भरती के ही काम में जुटे रहें, तो बरसों नहीं तो एक वर्ष के भीतर हमें पूर्ण उत्तरदायी शासन जरूर मिल जाय। अपने निरे अज्ञानी देश बन्धुओं को जबरन फौज में भरती होने देने के बजाय हम होमरूलवालों की एक सेना खड़ी कर सकेंगे। वे इस हानि से राजी-खुशी से सिपाही बने होंगे कि देश के लिए लड़ाई में जा रहे हैं। साथ ही मानता हूँ कि हमें मॉण्टफर्ड-योजना के बारे में अपनी राय सर्वसम्मत भाव से प्रकट कर देनी चाहिए। हमें अपनी कम-से-कम माँगें तय करके किसी भी कीमत पर उन पर अमल कराने का प्रयत्न करना चाहिए। मेरी राय है कि असल में योजना अच्छी है, यद्यपि उसमें बहुत-से हेरफेर कराने की जरूरत है। इस मामले में सर्वसम्मत निर्णय पर पहुँचना हमारे लिए मुश्किल नहीं होना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि देश में एक दल ऐसा पैदा हो, जो केवल इन दो बातों को ही जीवन का ध्येय बना ले : एक तरफ से युद्ध चलाने में सरकार की मदद करना और दूसरी तरफ राष्ट्रीय माँगों पर अमल कराना।

"मैं नहीं मानता कि आज के जैसे नाजुक समय में हमें इस बात से सन्तोष होना चाहिए कि कथित गरम दल और कथित नरम दल के बीच एक-दूसरे के हक में थोड़ी-बहुत रियायतें करके ऊपरी सुलह हो जाय। मैं चाहता हूँ कि हरएक संस्था या दल को अपनी-अपनी नीति की साफ व्याख्या करनी चाहिए। फिर भी दल स्वाभाविक तौर पर अपने पक्ष के आतरिक गुणों और प्रसिद्ध आन्दोलन के कारण देश में बलवान्

का असर अपने शरीर पर देख रहा हूँ। महीने-दो महीने के बाद आप मुझे लिखोगे तो मैं अपना अनुभव दे दूँगा।

आपका

मोहनदास"

इसके बाद कहते हैं कि ऐसा लगता है कि मेरी पुस्तक का परिशिष्ट छापना पड़ेगा। मैं यह नहीं चाहता कि मेरी पुस्तक भी सब पढ़ें। लोग बड़ा उलटा उपयोग करते हैं।

थोरो इमर्सन से बढ़कर है। इमर्सन की रचनाओं में पुनरुक्ति पाता हूँ। थोरो के एक-एक वाक्य से आग बरसती है। 'कानून का विरोध करने के धर्म' (on the duty of civil Disobedience) का रोज पारायण करना चाहिए। लाख बार पढ़ें, तो भी उसका रस कम नहीं होता।

१-८-१८

सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी का तार। ¶ 'वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति को देखते हुए कांग्रेस की खास बैठक में शरीक हों या उससे अलग रहें यह विशेष विचार और तात्कालिक निश्चय का तकाजा करता है। अलग-अलग प्रान्तों के नेताओं की खानगी परिषद् में १६ अगस्त को कलकत्ते आने का आपको निमंत्रण देता हूँ।

उन्हें तार दिया और नीचे लिखा उत्तर भेजा।

¶ " प्रिय भाई बैनर्जी

"मैं अभी यहाँ सैनिक भरती के काम में लगा हुआ हूँ। यहाँ अहमदाबाद से रवाना किया हुआ आपका तार मुझे मिल गया। मैं कलकत्ते आऊँ, तो आने-जाने में ही मुझे कम-से-कम एक सप्ताह लग जाय। मुझे अपना काम सन्तोषजनक ढंग से करना हो तो इतने लम्बे समय तक गैरहाजिर रहना मेरे लिए असंभव है। फिर, अभी तो मैं उपस्थित रह ही नहीं सकता। क्योंकि अभी-अभी मुझे सरकार से खबर मिली है कि गुजरात में सैनिक शिक्षण-केन्द्र खोलने और गुजरात का एक

क्या दशा हो रही है, यह अगर जान लें, तो आप ही कहेंगे कि 'और जो भी होना हो सो हो परन्तु यह तो अभी ही उठ जाना चाहिए।' यह कर इसलिए कष्टदायक नहीं है कि यह बहुत भारी है, बल्कि नमक के ठेके से नमक की कीमत कृत्रिम ढंग से बढ़ा दी है और गरीब लोगों का वाजिब कीमत पर नमक मिलना बहुत कठिन हो गया है। उन्हें तो पानी और हवा के बराबर ही नमक की जरूरत है।

'इस टिप्पणी के प्रकाशित करने के सम्बन्ध में मेरी राय यह है कि उसे प्रकाशित नहीं करना चाहिए। सुधारकों को सरकार पर विश्वास नहीं रहा। उनका खयाल है कि अब भी लोगों के साथ व्यवहार में वह प्रामाणिक नहीं है। यह एक विचित्र घटना है कि हमारा आप पर विश्वास नहीं है और फिर भी हमें आपकी जरूरत है। यही बताता है कि लोगों के साथ जो अन्याय हुआ है, उसका उन्हें भान है, किन्तु उसका परिहार करने की उनमें जरा भी ताकत नहीं है। राष्ट्र की गुलामी का पाया पक्का हो गया है। अंग्रेजों ने जान बूझकर ऐसा करना चाहे न सोचा हो, परन्तु उनका ऐसा इरादा होता, तो भी वे इससे अधिक नहीं कर सकते थे। मैं इंग्लैण्ड से चिपका हुआ हूँ, इसका कारण इतना ही है कि मैं मानता हूँ कि वह असल में बुरा नहीं है। मैं यह भी मानता हूँ कि हिन्दुस्तान दुनिया को अपना सन्देश इंग्लैण्ड के द्वारा अधिक अच्छी तरह दे सकेगा। दूसरी तरफ हिन्दुस्तान को निःशस्त्र करने का इंग्लैण्ड का कृत्य, उसकी अभिमानभरी और हमारा बिलकुल भाग न रखने की सैनिक नीति और हिन्दुस्तान के धन और कला का अंग्रेजों के व्यापारिक लाभ की वेदी पर चढ़ाया हुआ बलिदान इन बातों की मैं इतनी निन्दा करता हूँ कि मुझमें उपर्युक्त श्रद्धा न होती तो मैं कभी का विद्रोही बन गया होता।

मेरी इच्छा आपको लम्बा पत्र लिखने की नहीं थी। परन्तु मेरी कलम रोके रुकी ही नहीं।

सेवक
मो० क० गांधी

बन जायगा, वह 'हाउस ऑफ कामन्स' के सामने अपनी बात मनवा सकेगा।

सेवक

मो० क० गांधी"

यह लिखवा चुकने के बाद मैंने पूछा : क्या यही बात इन्हीं शब्दों में उनके सामने रखा गया है? तो बापू बोले : हाँ। मैंने तो यह भी कहा है कि इतना कर सकें, तो फिर नरम दलवाले कांग्रेस में न आवें, तो भी कोई परवाह न की जाय।

११-८-१८

प्रोफेसर जेवन्स की 'युद्ध में हिन्दुस्तान का हिस्सा' पर टिप्पणी। उसमें कर बढ़ाने का सुझाव, नमक-कर बढ़ाने का सुझाव और एकता करने का सुझाव वगैरह हैं। उन्हें उत्तर :

¶ 'प्रिय प्रोफेसर जेवन्स,

आपकी टिप्पणी मैंने पढ़ ली है। कुल मिलाकर वह मुझे पसन्द है। हमें सरकार को जितने आदमियों की जरूरत हो, उतने जुटा देने चाहिए और वे सरकारी अफसरों द्वारा नहीं, बल्कि होमरूल की संस्थाओं द्वारा। हम यह कर सकें, तो होमरूल हमारे हाथ में है।

'आपने रुपये-पैसे के बारे में जो विचार प्रकट किये हैं, उनसे मैं सहमत नहीं हूँ। इंग्लैण्ड और हिन्दुस्तान की तुलना हो ही नहीं सकती। इंग्लैण्ड साधन-सम्पन्न है, हिन्दुस्तान कंगाल है। इस लड़ाई के दरमियान थोड़े-से लोगों ने पैसा कमाया होगा किन्तु आम जनता का क्या हाल है? मैं खेड़ा और चम्पारन के लोगों के खूब संसर्ग में आया हूँ। उनके पास कुछ नहीं है। खेड़ा में सरकार की अत्याचारी कर-पद्धति ने किसी समय के खुशहाल और साधनसम्पन्न लोगों को बेहाल कर डाला है। चम्पारन में तो निलहों ने लोगों का खून ही चूस लिया है। आप नमक-कर में वृद्धि करने की बात करते हैं और मैं काँप उठता हूँ। इस कर के कारण लोगों की

अपना मानस खुद तैयार कर ही नहीं सकती। आपकी हलचलों के बारे में उसे कोई भान नहीं कि वह अजानी भी कुछ समझ सके। इसलिए मजबूर होकर हम दोनों आप सब बहनों से क्षमा चाहते हैं।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

'भाईश्री फूलचंद,

कल हमने बड़े महत्त्व की बातें कीं। अगर एक भी आदमी लगन रखकर मेरी सूचनाओं पर अमल कराये, तो तुम जो स्थिति कायम की चाहते हो और जो बिलकुल ठीक है, उस स्थिति में हम तुरन्त ही पहुँच जायँ। इस समय ऐसे पुरुष तुम हो। तुरन्त बैठक करके फैसला कर डालो।

मैंने कल पौने छह बजे तक समझदारी से काम लिया और स्वास्थ्य की पूँजी इकट्ठी की। पौने छह बजे जैसे-तैसे उपवास छोड़ा और महा-दुःख सिर पर ले लिया। खाने में भी मर्यादा नहीं रखी और लस्सी खा ली। अगर सिर्फ साग का पानी ही पिया होता तो जो दुःखद परिणाम निकला वह तो हर्गिज नहीं निकलता। आज मुझमें उठने या चलने की शक्ति नहीं है। लगभग चिलरबर पाखाने जाना पड़ता है और वहाँ चक्कर ऐसे आते हैं कि पीसने की भी चाहता है। इतना दुःख भोगते हुए भी मैं अत्यन्त प्रसन्न हो रहा हूँ। तुरन्त ही गयी मुनासिब सजा का पूरा चित्र सामने आ रहा है। मुझे विश्वास है कि पौने छह बजे मेरा दर्द मिट जायगा। मैंने भूल करके खाया, इसलिए जिस वक्त खाया उससे चौबीस घंटे तक की कोई सजा भारी नहीं मानी जा सकती। फिर इतनी थोड़ी सजा भी इसलिए कि आज उपवास किया है। मेरी चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। मैं यह मानता हूँ कि कल दुःख से तो बिलकुल मुक्त हो जाऊंगा और अगर खाने में असावधानी न करूँ, तो तीन-चार दिनों में पहले जैसा हो जाऊँगा।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

१२-८-१८

हार्निमेन ने 'मानव-रक्षा परिषद्' (ह्युमेनिटेरियन कान्फ्रेन्स) की स्वागत-समिति के अध्यक्ष बनने की प्रार्थना की, उसमें लिखा था कि मैं इतना बताने को लिख रहा हूँ कि आप किसी भी कारण से इनकार न करें। उन्हें उत्तर :

"आपका आज्ञा-पत्र मिला। यद्यपि वह आठ तारीख का लिखा हुआ है, फिर भी मेरे पास कल ही पहुँचा। मेरे ख्याल से बड़ी खींचतान के इस समय में डाक-विभाग का ढीलापन हमें सह लेना पड़ेगा। सचमुच ही मुझ पर तो सैनिक भरती का पागलपन सवार हो गया है। मैं और कुछ करता नहीं और कुछ सोचता नहीं, और कुछ करने की बात नहीं करता। इसलिए फौजी भरती के सिवा और किसी काम में अध्यक्ष-पद लेने के लिए अपने को योग्य नहीं मानता। आप मुझे क्षमा करें।

सेवक

मो० क० गांधी"

हिन्दू स्त्री-मंडल की मंत्रिणी बहन रतिकमणि की तरफ से वार्षिक उत्सव और दादाभाई-जयन्ती के समय अध्यक्ष-पद लेने के लिए [illegible] निमंत्रण। उन्हें उत्तर, वैसा ही, जैसा एक बार मिसेज जोसेफी एस्लेब को लिखा था :

'मेरी धर्मपत्नी के नाम भेजा आपका पत्र मैं कल ही पढ़ सका, जिससे आपको जवाब देने में थोड़ी देर हो गयी। माफ कीजिये। हम दोनों यद्यपि स्वतन्त्र और समान हक रखनेवाले हैं, फिर भी सुभीते के लिए हमने अपने क्षेत्र का बँटवारा कर लिया है। और जब हमारी शादी हुई, तब तो मेरी धर्मपत्नी को कुछ भी लिखना-पढ़ना नहीं आता था। बड़ी मेहनत से थोड़ा-सा सिखाया, फिर भी कई कारणों से संतोष होने लायक नहीं सिखा सका। इसलिए आपका प्रस्ताव स्वीकार नहीं हो सकता। ऐसा नहीं लगता कि मेरी धर्मपत्नी कुर्सी पर बैठकर [illegible] है। [illegible]

"भाईश्री कमलनाथ

"मेरी तीव्र इच्छा होते हुए भी मारी बीमारी के कारण मैं तुम्हें अपनी पत्र नहीं लिख सका और आज भी लिखवाना ही पड़ रहा है। अब भी मैं बिस्तर पर हूँ, परन्तु पत्र लिखवाने लायक स्थिति में पहुँच गया हूँ। मेरा स्वास्थ्य बिलकुल सुधार पर है। इसलिए चिन्ता करने का कोई कारण नहीं।

'तुम्हारा किस्सा सुनकर मुझे बहुत ही दुःख हुआ। सेठ की मुरूवता से 'असत्य' सत्य नहीं बन सकता। जैसे ईमानदार (?) की एक ही नजर कहलाती है, वैसे ही सत्य का भी एक ही मार्ग है। जैसे चोर की चार आँखें कहलाती हैं, वैसे ही असत्य के अनेक मार्ग होते हैं। इन अनेक मार्गों के जाल में फँसा हुआ पुरुष नष्ट हो जाता है। अगर वह संरक्षक (ट्रस्टी) हो तो जिसकी रक्षा करने के लिए नियुक्त होता है उसका भी नाश करता है। यह तुम अपने और दूसरों के सैकड़ों अनुभवों से प्रमाणित हुआ पाओगे। सत्य से किसीकी हानि हुई हो, ऐसा आज तक नहीं हुआ और न आगे होनेवाला है। इस राजमार्ग को तुम कैसे छोड़ोगे, कैसे छोड़ा?

मोहनदास के वन्दे मातरम्'

आनन्दशंकर का चिन्ता प्रकट करनेवाला मेरे नाम पत्र। दवा क्यों नहीं लेते—यह प्रश्न। बापू ने खुद ही उत्तर दिया :

"भाईश्री आनन्दशंकरभाई,

'मेरे बारे में आपकी चिन्ता आपके प्रेम की सूचक है। मेरी स्थिति का हूबहू चित्र यह है : मैंने सोमवार और मंगलवार तक अगस्त अथवा इससे भी ज्यादा विशेषण काम में लिया जा सकता हो, तो वैसा दुःख उठाया। इन दो दिनों में मैं लगभग बेहोशी की हालत में रहा और सारे समय चिल्लाने की इच्छा होती थी। बड़ी मुश्किल से चिल्लाहट दबा सका हूँ। बुधवार को पहले से शान्ति थी और उसके बाद उत्तरोत्तर

१७-८ १८

सोमवार से शनिवार तक भयंकर बीमारी। सख्त पेचिश। शनिवार को कुछ आराम मालूम हुआ। 'टाइम्स' में छपा था, 'अब भी सैनिक भरती का काम कर सकते हैं', यह सुनकर पत्र लिखवाने शुरू किये। वाइसराय को लम्बा तार गवर्नर के प्राइवेट सेक्रेटरी को पत्र कलेक्टर को पत्र और दूसरे पत्र।

"चि० देवदास,

'आज तबीयत बहुत अच्छी मानी जा सकती है। अभी खटिया पर तो रहना ही होगा दुःख बहुत भोगा। कसूर खिर मेरा ही था। इसमें जरा भी अत्युक्ति नहीं है। सजा अपराध के अनुसार हुई है। मेरी जरा भी चिंता न करना। मेरी सेवा में कोई कमी नहीं रहती। एक काम करने को सब लोग उत्सुक रहते हैं और सब अपना असीम प्रेम उँडेल रहे हैं। इसलिए तुम मुझे स्वाभाविक तौर पर याद आते हो। लेकिन तुम्हारी अनुपस्थिति की कमी मुझे महसूस नहीं हुई। तुम्हारे वहाँ के काम में जुटे रहने में तुम्हारी पूरी सेवा है। ऐसा हमारा कठिन नियम है। हमें इस कठिन नियम का ज्ञानपूर्वक पालन करना चाहिए कि बीमारी के कारण भी कोई अपने स्थान से विमुख नहीं हो सकता। इतने सख्त दुःख में भी मैंने अपनी आत्मा की शांति क्षणभर के लिए भी खोयी हो ऐसा मुझे मालूम नहीं होता। मैं यहाँ पहुँच गया हूँ। हम आशा रखें कि थोड़े दिनों में मैं जैसा था उससे अधिक नीरोग और ब्रह्मचर्य-व्रत का अधिक पूरी तरह पालन करनेवाला हो जाऊँगा।

बापू के आशीर्वाद"

स्वागताध्यक्ष बनना मंजूर करने के सम्बन्ध में पिटीट की शर्तें जमना दास ने सभा में नहीं कहीं और जाहिर कर दिया कि मंजूर हैं। बाद में बचाव किया। इस घटना को ध्यान में रखकर उन्हें पत्र। एक बार बोले थे कि यह चीज हमें शर्मिन्दा करनेवाली है।

'भाईश्री जमनादास

"मेरी तीव्र इच्छा होते हुए भी भारी बीमारी के कारण मैं तुम्हें जल्दी पत्र नहीं लिख सका और आज भी लिखवाना ही पड़ रहा है। अब भी मैं बिस्तर पर हूँ, परन्तु पत्र लिखवाने लायक स्थिति में पहुँच गया हूँ। मेरा स्वास्थ्य बिलकुल सुधार पर है। इसलिए चिंता करने का कोई कारण नहीं।

'तुम्हारा किस्सा सुनकर मुझे बहुत ही दुःख हुआ। देव की दुहाई से 'असत्य' सत्य नहीं बन सकता। जैसे इमामनगर (?) की एक ही नहर कहलाती है, वैसे ही सत्य का भी एक ही मार्ग है। जैसे चोर की चार आँखें कहलाती हैं, वैसे ही असत्य के अनेक मार्ग होते हैं। इन अनेक मार्गों के जाल में फँसा हुआ पुरुष नष्ट हो जाता है। अगर वह संरक्षक (ट्रस्टी) हो तो जिसकी रक्षा करने के लिए नियुक्त होता है, उसका भी नाश करता है। यह तुम अपने और दूसरों के सैकड़ों अनुभवों से प्रमाणित हुआ पाओगे। सत्य से किसीकी हानि हुई हो, ऐसा आज तक नहीं हुआ और न आगे होनेवाला है। इस राजमार्ग को तुम कैसे छोड़ोगे, कैसे छोड़ा?

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

आनन्दशंकर का चिन्ता प्रकट करनेवाला मेरे नाम पत्र। दवा क्यों नहीं देते—यह प्रश्न। बापू ने खुद ही उत्तर दिया:

"भाईश्री आनन्दशंकरभाई

'मेरे बारे में आपकी चिन्ता आपके प्रेम की सूचक है। मेरी स्थिति का हूबहू चित्र यह है: मैंने सोमवार और मंगलवार तक अपना पथ्य इससे भी अधिक निरापद काम में लिया जा सकता हो, तो वैसा दुःख उठाया। इन दो दिनों में मैं लगभग पागल की हालत में था और हर समय चिल्लाने की इच्छा होती थी। बड़ी मुश्किल से लिखवा रहा हूँ। बुधवार को पहले से शांति थी और उसके बाद उत्तरोत्तर

हालत ठीक होती गयी है। कमज़ोरी बहुत ज़्यादा है, इसलिए हिलना-चलना तो कैसे बाप ? थोड़े दिन बिस्तर पर ही पड़े ही रहना होगा। परन्तु अन्त में कुशल दिखाई देता है। ऐसा होने के कारण आपका उठाया हुआ दवा का प्रश्न एक तरफ़ रह जाता है। दवा के बारे में मेरे विचार आपने ही हों, तो किसी दिन ज़रूर बताऊँगा। कोई भी डॉक्टर इतना स्वीकार करेगा कि मेरे जैसे रोग का इलाज इतने कम समय में दूसरी तरह करना लगभग असंभव था। आपको निश्चिन्त करने के लिए पूरा हाल लिखा है।

"आपका निर्णय मैंने पढ़ लिया है। मज़दूर वर्ग की तरह उसकी बाट जोह रहे थे अब उन्हें शांति मिलेगी। मैं भी बाट जोह रहा था। यद्यपि उन्हें वैतीस फीसदी वृद्धि मिलनी शुरू हो गयी थी, फिर भी मैं यह मानता था कि आपके निर्णय से उनकी स्थिति को अच्छा समर्थन मिलेगा।

"बीमारी के कारण के बारे में आपको लिखना चाहिए। आश्रम में अक्सर एक भजन गाते हैं। उसकी एक पंक्ति का मनन मैंने अपने बिस्तर में अक्सर किया। श्रीकृष्ण उद्धव से कहते हैं :

कर्मो कर्मन की गत न्यारी।

"सच है कि हम तो नहीं गा सकते हैं, क्योंकि बहुत बातों के बारे में हमारे अज्ञान की हद नहीं है। परन्तु असल में कर्म की गति न्यारी नहीं है। वह तो सर्वथा सीधी और सरल है। जैसा बोओगे वैसा काटोगे। करोगे, वैसा ही पाओगे। इस बीमारी में मैं अपना दोष कदम-कदम पर देख सका हूँ। मुझे स्वीकार करना ही चाहिए कि मुझसे कुदरत ने बहुत चेता वनियाँ दी थीं। मैंने लापरवाही-सी की। भूल पर भूल करता चला गया। पहली भूल की सज़ा मिली दूसरी भूल की सज़ा बढ़ी। इस प्रकार उत्तरोत्तर न्यायपूर्ण सज़ाओं की वृद्धि होती रही। मैं बारीकी से देख सकता हूँ कि प्रकृति जैसा कोई दयालु नहीं है। प्रकृति ही ईश्वर है। ईश्वर

ही प्रेम है और भूल के लिए प्रेम के दरद हुआ ही करते हैं। मैं इस बीमारी में बहुत सीख रहा हूँ।

आपका
मोहनदास"

खेड़ा के सम्बन्ध में बहुत दिन पहले का यानी जून में लिखा हुआ गोकुलदास भाई का पत्र अगस्त में आया। उसमें से मुख्य वाक्य :

"मुझे स्वीकार करना चाहिए कि आपके जैसे ऊँचे पुरुष की शक्ति रखनेवाले नेता के नेतृत्व में पैदा हुई खेड़ा के किसानों की संगठन शक्ति का अन्दाज मैंने बहुत नीचा लगाया। रुपये की दृष्टि से देखें, तो परिणाम भले ही बड़ा न माना जाय। किन्तु जहाँ तक मैं जानता हूँ, खेड़ा जिले जितनी और किसी जिले में सत्ता की इज्जत और सत्ता की मूर्ति-पूजा नहीं होती थी। उस मूर्ति को उसके अपने ही मंदिर में आपने भंग कर दिया और उसमें समायी हुई कुरूपता को उघाड़ खोल दी है। ऐसा करके आपने देश की बड़ी भारी सेवा की है। लोगों को यह बता देने के समान बड़ा काम कोई नहीं है कि सत्ता की असली जड़ कहाँ है। मैं मानता हूँ कि आपने जो पाठ सिखाया है, उसे लोग और सरकार जल्दी नहीं भूल जायेंगे।

इन उद्‌गारों के साथ विलिंग्डन साहब के जाने के समय कौंसिल में गोकुलदास के दिये हुए भाषण की तुलना कीजिये। कितने बदल गये! खेड़ासम्बन्धी कितनी झूठी बातें प्रकट कीं!

उन्हें उत्तर :

'सुज्ञ भाईश्री,

"आपका जून मास का लिखा हुआ पत्र युद्ध-परिषद् का पता होने के कारण दो दिन पहले ही मिला। इसलिए आप समझ सकते हैं कि मेरी तरफ से आपको रसीद तक न मिली। यद्यपि आपका पत्र मेरे हाथों में तो इतनी देर से आया है, फिर भी मेरे लिए उसका मूल्य उतना ही

है। आपकी प्रसन्नता का भूखा मैं हमेशा रहूँगा ही। वह मुझे मिलती है, इसे मैं अपना सौभाग्य समझता हूँ। मैंने अनुभव किया है कि सेवा किसे की रैयत बहुत काम कर सकती है। इन स्त्री-पुरुषों के सार्वजनिक सम्पर्क में आकर मैंने बहुत सीखा है और सीख रहा हूँ। आप सकुशल होंगे।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

मनसुखलाल रावजीभाई का मौजूदा परिस्थिति पर एक पत्र। उन्हें जवाब :

"भाईश्री मनसुखलाल,

"तुम्हारा पत्र आज मिला। मैं तो आजकल सख्त बीमारी में घिरा हुआ हूँ। बिस्तर पर पड़ा हूँ। शायद उठ जाऊँगा। मेरे अपने उपचार जारी हैं। मन पूरी तरह शान्त है। इस ज्ञान के कारण कि बीमारी मेरी मूर्खता के कारण ही हुई है, होनेवाला दुःख कम महसूस होता है।

"मैं मानता हूँ कि इस समय शिक्षित युवकों की दशा दयनीय है। किसी भी उपाय से इस वर्ग को मैं सुमार्ग पर कर सकूँ, तो इसी समय कर सकता हूँ। किन्तु मुझे लगता है कि वह समय नहीं है। वह वर्ग खुद मोह-स्वयंभू में गोते खाता है। वह स्वयंभू (!) इन लोगों को तिलक नीति से और बेसेंट-नीति से कभी भी बचकर नहीं रख सकता, यह मेरी पक्की राय है। ये दोनों व्यक्ति राजनैतिक मामलों में नैतिकता का त्याग ही नहीं करते कभी-कभी उस त्याग को इष्ट भी मानते हैं। 'शठं प्रति शाठ्यम' यह उनका ज्ञानपूर्वक खुले तौर पर स्वीकार किया हुआ सूत्र है। मुझे ऐसा नहीं लगता कि उनकी नीति से मुग्ध हुए वर्ग को अभी मैं किसी भी तरह कुछ भी दे सकता हूँ। मेरे कार्य से, मेरे लेखों या मेरे भाषणों से अप्रत्यक्ष रूप में ये जो कुछ ले सकें, ले लें, लेंगे। अगर मैं यह देने लगूँ, तो वे इनकार ही करेंगे और यह ठीक होगा। श्रीमती बेसेंट और तिलक महाराज की नीति बड़ी दोषयुक्त है, किन्तु उनका किया हुआ कार्य तो महाभारत ही है। उनकी सेवाओं का माप नहीं हो सकता।

देश-प्रेम का मंत्र युवकों ने उनसे सिया है। इन गुरुओं का वे एकाएक त्याग कैसे करें ? त्याग करने को मैं कभी उनसे कहूँगा भी नहीं। इतने पर भी, उन्हें पूज्य मानते हुए भी, ऐसा एक समय जरूर आयेगा, जब यह वर्ग ऊपर वर्णन की हुई नीति का त्याग करेगा। मेरा हिन्दुस्थान के प्राचीन गौरव पर इतना विश्वास है। उसमें जीत कौरवों की नहीं, बल्कि पाण्डवों की हुई है। यह कल्पना की गयी है कि पाँच मनुष्य ऐसे थे जो लाखों के लिए काफी हो सकते थे। यह बात मेरी कल्पना के बाहर है कि इस देश का युवक-वर्ग शठं प्रति शाठ्यम् जैसा कुत्सित न्याय ग्रहण करे। मैं धीरज रखकर बैठा रहूँगा। मैं तो इन दोनों व्यक्तियों से भी प्रार्थना कर रहा हूँ, परन्तु इन सब कामों में मुझे अपनी ही शैली काम में लेनी पड़ती है। इसमें कभी-कभी तो बहुत दिक्कतें होती पायी जाती हैं; किन्तु यह अनिवार्य है। कुछ कार्य पर्दे के पीछे होता है, होना ही चाहिए। मैंने इस बार कांग्रेस में शरीक न होने का निश्चय किया है और वह ऊपर लिखे कारणों से ही। मैं नरम (मॉडरेट) दल के सम्मेलन में भी नहीं जाना चाहता। मेरे न जाने से ही जनता को चोट पहुँचेगी। जब प्रश्न करने लगेंगे तो जरूरत मालूम होने पर मैं अपना मत प्रकट करूँगा।

"आज तुम्हें बहुत लिख दिया। पत्र छापने को नहीं है, तुम्हारे ही विचार के लिए है।

मोहनदास के वन्दे मातरम्'

इस मास के प्रारंभ में सूरत में शिफ्टिंग पर एक भाषण दिया। उसका विवरण किसीने 'टाइम्स' में भेजा था। उससे यह लगता था कि उसमें तिलक महाराज की निन्दा करनेवाले कुछ वाक्य थे। विवरण बहुत दोषपूर्ण था। इस सम्बन्ध में खुद ने 'टाइम्स' को एक कड़ा पत्र लिखा। वह पत्र पढ़कर मि० हेयरस्टन नामक अंग्रेज सिविलियन ने सूरत से इस प्रकार पत्र लिखा :

"आपने सूरत में केवल सैनिक भरती के लिए जो भाषण दिया

उसका संक्षिप्त सार तैयार करने में मैंने गंभीर भूल की और उसके लिए मुझे अफसोस है। इस बारे में आपको सामगी तौर पर लिख रहा हूँ, क्योंकि खेड़ा जिले में (जहाँ मैंने बहुत वर्ष बिताये हैं) और अन्यत्र आप सैनिक भरती का जो सुन्दर काम कर रहे हैं, उसके लिए मेरे मन में बड़ा आदर है। इसलिए मुझे इतना अफसोस है कि बयान नहीं कर सकता। क्योंकि बलाई की जिस टिप्पणी पर से मैंने संक्षिप्त सार तैयार किया था, उस टिप्पणी में ही गंभीर भूल होने के कारण आपने जो शब्द कहे थे, उनसे उलटे ही शब्द मैंने आपके मुँह में रख दिये। वक्ता का जो कहने का आशय है उसका मुझे खयाल न रहा हो, तो अपने सार में उससे न कहलवाने की मैं हमेशा सावधानी रखता हूँ; और आम तौर पर तो जो भाषण मैंने खुद न सुना हो, उसका सार नहीं भेजता। मुझे पता नहीं था कि सूरत में आप बोलनेवाले हैं, क्योंकि मुझे मालूम होता, तो उसे सुनने के लिए मैं अवश्य मौजूद रहता। मैं आशा रखता हूँ कि दूसरी बार जब आप सूरत आयेंगे तब आपसे मिलने और परिचय करने का आनंद मुझे मिलेगा। अभी तो मैं इतना ही कहूँगा कि आपके भाषण का गलत विवरण देने के लिए मुझे हार्दिक दुःख है।

उन्हें उत्तर :

¶ भाईश्री देसाईजन

"इस समय मैं बिस्तर पर पड़ा हूँ। अपने जीवन में भोगी हुई सबसे बड़ी बीमारी से गुजर रहा हूँ। आपके पत्र का जवाब जल्दी देना मेरे लिए मुमकिन ही नहीं था। आपके सीधे-सादे और शुद्ध दिल से लिखे पत्र से मैं मुग्ध हो गया। इसके लिए आपका आभार मानता हूँ। अपने भाषणों के विवरणों में होनेवाली भूलों पर मैं शायद ही ध्यान देता हूँ। उन्हें पढ़ने का भी मुझे बहुत कम मौका मिलता है। किन्तु वह विवरण 'टाइम्स' में छपा था और उससे बहुत हानि होने की संभावना थी, इसलिए मुझे खयाल हुआ कि उसकी भूलें सुधार देनी चाहिए। मैंने उन्हें

सुधार दिया, तो अच्छा ही हुआ क्योंकि इससे कुछ लोगों की जबान बन्द हो गयी है। और इससे आपके साथ परिचय करने का भी अवसर मिल गया।

सेवक

मो० क० गांधी'

शंकरलाल बैंकर का जमनादास के बारे में पत्र। जमनादास से त्याग पत्र लिखवाया। पटेल ने समझाकर वापस लिवाया और जमनादास ने वापस ले लिया। इसके लिए अफसोस। उन्हें पत्र :

"भाईश्री शंकरलाल,

"तुम्हारा पत्र मिला। मेरी तबीयत अभी तक पूरी ठीक नहीं हुई। डर है कि समय लेगी। मैंने जितना समझा था, बीमारी उससे कुछ गहरी चली गयी है। तुम चिन्ता न करना।

"भाई जमनादास के बारे में मुझे विचार करने को कुछ नहीं रह जाता। भाई विट्ठलभाई ने अपने स्वभाव के अनुसार अच्छा समझकर त्याग पत्र वापस लेने की सलाह दी है। चाहे जो उलझनें बनें तो उसे सहन करके त्याग-पत्र पर कायम रहने की मेरी सलाह है। हमारी बात याद होगी कि मेरी यह सलाह नहीं है कि भाई जमनादास काम छोड़ दें। फिर भी भाई जमनादास को बड़ी जिम्मेदारी का ओहदा जरूर छोड़ देना चाहिए। इसमें स्वकल्याण है और लोक-कल्याण है। कांग्रेस को कोई हानि नहीं पहुँचेगी। आज तक हमारी ही गफलतों से कांग्रेस को एक के बाद एक यों हानियाँ पहुँचती रही हैं, उनका विचार हम क्यों न करें? अब एक सीधे कार्य से क्या विशेष हानि पहुँचेगी? भाई जमनादास अपने निश्चय पर कायम रहेंगे तो उनकी सेवा शक्ति खूब बढ़ जायगी। तुम दृढ़ रहो, जमनादास को दृढ़ बनाओ। माताजी को मेरा प्रणाम।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

उपाय सुबह शाम की प्रार्थना है बशर्ते अगर वह समझ में आ जाय, और समझ के साथ किया जाय।

बापू के आशीर्वाद"

२०-८ १८

समय का सुन्दर पत्र : नाम-स्मरण जैसा एक भी उपाय नहीं। एक संस्कृत श्लोक का उद्धरण। मांटफोर्ड-योजना स्वीकार करने के लिए अलग परिषद् की जरूरत है। आप विचार करने के लिए कब आइये या सम्मति दीजिये। उन्हें उत्तर :

"भाईश्री समर्थ,

'आपके पत्र के लिए बड़ा आभारी हूँ। धार्मिक उपचार में मेरा विश्वास है ही। ज्यादातर मैंने इसीका आश्रय लिया है। किन्तु उसीके साथ मेरा कुदरती इलाज और उपचार में भी विश्वास है। कुदरती इलाज में मैं पानी का उपचार कर रहा हूँ और एनिमा लेता हूँ। भोजन में केवल फलों का रस खास तौर पर सन्तरे का रस लेता हूँ। मुझे यह स्वीकार करने में संकोच नहीं होता कि जिस हद तक प्राकृतिक चिकित्सा करता हूँ, उस हद तक शुद्ध धार्मिक उपचार में मेरा विश्वास कम माना जायगा। जब मैं यह जानता हूँ कि प्रकृति का नियम भंग करने से मैं इस रोग में फँसा हूँ तब केवल धार्मिक उपचार से चिपटे रहने की मुझमें हिम्मत नहीं है।

'मुझे खेद है कि मैं अब आपसे न मिल सकूँगा। आपके आन्दोलन में भी मैं अपना नाम नहीं दे सकता। मैं दोनों आन्दोलनों से अलग रहना चाहता हूँ, क्योंकि मेरे विचार किसी भी दल को मंजूर नहीं हो सकते। मेरा ख्याल है कि इस अवसर पर सभी नेताओं को सारी प्रवृत्तियाँ लगभग अलग रखकर अपनी सारी कोशिश सैनिक भरती के काम पर केन्द्रित करनी चाहिए। मैं जानता हूँ कि गरम दलवाले मुझसे सहमत नहीं हैं।

और यह सोचना भी मेरे लिए कठिन है कि मैं जिस हद तक जाना चाहता हूँ उस हद तक जाने के लिए नरम दलवाले तैयार होंगे। मैं कुछ मिलाकर मांटफोर्ड-योजना को स्वीकार तो करता हूँ, किन्तु उसे स्वीकार्य बनाने के लिए उसमें कुछ हेर-फेर कराने का आग्रह रखूँगा। मेरा आग्रह यहाँ तक जा सकता है कि अगर वे परिवर्तन मंजूर न किये जायँ तो सभी संभव उपाय कर लेने के बाद मैं इस योजना को भंग करने के लिए भी तैयार हो सकता हूँ। अपने संशोधन मंजूर कराने के लिए, जिसे आमतौर पर 'पैसिव रेजिस्टेन्स' कहा जाता है, उसका आश्रय लेने में भी मुझे हिचकिचाहट नहीं होगी। नरम दलवाले यह शर्त स्वीकार नहीं करेंगे। इसलिए मुझे धीरज रखकर इन्तजार करना पड़ेगा और अपना रास्ता अकेले को ही तय करना पड़ेगा।

लेखक
मो० क० गांधी"

२५-८-'१८

श्री चक्रवर्ती का पत्र। सुरेन्द्रनाथ को लिखे गये पत्र का अनर्थ हो रहा है। यह प्रचारित कीजिये कि आप कांग्रेस के विरुद्ध नहीं हैं।

उन्हें उत्तर :

श्री 'भाईश्री चक्रवर्ती

"आपका पत्र मिला। उसके लिए धन्यवाद। मैं परिषद् से अलग रहता हूँ क्योंकि मैं जानता हूँ कि मैं जो विचार रखता हूँ, वे मुख्य-मुख्य नेताओं को मान्य नहीं हैं। मैंने अपनी स्थिति की चर्चा मिसेज बेसेंट के साथ कर ली है। वे मुझसे सहमत हो गयीं कि मुझे अलग रहना चाहिए। मैं नरम दलवालों की परिषद् में भी मौजूद नहीं रहूँगा। मैं मानता हूँ कि हम केवल सैनिक भरती का काम हाथ में ले लें तो देश की सबसे बड़ी सेवा कर सकते हैं। मैं जिस हद तक जाता हूँ वहाँ तक जाने के लिए कोई भी दल तैयार नहीं हो सकता। मांटफोर्ड-योजना के

सिद्धान्त तो मैं स्वीकार करता हूँ, परन्तु उसमें कम-से-कम कुछ सुधार साफ तौर पर सुझाऊँगा और उन सुधारों पर अमल कराने के लिए मरते दम तक लड़ूँगा। नरम दलवाले अवश्य ही इसके लिए तैयार नहीं हैं। गरम दलवाले एक हद तक तैयार हो सकते हैं, किन्तु मैं जिस अर्थ में चाहूँ, उस अर्थ में नहीं। इसलिए मेरा ख्याल है कि दोनों दलों को एकत्र करने के मामले में मुझे इस समय कुछ नहीं करना चाहिए। मैं हिंसा से कुछ नहीं करना चाहता और इसीलिए (सिद्धान्त के मामले में) समझौते की नीति पसन्द नहीं करता। देश में इस वक्त साफ तौर पर दो दल हैं। दोनों को अपने-अपने कार्यक्रम बहादुरी के साथ सरकार और जनता दोनों के सामने रखने चाहिए और उनकी स्वीकृति के लिए आन्दोलन करना चाहिए। मेरी राय में ऐसा करने से ही हम प्रगति कर सकेंगे। अभी तो हम कोल्हू के बैल की तरह चक्कर लगाते हुए वहीं के वहीं रह जाते हैं।

सेवक

मो॰ क॰ गांधी"

तिलक महाराज ने पत्र लिखा : आप न आयेंगे तो मुझे पीड़ा होगी। उन्हें (हिन्दी में) उत्तर :

'आपका पत्र मिला है। आपकी दिलसोजी से मैं अनुगृहीत हुआ हूँ। मेरे स्वास्थ्य के लिए आप क्यों चिंतित न होंगे? ईश्वर-कृपा से मेरी तबीयत अब ठीक है। बिछौना तो मैं थोड़े रोज तक नहीं छोड़ सकूँगा। बड़ा दर्द हो रहा था वह अभी शांत हुआ।

'कांग्रेस में आने का मेरा इरादा नहीं है। नरम दल के सम्मेलन में भी जाने का इरादा नहीं है। मैं देखता हूँ, मेरा अभिप्राय दोनों से विभिन्न है, वह आपको मैंने बतला दिया है। मेरा मन्तव्य है कि इस समय युद्ध की भरती में हम सबके लग जाने से और लाखों के ले जाने से हम हिंदुस्तान की बड़ी भारी सेवा कर सकते हैं। मेरी इस राय में आप और मि॰ बेसेंट सम्मिलित नहीं हैं। मैं जानता हूँ, गरम दलवाले भी इस कार्य

में तीसरा से शामिल नहीं होंगे। यह तो एक बात हुई। मेरी दूसरी राय यह है : मॉन्टेग्यू-चेम्सफोर्ड योजना का तत्त्व ग्रहण करें, उसमें जो कुछ सुधार हम चाहते हैं, वह सुधार साफ-साफ बता दें और जो सुधार हम बतायें, उसको स्वीकार कराने के लिए मरण-पर्यन्त लड़ें। इस तत्त्व को नरम दलवाले स्वीकार नहीं करेंगे, यह तो स्पष्ट है। यदि आप और मि. बेसेंट स्वीकार करेंगे, तो भी जिस तरह से मैं लड़ना चाहता हूँ वैसे तो आप नहीं लड़ेंगे। मि. बेसेंट ने कह दिया है कि वह सत्याग्रही नहीं हैं। आपने सत्याग्रह को दुर्बलों का एक हथियार मानकर स्वीकार किया है। इस झगड़ा में मैं पड़ना नहीं चाहता और आप दोनों से विमुख होकर कांग्रेस में आंदोलन करना नहीं चाहता। मेरा अपने तत्त्व पर अटल विश्वास है और मेरा यह भी मन्तव्य है कि यदि मेरी तपश्चर्या संपूर्ण होगी, तो आप और मिसिस बेसेंट मेरे तत्त्व को स्वीकार करेंगे। मैं धैर्य रख सकता हूँ।

'नरम और गरम दल अपनी थोड़ी-थोड़ी बातों को छोड़कर सम्मिलित हो जाने की चेष्टा करें, यह मुझे बिलकुल पसन्द नहीं। देश में दो दल हैं। दोनों दलों की राय साफ-साफ राजा-प्रजा दोनों को बताने में कुछ भी हानि होगी ऐसा मैं नहीं मानता। गरम और नरम दल को मिलाने की चेष्टा करना मुझे बिलकुल पसंद नहीं है। दोनों पक्ष दृढ़ता से अपनी-अपनी राय राजा-प्रजा के समक्ष रखेंगे, तो बड़ा फायदा पहुँचेगा। आपके कार्य में प्रभु आपको सहायक हो।

आपका
मोहनदास"

२७-८-१८

डॉ. राय को पत्र :

¶ 'भाईश्री डॉक्टर राय,

'आपने मेरी बीमारी का हाल सुना होगा। मुझे पेचिश की बहुत सख्त

बीमारी हो गयी थी। इस बीमारी से तो मैं अच्छा हो गया हूँ। परन्तु कमजोरी के कारण त्रस्त-ग्रस्त हो गया हूँ। मैं अपने बिस्तर से मुश्किल से उठ सकता हूँ और बिस्तर में भी बहुत देर तक नहीं बैठ सकता। मेरे सामने बड़ा सवाल यह है कि जर्जरित हुए शरीर को दुबारा कैसे बनाऊँ। दूध और उससे बननेवाले पदार्थ मैं कितने ही वर्षों से नहीं ले रहा हूँ। उन्हें जीवन पर्यन्त न लेने का मेरा व्रत है। इसलिए दूध और मक्खन का काम देनेवाली चीज की मुझे जरूरत है। जब तक मुझमें शक्ति थी, तब तक मूँगफली अखरोट और दूसरी तरह की गिरी से मेरा यह काम चल जाता था। किन्तु अब मेरा आमाशय बहुत नाजुक हो गया है और इस गिरी से निकली हुई चरबी बहुत भारी पड़ती है। दूध और घी का स्थान लेनेवाली चीज निश्चित रूप से मुझे वनस्पतिजन्य पदार्थों में से चाहिए। पहले मैंने खोपरे और बादाम का दूध इस्तेमाल किया है। इन दूधों का शरीर पर जो असर होता है, वह गाय के दूध से बिलकुल ही भिन्न है। क्या आपके ध्यान में घी या मक्खन और दूध का स्थान लेनेवाला कोई वनस्पतिजन्य पदार्थ है? हो तो कृपा करके बताइये। या अधिक अच्छा तो यह होगा कि मिल सके तो मुझे भेज दीजिये। मैंने सुना है कि उत्तर में महुए के कोमल बीजों से घी बनाया जाता है। वह साधारण घी जैसा नहीं होता परन्तु वैसलीन के जैसा ही होता है। इस मामले में हो सके, तो मुझे जानकारी दीजिये। मुझे दुःख हो रहा है कि अभी-अभी मुझे आपको एक ही पत्र लिखने का अवसर मिला है और वह भी केवल अपने स्वार्थ के लिए आपको तकलीफ देने के लिए है। पर उन्हें तो क्षमा कीजिये।

सेवक

मो० क० गांधी"

२१-८-१८

आज फिर सर विलियम विन्सेन्ट को अली-भाइयों के लिए सुझाव वाले दिनामे का पत्र लिखा।

आज तबीयत बहुत ही अच्छी मालूम होती है।

कामेल के बारे में मोहता को लिखा : "आपने मालवीयजी के एकता कराने के अंतिम प्रयत्न के बारे में समाचार लिखे हैं। यह खबर अखबारों में भी है। यह तो सोचा ही गया था कि पंडितजी ऐसी कोई कोशिश करेंगे। परन्तु मुझे भय है कि अब सारे प्रस्ताव कमजोर होंगे। जरा-सा विचार करने पर ही मालूम हो जाना चाहिए कि भले ही थोड़ा माँगा जाय परन्तु वह निश्चयपूर्वक माँगा जाना चाहिए। जनता को ज्यों-ज्यों और जिस हद तक यह भान होगा कि वह अपना माँगा हुआ लेने में समर्थ है, त्यों-त्यों और उस हद तक जनता ऊँची उठेगी। यह आकाश-पुष्प जैसी बात नहीं है, बल्कि अत्यन्त व्यावहारिक है।"

"चि. देवदास,

"बहुत प्रतीक्षा कराने के बाद तुम्हारे दो पत्रों के आज एक साथ दर्शन हुए। मेरा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा है। चिंता का कुछ भी कारण नहीं। आज बहुत अच्छा है। शुरू से आखिर तक मैंने स्वास्थ्य पर काबू नहीं खोया और परिणाम के बारे में चिंता नहीं रखी। बीमारी में पीड़ा का भय रहता था, परन्तु मौत का डर तो सपने में भी नहीं हुआ। जब अधिक पीड़ा होती थी, तो जी चाहता था कि 'अब छूट जाऊँ, तो कैसा अच्छा!' जीते-जी प्रायश्चित्तमय रहूँ, यह दूसरी बात है। परन्तु शान्ति के लिए जीने की आकांक्षा नहीं है। मोक्ष की हो सकती है, परन्तु मोक्ष माँगने से नहीं मिलता। उसके लिए योग्यता चाहिए।

तुम्हारा कार्य मैं इतने महत्व का मानता हूँ कि मेरी तन्दुरुस्ती देखने के लिए भी तुम उसे नहीं छोड़ सकते। यह तो मान ही लेना चाहिए कि मेरी देखभाल पूरी रखी जाती होगी। अब मुझे डर भी नहीं लगता कि मेरा प्राण जाना होगा। अब तो ऐसा महसूस होता है कि सहारे में बिलकुल जाना नहीं होगा। दिन-दिन फ्रांस के रणक्षेत्र में मित्र राष्ट्रों की जीत होती दिखाई दे रही है। ऐसी स्थिति में यह नहीं लगता कि हमें ले जायगे। महीने-बीस दिन में पता लग जायगा। शायद जाना हो जाए,

से भी मसंद की तो अब आशा छोड़ ही देनी चाहिए। संभव है, मैसो-पोटेमिया जाना पड़े।

"आनन्दशंकर भाई ने 'हिंदू धर्म की बाल-पोथी' लिखी है। परन्तु वह ऐसी है, जिसे वृद्ध पुरुष भी दिलचस्पी के साथ पढ़ सकते और ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। मुझे तो यह अलौकिक ग्रन्थ मालूम होता है। भाई महादेव मुझे रोज सुबह पढ़कर सुनाते हैं। मैं तो उसमें से रस की घूँट पी रहा हूँ। दूसरी भाषाओं में ऐसी छोटी पुस्तकें कम होंगी। यह पुस्तक आनन्दशंकर भाई के व्यापक वाचन और मनन का सार है। तुम इसे बार-बार पढ़ना। उसके संबंध के प्रसंग समझ में न आयें तो उनके बारे में पूछकर जान लेना। तुम्हें यह पुस्तक भिजवाने का प्रबंध कर रहा हूं। तुम्हारे अक्षर सुधर नहीं रहे हैं।

बापू के आशीर्वाद"

"चि. हरिलाल,

"तुम्हारा पत्र मिला। मेरा स्वास्थ्य अच्छा होता जा रहा है। चिन्ता रखने का कोई कारण नहीं है। अभी थोड़े दिन बिछौने पर पड़े रहना होगा। मेरी सेवा में कसर नहीं है। मैं कल्पना नहीं कर सकता कि इससे अधिक सेवा किसी चक्रवर्ती की भी होती होगी। तुम शुद्ध जीवन बनाते हो और यह तुम्हें पसन्द आ गया है, यह मुझे बहुत प्रिय लगता है। शायद इससे तुम बन जाओ शायद जीवन का रहस्य तुम्हारी समझ में आ जाय और की हुई भूलें सुधारकर अपना जीवन उज्ज्वल बना लो। मैं चाहता हूँ कि उसे उज्ज्वल बनाओ। पत्र नियमपूर्वक लिखते रहो, तो अच्छा है।

बापू के आशीर्वाद

चि. "प्रिय चार्ली,

"मैं परेशान तो बहुत हुआ परन्तु मैं चाहूँ, उससे ज्यादा नहीं। मुझे अपनी बीमारी के कारण शांत और सीधे दिखाई देते हैं। वे मुझ पर

दिखानेवाले नहीं हैं। बल्कि वे बता देते हैं कि अपनी कमजोरियाँ दूर करने के अपने इतने प्रयत्नों के बावजूद अभी तक मैं कितना दुर्बल हूँ। इस बीमारी से मुझे यह भी अधिक साफ भान हुआ कि हम कुदरत के जाने हुए नियम सतत तोड़ते रहते हैं। किसी साम्राज्य को जीतना इतना मुश्किल नहीं है, जितना जीभ के साम्राज्य को। यह इतना कठिन है, इसी-लिए हम उसका बहुत कम विचार करते हैं। मेरी राय में जीभ को जीत लेना सब वस्तुओं को जीत लेने के बराबर है। परन्तु इस बारे में फिर कभी लिखूँगा।

"मेरी तबीयत धीरे-धीरे सुधरती जा रही है। इस बीमारी में मैंने शान्ति कभी नहीं खोयी। मेरी कोई चिन्ता न करना। मैं नहीं चाहता कि तुम किसी भी कारण से शान्ति-निकेतन छोड़ो। मेरा तो खयाल है कि तुम और गुरुदेव जीवन का सर्वोत्तम कार्य कर रहे हैं। असली काव्य तुम इसी समय लिख रहे हो। ये काव्य सजीव हैं। काश ! गुरुदेव के और तुम्हारे भी प्रवचन सुनने का जो लाभ वहाँ के सौभाग्यशाली विद्यार्थियों को मिल रहा है वह लाभ लेने को मैं शान्ति-निकेतन में आ सकता और उन विद्यार्थियों की पंक्ति में बैठ सकता !

तुम्हारा
मोहन"

१-८-१८

चार्ली का दूसरा पत्र आया। उसका उत्तर :

प्रि॰ "तुम्हारे सारे प्रेम-सन्देश मेरे सामने रखे हैं। वे सब शान्ति देने वाले मरहम हैं। इस बीमारी का ज्यों-ज्यों अधिक विचार करता हूँ त्यों त्यों इस बात का साक्षात्कार अधिक गहरा होता जा रहा है कि मनुष्य का मनुष्य के प्रति प्रेम और इसलिए ईश्वर का मनुष्य के प्रति प्रेम और उसका मूल्य क्या हो सकता है। इसमें कुदरत के कल्याणकारी हाथ के सिवा मुझे और कुछ दिखाई नहीं देता। मेरा खयाल है कि ऊपर-ऊपर

से हमें कुदरत का जो भयंकर कोप दिखाई देता है, यह दरअसल प्रेम के आविर्भाव के सिवा और कुछ नहीं है।

"मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी चिन्ता न करो। शान्ति-निकेतन के तुम्हारे उत्तम काम में किसी भी तरह बाधा पड़ेगी, तो वह आपत्ति ही होगी। शान्ति-निकेतन में तुम्हारे और गुरुदेव के काम का हाल सुनकर मुझे कितना आनन्द हुआ है, यह मैं वर्णन नहीं कर सकता। मुझे तुम्हें कहना चाहिए कि जब तुम्हारा हरएक पत्र आता है, तब मैं उसे भय से काँपते हुए हाथ में लेता हूँ। कहीं ऐसा तो कुछ नहीं हुआ, जिससे गुरुदेव के उम्दा काम में खलल पड़ी हो। यह जानकर बड़ी राहत मिलेगी कि तुम दोनों ने बच्चों को पढ़ाने में किसी भी बाधा के बिना सारा काम पूरा किया है और तुम दोनों का स्वास्थ्य बढ़िया रहा है। बड़े दादा के आशीर्वाद के लिए मैं आभारी हूँ। उनके आशीर्वाद को मैं बहुत ही मूल्यवान् समझता हूँ। गुरुदेव की शुभेच्छाओं के लिए उनका भी कृतज्ञ हूँ। पत्र को मेरी याद कहना। सब लड़कों तरफ से तुम सबको प्यार।

तुम्हारा
मोहन"

११-८-१८

ज्ञानेन्द्रशंकर भाई की 'प्रेम-मैत्री' का वाचन ठीक होता है। '[illegible] कर दी है, अद्भुत भंडार भर लिया है' ऐसे उद्गार पढ़ते समय निकल जाते हैं।

आज मिसेज पैटिट का एक सुन्दर पत्र आया। पैटिट [illegible] कहते थे कि मिलों के [illegible] उनके भी [illegible] हैं। उनमें से कुछ [illegible] कहा था कि आप [illegible] हैं। यह सुनकर बड़ी [illegible] मालूम हुई कि हम [illegible] हो गये हैं। मैं जानती हूँ कि जब [illegible] न रहकर [illegible] है तब आपको कितना [illegible] होता होगा। मैं आशा करती हूँ कि आपकी [illegible] अपनी [illegible]

हुई होगी। जो संभव है, वह सब किया गया होगा जिससे आपको कोई अनावश्यक कष्ट न भोगना पड़ा होगा। यह जानकर कि आप अच्छे होते जा रहे हैं, मैं बहुत प्रसन्न हुई। ऐसी कोई बात हो जिसके कारण आपमें से अपना कल या अपनी श्रद्धा चली जाय तो मुझे अपार दुःख होगा। मैं जानती हूं कि मौत हम सबको आयेगी और जो आता है, उसके लिए वह एक भूमि से दूसरी भूमि में जाने के ही बराबर है। फिर भी पीछे रहने वाले मनुष्यों के हृदयों में वह शून्यता छोड़ जाती है। कुछ भी हो आपको अभी यहाँ बहुत वर्ष रहना है। इसलिए कृपा करके अपने शरीर की रक्षा करना। उसे अभी यहाँ बहुत काम करने हैं।

प्यार के साथ
आपकी बहन मिली"

उसे सुन्दर जवाब :

¶ "यह लिखते समय मैं अपने सामने मूसलाधार बरसती हुई वर्षा देख रहा हूँ। वह करोड़ों स्त्री-पुरुषों के हृदय आनंद से भरेगी। पश्चिमी हिन्दुस्तान पर भारी अकाल का खतरा उमड़ रहा था। एक क्षण में वह मग चला गया। उसके बजाय केवल आनंद छा गया है। यह बारिश करोड़ों मवेशियों के लिए शान्तिदायक मुक्ति के समान है। हिन्दुस्तान के सिवा शायद ही दूसरा कोई देश पृथ्वी पर होगा जो केवल बरसात पर ही आधार रखता हो। तुम अब समझ सकोगी कि मुझे आरोग्य प्रदान करने में इस बरसात का कितना हाथ रहा है। मैंने वेदना तो खूब सहन की। पर वह मेरी मूर्खताओं के कारण थी। मैंने शरीर के प्रति जो अप-राध किया था यह सजा उसके योग्य ही थी। मैंने एक दोषपूर्ण प्रयोग किया। पेचिश की बीमारी तो मुझे थी ही। उससे मैं अच्छा होने आया था। मुझे मामूली खुराक लेना जल्दी शुरू न करना चाहिए था। उसके बजाय मैंने तो ली और अनिवार्य आपत्तियों से घिर गया। मेरा शरीर इतना जर्जर हो गया है कि मुझे उसे फिर से बनाना पड़ेगा। परन्तु कोई चिन्ता की बात नहीं है। आजकल मैं बीमारी के बाद का आराम ले रहा

हूं। पेपरश नियमित रूप से लेता हूं। उसमें हर रोज थोड़ी-थोड़ी वृद्धि कर रहा हूं और आशा रखता हूं कि दसेक दिन में मुझमें चलने फिरने लायक शक्ति आ जायगी। तुम मुझसे अपनी देखभाल की बात पूछती हो। मानव-प्रेम जो कुछ कर सकता है, वह सब मेरे लिए किया गया था। बीमारी का बिस्तर मेरे लिए आनन्द और दुःख दोनों था। इतने अधिक लोग मेरी सेवा करते थे, यह देखने का आनन्द और अपनी कमजोरी तथा मूर्खता के कारण मुझे उसकी जरूरत पड़ी, इसका दुःख था। प्रेम के इस कीमती अनुभव के कारण जो कुछ सेवा करने की मुझमें शक्ति हो, वह सेवा करने का मुझे एक और आदेश मिलता है। मानव जाति की सेवा भी अन्त में तो अपनी ही सेवा है और अपनी सेवा का अर्थ है आत्मशुद्धि। मैं किस तरह से अधिक शुद्ध हो सकता हूं, यह सवाल मेरी इस बीमारी के दिनों में मेरे मन में घूमता रहता था। मेरे लिए प्रार्थना करना।

—भाई"

एण्ड्रूज का पत्र : शान्ति-निकेतन में सत्तर तक गुजराती और मारवाड़ी विद्यार्थी हो गये, यह कुशलपत्री। सबको टैगोर बड़े प्रेम से रखते हैं और उनके माता-पिता का सत्कार करते हैं कौतुक। उन्हें उत्तर :

¶ "तुमने मुझे बहुत पसन्द आनेवाली आश्चर्य की बात कही। मुझे तो पता ही नहीं था कि शान्ति निकेतन में गुजराती-मारवाड़ियों की इतनी इतनी बड़ी होगी। ये सब विद्यार्थी वहाँ पूरे समय रहें, तो गुजरात और बंगाल के बीच वे कैसी कड़ी जोड़ देंगे! मुझे शक नहीं कि कवि आज कल की तरह अपना काम जारी रखेंगे, तो सभी गुजरातियों को वहाँ पूरे समय रख सकेंगे। इतना ही नहीं, और बहुत-से लोग उनके पीछे आयेंगे। मुझे इतना पूछने का लालच हो रहा है कि वहाँ की सफाई के लिए कोई खास आदमी ध्यान देता है। पानी की व्यवस्था भी ठीक हो गयी है?

'मेरी तबीयत सुधरती चली जा रही है। प्रगति इतनी धीमी है कि आदमी तंग आ जाय। शरीर लगभग नये सिरे से बनाना है, इसलिए स्वाभाविक तौर पर ही समय लगेगा। खास तौर पर जब मुझे सारा पथ्य हर रोज पाँच ही चीजों में से लेना होता है और उसमें भी दूध और उससे बननेवाले पदार्थ नहीं लेता। परन्तु मेरा खयाल है कि मैं शरीर को बना सकूँगा। तुम विश्वास रखो कि फौजी भरती के काम की या कांग्रेस के काम-काज की मुझे जरा भी चिन्ता नहीं होती। तुम्हारी तरह मैं यह तो नहीं कह सकता कि इस बारे में अखबारों में मैं कुछ देखता ही नहीं। उलटे कांग्रेस के काम-काज के बारे में उत्कंठा से समाचार-पत्र देखता हूँ। परन्तु इसकी अपने मन में चिन्ता नहीं होने देता।

"मैं जानता हूँ कि बा मेरी बहुत चिन्ता करते हैं। मेरी तबीयत के सारे समाचार उन्हें देना और उन्हें यकीन दिलाना कि आप सबकी प्रार्थना मुझे आरोग्य और सुख प्रदान किये बिना नहीं रहेगी। प्यार।

तुम्हारा
मोहन'

देवदास को :

कांग्रेस में मैं इसलिए नहीं गया कि मिसेज बेसेंट और तिलक महाराज के साथ बात करने के बाद मुझे बहुत कृत्रिमता का आभास हुआ। ऐसे महान् अवसर पर योजना पर मिथ्या वाद-विवाद करने के बजाय हमारी माँगों को स्वीकार कराने के उपाय ढूँढ़ना और अमल में लाना मुझे अधिक आवश्यक प्रतीत हुआ। मैंने इस विषय के अपने विचार उनके सामने रखे और सुझाया कि हमारे पास दो बड़े हथियार हैं। एक तो लड़ाई में संपूर्ण आहुति देकर अपनी योग्यता के बारे में अपनी आत्मा की साक्षी प्राप्त करना। और जब आत्मा साक्षी देती है, तब वह ऐसा अस्त्ररत्न देती है, जिसके सामने कोई नहीं टिक सकता। दूसरा उपाय यह है कि अपनी माँग के बारे में दृढ़ निश्चय करके उससे

७-९ '१८

कल आश्रम जाने का निश्चय प्रकट करने पर मगनलालभाई ने चारेक दिन ठहरकर जाने का सुझाव दिया। तुरन्त कहा: अब मैं यहाँ नहीं रह सकता। मुझे यहाँ का वातावरण बहुत शुष्क लगता है। सवेरे उठकर ईश्वर का नाम तो कभी सुनायी ही नहीं देता। आश्रम में मुझे यह मिलता है। मुझे बहुत खयाल आया करता था कि प्रातःकाल ईश्वर का नाम, कोई मधुर संगीत तो यहाँ सुननेवाला है ही नहीं। आखिर आज सवेरे तो चारेक बजे से मैं उठ गया। तब से यह भावना मेरे मन में बहुत ही उठती रही और मुझे रोना आ गया। शाम को कुछ शान्ति चाहिए, लेकिन सामने यह कोई पारसिन वायलिन का अनाड़ीपन से बजा-बजाकर कानों को चीरे डालती है।

आज भी मुझे शाम को पूछा, उस वायलिन में से कौन-सा सुर निकलता है? मुझे तो कोई साधारण आदमी गाता-गाता जा रहा हो तो उसे सुनकर भी आनन्द होता है। मैं तुमसे कहूँ और तुम गाओ, इसमें कुछ नहीं। मैं यह जरूर चाहता हूँ कि तुम गाने की आदत डालो।

चार्ली को पत्र लिखा:

"प्रिय चार्ली

"ठीक मेरी तबीयत सुधरती जा रही है। मेरी जरा भी चिन्ता न करना। यद्यपि हम शरीर से नहीं मिलते, फिर भी आत्मा का मिलन तो होता ही है। अब मैं थोड़ा-थोड़ा पढ़ने लगा हूँ। आजकल गुजरात कॉलेज के प्रोफेसर आनन्दशंकर ध्रुव के धर्म पर सुन्दर निबन्धों का संग्रह पढ़ रहा हूँ। तुम इनसे मिले तो जरूर हो। ये निबन्ध शुद्ध कांचन हैं। ये इस प्रान्त के संस्कृत के बड़े-से-बड़े विद्वानों में से हैं। इन निबन्धों से मुझे बहुत बड़ा सुख मिला है। आत्मा के मिलन का अर्थ अधिक अच्छी तरह समझ लेने में उन्होंने मुझे मदद दी है। यह वचन मैं अपने लिए अधिक गहरे और अधिक पूर्ण अर्थ में कह रहा हूँ।

"मैं तुमसे कह चुका हूँ कि किसी भी कारण मैं तुमसे बोलपुर छुड़वाना नहीं चाहता। इस समय तुम्हारा काम वहीं है, और कहीं नहीं।

"औपनिवेशिक प्रश्न पर लिखी उस रद्दी हिन्दी पुस्तक के लिए तुमने प्रस्तावना क्यों लिख दी? मैं अभी-अभी उस पुस्तक पर नजर डाल गया। मेरा खयाल है कि तुमने उसे वह प्रमाण-पत्र दे दिया, जिसकी वह पात्र नहीं। बेशुमार भूलें, बेहद खुशामद और विज्ञापन इन सब बातों का तो तुम प्रचार नहीं करना चाहते न? मैं इस पुस्तक को ध्यानपूर्वक पढ़ लेने का इरादा रखता हूँ। उसमें से बड़ी-बड़ी भूलें तुम्हारे लिए नोट करके रखूँगा। लेखक ने अपना नाम नहीं दिया, इसमें मुझे उसका कोई गुण दिखाई नहीं देता। जिनके लिए वह चाहता है कि वे उसे जानें, उनसे तो वह अज्ञात रहता ही नहीं। यह प्रस्तावना तुम्हारी मलमनसाहत जाहिर करती है। तुम हिन्दुस्तानी बन गये हो और वैसा लार्ड विलिंग्डन ने हाल ही में कहा है, उस तरह इनकार करने की तुममें हिम्मत नहीं है। मैं तो खूब चाहता हूँ कि इस मामले में तुम अपना अंग्रेजी स्वभाव ही रहने दो और जहाँ इनकार करने जैसी बात हो, वहाँ इनकार ही करो। मैं तो मानता हूँ कि कभी-कभी प्रेम का यह अधिकार होता है कि कड़े ढंग से इनकार किया जाय। परन्तु मैं उपदेश देना नहीं चाहता। ऐसे मामलों में तुम्हें सुधरना चाहिए। नहीं तो जितने बदमाश मुझे मिल जायँगे, उन सबको मैं तुम्हारे पास भेज दूँगा। फिर उनके और गुरुदेव के साथ तुम अपना हिसाब निपट लेना। तुम सबको प्यार।

मोहन"

शंकरलाल बैंकर को :

"वनसुखावहन के पत्र से मैं देखता हूँ कि मुझे लिखते समय तुमने अपनी तबीयत के बारे में बहुत छिपाया है। ऐसा करने की जरूरत नहीं थी। मैं चाहता हूँ कि डॉक्टरों की दवाओं पर आधार रखकर शरीर के साथ अनुचित छूट न लो। मेरे जीवन में मेरे मन में इस चीज को

अधिकाधिक जमा दिया है। मैंने बीच के लिए शरीर के साथ अशोभनीय छूट ली और उसकी उचित सजा भुगत रहा हूँ। मेरा विश्वास है कि ६६ फीसदी बीमारियों का यही इतिहास है। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह शारीरिक संयम बड़ा कठिन है, फिर भी पुरुषार्थ इसीमें है। सारी दुनिया को हरा देना हमारे शरीर में रहनेवाले शत्रुओं को हराने से आसान है। इसलिए जो मनुष्य इन्हें हरा देगा, उसके लिए पहला काम तो बहुत सरल है। जो स्वराज्य मुझे, तुम्हें और सबको लेना है, वह सच पूछा जाय, तो यही है। अधिक क्या लिखूँ? सब कुछ लिखने का तात्पर्य इतना ही है कि तुम्हें देश की जो सेवा करनी है, वह इसी शरीर से करनी है। तुम्हारी भावनाएँ ऊँची हैं। उचित आत्मिक बल के बिना ऊँची-से ऊँची भावना भी व्यर्थ है।

मोहनदास के वन्दे मातरम्'

१९१८

रणछोड़लाल पटवारी को स्वास्थ्यसंबंधी पत्र में :

"× × × अछूतों संबंधी लेख 'पताका' में देखकर पढ़ लूँगा। मैं विरुद्ध पक्ष को पूरी तरह समझना चाहता हूँ, और अगर उसमें मुझे धर्म दिखाई दे, तो अपनी राय छोड़ने में एक क्षण भी देर न करूँगा। आज तक मैंने जितनी दलीलें देखी हैं, उन सबका आधार रूढ़ि धर्म है। शुद्ध धर्म के आधार पर होनेवाली एक भी दलील मैंने अभी तक नहीं सुनी। अछूतों का सवाल मैंने तो केवल धार्मिक दृष्टि से उठाया है। राजनैतिक विषय के साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। उसके राजनैतिक परिणाम जरूर आते हैं, परन्तु उन पर मैंने दृष्टि रखी ही नहीं। मैं इतना और कह देना चाहता हूँ कि मेरे कहने का यह आशय नहीं है कि रूढ़ि धर्म का जरा भी आदर नहीं होना चाहिए। शुद्ध धर्म अचल है, रूढ़ि-धर्म समयानुसार बदला जा सकता है। मनुस्मृति में कहे हुए कुछ वचनों के अनुसार

साथ हम चलें, तो केवल अनीति हो सकती है। ऐसे भजनों का हमने मूलसे ही त्याग ही कर दिया है। × × ×"

देवदास को (भोजन से होनेवाली गड़बड़ और डॉ॰ रॉय को मिल गये पत्र का उद्धरण देकर):

"तुम तो जानते हो कि मैं कमज़ोर मनुष्यों के लिए दाल के विरुद्ध हूँ। मेरा अपना तेल का डर भी तुम जानते हो। सभी डॉक्टरों ने मूँग और मूँग का पानी लेने को कहा, तेल के लिए भी कहा। दूध के सत्व के कारण, कमज़ोर बने शरीर को किसी भी चरबी के बिना और जिसे 'प्रोटीन' कहते हैं, उसके बिना चलाना कठिन है। दूध का प्रोटीन और उसमें रहने वाली चरबी खून में तुरत मिल जाती है। तेलों की चरबी की यह बात नहीं है। हर दाल में प्रोटीन रहता है। परन्तु दालों का प्रोटीन तो पचता ही नहीं। फिर भी ऊपर लिखे अनुसार दोनों चीज़ें ली गयीं। मेरे उपवास में यह भूल हुई। दूध की जगह लेनेवाली चीज़ ढूँढ़ने में ऐसी भूलें होती ही रहेंगी। कोई भी जोखम लिये बिना हरगिज़ काम नहीं चलेगा। इसका प्रमाण अनुभव से प्राप्त करना होगा। उसे ढूँढ़ने में भूलें अवश्य होंगी और कभी कभी पीड़ा भी सहना ही पड़ेगा।"

हरिभाऊ का पत्र: हाथ से भोजन बनाने में उन्नति का साधन देखता हूँ परन्तु समय बहुत बरबाद जाता है।

उत्तर:

भोजन बनाने में समय तो लगता ही है। परन्तु मैं मानता हूँ कि यह समय व्यर्थ नहीं जाता। और आम तौर पर यह बात भी सही नहीं है कि इस समय में कोई बड़ा काम हो सकता है। भोजन बनाने में जितना समय लगता है उससे अधिक समय तो मैं पंचानवे मनुष्य रोज व्यर्थ गँवाते हैं। पचास वर्षों तो मैं इसीलिए कहता हूँ कि मैं उसको गिन रहा हूँ। फिर, हाथ से भोजन बनानेवाले मनुष्य को यह बहुत काम देता है तो वह इतनी बातें सीख लेता है कि दूसरे को फायदे

।

होगा। मैं अपनी ही मिसाल दूं। विलायत में जब मेरे बहुत पढ़ाई के दिन थे, तब भोजन बनाने में मैं मुश्किल-शाम आध घंटे से ज्यादा समय नहीं लगाता था। सवेरे दलिया पकाता, उसमें ठीक बीस मिनट लगते और शाम को पकाता, तो रसा बनाता। उसे तो हिलाना भी नहीं पड़ता था। इसलिए जो वक्त रसे का सामान तैयार करने में लगता, वही लगता था। रसा चूल्हे पर रख देने के बाद मैं उसके पास बैठ जाता और पढ़ता रहता। कभी से कोई-कोई विद्यार्थी मेरे पास आते हैं। उन सबसे मैं पूछता हूं कि वे क्या करते हैं। ज्यादातर स्वयंपाक ही करते हैं। एक आदमी ने यह कहा कि वह खिचड़ी पकाता और उसके साथ दूध और अचार खाता है। जब वह खाता उस समय रोटी पकती रहती। शाम को वही रोटी और दूध खा लेता। इसमें वह कुल मिलाकर पौन घंटा लगाता। यह तो मैंने आखिरी छोर का उदाहरण दिया है। मैं यह नहीं चाहता कि तुम इतना संकोच भुगतो, परन्तु दृष्टान्त देता हूं कि स्वयंपाक में बहुत थोड़ा समय लगाकर भी काम चलाया जा सकता है। उस विद्यार्थी का शरीर नीरोग और हृष्ट-पुष्ट था क्योंकि खिचड़ी, घी दूध, दही और अचार में शरीर को जितना चाहिए, उतना सारा पोषण आ जाता है। जिसे बढ़िया दूध या दही मिल जाय, उसे दूसरे पदार्थों की बहुत कम जरूरत रहती है। यह न समझ लेना कि मेरा लिखना यह है कि तुम सदा ही हाथ से भोजन बनाओ। परन्तु उपर्युक्त बातें इसीलिए लिखी हैं कि मौका पड़ने पर भोजन बना लेने में जरा भी न हिचकिचाओ और यह मानकर दुःखी न बनो कि इतना समय बेकार गया। वैसे तुम्हारी स्थिति सुधरे और बच्चों को बुला लो और मर्यादा में रहकर स्वाद लो और भोग भोगो, तो उसमें मेरे करने की कोई बात नहीं हो सकती। सिर्फ इतना ध्यान रखना कि जो भूख हो चुकी है, वह अब कभी न हो। मैं चाहता हूं कि तुम एकाएक मालदार बनने का लोभ न करो।

"गोरावजी की मृत्यु का ध्यान करो, इस बात का स्मरण करो कि डॉक्टर जीवराज मृत्युशय्या पर पड़े हैं और चार रतन यहां गुजर गये,

इसका विचार करो। जहाँ शरीर की इतनी अधिक क्षणिकता है, वहाँ उत्पात क्या किया जाय? पैसे के पीछे क्या भाग-दौड़ मचायी जाय? साधारण, परन्तु हद प्रयत्न से जितना द्रव्य इकट्ठा किया जा सके, उतना करो। परन्तु अपने मन में इतना निश्चय कर लो कि धन कमाने में सत्य का मार्ग कभी नहीं छोड़ोगे। तुमसे जो निश्चय हो सके, वह करके द्रव्य उपार्जन खुशी से करो।

बापू के आशीर्वाद"

डॉ० राय का पत्र आया। दूध के कुछ तत्त्व, केसीन, चरबी, मिल्क-शुगर अमुक-अमुक दालों में हैं। अधिक-से-अधिक मटर और मसूर की दाल में है। महुए की मींगी के तेल में भी है। फिर भी दूध का स्थान अच्छी तरह लेनेवाला पदार्थ मिलना तो कठिन ही है। यह लिखने के बाद यह लिखा कि धार्मिक कारणों से दूध न लेते हों, तो बहुत-सी गायें बछड़ों के लिए जितना दूध चाहिए, उससे ज्यादा देती हैं। और यह सूत्र उद्धृत करते हैं कि 'औषधार्थे सुरापानम्' और एक पुराने मित्र की हैसियत से आग्रह करते हैं कि दूध लीजिये।

उन्हें उत्तर :

"प्रिय डॉक्टर, "दूध का प्रश्न मेरे लिए इतना आसान नहीं है, जितना आप बताते हैं। यह बात नहीं है कि बछड़ों के प्रति रहा समभाव मुझे अपनी बीमारी में दूध लेने से रोकता है। परन्तु मैंने बीमारी में भी दूध और उसकी बनी हुई चीजें नहीं लेने का व्रत लिया है। फिर, मेरे खयाल से जान-बूझकर और निश्चयपूर्वक लिया हुआ व्रत तोड़ने से तो मर जाना अधिक अच्छा है। इस समय जो परिणाम मैं भुगत रहा हूँ, वे व्रत लेते समय मेरे सामने थे। उस समय मैं जानता था कि दूध का स्थान लेनेवाला कोई और पदार्थ ढूँढ़ना अत्यन्त कठिन है। क्या आप अपने बताये हुए तेलों में से किसीको इतना विशुद्ध बना सकते हैं कि वह अधिक सुपाच्य बन जाय? आप जानते हैं कि अमेरिका के रसायन शास्त्रियों ने बिनौले के तेल को इस तरह साफ किया है। बिनौले का तेल विशुद्ध बनाये बिना

खाया नहीं जा सकता। परन्तु अब लोग उसे बेधड़क होकर खाते हैं। मैं यह नहीं कहना चाहता कि जितना मैं चाहता हूँ, उस हद तक वे उसे विशुद्ध कर सके हैं। परन्तु यह तो अनुपात का सवाल है।

सेवक

मो क गांधी"

२ १ १८

स्वास्थ्य अब काफी सन्तोषजनक हो गया है। प्रार्थना में आने लगे हैं। दुर्गा की खबर लेने गये। छोटे-छोटे भाषण भी दिये। पत्र तो चलते ही रहते हैं। राष्ट्रीय पाठशाला में परिवर्तन। सरोजिनी नायडू बिहार छात्र सम्मेलन की अध्यक्षा बननेवाली हैं। उन्हें पत्र :

प्रिय "आपने मुझे जो सवाल पूछे हैं, उनसे ध्यान पड़ता है कि मेरी शरम यानी मेरी बीमारी की बात आपको मालूम है। मेरी तबीयत सुधरती जा रही है। परन्तु बरामदे में कुछ मिनट टहल सकने के सिवा ज्यादा चलने की शक्ति मुझमें नहीं आयी है। आपके साथ पूर्णिया आने की मुझे बहुत ही इच्छा होती है, क्योंकि वहाँ के लोग मेरी उपस्थिति चाहते हैं। परन्तु ऐसा करना मेरे लिए असंभव है। फिर भी मैं आशा रखता हूँ कि आप सीधी चलेंगी और अपना भाषण हिन्दी या उर्दू—राष्ट्रभाषा को आपको जो नाम देना हो दीजिये—में देंगी। आपके उदाहरण से वहाँ के युवक लोग मातृभाषा का विकास करना सीखेंगे क्योंकि उनके लिए हिन्दी या उर्दू केवल राष्ट्रभाषा ही नहीं है, वह तो उनकी मातृभाषा भी है। एक पंक्ति जरूर लिखिये।

आपका

मो क गांधी'

बिहार में पुण्डरीक की बात। उनकी हड़ता पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट को सच्चे और निडर जवाब। भविष्य में कैसा बर्ताव रखा जाय इस संबंध में पत्र :

"भाईश्री पुण्डरीक

"आपके सब खत मैं बड़े ध्यान से पढ़ता हूँ। आपके सब बयान बड़े अच्छे हैं। आपका प्रभाव ही ऐसा है। सुपरिंटेण्डेण्ट के अपमान को बर दाश्त करने में जो शौर्य रहता है, वह अपमान के सामने अपमान करने में नहीं है। आपकी तितिक्षा से सुपरिंटेण्डेण्ट को जितना सहन करना पड़ेगा उसका शतांश भी आपके अपमान से उसको नहीं सहना पड़ता। वह तो चाहता है कि आप आवेश में आकर कुछ भी अनुचित बात बोल दें।

"अब आपके प्रश्नों का उत्तर देता हूँ। यदि पाठशाला या तो भीति हरना छोड़ देने की सरकारी लिखित नोटिस मिले, तो पाठशाला या भीतिहरना छोड़कर मुझे तार दिया जाय। सुपरिंटेण्डेण्ट जो कुछ प्रश्न पूछे, उसके उत्तर जैसे देते हो वैसे ही देते रहना। पूरा सत्य कहना। मैं जो कुछ लिखता हूँ, वह सब उसको कहने में हर्ज नहीं है।

"आपकी सभ्यता के ऊपर मेरा पूर्ण विश्वास है।

मो० क० गांधी

२१ ९ १८

डॉ प्राणजीवन महेता का एक बड़ा लेख। मद्रिम्यू के एक भाष्य पर से गुजरात को स्वराज्य दिलाने का संक्षेप लिखा और एक लेख लिख डाला। लम्बा-चौड़ा तैंतीस पन्नों का। वह गुजरात के कला-कौशल, धर्म बदला और राजनैतिक बुद्धि वगैरह कारणों से स्वराज्य मिलने की योग्यता के बारे में था। इस बारे में बापू बोले : डॉक्टर थोड़े में लिखना सीखे ही नहीं। यह सुझाव कौन मंजूर करेगा?

इसके उत्तर में तार

बापू 'मेरा खयाल है कि लेख प्रकाशित नहीं करना चाहिए। फिर भी प्रकाशित करना ही हो, तो गुजरात की विशेष योग्यतावाला भाग निकाल दीजिये। पत्र में अधिक लिख रहा हूँ।'

उन्हें पत्र :

"आपका लेख ध्यानपूर्वक पढ़ गया। कल एक तार दिया था, आज दूसरा दिया। विचार बढ़िया है, परन्तु मौजूदा वातावरण में उस पर अमल होना जरा भी संभव नहीं है। और कोई भी प्रांत इस बात का समर्थन नहीं कर सकता। आपको पता होगा कि बंगाल इस विषय में खूब प्रयत्न कर रहा है। उसका तो गुप्त प्रयत्न भी है कि उसे पहले पूरा स्वराज्य मिले। गुजरात को ही पहला स्वराज्य मिले, ऐसा प्रयत्न करने के लिए गुजरात में कौन तैयार नहीं होगा? आपका सुझाव जरा दूसरे रूप में शर्मा ने धारासभा में रखा था। उसे, मैं स्वीकार करता हूँ कि, बहुत अनुचित ढंग से सब सदस्यों ने हँसी में उड़ा दिया। माटेग्यू ने उसे महत्त्व दिया है, परन्तु यह सुझाया है कि ऐसे महत्त्व का हेरफेर करना इस समय ब्रिटिश अधिकारियों का काम नहीं है। परन्तु उसका विचार आइन्दा अस्तित्व में आनेवाली नयी कौंसिलें कर सकती हैं। यह तो हुई आपकी सूचना की बात।

गुजरात की श्रेष्ठता के बारे में आपने जो दलीलें दी हैं, वे तो क्लेश ही उत्पन्न कर सकती हैं। इस समय यह झगड़े की बात हो जायगी। हमारी अपेक्षा महाराष्ट्र स्वराज्य के लिए अधिक प्रमाण पेश कर सकेगा। मद्रास कहेगा कि हम तो पश्चिम की पद्धति में ओतप्रोत हो गये हैं, इसलिए हमारे जैसा लायक तो कोई हो ही नहीं सकता। गुजरात के लिए आमतौर पर यह मान लिया जाता है कि यह बहुत पिछड़ा हुआ प्रदेश है। जो दलीलें आप हमारे पक्ष में काम में ले रहे हैं, वे हमारे विरुद्ध इस्तेमाल की जायँगी। इन सब विरोधी बातों से थक जाने का भी कारण नहीं है, किन्तु स्वराज्य की यह हलचल ऐसे वातावरण में शुरू की जाय या नहीं, इसके औचित्य का विचार करना आवश्यक है। इतना विचार करके जो लिखना उचित हो तो लिखिये। उस पर अमल करने को मैं तैयार हूँ।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

आज बापू अपूर्व आनन्द में हैं। शाम को प्रार्थना में 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' पढ़ना शुरू किया।

"देखो भाई, इसका लेखक कौन ? जॉन बनियन। तुम्हें मालूम है, वह कौन था। वह हमारे प्रह्लादजी जैसा टेकवाला था। जैसे प्रह्लादजी ने सत्य की खातिर संकट उठाये, वैसे ही वह भी सत्य की खातिर जेल में रहा था; और जैसे हमारे तिलक महाराज ने जेल में रहकर गीता-रहस्य लिखा था, वैसे उसने जेल में यह यात्रियों का सफर लिखा। सफर कहो, प्रवास कहो या उन्नति कहो।

"जैसे गीता पर भाष्य है, वैसे 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' बाइबिल पर एक भाष्य है। बाइबिल पर भाष्य भी नहीं कहा जा सकता। बाइबिल के सबसे सुन्दर भाग का विवेचन है। अंग्रेजी में तो यह सबसे बढ़िया चीज मानी जाती है इसे लगभग बाइबिल के साथ रखा जाता है। बनियन ने बच्चों के लिए उसे इतनी सरल और सुन्दर भाषा में लिखा है कि जहाँ-जहाँ अंग्रेजी भाषा बोली जाती है, वहाँ-वहाँ बच्चों के लिए यह अद्भुत पुस्तक मानी जाती है, इससे भी अधिक पुस्तक के उपोद्घात में, जैसे तुलसीदासजी ने रामायण के बारे में कहा है, इस पुस्तक के बारे में कहा गया है कि इसे भविष्य में सब कोई पढ़ेंगे। और यह है भी रामायण जैसी। जैसे तुलसी-कृत रामायण में बच्चों को भी आनन्द आता है और बहुत-से बड़े-बड़े लोग भी गोते लगाते हैं, उसी तरह इस पुस्तक में भी बच्चों को बहुत रस आ सकता है। परन्तु अब तो हम यह पुस्तक पढ़ेंगे। देखो यह कहा गया है कि : संसाररूपी वन में भटकते-भटकते। हमारे यहाँ भी संसार को घोर अरण्य बताया गया है। इसी तरह इसने भी जगत् को जंगल कहा है। कहते हैं कि ऐसे संसाररूपी वन में थका-माँदा मैं एक घोर गुफा में आ पड़ा था। थका-माँदा शारीरिक श्रम से ही नहीं था, परन्तु उसे आत्मा की थकान भी हो गयी थी। अनेक विचार किये अनेक स्थानों से अनेक वस्तुएँ जानीं और सुनीं परन्तु कोई तत्त्व जानने को नहीं

मिला। इसलिए बेचारे की आत्मा थक-थककर परेशान हो गयी थी। इसलिए वह थकान के मारे सो गया। सो जाने के बाद सपना देखा। सपने में इसने क्या देखा ? किसे देखा सखी, मालूम है ? एक फटे-टूटे कपड़े पहने हुए आदमी को। अच्छा, बच्चो, बताओ तो सुदामा श्रीकृष्ण के यहाँ गया तब कैसी पोशाक पहनकर गया था ? क्या रेशमी किनारे की धोती और जरी का जामा और खासी कीमती दक्षिणी पगड़ी और कसीदेवाला दुपट्टा पहने हुए था ? नहीं फटे-टूटे कपड़े पहने हुए था उसी तरह यह भी चिथड़े पहने हुए था। क्यों सखी, मालूम है, सुदामा ने क्या पहना था ? तुम्हे तो मालूम नहीं होगा लेकिन मुझे तो मालूम है। क्योंकि मैं तो सुदामा के गाँव पोरबंदर में पैदा हुआ हूँ। खैर, सुदामा का मुँह किस तरफ था ? क्या अपने घर की तरफ था ? नहीं, वह तो घर छोड़कर भगवान् के यहाँ जा रहा था। इसी तरह हमारा यात्री भी घर की तरफ से मुँह मोड़कर दूसरे किसी मार्ग पर लगा हुआ था। और फिर, उसके कंधे पर क्या था ? सखी जब हम कोचरब में थे तब वह मजदूर पाँच मन का थैला थैला लेकर आता था वैसा थैला इसके कंधे पर था। पसीने से वह लथपथ था और इतना झुक गया था कि मैं उसे कैसे कह सकता था कि तू सीधा खड़ा रह। इस आदमी के हाथ में एक पुस्तक थी। यह पुस्तक और कोई नहीं बाइबल ही थी। पढ़कर उसके आँसू टपक रहे थे। गोपीचन्द की बात मालूम है ? जब वह नहाने बैठा था तो ऊपर से उसकी माता उसे देख रही थी और उसकी आँखों से उसके ऊपर आँसू टपक रहे थे। बादल तो कोई थे नहीं फिर भी बरसात कहाँ से पड़ रही थी ? गोपीचन्द ने देखा कि बरसात तो उसकी माता की आँखों से हो रही है। वह क्यों रो रही थी यह तो फिर कभी समझाऊँगा। परन्तु इस यात्री के भी आँसू टपक रहे थे। उसकी आँखों से आँसू इसलिए बह रहे थे कि वह भगवान् के घर जाने को निकला है। वह तो मतवाला है।"

२४-९-१८

नामूभाई को :

"यहाँ तक मान लेने का कोई कारण नहीं कि लड़ाई में जाना बिलकुल होगा ही नहीं*। किन्तु आसार ऐसे दिखाई देते हैं कि जाना नहीं होगा। यह मानने की जरूरत नहीं कि लड़ाई में जाने से ही वीरत्व आता है। लड़ाई के बाहर रहकर भी हम वह वस्तु पैदा कर सकते हैं। लड़ाई बहुत-से साधनों में से एक प्रबल साधन है। परन्तु जैसा वह प्रबल है, वैसा दूषित भी है। हम निर्दोष ढंग से वीर बन सकते हैं। शरीर के साथ जो युद्ध हो रहा है, उससे आत्मा को अनात्मा के साथ जो युद्ध करना है, उसे करने की शक्ति हम प्राप्त कर सकें, तो उससे वीरता आती है।

मोहनदास के वन्दे मातरम्"

रमेश कुरेशी को :

"मैं चाहता हूँ कि मेरी कलाई और उँगलियों में इतनी ताकत आ जाय कि आपको अपने हस्ताक्षर भेज सकूँ। किन्तु अभी तो मुझे मित्रों की कलाई और उँगलियों की मदद लेकर संतोष करना पड़ता है। अली-भाइयों के मामले की जाँच-कमेटी के बारे में तो आप सब कुछ जानते हैं। हम कीरकदूमी की चाल से चलते हैं। हमारी गति आगे है या पीछे सो मैं नहीं जानता। सत्याग्रही के लिए तो सारी गतियाँ आगे ले जाने वाली होती हैं। सरकार का इरादा अच्छा होगा, तब तो हम सबके लिए अच्छा ही है। अगर उसकी नीयत खराब होगी, तो कार्य-कारण के अटल नियम के अनुसार उस पर इसकी प्रतिक्रिया होगी। इससे उसे नुकसान होगा हमें नहीं। शर्त एक ही है कि हम भी उसीके जैसे न बन जायँ। ज्यादातर हम बुरे के साथ बुरे बन जाते हैं, इसलिए बुराई घास-फूस की तरह बढ़ती ही रहती है। हमारे लिए अचल कानून तो 'बुराई का मुकाबला बुराई से न करो' है। इस दुनिया में हम दो वृत्तियाँ लेकर आते

* नवम्बर में जर्मनी की पूरी हार हो गयी इसलिए उसकी विजय के कमिश्नर के कहरनामा कि रँगरूट भरती करने की कोई जरूरत नहीं है।

है। एक पशु की और दूसरी मनुष्य की, या आसुरी और देवी। दैवी वृत्ति को आसुरी वृत्ति पर उत्तरोत्तर विजय प्राप्त करनी है। किन्तु मैं इस दूसरी बात में चला गया। यद्यपि मेरे लिए तो यह विनोद है, परन्तु अभी मैं उसमें पड़ना नहीं चाहता। इस समय हमारे सामने जो काम है, उसीकी बात करें, तो मैं आपको बता दूँ कि चार्ट के मार्फत मैं अछूत-भाइयों के साथ बड़े घनिष्ठ सम्पर्क में रहता हूँ।

मो० क० गांधी"

११-९-१८

भाद्रपद कृष्ण १२, संवत् १९७४। बापूजी का जन्म-दिवस। सबेरे चार बजे उठकर सब लोग बापूजी के कमरे के पास गये। वहाँ जाकर थोड़ी देर बैठे और भजन किया। बापूजी कमरे में ही रहे थे। भजन करने के बाद बापूजी को प्रणाम करने गये। प्रणाम हो जाने के बाद बापू ने ये उद्गार प्रकट किये :

तुम सबने आज सबेरे यहाँ आकर मुझ पर जो प्रेम दिखाया है, क्या मैं उसके योग्य हूँ? मेरे खयाल से मैं उसके योग्य नहीं हूँ। आम तौर पर मैं बाहर भी शिष्टाचार के शब्द नहीं बोलता और आश्रम में तो हरगिज नहीं बोलूँगा। इसलिए मेरे ये शब्द शिष्टाचार के नहीं हैं। परन्तु मुझे अपने अन्तर में यही महसूस होता है कि तुम सब मेरे प्रति जो अगाध प्रेम दिखा रहे हो, उसका मैं पात्र नहीं हूँ। जिसने सेवा-धर्म स्वीकार किया है, उससे तो बहुत बड़ी आशा रखी जा सकती है। मैंने जो कुछ किया है, वह तो उस हिसाब से कुछ नहीं है। तुम सबने भी सेवा-धर्म स्वीकार किया है। तुम सबसे कहता हूँ कि अपनी भक्ति समेटकर रखो। मनुष्य के मरने से पहले वह भक्ति प्रकट करना ठीक नहीं है, क्योंकि उसकी मौत से पहले उसका काम पूरी तरह देखे बिना हम उसके काम की कीमत कैसे लगा सकते हैं? फिर, मरने के बाद भी मूल्यांकन में देर लगती है। इसलिए मनुष्य की मृत्यु से पूर्व उसकी जयन्तियाँ मनाना व्यर्थ है।

तुम लोगों से और तो क्या कहूं ? आज प्रातःकाल चार बजे के पहले मैं विचार कर रहा था। सुरेन्द्र ने मुझे एक सवाल पूछा था कि आप मुझसे अधिक-से-अधिक क्या आशा रखते हैं ? देवदास से क्या आशा रखते हैं ? छोटेलाल से क्या रखते हैं ? तुममें से हरएक से क्या आशा रखता हूं यह कहने के बजाय तुम सबसे जो एक आशा रखता हूं, वह कहता हूं। वह यह है कि हमारा पहला और अंतिम जो सत्यव्रत है, उसका तुम अच्छी तरह पालन करो। जिसमें हमने मोक्ष माना है, उसे अच्छी तरह करते रहना चाहिए। इस प्रकार काम करके तुम लोगों ने आश्रम के जो उद्देश्य समझे हैं, उन्हें यथाशक्ति पूरे करके आश्रम को उज्ज्वल करो। तुम लोगों के काम और चरित्र पर से आश्रम की कीमत आंकी जायगी। आश्रम हिन्दुस्तान की सेवा के लिए स्थापित हुआ है। हिन्दुस्तान की सेवा के द्वारा आत्मा की सेवा करनी है। हमारे बहुत-से आलोचक भी हैं। आलोचक तो होंगे ही। परन्तु यदि हम अपने पहले और अन्तिम व्रत सत्य का पालन करते होंगे तो हमें इन आलोचनाओं से डरने की जरूरत नहीं है। हम दंभ करते होंगे, पाखंड करते होंगे, तो दूसरी बात है। परन्तु हमारा ध्येय तो यही है, इसमें कोई शक नहीं। आश्रम हम सबके चरित्र का जोड़ है। इसलिए मैं चाहता हूं कि हरएक का चरित्र इतना बढ़ जाय कि आश्रम का कुल जोड़ बड़ा हो जाय। मैं इस व्रत का कहाँ तक पालन करता हूं या कर सकता हूं, यह मैं बार-बार सोचता रहता हूं और मुझे अपने में बहुत-सी त्रुटियां मालूम होती हैं। मुझे पता नहीं कि इन त्रुटियों को मैं इस जन्म में दूर कर सकूंगा या नहीं। तुममें या आश्रम में जो त्रुटियां हैं, वे मेरे कारण ही आयी हैं। इस लिए मैं तुमसे यह चाहता हूं कि तुम भगवान् से मेरी और अपनी त्रुटियां दूर कर देने और मेरे शुरू किये हुए कामों में मुझे सफलता देने के लिए प्रार्थना करो। तुम मुझ पर जो प्रेम बरसाते हो, जो भक्ति दिखाते हो, उसके योग्य मैं बनने का प्रयत्न करूंगा। मैं भगवान् से प्रार्थना करता हूं कि मुझे वह बल दे। भगवान् करे, तुम भी अपने कर्तव्य में सफल हो।

मेरी प्रार्थना है कि मैं और तुम एक-दूसरे को मदद देने में समर्थ हों। और क्या कहूँ ? तुम्हारी भक्ति का फल मिले बिना नहीं रहेगा। इसलिए आओ, सब अपने-अपने कर्तव्य में परायण रहो।

२ १०-१८

पहली तारीख की रात को ही मच्छरदानी—२ से १ बजे तक भयंकर बीमारी। देवदास, हरिलाल और छोटेलाल की पत्र। गीता-जीवन। गीता के दूसरे अध्याय का अध्ययन। 'विहाय कामान् यः सर्वान्' इस श्लोक को दो सौ बार रटन। ब्राह्मी स्थिति का अनुभव।

११ १ १८

आश्रम में इन्फ्लुएन्ज़ा। शंकरलाल परीख की बीमारी। बापू का स्वयं अशक्त होते हुए भी गंगाबहन की लड़की की बीमारी की खबर सुन कर उन्हें पत्र :

'तुम, कीकी वगैरह के बीमार हो जाने के बारे में पहले आज ही पढ़ा। परन्तु यह पढ़कर भी प्रसन्न हुआ कि ईश्वर की कृपा से तुम सबकी तबीयत सुधार पर है। जिन्होंने सेवा-धर्म स्वीकार किया है, उनके शरीर तो वज्र जैसे होने चाहिए। किसी समय हमारे पुरखे अपने शरीर ऐसे बना सकते थे। आज हम दीन बन गये हैं और वातावरण में घूमनेवाले अनेक बाहरीसे जन्तुओं के अधीन हो जाते हैं। इससे छूटने का इस गिरी हुई हालत में भी एक ही सच्चा मार्ग है और वह है, संयम या मर्यादा। इस बीमारी में दो बातों की सावधानी रखने से शरीर को कम-से कम खतरा रहता है, यह डॉक्टरों की राय है और वह सही है। यह महसूस हो कि तबीयत अच्छी हो गयी है, उसके बाद भी प्रवाही और जल्दी पचने वाला सादा भोजन किया जाय और बिस्तर पर आराम लिया जाय। कई रोगी दूसरे-तीसरे दिन एकाएक बुखार उतर जाने से बेफिक्र होकर काम काज करने लगते हैं और सदा की भाँति भोजन करने लगते हैं। इससे बीमारी फिर जोर पकड़ती है और भयानक रूप ले लेती है। इसलिए

मेरी प्रार्थना है कि तुम सब बिस्तर पर ही आराम करो। मुझे स्वास्थ्य के समाचार रोज देते रहो। मैं अभी बिस्तरे में ही हूँ, बहुत दिन रहना पड़ेगा। फिर भी यह कहा जा सकता है कि तबीयत सुधार पर है। पत्र लिखने की भी डॉक्टरों की मनाही है पर तुम्हें लिखे बिना कैसे रहा जाय? वहाँ रहने में असुविधा हो और यहाँ आना हो तो जरूर आ जाओ। अभी आश्रम में दस बीमार हैं। उनमें भयंकर तो भाई शंकरलाल परीख का मामला पाया जाता है। उन्हें भी आज बीमारी का जोर कम होता लग रहा है।

मोहनदास गांधी के वन्दे मातरम्'

११-१०-'१८

जब से हरिलाल की पत्नी गुजर गयीं तब से उन्हें रोज पत्र लिखवाते। आज का पत्र थोड़ी विशेषता रखता है :

तुम्हारा पर्चा मिल गया। आज लिखने की कोई खास बात नहीं सूझती। यही सोचा करता हूँ कि तुम कैसे स्वस्थ बनो और रह सकते हो। अगर मैं अपने किसी भी वाक्य से तुम्हें स्वस्थ बना सकूँ और वह वाक्य मुझे मालूम हो जाय तो तुरन्त लिख जाऊँ। मुझे मालूम नहीं तुम्हें यह कल्पना हो सकी है या नहीं कि यह संसार कैसा है। परन्तु मुझे तो उसका क्षण-प्रतिक्षण सूक्ष्म दर्शन होता रहता है। और जिस तरह ऋषि-मुनियों ने उसे बताया है, ठीक उसी तरह का उसे पाता हूँ। यह मैं इतनी सूक्ष्मता से देख सकता हूँ कि मुझे उसमें जरा भी रस नहीं आता। जब तक शरीर है, तब तक प्रवृत्ति तो होगी ही। इसलिए अधिक-से-अधिक शुद्ध प्रवृत्तियों में लगे रहना ही मुझे पसन्द है। यह कहने में जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है कि ऐसी प्रवृत्तियों में लगे रहने के लिए आवश्यक संयम-पालन करने में मुझे बड़ा आनन्द आता है। यह बात जिस हद तक समझी जा सके और उस पर अमल हो सके, उसी हद तक मनुष्य सच्चा सुख पा सकता है। अगर इस संकट से तुम्हारी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाय कि तुम इन

मुल के मौक़ा बन सकें, तो इस संकट को भी लगभग स्वागत करने योग्य माना जा सकता है। अगर तुम्हारा मन कुछ भी अवकाश ले सकता हो तो ये सब बातें सोचना। सबकी तबीयत अच्छी है। बीमार सब अच्छे होते जा रहे हैं। मेरा हाल भी अच्छा है। यह मानकर कि बा को तुम सारे पत्र पढ़वाते होगे, अलग पत्र नहीं लिखता।"

५ ११ १८

¶ 'भाईश्री हासिमियार,

"आपके पत्र के लिए आभारी हूँ। उसकी मैं पूरी कद्र करता हूँ। जिस दृष्टि से वह लिखा गया है, उसे मैं समझता हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अपने स्वास्थ्य की मैं जितनी चिन्ता कर सकता हूँ, उतनी अधिक कर रहा हूँ। जो आदमी कभी बिछौने पर न पड़ा रहा हो उसे तीन महीने तक यह अनुभव करना पड़े तो यह कोई हँसी-खेल नहीं है। मेरी बीमारी अब भी अधिक लम्बी होगी तो वह मेरे अपने अज्ञान या मूर्खतावश या दोनों कारणों से होगी। अपनी तन्दुरुस्ती के एक भी पलटे के लिए मैं सेवा करनेवालों या डॉक्टर मित्रों के अज्ञान को जिम्मेदार नहीं मान सकता। वे तो जिसे मेरा धनचक्करपन मानते हैं उसके कारण चिन्ता हैं। फिर भी वे मेरे अंग जैसे बन गये हैं और जब मैं अपार वेदना अनुभव करता हूँ, तब मुझे भरसक आराम देते हैं। मोतीहारी के पादरी होज के लिखे हुए पत्र में स्व डॉ देव के बारे में जो उल्लेख है, वह उद्धृत करके भेजता हूँ। यह बड़ा ही स्वतंत्र प्रकृति और उदार विचारों वाला पादरी है। मैं आशा रखता हूँ कि आपकी तबीयत अच्छी होगी। जो जितना भारी सार्वजनिक काम आप पर आ पड़ा है उसके बोझ के नीचे जितनी अच्छी रह सके, उतनी अच्छी होगी।

सेवक
मो क गांधी'

१८-११-१८

मुहम्मद अली ने मेरे पत्र पर से भोजन सम्बन्धी शर्तों के विरुद्ध एक बहुत ही भावपूर्ण पत्र लिखा। उन्हें उत्तर :

"प्रिय मित्र,

"आपका मानो युगों बाद पत्र मिला। उसे पाकर मुझे बहुत ही आनन्द हुआ। आपके पत्रों में आपका भारी प्रेम टपकता है। इसके लिए मैं बहुत ही आभारी हूँ। आपके प्रेम के बदले के रूप में मेरे शर्तों का शब्दार्थ जैसा आप करते हैं, वैसा कुछ तोड़-मरोड़कर भी मैं कर सकूँ, तो वैसा करने को मैं खुशी से तैयार हो जाऊँगा। किन्तु इस अपने-आप लगाये हुए अंकुश से निकलने का कोई रास्ता नहीं है। जो व्रत मैंने खूब विचारपूर्वक और उसके जो परिणाम हो सकते हैं, वे सब ध्यान में लाने के बाद लिया है, उस व्रत की उपेक्षा करूँ तो ईश्वर के प्रति, मानव-जाति के प्रति और स्वयं अपने प्रति झूठा साबित होऊँ। मेरी जो कुछ उपयोगिता है वह समूल नष्ट हो जाय अगर मित्रों के आग्रहवश मैं अपने व्रतों में हेर-फेर कर डालूँ। इस बीमारी को मैं अपने लिए एक परीक्षा और प्रलोभन का प्रसंग मानता हूँ। इस समय तो मुझे मित्रों के प्रार्थनामय समर्थन और प्रोत्साहन की जरूरत है। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि व्रतों के बंधनों की मर्यादा में रहकर इस शरीर को बनाये रखने के लिए जितनी भी सावधानी रखी जा सकती है, उतनी सब मैं रख रहा हूँ। अब मुझे एक डॉक्टर मित्र मिल गये हैं, जो मालिश से बरफ से और गहरे श्वासोच्छ्वास से मेरी शक्ति वापस ला देने की जिम्मेदारी लेते हैं। उनका खयाल है कि दो महीने के भीतर मेरे शरीर में इतना खून भर जायगा और मेरा वजन बढ़ जायगा कि उसके कारण मैं चल-फिर सकूँगा और साधारण मानसिक श्रम बर्दाश्त कर सकूँगा। उनकी चिकित्सा मुझे बुद्धियुक्त और स्वाभाविक मालूम होती है। विशेषता यह है कि उसमें मेरा विश्वास जम गया है। भोजन

के उचित हेरफेर से मैं आशा रखता हूँ कि इन मित्र की भविष्यवाणी सही साबित होगी।

"आप पर लगाये गये इल्जाम मुझे पढ़कर सुना दिये गये हैं। इससे ज्यादा कमजोर और छिछला अभियोग-पत्र मैंने पढ़ा ही नहीं। मेरा खयाल है कि आपका जवाब स्पष्ट, सीधा और गौरवयुक्त होगा। मुझे तो साफ दीखता है कि कमेटी इसलिए नियुक्त की गयी है कि सरकार के लिए इस मुश्किल से निकल जाने का साधन मिल जाय। कुछ भी हो, हम तो अब कमेटी के निर्णयों के बारे में पूरी तरह तटस्थ रह सकते हैं। आपकी सफाई इतनी अधिक मजबूत है कि कमेटी का फैसला हमारे विरुद्ध हो, तो हम ऐसा आन्दोलन खड़ा कर सकते हैं कि आप जो इतने लम्बे समय तक और इतने धीरज के साथ उस निर्दय अन्याय के शिकार हुए हैं, उसके लिए सारे हिन्दुस्तान को कोपाग्नि से जला सकेंगे। मुझे लगता है कि आपका जवाब तैयार करने में आपकी मदद के लिए मैं आपके साथ छिंदवाड़ा में होता, तो कैसा रहता। लेकिन ऐसा होना बदा नहीं है।

"अम्मासाहब को मेरा आदाब अर्ज कहिये। आप सबसे मिलने के लिए, बच्चों से मिलने के लिए और आपके अधिक निकट संसर्ग में आने के लिए मैं तड़प रहा हूँ। जैसा मैंने लखनऊ की सभा में कहा था आपकी मुक्ति में मेरा हेतु बिलकुल स्वार्थपूर्ण है। हमारा ध्येय एक ही है और उस ध्येय तक पहुँचने के लिए मैं आपकी सेवाओं का पूरा उपयोग करना चाहता हूँ। हिन्दू-मुसलिम प्रश्न के उचित निपटारे में स्वराज्य-प्राप्ति समायी हुई है। परन्तु इस बारे में जब हम मिलेंगे, तब। मैं आशा रखता हूँ कि हम जल्दी मिलेंगे।

आपका
मो० क० गांधी"

इसी दिन श्रीमती सरोजिनी नायडू को तार दिया। उन्होंने यह सोचकर कि ऑपरेशन से उनकी मृत्यु हो जायगी, अंतिम पत्र लिखा था। उन्हें जवाब में लिखा :

¶ "प्यारी बहन,

'आपके संक्षिप्त पत्र की मैं बड़ी कद्र करता हूँ। मैं देखता हूँ कि आपरेशन से आप बच गयी हैं। आशा रखता हूँ कि यह पूरी तरह सफल साबित होगा, ताकि हिन्दुस्तान को बहुत वर्षों तक आपके गीत सुनने को मिलें। मुझे पता नहीं चलता कि मैं अपनी रोग-शय्या कब छोड़ सकूँगा। किसी भी तरह मेरा शरीर मरता ही नहीं और जितनी शक्ति है, उससे ज्यादा आती ही नहीं। मैं भारी प्रयत्न कर रहा हूँ। लेकिन मैंने अपने-आप पर जो बंधन लगा लिये हैं, उनके कारण डॉक्टरों को निराशा होती है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि इस लम्बी बीमारी में वे शर्तों के बन्धन मेरे लिए जबर्दस्त आश्वासन बन गये हैं। इन संयममय और सहायक बंधनों को तोड़ने की शर्त पर जीने की मुझे जरा भी इच्छा नहीं है। मेरे लिए वे शरीर को कुछ बाँधनेवाले होने पर भी आत्मा को मुक्त करनेवाले हैं। और उनके बारे में मुझे सुख रहता है, जो और किसी तरह मैं नहीं रख सकता। ब्रह्म और माया को एक साथ इसलिए नहीं भजा जा सकता, इस वचन का अर्थ इन शर्तों के बाद अधिक स्पष्टता और गहराई से मेरी समझ में आया है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि ये सबके लिए आवश्यक हैं, परन्तु मेरे लिए तो हैं ही। अगर मैं इन शर्तों को तोड़ दूँ, तो मेरा ख्याल है कि मैं बिलकुल निकम्मा हो जाऊँ।

'समय-समय पर दो शब्द लिखती रहिये।

आपका
मो० क० गांधी'

२५-११-१८

"चि॰ हरिलाल,

"तुम्हें जरूर मेरे बारे में समाचार भेजे गये हैं। आज इस विषय में और देता हूँ। मेरी तबीयत अच्छी भी है और खराब भी। ऐसा महसूस होता रहता है कि जो सुधार होना चाहिए, वह नहीं होता। अब खुराक के बारे में कोई शिकायत नहीं की जा सकती। सभी कहते हैं और मुझे भी ठीक मालूम होता है कि कुछ समय बाहर रहूँ तो अच्छा। इसलिए बाहर जाने की सोच रहा हूँ और स्वीकार कर रहा हूँ। मेरा जाना हो जाय उससे पहले तुम आ जाओ तो अच्छा। तुम्हारे जी में जो कुछ भरा हो वह निस्संकोच मेरे सामने निकाल दो। अगर तुम मेरे सामने अपना हृदय नहीं खोल सकते तो किसके सामने खोलोगे? मैं तुम्हारा सच्चा मित्र बनूँगा। फिर तुम्हारी किसी भी योजना के बारे में हमारा मतभेद होगा, तो क्या हर्ज है? हम बात कर लेंगे। अंतिम निर्णय तो तुम्हारे ही हाथ में रहेगा। मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि तुम्हारी दशा इस समय लगामरहित मनुष्य की-सी है। तुम्हारी जिम्मेदारी बढ़ गयी, तुम्हारी कसौटियाँ बढ़ गयीं और तुम्हारे प्रलोभन बढ़ेंगे। गृहस्थाश्रमी मनुष्य के लिए उसका गृहस्थपन यानी सपत्नीक होना बड़े अंकुश का काम करता है। वह अंकुश तुम पर से उठ गया। अब तुम जहाँ खड़े हो, वहाँ से दो रास्ते जाते हैं। तुम्हें कौन-सा लेना है, इसका निर्णय करना बाकी है। आश्रम में एक भजन अक्सर गाया जाता है, जिसकी पहली कड़ी यह है: 'निर्बल के बल राम'। इन्सान घमंडी बनकर ईश्वर की सहायता नहीं माँग सकता, अपनी दीनता स्वीकार करके ही माँग सकता है। हम कितने तुच्छ हैं, कैसे रागद्वेष से भरे हुए हैं, कितने विकार हमें हिलाते रहते हैं! इसका साक्षात्कार मैं बिछौने पर पड़ा-पड़ा नित्य करता रहता हूँ। कई बार मुझे अपने मन के हलचल पर शर्म आती है। कई बार अपने शरीर के लाड़-प्यार से निराश होकर इसकी केवल समाप्ति चाहता हूँ

और अपनी दया पर से औरों की हालत का अन्दाज अच्छी तरह कर सकता हूँ। अपने अनुभवों का लाभ तुम्हें पूरी तरह दूँगा। तुमसे जितना लिया जा सके, ले लो और यह जब तुम आओगे, तभी हो जायगा।

बापू के आशीर्वाद"

१०-११-'१८ से ६-१-'१९ तक

माथेरान गये। वहाँ तेरह दिन रहे। ता० १३-१२-'१८ को वहाँ से चल दिये। १४-१२-'१८ से बम्बई रहे। ६-१-'१९ को एण्ड्रूज का यह पत्र लिखा:

"मेरी तंदुरुस्ती में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। इनका मैं आदी हो गया हूँ। उनसे मैं जरा भी नहीं घबराता। क्योंकि मैं देखता हूँ कि इस लम्बी चली हुई बीमारी से उठ सकूँ, इससे पहले बहुत उतार-चढ़ाव होते रहेंगे। इस वक्त तो मैं बिलकुल अच्छा दिखाई देता हूँ। मुझे कुछ इंजेक्शन लेने में सहमत होना पड़ा है और उनका जैसा सोचा था, वैसा ही असर हुआ है। ये इंजेक्शन खून को ताकत देने के लिए थे। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि इस समय का मेरा भोजन गुण और मात्रा दोनों में ऐसा है, जिससे स्वस्थ ताकतवर आदमी को भी हो सकती है। किन्तु यह मैं नहीं कह सकता कि इससे मेरी बीमारी कब खतम हो जायगी। मेरा खयाल है कि बहुत सावधानी से निरीक्षण करनेवाला हो, तो वह समय-पत्रक बना सकता है और यह भविष्यवाणी कर सकता है कि आगे कब बीमारी में रुकावट आयेगा और उसके बाद दूसरा कब आयगा। आज कल मैं बड़े मशहूर डॉक्टरों की देखरेख में हूँ। ये मुझे पंद्रह इंजेक्शन देना चाहते हैं जिनमें से अब तक चार दिये जा चुके हैं। इसलिए मेरे वास्ते तो किसी तरह भी आनन्ददायक नहीं है और सुइयाँ लगवाने में तो कभी आनंद का अनुभव नहीं होता। फिर भी जीने के लिए हम क्या क्या उपाय करने को तैयार नहीं होते!

"मैंने अखबार में पढ़ा कि कलकत्ते के बिशप गुजर गये। उनकी कमी तुम्हें बहुत अखरेगी। किन्तु साथ ही साथ मुझे यह विचार भी आता है कि वे दुःख से छूट गये।

"मेरी सुविधा का विचार करते हुए तो तुमने मिस फेरिंग को बोलपुर भेजकर अच्छा ही किया है। परन्तु तुम्हारे काम मुझे आवेश में किये हुए प्रतीत होते हैं। अब तुम मुझे विश्वास दिलाते हो कि उसने तुम्हारा स्थान अच्छी तरह ले लिया है। अतः मेरे लिए कुछ कहने को रह नहीं जाता। अलबत्ता मिस फेरिंग के पत्र से मुझे यह मालूम हुआ कि शान्ति निकेतन में ऊपर की कक्षाओं को अंग्रेजी पढ़ाना उन्हें अनुकूल नहीं पड़ता। या यों भी कह सकते हैं कि नीचे की कक्षाओं को पढ़ाना भी उनके लिए अनुकूल नहीं है। फिर भी मिस फेरिंग में इतनी श्रद्धा है कि उनके लिए इस दुनिया में कुछ भी असंभव नहीं है। जहाँ हजारों असफल हुए हैं, वहाँ वे सफल हुई हैं। क्या सचमुच डेनिश-मिशन से उन्हें मुक्ति मिल गयी? क्योंकि तुम कहते हो कि बोलपुर का काम पूरा हो जाने के बाद वे मेरे पास आनेवाली हैं। यहाँ कोई कटुता उत्पन्न किये बिना वे मुक्त हो सकी हों, तो यह बहुत बड़ी बात कही जायगी। मैं पन्द्रह तारीख तक बम्बई में ही हूँ। बाद में मेरे विलायत जाने की बात हो रही है। यह कहाँ तक उचित है सो मुझे सोचना होगा। कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में मेरे चुनाव के बारे में तुम कोई चिन्ता न करना। मैं अभी किसी अंतिम निर्णय पर नहीं पहुँचा हूँ। जानता हूँ कि जब वस्तुस्थिति मेरे सामने आकर खड़ी होगी तब मुझे अपना मार्ग दीपक की तरह साफ दीख जायगा। अभी मैं किसी बात की चिन्ता नहीं करता। प्रतिनिधि बनकर जाने के लिए मैं उत्सुक नहीं हूँ। परन्तु यदि यह मेरे लिए कर्तव्य ही बन जायगा तो मैं उससे डरूँगा नहीं। मुझे आशा है कि तुम सकुशल होगे।

मोहन"

९ १ १९

डॉ. प्राणजीवन मेहता को पत्र :

"मेरी तबीयत चन्द्रमा की कलाओं जैसी है। बढ़ती और घटती है। सिर्फ अमावास्या से बची रहती है। बवासीर की तकलीफ बिलकुल मिट गयी है। परन्तु यह व्याधि तो आज भी वैसी ही है कि खाने की रुचि नहीं होती और शरीर में शक्ति नहीं आती।"

१०-१ १९

एण्ड्रूज को पत्र :

"तो तुम इन्फ्लुएन्जा के शिकार हो गये। मुझे यही आश्चर्य हो रहा था कि हमेशा भटकते रहकर भी तुम अपनी तन्दुरुस्ती इतनी सँभालकर कैसे रख रहे हो। मैं समझता हूँ कि ईश्वर जिसे अपना साधन बनाना चाहता है, खास तौर पर जो किसी विरोध के बिना उसे अपना पथ-प्रदर्शन करने देता है, उसकी वह रक्षा भी करता ही है। इसलिए तुम्हारे बारे में मैं जरा भी चिन्ता नहीं करता। मुझे विश्वास है कि तुम्हारे काम के लिए आवश्यक बल तुम्हें मिल ही जायगा। मेरे स्वास्थ्य में तो उतार-चढ़ाव आते ही रहते हैं। मेरी तबीयत के लिए या वहाँ जाकर कुछ सार्वजनिक काम कर सकने के लिए मेरा इंग्लैण्ड आना जरूरी है, यह तुम्हारे जैसा मुझे साफ समझ में नहीं आ रहा है। मैं धीरे-धीरे अपना मार्ग देखता जा रहा हूँ और एक-एक कदम आगे रख रहा हूँ।"

मगनलालभाई को :

"मैं आजकल हरएक विषय पर इतने गहरे विचारों में डूब जाता हूँ कि इच्छा उनमें से कुछ भाग तुम सबको देने की बड़ी इच्छा रहती है। परन्तु मन की मन्दता और शरीर की दुर्बलता के कारण न कुछ लिख सकता हूँ और न लिखवा सकता हूँ। आज लिखाये बिना नहीं रह सकता। मेरी आत्मा इतनी व्यापी है कि आश्रम में जो हरकेर कर रहा हूँ

उसमें मेरी कमजोरी जरा भी नहीं है। यह परिवर्तन मैं तटस्थ रहकर दृढ़ता से कर रहा हूँ और उसका मुख्य कारण तुम सबको और मित्रों को सन्तोष देना है। बा का चेहरा मुझसे देखा नहीं जाता। बहुत बार उसका चेहरा गरीब गाय जैसा लगता है और कभी-कभी जैसे गाय हमें कुछ कहती-सी मालूम होती है, वैसे ही बा भी मुझे कुछ कहती-सी दीखती है। मैं यह भी समझता हूँ कि उसकी इस दीनता में स्वार्थ छिपा है। इतना होते हुए भी उसकी नम्रता मुझे पराजित करती है। इसलिए जहाँ-जहाँ छूट ली जा सकती है, वहाँ-वहाँ छूट लेने की इच्छा हो जाती है। चार दिन पहले ही बा दूध के लिए विलाप कर रही थी और अकस्मात् बोल उठी : 'गाय का दूध भले न लें परन्तु बकरी का दूध क्यों नहीं लिया जा सकता।' मैं चौंका। जब मैंने व्रत लिया था तब बकरी तो मेरे ख्याल में ही न थी। बकरी के दूध के उपयोग के बारे में मैं उस समय बिलकुल नहीं जानता था और बकरी की पीड़ा मेरी आँखों के सामने नाचती नहीं थी। मेरा व्रत तो सिर्फ गाय के दूध के लिए था। भैंस का भी मैंने विचार नहीं किया था। परन्तु भैंस का दूध लेना मेरे मुख्य उद्देश्य को हानि पहुँचाता। बकरी के दूध के लिए ऐसी कोई बात नहीं थी, इसलिए मुझे लगा कि व्रत में मित्रों का विचार बहुत कुछ ठीक रहेगा। इसलिए मैंने बकरी का दूध लेने का निश्चय किया। यद्यपि एक तरह से देखा जाय, तो बकरी के दूध के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद मेरे व्रत की बहुत कीमत नहीं रह जाती, लेकिन वह बिलकुल जाती भी नहीं जाती। कुछ भी हो इस सुधार से मैं राजी हो गया हूँ, क्योंकि मित्रों की पीड़ा दिन-दिन बढ़ती जा रही थी और डॉक्टर मेहता के तार पर तार आ रहे थे। अगर बकरी को अच्छी तरह पाला जाय, तो उसके और गाय के दूध में कोई फर्क नहीं है। इंग्लैंड की बकरी तो गाय से भी ज्यादा ताकतवर दूध देती है, ऐसा पुस्तकों में लिखा है। हमारी बकरियों का दूध हलका माना जाता है। किन्तु वह हानिकारक होने के बजाय लाभदायक माना जायगा। जो हो। मैंने तो जितने मुझसे उठाये जा सकते थे, उतने कदम उठा लिये हैं।

डॉक्टर को धमकी के भीतर संखिया की, कुचले की और फौलाद की पिचकारी भी लगाने देता हूँ। इतने पर भी तन्दुरुस्ती ठिकाने न आये, तो हम यह नहीं कह सकते कि पाँच चीजों का मत छोड़ने से आ जायगी। इसलिए अब किसीके लिए कुछ कहने को नहीं रह जाता। इन सब परिवर्तनों का क्या असर होता है, यह हमें धीरज रखकर देखना होगा। इस तरह छूट तो ले ली लेकिन अन्तरात्मा एक क्षण भी पूछे बिना नहीं रहती, 'आखिर इतना परिश्रम किसलिए ? जीकर क्या करोगे ? किस सुधार के लिए इतनी झंझट मोल ली जाय ? जब मैं जर्मनी के कैसर की स्थिति का विचार करता हूँ तब ऐसा लगता है कि जैसे हम कौड़ियों से खेलते हैं। जैसे मानो कोई महान् व्यक्ति हमारे साथ खिलवाड़ कर रहा है। एक गोले पर चलनेवाली चींटी जितनी छोटी होती है, इस पृथ्वी के गोले पर हम उससे भी कहीं ज्यादा छोटे हैं और चींटियों की तरह अज्ञान में आगे बढ़ते रहते हैं, कुचले जाते हैं। ऐसे विचार आने पर भी हमारे कर्तव्य के बारे में मुझे एक क्षण के लिए भी शंका नहीं होती। हम प्रवृत्ति-रहित नहीं रह सकते, इसलिए हमारा कर्तव्य पारमार्थिक वृत्ति के लिए ही हो सकता है। ऐसी प्रवृत्ति करनेवाला मनुष्य परम शांति का अनुभव कर सकता है। हमें आश्रम में भी इस तरह की प्रवृत्ति करनी पड़ेगी। तुम्हारा पास ज्वार बोने और बुनाई के काम के बारे में जो सूचना आयी है उसके सम्बन्ध में जो ठीक मालूम हो करना। जो करो सो मुझे लिखना और यह याद रखना कि रसोई के लिए नौकर की जरूरत जान पड़े, तो तुम रख सकते हो।

बापू के आशीर्वाद"

११। १९

चार दिन हुए, बकरी के दूध का प्रयोग शुरू हुआ। उसकी मीमांसा ऊपर के पत्र में आ जाती है। आज डॉक्टर के विदाय भाव का रस (एम्प्युमेन वाटर) लेने की बात चली। बापू ने साफ दिल से कहा कि मैंने

अनुकरण करनेवाले न हों, तो जरूर ले लें। मेरा यह निश्चित विचार है कि जो आदमी दूध पीता हो, उसको एल्ब्युमेन वाटर लेने में कोई हर्ज नहीं। दूध से यह अधिक निर्दोष वस्तु है। मैं तो जिसे एल्ब्युमेन वाटर देने की जरूरत जान पड़ेगी, उसे आग्रह के साथ दिलवाऊँगा। लोक-संग्रह यानी 'यद् यदाचरति श्रेष्ठ:' इत्यादि में समाया हुआ सिद्धांत ही मुझे उसके लेने से रोकता है।

११ १ ३२

बम्बई में मिल-मजदूरों की भयंकर हड़ताल। कल जोशी ने आकर कहा कि मैं सरकार से इस मामले में पंच मुकर्रर करने की कहनेवाला हूँ। क्या उसमें आप काम करेंगे? बापू ने मंजूर किया। दूसरे दिन स्थिति जानने के लिए जहाँगीर पिटीट को बुलवाया। उन्होंने एक मिल-मालिक की तरह सारी स्थिति सामने रखी। 'अब तक पैंतीस फीसदी दे चुके हैं। पहले खूब नफा हुआ है। परन्तु अब उतना नफा नहीं होता, नुकसान होता है। अनाज-पानी की कीमत जरूर बढ़ी है, किन्तु जितनी मात्रा में वह बढ़ी है, उतनी मात्रा में मजदूरी बढ़ायें तो क्या यह असंभव नहीं होगा? फिर इसमें प्रतिष्ठा का भी सवाल है। उन्होंने कभी माँग नहीं की और माँग किये बिना चले जानेवाले आदमियों को यों ही कैसे वृद्धि दी जाय? उन्हें हमें पहले से खबर तो देनी थी। इतना तो उन्हें करना ही चाहिए था। अब यह बात है कि कुछ लोग दस तो कुछ पन्द्रह फीसदी देने को तैयार हैं। परन्तु विश्वास रखिये कि हम दो महीने तक बंद रखने को तैयार हैं। हमें रोज जो अस्सी-हजार रुपये का नुकसान हो रहा है, उसे कौन पूरा करेगा? जब भविष्य में भाव घट जायँगे तब क्या ये लोग फिर मजदूरी घटाने देंगे? आपको भी इन लोगों को काम पर आने के लिए तो समझाना ही चाहिए। बाद में आप कह सकते हैं कि तुम्हें दस-पन्द्रह फीसदी वृद्धि दिलवा देंगे बशर्ते हम पर आपका विश्वास हो।

आज कहते हैं कि बिशप मास्टर ने सभी रचनाएँ बनाकर सिर्फ 'पने

खोयी' रखी थी। यह तुम्हें मालूम है न? ऐसा हो, तो कितना अच्छा रहे! मेरी चले, तो सारे 'लॉ रिपोर्ट्स' तो मैं पहले ही जला डालूँ। तीन सौ वर्ष पहले कोई कुछ लिख गया हो, तो वह भी प्रमाण माना जाता है— बिलकुल रद्दी हो तो भी! फ्रांस में 'लॉ रिपोर्ट्स' काम में नहीं लिये जाते।

रामदास को खुद धीरे-धीरे पत्र लिखा :

"मणिलाल खूब मेहनत कर रहा है, इसमें शक नहीं। तुम्हें अभी तो उसे सहायता देने के लिए वहाँ रहना ही चाहिए। धीरे-धीरे मणिलाल 'इंडियन ओपीनियन' की उन्नति कर सकेगा। तुम भी अपनी शक्ति पर भरोसा रखकर स्वतंत्र लेख लिखो, तो लिख सकते हो। इसमें एक ही चीज के ज्ञान की जरूरत है। वह है तथ्यों की। तुम्हें खेती का ज्ञान हो, तो तुम उस विषय पर अच्छे लेख जरूर लिखो। बहुत-से लेखक अपने विषय को नहीं जानते, तो भी बड़े बुद्धिमान् बनकर लिखने बैठ जाते हैं और असफल सिद्ध होते हैं। तुम किसी खास विषय पर अधिकार प्राप्त करके लिखना शुरू करो, तो जरूर सफल होगे। तुम फार्महिलमा फेंट के भव स्थान का वर्णन अच्छी तरह कर सकते थे। इस प्रकार प्रारम्भ करके आदत हो जाने पर अच्छे लेख लिखे जा सकते हैं। मि पोलाक मेरे पास आये, तब उनके लेख कच्चे और नीरस होते थे। चार महीने के अभ्यास के बाद वे ठीक लिखने लगे और एक वर्ष बाद तो उन्होंने खूब उन्नति कर ली। बड़ी मुश्किल तो यह है कि तुम्हें अपनी शक्ति के बारे में श्रद्धा नहीं। तुम जड़ हो यह मानने का कोई कारण नहीं है। तुम्हें लिखने-पढ़ने का शौक हो, तो तुममें बहुत शक्ति है। × × ×"

१७-१ १९

कल बात होने के बाद वाॅरगेट सिमीट का इस प्रकार पत्र आया :

"कल की हमारी बातचीत के सम्बन्ध में मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप इस मामले में कुछ न कीजिये। कल मित्र-भाइयों के साथ मेरी

खत्म हुई। उसमें प्रसंगोपात्त मैंने उन्हें हमारी बातचीत का सार कहा। उन सबकी यह राय थी कि यह मामला ऐसा है, जिसका निपटारा मालिकों और मजदूरों को स्वयं ही करना चाहिए। यह बाहर के किसी भी व्यक्ति की मध्यस्थता के बिना हो सकता है।

लेखक
जे वी पिटिट[1]

२१ १ १९

बम्बई : आज वधवीर का आसरेशन किया गया। साढ़े आठ बजे तक सोये। फिर बेहोशी में बड़बड़ाने लगे। उसमें अन्तिम उपाय बड़ा सुन्दर था : सरकार को दो बातें करनी ही चाहिए, नमक-कर उठा देना चाहिए और दूध के उद्योग का राष्ट्रीयकरण कर देना चाहिए। इतना हो जाय तो बहुत-सा दुःख मिट जाय। नमक-कर जैसा निर्दय कर कैसे स्वीकार किया गया होगा, यही समझ में नहीं आता। यह पास हुआ तब सारे देश में आग लगनी चा सकती थी। जिस वस्तु के बिना इन्सान घड़ीभर भी काम नहीं चला सकता उस वस्तु पर कर कैसा !"

होश में आने के बाद रात को बारह बजे पत्र लिखवाने लगे। नरहरि की दूध के व्रत के मुतअल्लिक आलोचना आयी थी। 'आपने बकरी का दूध लेना शुरू कर दिया इससे हम सबको खुशी हुई। किन्तु इस प्रकार व्रतों के नये अर्थ ढूंढ़कर उन्हें धीरे-धीरे तोड़ने से तो तोड़ने ही छोड़ देने में सफलता है' इत्यादि। इसका जवाब :

'भाईश्री नरहरि,

'इस समय रात के साढ़े बारह बजे हैं। आज रात को भगन्दर कट-वाये थे। खूब वेदना भोगने के बाद अफीम की पिचकारी लगायी गयी। उसका नशा चढ़ आया और नींद आ गयी। दोपहर को दो बजे सोया, सो फिर रात के बारह बजे जगा हूँ, इसलिए दिमाग शान्त है और अब जल्दी ही नींद नहीं आयेगी। साथ ही भाई महादेव के जागने की बारी

अपने कार्यों के बारे में मुझे खुद को ही अभी तक जो काम करना पड़ता है, उस दुर्दशा से बच जाऊँगा। मुझे स्वयं तो इतना निश्चय है कि मैं अपने व्रतों को बड़ी सावधानी और पूरी सफलता के साथ कायम रख सका हूँ। मैंने बकरी का दूध लेना शुरू करने से पहले २४ घंटे तक विचार किया और मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि जहाँ भी मैंने रिआयत ली है, वहीं सख्त कारणों से ली है। मुझे जीने का बिलकुल आग्रह नहीं है और बीमारी में पाँच से भी अधिक मास लग गये, तो भी मेरी वह लापरवाही की स्थिति कायम है। जब मैंने दूध का व्रत लिया, उस वक्त गाय और भैंस के दूध के सिवा मेरे मन में दूसरे दूध की कल्पना भी नहीं हो सकती थी और न थी। गायों और भैंसों को होनेवाले भारी कष्टों का मुझे बहुत खयाल था, इसीलिए मैंने दूध का व्रत लिया*। इस समय मेरा क्या फर्ज है? जो स्वाभाविक अर्थ निकल आवे, वह ग्रहण करूँ या जो अर्थ अत्यन्त सूक्ष्मता से काम लेकर निकाला जाय, वह लूँ। मेरे खयाल से अपने

---

* दूध के त्याग के बारे में गांधीजी ने आत्मकथा में इस प्रकार लिखा है :

"दूध इन्द्रिय-विकार पैदा करनेवाली वस्तु है, यह मैंने पहले-पहल रायचंदभाई से समझा था। अन्नाहार की अंग्रेजी पुस्तकें पढ़ने से इस विचार में वृद्धि हुई। परन्तु जब तक ब्रह्मचर्य का व्रत नहीं लिया था, तब तक दूध छोड़ने का खास इरादा नहीं कर सका था। शरीर-निर्वाह के लिए जरूरत नहीं, यह तो मैं कभी से समझने लगा था। परन्तु यह जल्दी से छूट सकनेवाली चीज नहीं थी। इन्द्रिय-दमन के लिए दूध छोड़ना चाहिए यह मैं अधिकाधिक समझने लगा था। इतने में कलकत्ते से गाय-भैंसों पर ग्वालों द्वारा होनेवाली क्रूरता के विषय में कुछ साहित्य मेरे पास आ गया। इस साहित्य का असर चमत्कारी हुआ। मैंने इस बारे में मि. कैलनबैक के साथ चर्चा की।

"मि. कैलनबैक ने सुझाव दिया, 'दूध के दोषों के बारे में हम बातें तो बहुत बार करते हैं, फिर हम दूध छोड़ ही क्यों न दें? उसकी जरूरत तो है ही नहीं।' मुझे इस राय से आश्चर्य हुआ। मैंने सुझाव का स्वागत किया और हम दोनों ने टॉल्स्टॉय फार्म में उसी क्षण से दूध का त्याग कर दिया। यह घटना १९१२ में हुई।

दूध के बारे में गांधीजी ने अनुभव से अपने विचारों में परिवर्तन किया है। उन्होंने

मर्दों के बारे में जिस हद तक उदार अर्थ निकल सके, उस हद तक मुझे रिआयत लेनी चाहिए। इन रिआयतों में सूक्ष्म रूप में भी मेरा व्रत भंग होता है, यह मैं स्वीकार नहीं कर सकता। वैद्यक-शास्त्र से उन प्रयोगों का, जो मैं कर रहा था, अब जरूर बड़ा धक्का लग सकता है, परन्तु वैद्यक शास्त्र का प्रयोग आध्यात्मिक वस्तु नहीं है। दूध के त्याग में जो संयम और आध्यात्मिकता थी, उनका तो पूरी तरह निभाव हुआ है। ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये त्यों-त्यों मित्रों का आग्रह भी बढ़ता ही गया। वो मेहता तार देते ही रहते हैं और हमारी हिन्दुस्तानी मेरी बीमारी से अत्यन्त व्याकुल हो रहे हैं। मेरी बीमारी के कारण वा यद्यपि सदा रुदन

अपने अन्तिम विचार आपश्री महत्त्व में लिखी गयी अपनी पुस्तक 'आरोग्य की कुंजी' (१९४२) में इस प्रकार दिये हैं

"दूधाहार के प्रति मेरा पक्षपात होते हुए भी अनुभव से मुझे स्वीकार करना पड़ा है कि दूध और दूध से पैदा होनेवाले पदार्थों—मक्खन, दही वगैरह के बिना मनुष्य शरीर का निर्वाह संपूर्ण रूप में नहीं हो सकता। मेरे विचारों में यह महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। मैंने दूध घी के बिना छह वर्ष बिताये हैं। उस समय मेरी शक्ति में कोई कमी नहीं हुई। परन्तु अपने अज्ञान के कारण मैं सन् १९१८ में सख्त पेचिश का शिकार हुआ। शरीर अस्थिपंजर हो गया। हठ करके मैंने दवा नहीं ली और उतने ही हठ के साथ दूध-छाछ भी नहीं लिया। शरीर किसी तरह बन नहीं सकता था। दूध न लेने का मैंने व्रत ले रखा था। डॉक्टर ने कहा 'मगर व्रत तो गाय-भैंस के दूध के लिए हो सकता है। बकरी का दूध क्यों नहीं लिया जा सकता?' धर्मपत्नी ने हां में हां मिला दी और मैं पिघल गया। सच पूछा जाय, तो जिसने गाय-भैंस का दूध छोड़ दिया हो उसे बकरी वगैरह के दूध भी छूने न चाहिए क्योंकि इन दूधों में भी वस्तुएं एक ही प्रकार की हैं। फर्क केवल मात्रा का ही है। [illegible] मेरे मन के [illegible] का ही पालन रखा। उसकी महिमा तो मानी गयी। कुछ भी हो। तुरंत बकरी का दूध आ गया और मैंने ले लिया। मुझमें नया चेतन आया। शरीर में शक्ति आ गयी और मैं खाट से उठ गया। इस और ऐसे दूसरे अनेक अनुभवों पर से मैं लाचार हो कर दूध का पक्षपाती बन गया हूं। परन्तु मेरा दृढ़ विश्वास है कि असंख्य वनस्पतियों में [illegible] जो दूध जितना काम दे [illegible] वह अभी तक [illegible] नहीं।"

और शोक नहीं करती परन्तु उसकी आत्मा तो अत्यन्त पीड़ित हुई ही है। ऐसे समय मेरी क्या गति ! इस प्रश्न का एक ही उत्तर मिल सकता है। मन को तिलमात्र भी हानि पहुँचाये बिना जहाँ जहाँ उदारता से काम लिया जा सके, वहीं उदारता से काम लेकर रियायत ले लूँ। आज तो यहीं बन्द करूँगा। दूसरी दलीलें तो बहुत हैं। परन्तु जो मुख्य दलील है, वही मैंने आपको दी है। मेरी यह दलील आपको सन्तोषजनक उत्तर न देती हो और अब भी आपको मेरे काम में कमजोरी ही दिखाई देती हो तो मुझे आलोचना अवश्य भेजें। औरों के साथ सलाह करके भी आप मुझे आलोचना भेजेंगे तो मुझे बड़ी खुशी होगी। आपकी आलोचना मुझे ठीक प्रतीत होगी तो भी अभी फिलहाल चुप चाप ही रहूँगा। इसलिए इस डर से कि कहीं मैं चुप न छोड़ दूँ, आप संकोच न करें।

'मणिबहन को आप ध्यानपूर्वक पढ़ाते रहते हैं, यह मुझे बहुत अच्छा लगता है। अगर हम सब अपनी स्त्रियों को आगे ला सकें तो इससे हम बहुत बड़े परिणाम पैदा कर सकेंगे।"

दूसरा पत्र।

चि० काशी

"तुम्हारा पत्र मुझे मिला। मेरा स्वास्थ्य भला-बुरा रहा करता है। कोई चार दिन हुए, मैं बवासीर से बहुत दुःखी हुआ। कल डॉक्टर ने चीरा लगाया है इसलिए अब पता लगेगा कि दर्द से मुक्त होऊँगा या नहीं। बच्चे मजाक करते हैं। परसों कुसुमी के साथ भेज दिये थे। रात को सोने के लिए बच्चों को कुसुमी के साथ नहीं जाने देते। हरिलाल का पत्र आया था जिसमें यह लिखा है कि बच्चों के सोने के स्थान में परिवर्तन न किया जाय। मैं तुम दोनों की इच्छानुसार बच्चों की व्यवस्था नहीं कर

---

१ पोरबन्दर के श्री ... के हरिकृष्णदास की पत्नी संतोक उर्फ कुसुम बहन की बड़ी बहन।

२ कुसुमी बहन या मधु बहन भी इनकी बड़ी बहन।

सकता। इससे तुम दोनों को बड़ा दुःख होता है। फिर भी मुझे निर्दयता करके भी बच्चों को तुम्हारे पास भेजने से इनकार लिखना पड़ रहा है। बच्चे समय-समय पर हेर-फेर न करें, यह अत्यन्त आवश्यक है। कल से बच्चों को पढ़ाने के लिए मास्टर का भी बन्दोबस्त किया है। मनु का जो इलाज हो रहा है, उससे मनु दिन-दिन बढ़ती जा रही है। रामी[2] का भी यही हाल है। ऐसी स्थिति में अगर तुम केवल बच्चों का स्वार्थ ही देखोगी, तो बच्चों को यहाँ भेजने का आग्रह नहीं करोगी। परन्तु तुम हर महीने या दो मास में या अधिक-से-अधिक तीन महीने में साबरमती आओ, आश्रम में रह जाओ और बच्चों के साथ हँसी-दिल्लगी करो, यह मैं चाहता हूँ। तुम्हारे साथ रहने में मुझे सहवास मिलेगा, सो अलग। गुलाबमामी और चंचल दोनों के चले जाने से तुम्हें भारी आघात पहुँचा है। अगर तुम्हारा दुःख किसी भी तरह थोड़ा जा सकता हो, तो मैं ओढ़ लूँ और तुम्हें जीवनभर के लिए आये हुए दुःख से मुक्ति दिला दूँ। तुम मेरे लिए पुत्रीवत् ही हो, तुम मुझे जैसे चाहो पत्र लिख सकती हो। समय-समय पर लिखती ही रहो। बा तुम्हें आशीर्वाद कहलाती है।"

२ तारीख को मूलजी जेठा मार्केटवालों ने गांधीजी के नाम पर एक विचित्र प्रकार का सत्याग्रह किया। मार्केट के दरवाजे रोककर पाँच-पाँच सात-सात व्यक्ति लेट गये और ऐसे तख्ते लगा दिये कि "गरीबों के पेट पर पैर रखकर भले ही जाइये।' उनके नेता जैराजाणी ने एक दिन

---

१ और २ भाई कान्ति, बहन रामी, भाई रसिक और बहन मनु हरिलालभाई के बच्चे हैं।

३ हरिलाल भाई की सास। हरिलालभाई के ससुर श्री हरिदास वखतचन्द वोरा राजकोट में प्रसिद्ध वकील थे और गांधीजी के परम मित्र थे। उन्हें प्राकृतिक चिकित्सा का बड़ा शौक था। वे इस विषय की पुस्तकें रखते और पढ़ते थे। गांधीजी ने कूने-कुहन की पुस्तकें प्राकृतिक चिकित्सा पर की इन्हींसे लेकर पढ़ी थीं।

४ हरिलालभाई की पत्नी।

के उपवास का व्रत लिया। इसका समाचार मिलने पर गांधीजी ने वेरा स्वामी को बुलवाया और उन्हें इस प्रकार उलाहना दिया : 'आपने यह जो कुछ किया है, उसमें कहीं भी सत्याग्रह नहीं है। सत्याग्रह वह चीज नहीं, जिसके द्वारा आप सामनेवाले से जबरन कुछ निकलवा सकें, सत्याग्रह तो प्रेम से निकलवा लेने में है। आपने जो लंघन करना सोचा है, वह करके शुद्धतम न्याय प्राप्त नहीं किया जा सकता। लंघन से आप यह कैसे कह सकते हैं कि आपकी माँग न्यायपूर्ण है? मेरा अनुकरण मेरी सम्मति के बिना कैसे हो सकता है? आपने जो कुछ किया, उसमें सत्याग्रह नहीं परन्तु असत्याग्रह की हद हो जाती है। आप नौकरी पर न जायँ और उन्हें भी न जाने, उन आदमियों को रख लेने दें, यह सत्याग्रह है और यही उचित है।' फिर पूछा कि लंघन कितने दिन का है? जवाब में कहा गया कि एक दिन का। इस पर बोले : 'तब तो हर्ज नहीं। परन्तु आप अपना कष्ट सहते रहिये और इसे जल्दी-से-जल्दी समेट लीजिये। मैंने तो इस हजार की प्रतिज्ञा टूटने* से रोकने के लिए उपवास किया था।

२४ । १९

इसके बाद बहुत-सी चर्चाएँ निकलीं। उनमें 'क्रॉनिकल' की रिपोर्ट ने तो हद ही कर दी, यह कहा जा सकता है। इसलिए २४ तारीख को 'क्रॉनिकल' को उससे इनकार करनेवाला पत्र मुझे लिखना पड़ा। बापू ने कहा : 'इस पत्र में मैंने औचित्य के बारे में जो कहा था, सो नहीं आया।' मैंने कहा : 'आपने तो उनके लंघन के लिए कहा था, हड़ताल रोकने के लिए नहीं।' इस पर उन्होंने तुरन्त कहा : 'हाँ, तब तो यह बात स्पष्ट करनेवाला पत्र लिखो।'

---

* अहमदाबाद में मिल-मजदूरों की हड़ताल के समय।

२५। १। १९

मिस ऍस्थर फेरिंग का पत्र :

“हम व्रत क्या इसलिए लेते हैं कि उससे हमारे चरित्र को सहारा और बल मिले? क्या ईश्वर सचमुच यह चाहता होगा कि हम किसी भी प्रकार के व्रत लें? क्या व्रत आत्मघातक सिद्ध नहीं हो सकते? बापू, मैं अतिशय नम्र भाव से ये प्रश्न आपसे पूछ रही हूँ, क्योंकि इन प्रश्नों पर विशेष प्रकाश प्राप्त करना चाहती हूँ। मैं मानती हूँ, बापू, कि आप इस समय दुःख उठा रहे हैं, इसलिए ईश्वर को भी दुःख हो रहा होगा। मैं जानती हूँ, आप यह दुःख आनन्द से सह रहे हैं। किन्तु ईश्वर यदि परम पिता हो, ईश्वर यदि पूर्ण प्रेमस्वरूप हो, तो जब उसकी सन्तान अपने ऊपर ऐसा बोझ लादे, जिसे उठाने के लिए उनसे कहा नहीं गया, तब क्या उसे दुःख नहीं होगा? आप यदि मुझे व्रतों का विशेष गहरा अर्थ समझायेंगे, तो वह मेरे अपने जीवन में सहायक होगा।”

इन्हें नीचे लिखा उत्तर दिया :

“प्रिय ऍस्थर,

“तुम्हारे बहुत उचित प्रश्नों का यथाशक्ति विस्तार से उत्तर देने की कोशिश करूँगा। किसी बात के करने या न करने का पक्का निश्चय करने का ही नाम 'व्रत' है। आत्मसंयम के सप्ताह में मुक्ति-फौज के सदस्य मुरब्बा या अन्य ऐसी मिठाइयाँ विशेष समय तक न खाने का व्रत लेते हैं। लेंट* के दिनों में रोमन कैथोलिक ईसाई कुछ परहेज रखते हैं। यह भी व्रत ही है। इन सब बातों में एक से ही परिणामों की आशा रखी जाती है यानी आत्मा की शुद्धि और अभिव्यक्ति। ऐसे संकल्प करके हम देह का

* ११ मार्च को या उसके बाद जो पूनम आये, उसके बाद का रविवार 'ईस्टर डे' कहलाता है। ऐसा माना जाता है कि उस दिन ईसामसीह का पुनरुत्थान हुआ था [illegible]। ईस्टर के पहले के उपवास, तपस्या और प्रार्थना के चालीस दिन 'लेण्ट' कहलाते हैं।

दमन करते हैं। देह पार्थिव या जड़ है, आत्मा चैतन्यमय है। जड़ और चेतन के बीच आन्तरिक संघर्ष हो रहा है। जड़ की चेतन पर विजय हो जाय तो आत्म-विनाश समझना चाहिए। यह तो सभी मानते हैं कि जिस हद तक हम शरीर का लाड़-प्यार करेंगे और आत्मा की उपेक्षा करेंगे (यह वाक्य यहाँ से अधूरा रह गया दीखता है)। शरीर अथवा जड़ तत्त्व का भी उपयोग तो है ही। उसीके द्वारा आत्मा की अभिव्यक्ति हो सकती है। किन्तु यह परिणाम तभी लाया जा सकता है, जब शरीर का उपयोग आत्मोन्नति के साधन के रूप में किया जाय। मानव-कुल का बड़ा भाग शरीर का इस तरह का उपयोग नहीं करता। परिणाम यह होता है कि शरीर अथवा जड़ तत्त्व की आत्मा अथवा चेतन तत्त्व पर विजय होती दिखाई देती है। लेकिन हम जो यह जानते हैं कि यह शरीर सदा परिवर्तनशील है और नश्वर है और उसमें रहनेवाली आत्मा ही अविनाशी है उन्हें तो दृढ़ संकल्प कर अपने शरीर पर इतना काबू पा लेना चाहिए कि आत्मा की सेवा के लिए उसका पूरा उपयोग कर सकें। बाइबिल के नये करार में यह विचार काफी स्पष्ट कर दिया गया है। परन्तु हिन्दू शास्त्रों में यह जितनी परिपूर्णता और विशद रूप में समझाया गया है, उतना और कहीं समझाया हुआ मैंने नहीं देखा। रामायण और महाभारत के पन्ने-पन्ने पर तुम आत्मसंयम का यह नियम लिखा पाओगी। ये दो ग्रन्थ तुमने पढ़े हैं? न पढ़े हों, तो जितनी जल्दी हो सके, ध्यानपूर्वक और श्रद्धा की दृष्टि से पढ़ लेने चाहिए। इन दोनों ग्रन्थों में परियों की कहानियों जैसी बहुत-सी चीजें आती हैं। परन्तु ये ग्रन्थ जनता के लिए लिखे हुए हैं, इसलिए ग्रंथकर्ताओं ने जान-बूझकर इस प्रकार लिखना पसन्द किया है कि आम जनता के लिए वे रोचक बन जायँ। करोड़ों लोगों को सत्य समझाने का उन्होंने सरल-से-सरल ढंग अख्तियार किया है और हजारों वर्ष का अनुभव साबित करता है कि उन्हें अद्भुत सफलता मिली है। मेरी बात अच्छी तरह समझ में न आए अथवा शंका हो तो मुझे फिर से लिखना। मैं तुम्हें समझाने की कोशिश करूँगा।

"मैंने एक चीरा लगवाया है। आज छठा दिन है। आपरेशन सफल हुआ या नहीं, यह तो मैं नहीं जानता। परन्तु डॉक्टर मशहूर है और खूब ध्यान देनेवाला है, इसमें कोई शंका ही नहीं है। आपरेशन करा लेने पर भी मेरी बीमारी बनी रहे, तो उसमें डॉक्टर का कोई दोष नहीं होगा। प्यार।

बापू'

२६ १ १९

कीमती पोशाक को विलायत जाने के लिए इम्पीरियल सिटिज़नशिप असोसिएशन से रुपया मिलना चाहिए, यह सूचना देने के लिए मैं सबेरे जहाँगीर पीटिट से मिलने उनके बँगले गया। वे न मिले। बाइजी पीटिट मिलीं। खूब बातें कीं। मैंने आकर इस महिला की मुझ पर जो छाप पड़ी उसकी बात बापू से कही। वे तुरन्त ही बोले : अरे यह तो देवी है। पारसी लोगों की सर्वोत्तम विशेषताएँ उस स्त्री में सब हैं, बुरी खासियतें एक भी नहीं। यह स्त्री धनवान् की बेटी है, यह खयाल उसके मन में है ही नहीं। इस मामले में और हरएक मामले में भी वह अपना स्वतंत्र मत प्रकट किये बिना नहीं रहेगी और फिर कह देगी कि आपको जँचे सो कीजिये। इसी वृत्ति से वह जहाँगीर जैसे आदमी के साथ टिक सकी है।

रात को श्रीमैडमी की बात करते हुए कहने लगे कि इसके जैसा ढोंग और नहीं, परन्तु उसके विरुद्ध लड़ने के लिए जो सामग्री चाहिए, वह इतनी है कि हमारे समाज में भी नहीं आ सकती।

२७-१ '१९

आज नरहरि की पुस्तक० का उपोद्घात लिखवाया। बाद में बोले :

०'चरित्रनिर्माण मार्ग' विषयक रस्किन आदि के ग्रन्थों पर गोल्डमैन के व्याख्यानों का अनुवाद।

'इस किस्से के अनुभव मुझे तो ऐसे और इतने ज्यादा हैं कि और किसीको नहीं हो सकते। इन्हें लिखने बैठूँ तो एक हजार पन्ने लिख सकता हूँ। एक बड़ी कथा जैसी* पुस्तक बन जाय। परन्तु यह कब लिखी जा सकती है? किताबें जायें और साथ में कुछ सामग्री ले जायें, तो वहाँ के अवकाश में यह काम हो सकता है।"

दूध के सम्बन्धी पत्र के उत्तर में नरहरि का पत्र : 'इस रिआयत में उदारता पूरी है, परन्तु इसमें केवल व्रत का शब्दार्थ ही पालन हुआ कहा जायगा। दूध को अगर मांस जैसा ही मान लें, तो गाय के दूध जैसा ही बकरी का दूध भी माना जायगा।

उनको उत्तर :

"आपका पत्र मैंने सुना। आपने मुझे प्रेम से लिखा है, यह मुझे बहुत अच्छा लगा। अभी और अधिक लिखें, इस आशा से मैं यह जवाब दे रहा हूँ। मेरे व्रत का विशाल अर्थ तो वही हो सकता है, जो आपने किया है। इसलिए जिस दिन मैंने बकरी का दूध लेने का निश्चय किया, उसी दिन मैंने आलोचना की कि अब इसमें से रस तो निकल जायगा। अब मैं दुग्ध-रहित भोजन के प्रयोग नहीं कर सकता। अब मैं यह घमण्ड नहीं रख सकता कि मैं आमिषाहार नहीं करता। इतने पर भी आपका पत्र सुनने के बावजूद मेरा खयाल है कि व्रत नहीं टूटा। मेरा खयाल है कि मेरे व्रत का संकुचित अर्थ तो यही है, जो मैंने किया है। व्रत लेते समय बकरी के दूध का प्रश्न ही मेरे सामने नहीं था। और मैं यहाँ तक कहना चाहता हूँ कि मेरे दोनों व्रतों के भीतर जो खिड़कियाँ रह गयीं वह मेरे व्रतों की अत्यंत पवित्रता सूचित करता है। पाँच वस्तुओं

---

* बाद में गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास लिखा है।

के व्रत में हिन्दुस्तान से बाहर के मुल्क मुझे छूट देनेवाले रह गये* और दूध के व्रत में बकरी मेरे लिए सहज ही माता के समान हो गयी। संकुचित अर्थ करके भी व्रत-पालन के हमारे शास्त्रों में अनेक उदाहरण हैं। उन सबका रहस्य अब मैं ज्यादा समझ सकता हूँ। यह कहने के बजाय कि मेरे जैसे आदमी ने व्रत का भंग किया, यह कहना ज्यादा अच्छा है कि व्रत के शब्दार्थ का तो अंत तक पालन किया। मैं मानता हूँ कि बकरी के दूध से मेरा गुजारा हो जायगा। परन्तु यह कहनेवाले तो निकल ही आते हैं और अब भी निकल आयेंगे कि गाय का दूध लिये बिना पूरी ताकत नहीं आ सकती। उस समय मैं गाय का दूध तो हरगिज नहीं लूँगा। साथ ही यह भी नहीं होगा कि सभी जगह बकरी का दूध मिल ही जायगा। इसलिए व्रत का शब्दार्थ पालन करने में भी कुछ न कुछ असुविधा तो रहेगी ही। लेकिन इस समय मैं अपने सामने सुविधा-असुविधा का प्रश्न नहीं रखता। हमें यही सोचना है कि मैं अपने व्रत का जो संकुचित अर्थ करता हूँ वह सम्भव है या नहीं। अगर यह अर्थ संभव हो, तो यह अर्थ करके मित्रों का दुःख मिटाना और शरीर को बचा लेना मेरा आपद्धर्म है। जब तक अपना व्रत मूलभूत मलिन न हो या पापयुक्त न लगे, तब तक मुझे तो ऐसा ही महसूस होता है कि किसीके भी खातिर उस व्रत को छोड़ने का अधिकार प्राप्त नहीं होता। अगर एक बार भी व्रत तोड़ने की छूट दे दी जाय, तो व्रत पाले ही नहीं जा सकते और उनकी

---

* दिनभर में पाँच चीजों से ज्यादा कुछ भी न खाने का और रात के भोजन त्याग का व्रत गांधीजी ने १९१५ में कुम्भ के मेले के समय हरिद्वार में लिया था और अन्त तक निभाया था। इसमें भी यह छूट थी कि भारत से बाहर अधिक वस्तुएँ ली जा सकती हैं। उस बार की बीमारी में शरीर सँभल ही नहीं रहा था। इसमें मित्र और डाक्टर पाँच वस्तुओं के इस व्रत को भी बाधक मानते थे। उनका ख्याल था कि कुछ महीने विदेश हो आवें। गांधीजी भी जाने की ओर झुक गये थे। परन्तु बकरी का दूध लेने लग जाने से तात्कालिक कुछ सँभलने जैसा और ऐसा दिखने के विरुद्ध आन्दोलन भी पहुँचा, इसलिए नहीं गये।

महिमा बाकी रहे। परन्तु व्रत के जो भी अर्थ हो सकते हों, वे अर्थ करके उनसे लाभ उठाने में मुझे कोई हानि दिखाई नहीं देती। एकादशी के दिन मामूली नमक न लेकर सेंधा नमक लेकर मन को समझाया जाता है कि एकादशी का पालन किया है। यह पोलापाली नहीं है। साधारण नमक तो लिया ही नहीं जा सकता, परन्तु नमक का स्वाद भी नहीं छोड़ा जा सकता इसलिए उसके एवज में दूसरा नमक लेकर भी एकादशी का पालन करनेवाला कुछ न कुछ संयम तो रखता ही है। वह किसी दिन सेंधा नमक भी छोड़ सकता है।

मैं अपना उत्तर लम्बा नहीं कर रहा हूँ। जो कुछ लिखा है उसी पर विचार कर लें और फुरसत मिलने पर लिखने लायक बात हो तो लिखें।

'हमारे पत्र-व्यवहार से हम सभी कुछ न कुछ सीखेंगे और मुझसे भूल हो रही होगी, तो मुझे उसका दर्शन हो जायगा।

रेवाशंकर सोढ़ा० का पत्र : मुझे पढ़ना है, पढ़ने की विशेष सुविधा चाहिए।

उन्हें उत्तर :

'आपका पत्र मिला। आपकी विद्या सम्पादन करने की अभिलाषा मुझे पसन्द है। मैं उसका आदर भी करना चाहता हूँ। परन्तु इस समय मुझे उसे रोकना पड़ेगा। कभी-कभी विद्या का राग व्यामोह होता है। मुझे खुद को संस्कृत की बड़ी कमी मालूम होती है। मराठी, बंगला और तमिल सीखने का अपना शौक मैं बयान नहीं कर सकता। फिर भी मेरे हाथ में आये हुए एक के बाद एक कामों के कारण मुझे अपना शौक संवरण करना पड़ा। चि० देवदास को बहुत ज्ञान लेने की इच्छा रहती है। ज्ञान प्राप्त करने की उसकी शक्ति बहुत अच्छी है। मेरा विश्वास है कि वह ऐसा है, जो उसका सदुपयोग

०दक्षिण अफ्रीका के एक साथी जो आश्रम में रहने आये हुए थे।

करेगा। इतने पर भी मद्रासी भाइयों को हिन्दी सिखाने का काम उसके लिए ज्यादा जरूरी है। इसलिए उसकी पढ़ाई रोक दी गयी है। स्वयं चि॰ मगनलाल का उदाहरण लीजिये। उसकी पढ़ाई की त्रुटि का तो कोई पार ही नहीं। यह तो हम सब स्वीकार करेंगे कि वह अपनी पढ़ाई बढ़ा सके तो उसका अच्छा उपयोग कर सकता है। उसकी पढ़ाई पूरी नहीं हो सकी, यह खामी वह मुझे बार-बार दिखाया करता है। फिर भी जब से वह मेरे साथ हुआ है, तब से उसे दूसरे कामों में लगाना पड़ा है, इसीलिए उससे अधिक पढ़ाई नहीं कराया जा सका। ऐसे उदाहरण तो मैं और बहुत दे सकता हूँ। परन्तु मैंने जो दिये हैं, वे आपके सन्तोष के लिए काफी हैं। फिलहाल तो हमें आश्रम में ऐसे-ऐसे काम लेने हैं कि उनमें जितने आदमियों को लगाया जा सके, उतनों को लगा देने की जरूरत है। इसलिए मेरा खयाल है अभी तो आपको जो काम सौंपा जाय, उसीको एकनिष्ठा से करते रहिये और उसमें पूरा संतोष दीजिये। आपकी पढ़ाई मेरे ध्यान में रहनी ही और जब मुझे अवसर आ गया दीखेगा, उस समय मैं मौका नहीं चूकूँगा। मेरे इस उत्तर से आपका समाधान न हो तो आपको जो कुछ लिखना हो लिखिये। मैं आपको संतोष देकर आपसे काम लेना चाहता हूँ।

"अपने स्वास्थ्य को खूब सँभालकर रखें। मुझे लगता है कि मेरी तबीयत अच्छी होती जा रही है। यहाँ जो उपचार डॉक्टर कर रहे हैं, उनके पूरा होने पर मेरा विचार और कहीं जाने से पहले आश्रम होकर जाने का है। मगर इसमें महीना-बीस दिन लग जायेंगे। इसलिए आपको जो लिखना हो वह लिखकर भेजें। यह समझकर कि मिलेंगे तब बात कर लेंगे, आलस्य न करें। आपको पूरी आजादी के साथ लिखना चाहिए।"

२८। १। १९

[illegible] के बारे में लिखा कि "हिन्दू

---

* [illegible]

समाज इतना छिन्नभिन्न हुआ है, यह देखते हुए भी क्या आप यह मानते हैं कि आपका मिश्र समाज के लिए जरूरी है? इस सवाल की चर्चा के लिए मिल जायें, तो अच्छा।"

२१ १ १९

श्रीमती बेसेंट खबर लेने आयीं। सच पूछा जाय, तो प्रतिनिधि-मंडल* के लिए गांधीजी को टटोलने आयी थीं। बापू ने कहा कि "मैं तो स्वतंत्र रहकर जाऊँ।" तुरन्त ही उत्तर पाईं: "तो स्वतंत्र रूप में हम भी आपको भेज सकते हैं। हमारे प्रतिनिधि-मण्डल में क्यों न जायें? १४ तारीख से पहले सोच लीजिये। सारांश यही था। दोपहर को पंडितजी आये। प्रतिनिधि-मण्डल की ही बात। बापू ने कहा: "कांग्रेस प्रतिनिधि-मण्डल न जाय तो क्या अच्छा रहे! हम जिन आदमियों को भेजेंगे, वे हमें सुशोभित नहीं करेंगे। पंडितजी कहते हैं: "हम तो उसमें नहीं होंगे, तो फिर दूसरे अनुसरण करेंगे!" और बहुत-सी बातें हुईं। रात को श्रीमती बेसेंट के यहाँ गये। श्रीमती बेसेंट ने मुझसे कहा: "हमारे जैसे सख्त श्रम में पिसनेवाले आदमियों को तो दो घण्टे की ऐसी हवा भी बहुत भारी हो जाती है और ऐसी जगह में आपने गांधीजी को कैसे रखा है? किसी अच्छे स्थान पर होते, तो पचीस दिन पहले अच्छे हो जाते।" लौटते हुए रास्ते में मैंने बापू से यह बात कही। बापू ने उत्तर दिया: 'अच्छे-से-अच्छे मनुष्य भी संयम को नहीं समझते शरीर की सुविधा को जरा भी दुर्लभ नहीं कर सकते। यह हमारी दुर्दशा है।"

परदेश-गिरा के संबंध में कस्तूरी बातें करने आये। उपवासियों के बीच विवाह को हिन्दू कानून इजाजत देता है या नहीं यह प्रश्न निकला। डॉ. तेजबहादुर सप्रू ने कहा कि इजाजत नहीं देता। बापू ने बताया कि

---

* मॉण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के सम्बन्ध में पार्लमेण्टरी कमेटी के सामने भारत का मामला पेश करने के लिए कांग्रेस का प्रतिनिधि-मण्डल।

संयम ही हिन्दू-धर्म की जड़ में है और संयम की दलील पर ही मैं इस बिल के विरुद्ध हूँ।*

३०-१-३३

सैयद हुसैन का २९ तारीख का तार आया :

"ता० ५ फरवरी को 'इंडिपेंडेंट' प्रकाशित हो रहा है। पहले अंक में प्रकाशित करने के लिए कृपा करके अपने हस्ताक्षरों में सन्देश भेजिये।"

इसका उत्तर :

"आपके नये साहस की सफलता चाहते हुए यह कहने को जी चाहता है कि आपने अपने पत्र का जो नाम चुना है, मुझे बड़ी आशा है कि उसके अन्दर उस नाम के योग्य लेख होंगे। मैं यह उम्मीद भी रखता हूँ कि आपके लेखों में पूरी स्वतंत्रता के साथ-साथ उतनी ही मात्रा में आत्मसंयम और सत्य का कड़ा पालन होगा। अक्सर हमारे पत्रों में—दूसरों में भी ऐसा होता है—तथ्यों के स्थान पर कल्पना और संगीन दलीलों के बजाय जोश पाया जाता है। मैंने जिन त्रुटियों की तरफ आपका ध्यान खींचा है उनसे बचते हुए अपने पत्र को देश में एक शक्ति और लोक-शिक्षा का एक साधन बनाइये।"

बाद में पता चला कि इसे छापने की संचालक की हिम्मत नहीं हुई।

---

* इस समय बापू हरिजनों के मन्दिर में जाने ... असंयम मानते थे इनके इस विषय में बहुत कुछ लिखा गया है। अन्त में वे यह मानने लगे कि मौजूदा मन्दिर हिन्दू-समाज के लिए जरूरत न रहकर हैं और इनका नाश होना चाहिए। एक ही धर्मशास्त्री के साथ हमेशा के विवादों में भाग लेना उन्होंने बन्द कर दिया था और अनेक वर्षों से वे ऐसे उत्सवों में भी शरीक नहीं होते थे जिनमें साथियों में से एक भी हरिजन न हो।

अपना नम्र भाग लेने की तैयारी में जरूर कर रहा हूँ। मैं यह देख रहा हूँ कि खिलाफ का क्या होता है। ऐसा कोई डर नहीं है कि यह मामला तुरन्त ही पास हो जायगा यथाशक्ति जबर्दस्त आन्दोलन खड़ा करने और फैलाने लायक समय मिल जायगा। खिलाफ का जो कुछ होगा, सो होगा मैं चाहता हूँ कि जब तक उन्हें पूरी मुक्ति न मिल जाय, तब तक भाई-माई इस आन्दोलन में जरा भी शरीक न हों। मैं आशा रखता हूँ कि मुझसे सलाह किये बिना वे एक भी कदम नहीं उठायेंगे।'

२२ २१९

"चि देवदास,

तुम्हारे पत्र की आज आशा रखी थी, परन्तु नहीं आया। तुमसे जुदा होते मुझे कम दुःख नहीं हुआ। परन्तु जुदा होने में मैंने तुम्हारा स्वार्थ और तुम्हारा कर्तव्य देखा। इसलिए मोह से उत्पन्न होनेवाले दुःख को छोड़ा और तुमसे जाने का ही आग्रह किया। मद्रास में तुम्हारा काम पूरा हो जाने पर तुम्हारा पढ़ाई करने का शौक मैं पूरा करूँगा। परन्तु इतना तुम अवश्य मान लो कि जो अनुभव तुम्हें मिल रहा है, वह थोड़ों को ही मिला होगा। हमारा सारा जीवन विद्यार्थी का होना चाहिए। अगर तुम अपना जीवन इस सूत्र पर बनाओगे, तो तुम पढ़ाई के लिए बहुत कच्चे नहीं माने जाओगे। पत्र नियमित रूप में लिखना और संध्या (प्रार्थना) नियमपूर्वक करना।"

१६२ १९

धर्मी मास्टों के सम्बन्ध में भी बापू का लम्बा पत्र अभी तक छूट कर नहीं हुआ इस मास में। उन्हें उत्तर :

"आपका मूल्यवान् पत्र मिला। मैंने आपको तार दिया था कि मैंने गृहमंत्री को पत्र निराकर सरकार के निर्णय के बारे में पूछताछ है। रघे साहब को मैंने कुछ दिन हुए यह समाचार दिया था और यह मान

लिखा था कि आपको और आपके मित्रों को उनसे लाभ मिल गयी होगी। उस समय भी देसाई मेरे पास नहीं थे, इसलिए मैं यथासंभव थोड़े पत्र लिखता था। मैंने अपने पत्र में इस साहब को यह भी बता दिया था कि प्रतिकूल उत्तर आयेगा तो लड़ाई शुरू हो जायगी। उस समय मेरा खयाल था कि यह हलचल शुरू करने लायक मेरी तंदुरुस्ती सुधर जायगी। दुर्भाग्यवश मेरी तंदुरुस्ती इधर उधर झूलनेवाले लटकन जैसी है। अभी फिर पतझड़ आया है और डॉक्टर कहते हैं कि तीन महीने तक मुझे ऐसा कोई साहस नहीं करना चाहिए, जिससे किसी प्रकार का भार पड़े। मैं तो जल्दी से अच्छा हो जाने का प्रयत्न कर रहा हूँ और अभी तक आशा रख रहा हूँ कि जब तक रिपोर्ट से जवाब आयेगा, तब तक मैं काम करने लायक हो जाऊँगा।

"आपके पत्र से मुझे रौलटबिलों सम्बन्धी बहुत ध्यान पता चलता है। मैं इन बिलों को पूरी तरह से समझता हूँ। अगर ये पास हो गये, तो सुधार मेरे लिए तो व्यर्थ हो जायेंगे। देश में होनेवाली घटनाओं को मैं बड़े ध्यान से देख रहा हूँ। मेरा पक्का खयाल है कि अली-भाइयों के लिए कोई कदम उठाने का समय अभी नहीं आया है। उन पर जो कौटुम्बिक विपत्तियाँ आयी हैं उनसे हृदय फटा जा रहा है। इस समय तो भारत में शायद ही कोई परिवार ऐसे होंगे, जिन्होंने अपने प्रियजन न खोये हों। चारों तरफ से दयाहीन नियमित एक ही प्रकार के समाचार मिलते रहते हैं, तब भावनाएँ भी कुछ-न-कुछ भोंथी हो जाती हैं।

१७-२-१९

मुख्य आश्रमवासियों की सभा। बापू का कड़ा सन्देश।

आश्रम से किसी भी प्रकार का सन्तोष नहीं। कारण? मगनलाल के आचार-विचार और बरतनों के प्रति असन्तोष आचरण में एक प्रकार का पक्षपात। आश्रम के बारे में दूसरों को मानो पाठशाला निवासियों को अश्रद्धा। ऐसी दशा में मेरी क्या स्थिति?

मुझे आपके सामने अटल सिद्धान्त रखने हैं। बहनों को नहीं बुलाया। परन्तु उन्हें भी उचाट पैदा हो रही है। उनका जाने का विचार हो गया है। मैंने उन्हें कह दिया है कि आपने यहाँ जो कुछ प्राप्त किया है, वह और कहीं नहीं मिल सकता। आप आश्रम को हजम कर सकें, तो रह सकती हैं। इसलिए विचार करके रहिये या जाइये। असन्तोष होने पर भी चिपटी हुई क्यों हैं? सब कमजोर तो नहीं हैं। मेरे प्रति प्रेम और मोह के कारण।

सब पहला सूत्र यह निकलता है कि किसी भी मनुष्य के कार्य से बाहर उसके लिए मोह रखना अन्धा मोह है। दक्षिण अफ्रीका में मुझे ऐसे अच्छे भाइयाले मनुष्य मिले हैं। उनसे मैंने कहा था कि फिनिक्स, जो मेरी कृति है, निकम्मा मालूम हो, तो मैं भी निकम्मा हूँ। मेरी कृति के प्रति अश्रद्धा हो, तो मेरे प्रति अश्रद्धा होनी ही चाहिए। मुझे आदमी की पहचान है। परन्तु अभी मैं यह सिद्ध नहीं कर सकता। फिर भी आपको आश्रम के प्रति अश्रद्धा हो, असन्तोष हो, तो छोड़कर चले जाइये। जो केवल देने के लिए ही आये हों, वे रह सकते हैं। अथवा गांधी की बेवकूफी और भूलें खाने आये हों वे रह सकते हैं। परन्तु ऐसा मुझे कोई दिखाई नहीं देता। लेन-देन के आधार पर सब आये हैं। आश्रम का मूल्यांकन इस सब पर से होगा। मनुष्य की कीमत हम उसकी कृति से बाहर नहीं लगा सकते।

दक्षिण अफ्रीका में मेरी सबसे बड़ी कृति फिनिक्स है। यह न होती तो दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह न होता। यह आश्रम न हो, तो हिन्दुस्तान में सत्याग्रह नहीं हो सकता। इसमें मेरी भूल हो सकती है। परन्तु भूल हो तो मैं त्याज्य हूँ। मैं तो देश से कहनेवाला हूँ कि मेरी गणना अवतार या लेखा से न कीजिये परन्तु आश्रम से ही कीजिये। आपको यहाँ कुव्यवस्था मोह वगैरह लगे तो मेरे सभी कार्यों में यही चीज पायेंगे। आश्रम में मैं पहला आश्रमी हूँ और जब तक मैं आश्रम के आदर्शों का पालन कर रहा हूँ, तब तक आश्रम चल रहा है। मैं किसीको नहीं रख

करूँगा तो अपनी आत्मा का शुद्ध निरीक्षण करूँगा शुद्धबलिदान देने का प्रयत्न करूँगा। दूसरी दृष्टि पर से मेरा महत्त्व न देखिये। मुझे आश्रम से ही नापिये। आश्रम में मेरी एक कृति मगनलाल है। अपने अनुभव से मैंने मगनलाल में पचास लाख अवगुण पाये हैं, तो सौ लाख गुण पाये हैं। पोलाक मगनलाल के सामने बालक है। मगनलाल ने जो पाप मेले हैं वे पोलाक ने नहीं मेले। मगनलाल ने अपने कार्य का बलिदान किया है, मेरे लिए नहीं परन्तु आदर्श के लिए। मगनलाल मेरी गुलामी करता हो सो बात नहीं। वह आदर्श के अधीन है। एक बार मुझे सलाम करके मगनलाल जाने को तैयार हो गया था।

इस प्रकार मगनलाल को निकालकर मैं आश्रम नहीं चला सकता। ऐसा करूँ, तो मैं अकेला ही आश्रम में रहूँ। जो काम करते हैं, उनमें मगनलाल की पूरी तरह आवश्यकता है। उससे बढ़कर मैंने कोई नहीं देखा। उसमें क्रोध अपूर्णता है, फिर भी वह कुल मिलाकर बढ़िया आदमी है। उसकी ईमानदारी के बारे में मुझे शंका नहीं। आपको यह अमाषित मान लेना है कि जिस हद तक मगनलाल खराब है, उस हद तक मैं खराब हूँ।

मेरा अपने भाई या सौतेले बाप से झगड़ा हो जाय, तो मैं दूसरों से कहने नहीं जाऊँगा। इसी तरह जिस संस्था में हम रहते हों उस संस्था के भीतर के किसी आदमी के खिलाफ दूसरी जगह शिकायत न ले जायें। जिस मनुष्य को दूसरे के प्रति तिरस्कार हो जाय अथवा शंका पैदा हो जाय, तो उसी समय उसे छोड़ देना चाहिए। आश्रम में सच्चा आनन्द लौ मैं बाहर डोलूँ, तभी होना चाहिए। मैं अगर दुष्ट हूँ तो मेरा कहना बाद रखकर सद्व्यवहार रखना चाहिए। इस समय आजादी के साथ आप चाहें जैसा बरताव करें परन्तु मेरे जाने के बाद तो ऐसा हो ही नहीं सकता।

मेरी गैरमौजूदगी में एकता न हो तो मुझमें खामी है और आपको मुझे छोड़ देना चाहिए।

आश्रम से असन्तोष की दशा मिटाऊँ, तो मगनलाल की शान्ति के लिए। मगनलाल की शान्ति के लिए नहीं, परन्तु देश के लिए, क्योंकि मगनलाल का मैंने देश के लिए बलिदान दिया है।

मुझसे या तो आश्रम का त्याग कराइये या मगनलाल का त्याग। जब तक मुझे ऐसा नहीं लगता कि मगनलाल राग-द्वेष करता है तब तक उसे नहीं निकालूँगा। जगत् के पास इन्साफ के लिए इन्साफ के कामों के सिवा दूसरा प्रमाण नहीं। जैसी उसकी कृति वैसा ही मनुष्य होता है। यही आक्षेप मेरे गाढ़ मित्र मि. किचन ने* किया है। परन्तु मगनलाल ने जो सुन्दर, सुव्यवस्थित काम किया है, वैसा किसीने नहीं किया।

२३-२ १९

देवदास को पत्र लिखवाया :

"तुम्हारा पत्र आया है। बिना विचारे किसीको भरोसा नहीं दिलाना चाहिए, जिससे वचन-भंग के दोष में आ जायँ। हरिलाल के अक्षर बहुत खराब थे; उसने सुधार लिये। तीन भाइयों के अक्षर तो अच्छे हो गये। तुम्हारे अक्षर दिन-दिन बिगड़ते जा रहे हैं। स्वामीजी की तरफ से जो हिन्दी पत्र तुमने लिखा है, उसे बहुत ही मुश्किल से भाई महादेव पढ़ सके हैं। मुझसे तो पढ़ा ही नहीं गया। खराब अक्षर कोई छोटा-मोटा दोष नहीं। अच्छे अक्षर भूषण हैं। खराब अक्षरों से हम अपने मित्रों और बुजुर्गों पर बहुत बड़ा बोझ डालते हैं। और खराब अक्षर लिखकर हम प्रकृति को भी हानि पहुँचाते हैं। तुम जानते हो कि अक्षरों की गड़बड़वाले पत्र में तुरन्त नहीं पढ़ सकता। इसलिए मैं तुमसे माँग करता हूँ कि अपने अक्षर सुधारो।

* बापू के दक्षिण अफ्रीका के साथी। बापू उनके बारे में कहते हैं: "हमारे किचन एक शुद्ध हृदय के, जिनकी या कपट जाननेवाले अंग्रेज थे। उन्होंने हमारे युद्ध में हमारे साथ काम किया था।" ये कुछ समय तक 'इण्डियन ओपिनियन' के सम्पादक थे।

करूँगा तो अपनी आत्मा का शुद्ध निरीक्षण करूँगा, शुद्ध बलिदान देने का प्रयत्न करूँगा। दूसरी कृति पर से मेरा महत्त्व न देखिये। मुझे आश्रम से ही नापिये। आश्रम में मेरी एक कृति म गनलाल है। अपने अनुभव से मैंने मगनलाल में पचास लाख अवगुण पाये हैं, तो सौ लाख गुण पाये हैं। पोशाक मगनलाल के सामने बालक है। मगनलाल में जो भाव भेजे हैं वे पोशाक ने नहीं भेजे। मगनलाल ने अपने कार्य का बलिदान किया है, मेरे लिए नहीं परन्तु आदर्श के लिए। मगनलाल मेरी गुलामी करता हो, सो बात नहीं। वह आदर्श के अधीन है। एक बार मुझे सलाम करके मगनलाल जाने को तैयार हो गया था।

इस प्रकार मगनलाल को निकालकर मैं आश्रम नहीं चला सकता। ऐसा करूँ तो मैं अकेला ही आश्रम में रहूँ। जो काम करने हैं, उनमें मगनलाल की पूरी तरह आवश्यकता है। उससे बढ़कर मैंने कोई नहीं देखा। उसमें क्रोध, अपूर्णता है, फिर भी यह कुल मिलकर बढ़िया आदमी है। उसकी ईमानदारी के बारे में मुझे शंका नहीं। आपको यह प्रमाणित मान लेना है कि जिस हद तक मगनलाल खराब है, उस हद तक मैं खराब हूँ।

मेरा अपने भाई या माँ-बाप से झगड़ा हो जाय तो मैं दूसरों से कहने नहीं जाऊँगा। इसी तरह जिस संस्था में हम रहते हों, उस संस्था के भीतर के किसी आदमी के खिलाफ दूसरी जगह शिकायत न ले जायें। जिस मनुष्य को दूसरे के प्रति तिरस्कार हो जाय अथवा शंका पैदा हो जाय तो उसी समय उसे छोड़ देना चाहिए। आश्रम में सच्चा आनन्द तो मैं बाहर होऊँ, तभी होना चाहिए। मैं अगर बुजुर्ग हूँ, तो मेरा कहना याद रखकर सद्‌व्यवहार रखना चाहिए। इस समय आजादी के साथ आप चाहे जैसा बरताव करें परन्तु मेरे जाने के बाद तो ऐसा हो ही नहीं सकता।

मेरी गैरमौजूदगी में एकता न हो तो मुझमें खामी है और आपको मुझे छोड़ देना चाहिए।

आश्रम से असन्तोष की दशा मिटाऊँ, तो मगनलाल की शान्ति के लिए। मगनलाल की शान्ति के लिए नहीं, परन्तु देश के लिए, क्योंकि मगनलाल का मैंने देश के लिए बलिदान किया है।

मुझसे या तो आश्रम का त्याग कराइये या मगनलाल का त्याग। जब तक मुझे ऐसा नहीं लगता कि मगनलाल राग-द्वेष करता है, तब तक उसे नहीं निकालूँगा। जगत् के पास इन्सान के लिए इन्सान के कार्यों के सिवा दूसरा प्रमाण नहीं। जैसी उसकी कृति वैसा ही मनुष्य होता है। यही आरोप मेरे गाढ़ मित्र मि. किचन* ने किया है। परन्तु मगनलाल ने जो सुन्दर, सुव्यवस्थित कार्य किया है, वैसा किसीने नहीं किया।

२१ २ १९

देवदास को पत्र लिखवाया :

"तुम्हारा पत्र आया है। बिना विचारे किसीको भरोसा नहीं दिलाना चाहिए जिससे वचन-भंग के दोष में आ जायें। हरिलाल के अक्षर बहुत खराब थे; उसने सुधार लिये। तीन भाइयों के अक्षर तो अच्छे हो गये। तुम्हारे अक्षर दिन-दिन बिगड़ते जा रहे हैं। स्वामीजी की तरफ से जो हिन्दी पत्र तुमने लिखा है, उसे बहुत ही मुश्किल से भाई महादेव पढ़ सके हैं। मुझसे तो पढ़ा ही नहीं गया। खराब अक्षर कोई छोटा-मोटा दोष नहीं। अच्छे अक्षर भूषण हैं। खराब अक्षरों से हम अपने मित्रों और बुजुर्गों पर बहुत बड़ा बोझ डालते हैं। और खराब अक्षर लिखकर हम प्रकृति को भी हानि पहुँचाते हैं। तुम जानते हो कि अक्षरों की गड़बड़वाले पत्र में दुरस्त नहीं पढ़ सकता। इसलिए मैं तुमसे माँग करता हूँ कि अपने अक्षर सुधारो।

* बापू के दक्षिण अफ्रीका के साथी। बापू उनके बारे में कहते हैं: "मि. किचन एक शुद्ध हृदय के, निश्छल और काम जाननेवाले अंग्रेज हैं। उन्होंने बोअर युद्ध में हमारे साथ काम किया था। वे कुछ समय तक 'इंडियन ओपिनियन' के संपादक थे।

"मेरी तबीयत अच्छी रहती है। चार बार में कुल चार सेर दूध पीता हूँ। दो बकरियाँ बाँध रखी हैं। सात दिन तक तो दूध के सिवा कुछ नहीं लिया। आज डॉ॰ भारत ने हर बार साथ-साथ खाना लेने की सिफारिश की है। अभी तक चल-फिर नहीं सकता। फिर भी भरूच साहब[1] मानते हैं कि थोड़े दिन में चलने-फिरने लगूँगा। इनका दीक्षा नाम 'दूधभाई' रखने का विचार किया है, क्योंकि ये इस समय दूध के पीछे पागल हो रहे हैं। वे यह मानते हैं कि दूध सर्वोपरि खाद्य है। इसलिए मैंने कहा कि आपको तो जन्मभर दूध ही लेना चाहिए। अभी तो ले रहे हैं। आगे देखेंगे, क्या होता है।

"मुझे आशा है कि मार्च मास के अन्त तक वहाँ पहुँचूँगा।

'सत्याग्रही योद्धाओं की सभा सोमवार को सत्याग्रहाश्रम में होनेवाली है। हरएक के पास क्या साधन हैं, कितना गोलाबारूद है, यह सब सोच कर अन्तिम निश्चय होगा। लड़ाई के समय रावण ने सभा की थी, उसका वाल्मीकि ने जो वर्णन किया है वह तुमने पढ़ा हो तो महादेवभाई को सोमवार का इतिहास नहीं देना पड़ेगा।

'मनु मेरे सिवा सबसे ज्यादा फूल रही है, इसलिए आश्रम में सबसे बड़े तरबूजे जैसी लगती है। गणपति की स्थापना करनी हो, तो कहीं से एक ईंट लाकर चिपका देने से मनु शोभा दे सकती है। उसका मजाक बढ़ता चला है। इसलिए वह सबका खिलौना बन जाती है। रसिक अपनी रसिकता कई बार तो लाठी इस्तेमाल करके बताता है। कान्ति शान्त होता जा रहा है, रामी की तबीयत साधारण रहती है। हम सबका काम काज करने में बा का वक्त चला जाता है। मैं देखता हूँ कि यह उसे अधिकार भी प्रतीत होता है। इससे स्वभाव कभी-कभी बहुत चिड़चिड़ा हो जाता है।

---

[1] डॉ॰ बेंजमर। वे प्राकृतिक चिकित्सक हैं। भरूच के रहनेवाले पारसी हैं, इसलिए आश्रम में इन्हें 'भरूच साहब' कहते थे।

और जैसे कुम्हार खीजने पर गधे के कान ऐंठता है, वैसे मेरा अनुमान है कि कुम्हारिन गधे के मालिक के साथ बर्ताव करती होगी।

"इतने विनोद के बाद उसके उत्तरस्वरूप कुछ गंभीरता दे देता हूं :

"It is my firm belief that every Indian ought to know well his mother tongue & Hindi-urdu, which is without doubt the only common medium of expression between lacs of Indians belonging to different provinces. There can be no self-expression without this necessary equipment." (मेरा दृढ़ विश्वास है कि हरएक भारतीय को मातृभाषा और हिन्दी-उर्दू अच्छी तरह सीख लेनी चाहिए। अलग-अलग प्रान्तों के लाखों हिन्दुस्तानियों के लिए व्यवहार की आम ज़बान हिन्दी-उर्दू ही है इसमें शक नहीं। इस आवश्यक तैयारी के बिना हम अपने विचार व्यक्त नहीं कर सकेंगे।)

"तुमने जो यह भेजा है, उसका अनुवाद चाहिए। ध्यानमंत्र के लिए तमिल में यह देना : 'करक्क करक्क कसडरूम।' इसके नीचे 'धीरे धीरे सरोवर भराय' का हिन्दी सामीवी देंगे और उसके नीचे अंग्रेज़ी constant dropping wears away stones (रसरी आवत जात है सिल पर होत निसान) तमिल कहावत पेप की पुस्तक के पहले पन्ने पर ही हुई है। उसका तेलुगु ढूंढकर वह भी रखना।

"तुम्हारी वर्णमाला छपवाने से पहले यहाँ आलोचना के लिए भेज दोगे, तो काका वगैरह देख लेंगे और जब छपवाओ, तब उसके प्रूफ भेज दोगे, तो कला की दृष्टि से भी ध्यानमंत्र वगैरह का संशोधन हो जा सकेगा। बहुत जल्दी की ज़रूरत समझो तो न भेजना।

"भुरेन्द्र के जो उद्‌गार यहाँ की पाठशाला के बारे में हैं, वे यहाँ के बारे में भी थे। अक्सर स्वच्छ हृदय सरल मनुष्य पर एक असर डालता

है और वह वास्तविक होता है। मिस मास्टिनो ने [1] फिनिक्स को पृथ्वी पर स्वर्ग की उपमा दी है। अगर वह फिनिक्स में कुछ समय तक रही होतीं तो मुझे विश्वास है कि कुछ-न-कुछ परिवर्तन जरूर होता। बीन को फिनिक्स प्रथम दृष्टि में सर्वोत्कृष्ट लगा। थोड़े महीने रहने के बाद वे फिनिक्स जैसी किसी भी बराबर संस्था की कल्पना नहीं कर सके।

आज के लिए तो अब पूरा हुआ।

(इतना लिखवाने के बाद अपने हाथ से लिखा)

"यह भी शायद कवायत का काम है सके :

"रसिकलाल हरिलाल मोहनदास करमचंद गांधी

बकरी — बाँधी
बकरी छूटने दे — नहीं
गांधी रोते रहें — नहीं।"

अभियुक्त रसिक

बापू के आशीर्वाद"

ऐसी विनोद-वृत्ति में हरिलाल को पत्र।

"युगोपमा सौम्य सत्याग्रहियों की पीढ़ी, [2]

"यह पत्र शुरू कर रहा था कि इतने में मुझे अपनी कचहरी सुननी पड़ी। अभियुक्त रसिक था। मुद्दई एक निर्दोष कुत्ता था। मुद्दई ने रोते हुए बताया कि किसीने उसे मारा। मैंने देखा, तो अभियुक्त रसिक मालूम हुआ। अभियुक्त ने अपना अपराध स्वीकार किया। पिछले अपराध भी स्वीकार किये। मुझे भगवान् कृष्ण और शिशुपाल याद आ गये। शिशुपाल के सौ कसूर श्रीकृष्णचन्द्र ने माफ किये थे, इस पर क्षमा करके

---

१ दक्षिण अफ्रीका की एक गोरी सहायक।

२. हरिलाल भाई तथा दक्षिण अफ्रीका में उनके साथ जेल में गये हुए अन्य युवा मित्रों को गांधीजी ने विनोद में सत्याग्रहियों की पीढ़ी कहा है।

अदालत ने मुसलिम पुलिस के पाँच कसूर माफ किये और चेतावनी दी कि आइन्दा कसूर करेगा, तो माफ नहीं होगा। परन्तु पत्थर मारने से जो नुकसान कुत्ते को होता है, उसका निजी अनुभव अभियुक्त को कराया जायगा।

"मैं लिख रहा हूँ और कान्तिलाल दबाते लिये हुए हैं। रामी बहन और कान्तिलाल जैसे पत्र लिखा जा रहा है, वैसे पढ़ते जा रहे हैं और सुधारते जा रहे हैं। अभियुक्त भी पलंग के पास खिसक आया है। मनुभाई बीच-बीच में अपना हास्य सुना रहे हैं। अब तो फिर पलंग पर आने के लिए रुदन कर रहे हैं। यह दृश्य तुम्हारे, बड़ी बहन वगैरह के बचपन की याद दिला रहा है।

"यह तो ऊपर से देख ही सकोगे कि यद्यपि बिस्तर पर पड़े रहना पड़ता है, फिर भी मेरी तबीयत अच्छी मानी जा सकती है।

'यहाँ सत्याग्रह की बातें चलती रहती हैं। ये सब बातें तुम्हें महादेव भाई लिखेंगे या मुझसे लिखा जायगा तो मैं लिखूँगा।

बापू के आशीर्वाद"

ता० १९-२-'१९

श्री च. विजयराघवाचारी* का सत्याग्रह करने के लिए बापू को निमंत्रण। बड़ा सुन्दर पत्र। नीचे देता हूँ:

"सलेम

पूज्य "प्रिय बन्धु सप्रेम वन्दे।

"हम दोनों के मित्र माननीय पटेल ने पिछली जनवरी में कहा था कि वे आपको मेरा परिचय देंगे। मैं आशा रखता हूँ कि मुझ पर यह कृपा करना वे भूल नहीं गये होंगे। ईश्वरी-कृपा से अब आपका स्वास्थ्य अच्छा हो गया है। इसलिए स्वतंत्रता की धुन में इस नाजुक घड़ी में देश स्वाभाविक तौर पर ही पथप्रदर्शक सूचनाओं के लिए

* तमिलनाड के कांग्रेसी नेता। सन् १९२० की नागपुर-कांग्रेस के अध्यक्ष।

आपकी तरफ टकटकी लगाये हुए हैं। अत्यन्त अकल्पित घटनाओं से राजनैतिक स्थिति बहुत पेचीदा हो गयी है। आपकी सारी शक्ति लगा देनेवाला प्रश्न यह है कि एक तरफ से सिडिशन कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर तैयार किये कानूनों को पास होने से रोकने के और दूसरी तरफ से राजनैतिक सुधारों के मामले में हमारे विचारों और आदर्शों को स्थायी रूप से और सफलतापूर्वक संगठित करने के दोहरे उद्देश्य के लिए हम क्या करें। अपनी अकल्पित असहायता के कारण देश में जहाँ-तहाँ 'निष्क्रिय प्रतिरोध' के विचार चल रहे हैं। विचारकों और नेताओं की यह जिम्मेदारी है कि इस पवित्र युद्ध की आवश्यकता स्वीकार करें और उसे चलाने के तरीकों और साधनों की योजना करें। हममें से बहुतों की तीव्र उत्कंठा है कि किसी निर्णय पर पहुँचने से पहले आपके साथ परामर्श कर लेना चाहिए। क्या आप थोड़े दिन के लिए जल्दी-से जल्दी दक्षिण का दौरा करने नहीं आ सकते? और अपनी सलाह से हमारी सहायता नहीं कर सकते? अवश्य ही मैं आपके पास आ सकता हूँ, परन्तु सब पहलुओं पर विचार करते हुए हमारा यह खयाल है कि मेरे जैसे एकमात्र आदमी को आप अपने विचार बता कर सबको समझाने का काम सौंपें, इसके बजाय आप इधर के कुछ महत्त्वपूर्ण केन्द्रों का खुद ही दौरा करें तो उसका परिणाम बहुत अच्छा होगा। इस प्रान्त में हैं और निराशा में भी राष्ट्रीयता के जो मजबूत किले माने जाते हैं और जिन पर गरम विचारवाले अथवा राजद्रोही होने का शक किया जाता है, उनकी अकल्पित प्रवृत्तियों ने हमारे दुःख और निराशा में बड़ी वृद्धि की है और अब भी कर रही हैं। इन दुःखद परिस्थितियों से निपटने के लिए साहसपूर्वक परिश्रम करना और ईश्वर की मदद रखना, तो मतलब उपाय करना हमारा पवित्र कर्तव्य है। इस जीवन-मरण के अवसर पर हमारी सहायता के लिए दौड़ आने की आपसे प्रार्थना है।

"मेरे रजिस्टरी पत्र पर उत्तर लिखने की कृपा करें।

आपका
विजयराघवाचारी"

उन्हें उत्तर :

"आपका पत्र बड़ा सुन्दर है। उस पर से मेरे जी में आता है कि अभी मद्रास दौड़ जाऊँ। बहुत समय से वहाँ जाने का विचार तो कर ही रहा हूँ। परन्तु मेरा बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य बाधक होता रहता है। अब भी स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। फिर भी लड़ाई जल्दी न छिड़ गयी या अली-भाइयों के लिए मुझे लखनऊ न जाना पड़ा, तो जरूर पहला अवसर मिलते ही मैं मद्रास का दौरा करूँगा। मेरा पक्का खयाल है कि यदि सिलेक्ट कमेटी में इन बिलों में आमूल परिवर्तन न किये गये, तो हमें उनका अत्यंत कड़ा विरोध करना पड़ेगा। यह बिल बहुत भयंकर है, केवल इसीलिए मैं उन्हें नहीं धिक्कारता। धिक्कारने का बड़ा कारण तो यह है कि ये बिल भारत सरकार की हड्डियों में गहरे पैठे हुए रोग की अचूक निशानी है। इस रोग से सरकार मुक्त हो, तभी हम सुधारों के भीतर कुछ-न-कुछ सच्ची स्वतंत्रता का उपभोग कर सकते हैं। मैं आपको थोड़े ही समय में फिर लिखने की आशा रखता हूँ। सत्याग्रह के प्रश्न पर विचार करने के लिए कल ही गुजरातियों की एक सभा रखी है। 'सत्याग्रह' शब्द में जो अर्थ निहित है, वह 'पैसिव रेसिस्टेंस' शब्द से बहुत कम व्यक्त होता है।

मिस श्लेसिन[1] का केस सौ पौण्ड के कर्ज के लिए पत्र आया था। यह उन्हें देने के लिए बापू ने रुस्तमजी[2] को तार दिया था। श्लेसिन

---

१ दक्षिण अफ्रीका में शुरू में बापू के दफ्तर में स्टेनोग्राफर का काम करती थीं। बाद में बापू की बड़ी विश्वस्त साथी बन गयीं। सत्याग्रह की लड़ाई में इन्होंने बड़ी मदद की थी। उनकी त्याग-वृत्ति निर्भयता प्रामाणिकता और कुशलता की तारीफ करते हुए बापू थकते नहीं। वे कुछ-कुछ सनकी-मिजाज (किसी के कार्यकर्ता के लिए कहने वाले) स्वभाव की थीं।

२. पारसी, रुस्तमजी के नाम से दक्षिण अफ्रीका में मशहूर यहाँ के बड़े व्यापारी। बापू के मुवक्किल। सत्याग्रह की लड़ाई में भी शरीक हुए थे। यहाँ के सार्वजनिक कामों में आर्थिक एवं अन्य अपनी सहायता देते थे।

आपकी तरफ टकटकी लगाये हुए हैं। अत्यन्त अकल्पित घटनाओं से राजनैतिक स्थिति बहुत पेचीदा हो गयी है। आपकी सारी शक्ति लगा लेनेवाला प्रश्न यह है कि एक तरफ से सिडिशन कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर तैयार किये कानूनों को पास होने से रोकने के और दूसरी तरफ से राजनैतिक सुधारों के मामले में हमारे विचारों और आदर्शों को स्थायी रूप से और सफलतापूर्वक संगठित करने के दोहरे उद्देश्य के लिए हम क्या करें? अपनी अकल्पित असहायता के कारण देश में जहाँ-तहाँ 'निष्क्रिय प्रतिरोध' के विचार चल रहे हैं। विचारकों और नेताओं की यह जिम्मेदारी है कि इस पवित्र युद्ध की आवश्यकता स्वीकार करें और उसे चलाने के तरीकों और साधनों की योजना करें। हममें से बहुतों की तीव्र उत्कंठा है कि किसी निर्णय पर पहुँचने से पहले आपके साथ परामर्श कर लेना चाहिए। क्या आप थोड़े दिन के लिए जल्दी-से जल्दी दक्षिण का दौरा करने नहीं आ सकते? और अपनी सलाह से हमारी सहायता नहीं कर सकते? अवश्य ही मैं आपके पास आ सकता हूँ, परन्तु सब पहलुओं पर विचार करते हुए हमारा यह खयाल है कि मेरे जैसे एकमात्र आदमी को आप अपने विचार बता कर सबको समझाने का काम सौंपें, इसके बजाय आप इधर के कुछ महत्त्वपूर्ण केन्द्रों का खुद ही दौरा करें तो उसका परिणाम बहुत अच्छा होगा। हम दुःख में हैं और निराशा में भी राष्ट्रीयता के जो मजबूत किले माने जाते हैं और जिन पर गरम विचारवाले मण्डल राजद्रोही होने का शक किया जाता है, उनकी अकल्पित प्रवृत्तियों ने हमारे दुःख और निराशा में बड़ी वृद्धि की है और अब भी कर रही हैं। इन दुष्ट कठिनाइयों से निपटने के लिए साहसपूर्वक परिश्रम करना और ईश्वर को मंजूर हुआ, तो सफल उपाय करना हमारा पवित्र कर्तव्य है। इस जीवन-मरण के अवसर पर हमारी सहायता के लिए दौड़ आने की आपसे प्रार्थना है।

"मेरे स्थायी पते पर उत्तर लिखने की कृपा करें।

आपका

विजयराघवाचारी"

उनका उत्तर :

¶ "आपका पत्र बड़ा सुन्दर है। उस पर से मेरे जी में आता है कि अभी मद्रास दौड़ जाऊँ। बहुत समय से वहाँ आने का विचार तो कर ही रहा हूँ। परन्तु मेरा बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य बाधक होता रहता है। अब भी स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। फिर भी लड़ाई जल्दी न छिड़ गयी या अली-भाइयों के लिए मुझे लखनऊ न जाना पड़ा, तो जरूर पहला अवसर मिलते ही मैं मद्रास का दौरा करूँगा। मेरा पक्का खयाल है कि यदि सिलेक्ट कमेटी में इन बिलों में आमूल परिवर्तन न किये गये, तो हमें उनका अत्यंत कड़ा विरोध करना पड़ेगा। यह बिल बहुत भयंकर है, केवल इसीलिए मैं उन्हें नहीं धिक्कारता। धिक्कारने का बड़ा कारण तो यह है कि ये बिल भारत सरकार की हड्डियों में गहरे पैठे हुए रोग की अचूक निशानी है। इस रोग से सरकार मुक्त हो, तभी हम सुधारों के भीतर कुछ-न-कुछ सच्ची स्वतंत्रता का उपभोग कर सकते हैं। मैं आपको थोड़े ही समय में फिर लिखने की आशा रखता हूँ। सत्याग्रह के प्रश्न पर विचार करने के लिए कल ही गुजरातियों की एक सभा रखी है। 'सत्याग्रह' शब्द में जो अर्थ निहित है, वह 'पैसिव रेसिस्टेंस' शब्द से बहुत कम स्पष्ट होता है।"

मिस श्लेसिन[1] का ढाई सौ पौंड के कर्ज के लिए पत्र आया था। यह उन्हें देने के लिए बापू ने रुस्तमजी[2] को तार दिया था। श्लेसिन

---

१ दक्षिण अफ्रीका में शुरू में बापू के दफ्तर में टाइपिस्ट का काम करती थीं। बाद में बापू की बड़ी विश्वस्त साथी बन गयीं। सत्याग्रह की लड़ाई में इन्होंने बड़ी मदद दी थी। उनकी त्याग-वृत्ति, निष्ठा, प्रामाणिकता और कुशलता की बड़ाई करते हुए बापू कभी थकते नहीं। वे कुछ-कुछ सफ्रेजिस्ट (स्त्रियों के मताधिकार के लिए लड़नेवाले) स्वभाव की थीं।

२ पारसी, रुस्तमजी के नाम से दक्षिण अफ्रीका में मशहूर वहाँ के बड़े व्यापारी। बापू के मुवक्किल। सत्याग्रह की लड़ाई में भी शरीक हुए थे। वहाँ के सार्वजनिक कार्यों में अधिक रस लेकर अच्छी सहायता देते थे।

अपने स्वभाव के अनुसार चिढ़ गयी थीं और उन्होंने रोषपूर्ण पत्र लिखा था। फिर भी लिखा था कि :

¶ 'आपका व्यवस्थित रूप में काम को निपटाने का ढंग तो प्रशंसा-पात्र ही है।"

उन्हें जवाब :

¶ "सुव्यवस्थित होने का तुमने एक बार मुझे श्रेय दिया, यह तुम्हारी बड़ी अच्छाई है। अपने बारे में मेरी राय यह है कि मैं दुनिया में सबसे अधिक व्यवस्थित मनुष्य हूँ और जब तक कोई मुझे साबित न कर दे कि यह मेरा भ्रम है, तब तक मैं इस विश्वास से प्रसन्न होता रहूँगा और तुम्हारे जैसे इक्के-दुक्के प्रमाण-पत्र मेरे इस आनंद में वृद्धि करते रहेंगे। रुपया उधार देने जैसे सादे काम के लिए बैंक के बजाय मित्र को अपना माध्यम बनाया, इसके लिए मैं पहले ही जानता था कि तुम्हारी कोमलता को स्वाभिमान को, भव्य गौरव को या तुम्हें जो कहना हो, उसे आघात पहुँचेगा। परन्तु मैंने तुम्हारी अव्यावहारिक सलाह ली होती, तो तुम्हारे पास रुपया पहुँचाने में मुझे बड़ी देर लगती, क्योंकि तुम्हें मालूम होना चाहिए कि इस समय मैं हिन्दुस्तान में रहता हूँ। हम यहाँ की जलवायु और आसपास की परिस्थिति के अनुकूल ढंग से यानी 'सीता है चलता है' के तरीके से काम करते हैं। यहाँ बैंक अपने ग्राहकों के सेवक नहीं वरन् स्वामी होते हैं, यदि ग्राहक हमारे शासकों की जाति के न हों। साथ ही तुम्हें डेढ़ सौ पौंड भेजने में शायद पन्द्रह पौंड खर्च के लग जाते। तुम्हें अपने कवि-स्वभाव के अनुसार रुपये की कोई परवाह न हो, किन्तु मैं तो सीधा-सादा दुनियादार आदमी ठहरा। इसलिए मैं समझता हूँ कि मनुष्य को अपनी शिक्षा पूरी करने में डेढ़ सौ पौंड पूरे हो सकते हैं। उसमें से मैं अगर पंद्रह पौंड इस तरह खर्च कर डालता, तो मूल रकम का दसवाँ भाग जिसे मैं आसानी से बचा सकता था खर्च करके मैंने इतना नुकसान ही किया होता। इति सिद्धम्।

"तुम्हें मिले हुए रुपये को तुम अवश्य अमानत समझना। मैं

मानता हूँ कि मैंने जमनालालजी सेठ को ऐसा ही कहा है। परन्तु यह मैं सौगंध खाकर नहीं कह सकता, क्योंकि आम तौर पर मैं लिखे हुए पत्रों की नकल नहीं रखता। जब तुम्हें रुपया लौटाने की इच्छा हो, तब तुम चाहो तो यथाशक्ति ब्याज से वापस लेने में मुझे आपत्ति नहीं। एक ही शर्त है कि मुझे देने के लिए तुम किसीसे कर्ज न लेना।

"ऊपर मैंने जो कुछ लिखा है, उससे तुम्हें पता लग जायगा कि मेरी तबीयत पहले से अच्छी है। हाँ, अभी मैं बिस्तर नहीं छोड़ सकता हूँ। कहते हैं, मेरा दिल कमजोर है और मुझे भारी परिश्रम नहीं करना चाहिए। परन्तु मुझे खुद तबीयत अच्छी मालूम होती है और मैं प्रफुल्लित हूँ।

"देवीबहन* मुझे नियमित लिखती रहती हैं। वे कहती हैं कि तुम शायद हो (यहाँ शब्द रह गये दीखते हैं)। लोग अपनी देवियों के साथ इस तरह का बर्ताव नहीं करते। या स्त्रियों को दूसरी तरह का बर्ताव करने का विशेष अधिकार है।

"हाँ, हरिलाल को सख्त घाव लगा है। चंची बहुत मूल्यवान् थी। मैंने तुम्हें खास तौर पर नहीं लिखा, यह सोचकर कि रामदास के नाम के तार से तुम सबको खबर मिल ही गयी होगी। साथ ही, उस समय मैं इतना बीमार था कि किसीको लिख नहीं सकता था। हरिलाल के सब बच्चे यहीं हैं और वह पत्र लिखवाते समय मेरे पास बैठ रहे हैं।

"भारत-सरकार धारासभा में कुछ कानून पास करना चाहती है। उनके विरुद्ध सत्याग्रह की बातें हो रही हैं। कल आश्रम में युद्ध-परिषद् होनेवाली है। तुम इतना समझ लो कि वैसी परिषदें वहाँ होती थीं और जिनमें तुम एक पात्र (या भी पात्र!) और काफी समझदार दर्शक बनती थीं, उनकी यह नहीं नकल होगी। अतएव तुम्हारे लिए इस सभा का वर्णन करना मेरे लिए जरूरी नहीं रहता।

---

*"इंडियन ओपीनियन" में काम करनेवाले मि. वेस्ट की बहन।

"यहाँ के आश्रम में स्त्रियों को भरती करने की मनाही है, तुम्हारी इस आलोचना से मुझे आश्चर्य होता है। इससे तो यह जान पड़ता है कि तुम आश्रम में कोई दिलचस्पी ही नहीं लेती। यहाँ के आश्रम में तो बहुत-सी स्त्रियाँ हैं। हम सबको शिक्षा दी जाती है। इनमें तीन कन्याएँ हैं। ये कन्याएँ घर की ही हैं। परन्तु इसमें दोष हमारा नहीं है। दूसरी कन्याएँ नहीं आतीं इसका कारण तो यह है कि हमारी शर्तों पर लोग अपनी कन्याओं को भेजने को तैयार नहीं। थोड़े ही दिन के यहाँ के निवास के बाद स्त्रियों में कितना भारी परिवर्तन हो जाता है, यह देखकर तुम तो नाचने लगोगी। पर्दा और दूसरे अप्राकृतिक बन्धन मानो बालू की तरह टूट जाते हैं। मैं जानता हूँ कि जब तुम यहाँ आओगी तब इनमें से बहुतों से मिल लोगी। इतना ही है कि तुम्हें अपना गुजराती का ज्ञान ताजा कर लेना पड़ेगा।

'इमाम साहब और हाजी साहिबा यहाँ हैं। हाँ, इनकी लड़कियाँ भी हैं।"

२४-२-१९

आश्रम में रात को रौलट बिलों के खिलाफ सत्याग्रह का विचार करने के लिए युद्ध-परिषद् हुई। बाहर से कोई बीस व्यक्ति आये थे। श्रीमती अनसूयाबहन साराभाई, मि. हार्नीमैन, श्री उमर सुबहानी, श्री शंकरलाल बैंकर, श्री वल्लभभाई, श्री इन्दुलाल वगैरह थे। खूब चर्चा हुई। बापू ने सबको बहुत सावधान किया परन्तु सब सत्याग्रह के लिए बड़े उत्सुक थे। सत्याग्रहियों के लिए नीचे लिखे अनुसार प्रतिज्ञा तैयार की गयी :

'हमारा अन्तःकरणपूर्वक विश्वास है कि जो दो रौलट बिल बड़ी धारासभा में पेश किये गये हैं, वे अन्यायपूर्ण, स्वातंत्र्य और न्याय के सिद्धान्तों के घातक और समस्त जनता और राज्य की भी सलामती के लिए आधारभूत मनुष्यमात्र के मौलिक अधिकारों का नाश करनेवाले

हैं। इसलिए हम प्रतिज्ञा करते हैं कि उपर्युक्त बिल पास कर दिये गये, तो हम इन कानूनों का और उन कानूनों का—जिन्हें आइंदा हम जो कमेटी बनानेवाले हैं, वह उचित समझेगी—सविनय भंग करेंगे और जब तक उपर्युक्त कानून रद्द न हो जायँ, तब तक इस प्रकार का भंग करते रहेंगे। साथ ही हम यह भी प्रतिज्ञा करते हैं कि इस लड़ाई के सिलसिले में हम कड़ाई से सत्य का पालन करेंगे और किसीके भी जान-माल को किसी तरह नुकसान नहीं पहुँचायेंगे।"

२५ २ १९

सत्याग्रह के बारे में पत्र लिखवाये। एण्ड्रूज को :

¶ "प्रिय चार्ली,

"आज मैंने आपको तार दिया है। पहला तार दिया, तब मैंने आपको पत्र लिखने की सोचा था, परन्तु लिख न सका। मैं बड़ी दुविधा में से गुजर रहा हूँ। डॉक्टर कहते हैं कि मुझे किसी भी किस्म का श्रम नहीं करना चाहिए। अन्दर की आवाज कहती है कि रौलट-बिलों के और वाइसराय महोदय के भाषण के मामले में मुझे अपनी आवाज उठानी चाहिए। मुझ पर परस्परविरोधी विचार काम कर रहे थे और यह नहीं सूझ रहा था कि क्या किया जाय। बहुत मित्र मार्ग-दर्शन के लिए मेरी तरफ देख रहे हैं। उन्हें मैं कैसे छोड़ सकता हूँ?

"कल हम आश्रम में एकत्र हुए थे। अच्छी सभा हुई। सबकी इच्छा यह थी कि हम थोड़े हों, तो भी भिड़ जाना चाहिए। परन्तु वे मेरी सलाह के अनुसार करना चाहते थे। मुझे लग रहा था कि करना उचित है। क्या मैं उनका त्याग करूँ? ऐसा मैं कैसे कर सकता हूँ? मैंने अपने-आपके प्रति सच्चा रहने का निश्चय किया। परिणाम आप देख रहे हैं। यहाँ के अखबारों से आपको सब बातें मालूम होंगी। जब हृदय-मंथन की पीड़ा भुगत रहा था, उस समय आपकी मौजूदगी के लिए कितना तड़प रहा था, वह भगवान् ही जानता है। इस समय मैं पूरी शांति में

हूँ। वाइसराय को तार दे देने के बाद मेरा चित्त खूब स्वस्थ हो गया है। उन्हें चेतावनी मिल चुकी है। जबर्दस्त दावानल भभक उठे, ऐसी स्थिति है। इसे रोकना उनके हाथ में है। अगर दावानल भभक उठा और सत्याग्रही अपनी प्रतिज्ञा का सच्चाई से पालन करेंगे, तो इससे वातावरण विशुद्ध होगा और उसीसे सच्चा स्वराज्य आयेगा।

'राष्ट्रसंघ के समझौते समझाते हुए मि. विल्सन ने जो भाषण किया उसमें आधुनिक संस्कृति का सच्चा रूप उन्होंने अनजाने प्रकट कर दिया है, यह आपने देखा? आपको उनका कहना याद होगा कि टेढ़े चलने वाले पक्ष पर डाला जानेवाला नैतिक दबाव असफल रहेगा, तो राष्ट्रसंघ के सदस्य अन्तिम उपाय आजमाने अर्थात् सैनिक बल का प्रयोग करने में पशोपेश नहीं करेंगे।

इस पर इस आचार को हमारी प्रतिज्ञा पर्याप्त उत्तर है।

"परन्तु इतीसे प्रकरण पूरा नहीं हो जाता।

"मि. अस्वात* की तरफ से मुझे लम्बा समुद्री तार मिला है। दक्षिण अफ्रीका के यूनियन में हिन्दुस्तानियों की स्थिति सचमुच बड़ी गंभीर है। दक्षिण अफ्रीका की सरकार पिछली लड़ाई से मिली हुई सारी शिक्षा मानो भूल ही गयी है। वहाँ के भारतीयों को यहाँ से कोई मदद नहीं पहुँचायी जा सकेगी, तो उनकी दशा बिलकुल निःसहाय हो जायगी। वे लोग अपनी कमजोरी के कारण सत्याग्रह न कर सकें, तो उनके दुःख दूर कराने के लिए हम सबको भारत सरकार से कहना चाहिए और अगर सरकार अपनी मजबूरी जाहिर करे तो सत्याग्रह करना चाहिए। एक ही साम्राज्य की हिस्सेदारी में एक-दूसरे के विरोधी हक नहीं हो सकते। मैंने सरकार को लिखा है और आज एक पत्र अखबारों को भेज रहा हूँ।

"एक तीसरा प्रकरण भी है। अली-भाइयों के मामले में सरकार को सलाह देने के लिए बनायी गयी कमेटी दो महीने हुए, अपनी रिपोर्ट दे चुकी है। वे सब कागजात मैंने पढ़े हैं। उन पर लगाये गये आरोप-पत्र में

* दक्षिण अफ्रीका के एक कार्यकर्ता।

ऐसी कोई बात नहीं, जिससे उनकी जबरदस्ती सकारण मानी जा सके। अगर अब भी उनका छुटकारा न हो सके, तो यह सत्याग्रह के लिए तीसरा मामला है।

"यह सब बोझा मैं आसानी से उठा सकता हूँ। पिछले दो विषयों के बारे में तो मुझे कोई हृदय-मंथन नहीं करना पड़ा। अगर मुख्य लड़ाई शुरू हो जाय तो ये दोनों मैं उसके साथ मिला दूँ और इस तरह त्रिपुटी पूरी हो जाय।

"आपकी राय की तार द्वारा आतुरता से बाट देख रहा हूँ। किन्तु निश्चित मत बाद में दीजिये। आश्रम में सब बहनों ने प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कर दिये हैं, यह सुनकर आपको कोई आश्चर्य नहीं हो सकता। –"

दूसरा पत्र नटराजन* को लिखवाया :

"सत्याग्रह की प्रतिज्ञा और वाइसराय को मेरे भेजे हुए तार की नकलें साथ में भेज रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि ये बिल कितने भयंकर मुझे मालूम होते हैं, उतने ही आपको भी। उनके लिए किये जानेवाले उपायों के बारे में आप मुझसे सहमत न भी हों, फिर भी मैं आशा रखता हूँ कि आप यह प्रतिज्ञा मन में से बिलकुल निकाल नहीं देंगे। सरकार के अत्याचारों के विरुद्ध आप उगती पीढ़ी को कोई कारगर उपाय नहीं बतायेंगे, तो आप ईर्ष्या, द्वेष का दावानल जगा देंगे और बंगाल के हिंसामार्ग के विचारों का इतना फैलाव होगा कि फिर हम सबको हाथ मलने पड़ेंगे। दमन-नीति तभी तक कारगर साबित होती है, जब तक लोग उससे डरते हैं। परन्तु जब असाधारण जोर पड़ जाता है, तब कायर लोग भी असाधारण हिम्मत दिखाते हैं, ऐसी घटनाएँ मालूम हैं। स्वयं कष्ट सहन करना सत्याग्रह का एक अर्थ है। इसमें मैं हमारी संस्कृति के भाव का ही अनुसरण कर रहा हूँ और जवान देशभक्तों के सामने ऐसा अमोघ साधन रखता हूँ, जिसे अपनाने पर उन्हें कभी निराशा नहीं हो सकती।

---

*'इंडियन सोशियल रिफॉर्मर' के सम्पादक और एक परम मित्र।

"मेरे भेजे हुए कागजात अभी खानगी समझें। वाइसराय का जवाब आ जाने के बाद मैं उन्हें प्रकाशित कर सकता हूँ। वाइसराय के नाम का तार तो बिलकुल छापना ही नहीं है। उसकी नकल मैंने आपको इसीलिए भेजी है कि आपकी राय के लिए मेरे दिल में बड़ी इज्जत है। कृपा करके यह पत्र सर नारायण[1] को भी पढ़ा देंगे।

'दक्षिण अफ्रीका की परिस्थिति पर मेरा अखबारों के नाम बयान आप थोड़े ही समय में देखेंगे। शायद इस मामले में आप मुझसे सहमत होंगे कि अगर सरकार अपनी मजबूरी जाहिर कर दे तो हम सत्याग्रह कर दें और दक्षिण अफ्रीका के हमारे देशवासियों को उन पर लटकते हुए विनाश से बचावें।"

ऐसा ही पत्र सर स्टैनली रीड[2] को लिखवाया।

'साथ के कागजात आपको भेजते हुए कुछ-कुछ सकुचा रहा हूँ। परन्तु मेरा खयाल है कि मेरे लिए सही रास्ता यही है कि मुझे इन्हें आपकी जानकारी से अलग नहीं रखना चाहिए। संभव है कि विरोधसम्बन्धी मेरी राय के बारे में और इसी तरह उनके विरुद्ध न्यायप्राप्ति के लिए सोचे हुए उपायों के विषय में आप मेरे साथ बिलकुल सहमत नहीं होंगे। इस मामले में मैं कोई बहस नहीं करूँगा, क्योंकि वाइसराय के नाम के तार में मैंने जो दलीलें दी हैं, उनसे अधिक दलील मैं नहीं दे सकता।

'सारे कागजात खानगी हैं।

"इस मामले पर आपकी साफ-साफ राय को मैं कीमती समझूँगा।"

सर दिनशा को पत्र :

"मैंने भाई शंकरलाल बैंकर से कह रखा था कि सत्याग्रह-प्रतिज्ञा आपको दिखा दें और वाइसराय महोदय को दिया गया तार भी दिखा दें। वे आपको देखे होंगे। यह माँग तो मैं कैसे कर सकता हूँ कि आप

---

१ सर नारायण चंदावरकर।
२ "टाइम्स ऑफ इंडिया" के सम्पादक।
३ मॉडरेट नरम नेता।

इस लड़ाई में शरीक हों। परन्तु आपका आशीर्वाद अवश्य चाहता हूँ। कोई भी काम उतावली में नहीं करूँगा। वातावरण का जवाब आ जायगा, तभी प्रतिज्ञा प्रकाशित होगी। मेरे खयाल से अब उभरते हुए नौजवानों के लिए अर्जियों वगैरह का उपाय काफी नहीं, उन्हें हमें कोई न-कोई कारगर उपाय देना चाहिए। मेरा तो खयाल यह है कि बम-आन्दोलन को रोकने का उपाय केवल सत्याग्रह है। इस दृष्टि से मैं आपकी सहायता माँग सकता हूँ।

"मेरे स्वास्थ्य के लिए आपने सदा चिन्ता रखी है, इसके लिए मैं किस तरह आभार प्रकट करूँ! अब ठीक है, अभी हृदय कमज़ोर है। शायद इस लड़ाईरूपी टॉनिक से तबीयत अपने आप ठिकाने आ जायगी।"

२६-२ १९

सत्याग्रह की प्रतिज्ञा का मसविदा अखबारों को भेजते हुए उन्हें लिखा गया पत्र :

"महोदय,

"रौलट-बिलों के विरुद्ध सत्याग्रह-प्रतिज्ञा का मसविदा साथ में भेज रहा हूँ। जो कदम उठाया गया है, वह शायद हिन्दुस्तान के इतिहास में बहुत भारी माना जाय। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि इसके उठाने में कुछ भी उतावली नहीं की गयी है। मैंने खुद तो इसके विचार में कई रात जागे किये हैं। इस कार्रवाई के परिणामों का अच्छी तरह अंदाज़ लगाया है। सरकार की स्थिति का भी उचित अनुमान करने की कोशिश की है। परन्तु इन विचित्र बिलों को पेश करने का मुझे कोई उचित प्रयोजन दिखाई नहीं दिया। रौलट-कमेटी की रिपोर्ट मैंने पढ़ी है। उसे पढ़ते समय कमेटी की वर्णन-शक्ति का बखान किये बिना मुझसे नहीं रहा गया। परन्तु उसी पर से जिस निर्णय पर कमेटी पहुँची है, मैं उससे बिलकुल दूसरे फैसले पर पहुँचा हूँ। इस रिपोर्ट पर से तो मैं साफ तौर पर यही निर्णय दूँगा कि गुप्त मारकाटरूपी रोग हिन्दुस्तान में केवल

सीमित क्षेत्रों में और इक्के-दुक्के बहुत थोड़े लोगों में फैला हुआ है। ऐसे लोगों को इसकी समाज के लिए खतरनाक है। परन्तु इस खतरे से ज्यादा भयंकर खतरा तो ये बिल हैं, जो सारे हिन्दुस्तान पर लागू करने के लिए सोचे गये हैं—जो स्थिति नाजुक से सुधर सकती है, उसे सुधारने के लिए सरकार के हाथ में कुल्हाड़ा देनेवाले हैं। साथ ही कमेटी ने एक ऐतिहासिक चिन्ह की सर्वथा उपेक्षा की है। यह यह कि हिन्दुस्तान के करोड़ों लोग अपने हृदय की कोमलता के लिए संसार में प्रसिद्ध हैं।

"अब हम बिलों की बनावट की जाँच करें। जब बिल पेश हुए, तब माननीय वाइसराय ने दो आश्वासन दिये थे : एक सिविल सर्विस को और दूसरा अंग्रेज व्यापारियों को। हममें से बहुतों को वाइसराय साहब के इस बारे के भाषण के प्रति बड़ी शंका है। मुझे तो स्वीकार करना ही चाहिए कि इस आश्वासन का उद्देश्य और सीमा मेरी समझ में नहीं आते। अगर उसका अर्थ यह हो कि सिविल सर्विस और अंग्रेज व्यापारियों के स्वार्थों को हिन्दुस्तान के हितों और धार्मिक जरूरतों से अधिक समझा जायगा, तो कोई भी भारतीय इस सिद्धान्त को स्वीकार नहीं कर सकता। उसका परिणाम तो यह होगा कि साम्राज्य के भीतर भाई-भाई के बीच तीव्र झगड़ा खड़ा हो जायगा। मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड रिपोर्ट के अनुसार सुधार हों या न हों, इस समय हमारे लिए जिस बात की जरूरत है, वह यह है कि इस तात्त्विक प्रश्न के बारे में उचित समझौता होना चाहिए। इसका जैसा-तैसा निपटारा करने से सच्चा सन्तोष नहीं होगा। महान् सिविल-सर्विसरूपी संघ को समझना चाहिए कि वे हिन्दुस्तान में केवल नाम को ही नहीं परन्तु सचमुच हिन्दुस्तान के ट्रस्टी और सेवक बनकर ही रह सकते हैं। बड़े अंग्रेज व्यापारिक व्यवसायियों को समझना चाहिए कि वे हिन्दुस्तान की कला, व्यापार और हुनर का नाश करने को नहीं परन्तु उनकी आवश्यकताओं में जो कमी हो, उसकी पूर्ति करने के लिए ही रह सकते हैं। अगर ये दोनों बातें मंजूर हों, तो उनसे दोनों रौलट बिलों का उद्देश्य पूरा हो जायगा और मैं विश्वास दिलाता हूँ कि इन

ही बातों से राज्य के विरुद्ध होनेवाले किन्हीं भी षड्यंत्रों का मुकाबला किया जा सकेगा।

"सर जॉर्ज लाउयड् ने लोकमत का अनादर करके आग में घी डाला है। वे महाशय हिन्दुस्तान का इतिहास पढ़े हुए हैं, परन्तु उसे भूल गये मालूम होते हैं। नहीं तो उन्हें ऐसे उदाहरण याद होते कि जिस सरकार के वे प्रतिनिधि हैं, उस सरकार ने आज तक लोकमत के दबाव से अपने पक्के विचार बदले हैं। शासकरूपी शरीर में गहरे पैठे हुए रोग की ये भिन्न एक स्पष्ट निशानी हैं, यह मैं क्यों मानता हूँ, इसे समझना अब आसान हो जायगा। ऐसी बीमारियों का वैद्य इलाज ही हो सकता है। इन भिन्नों से और उनके पैदा होते समय की घटनाओं से दूषित हुए भावों से अधीर होनेवाले और उतावले उत्तेजित युवक गुप्त मारकाट का इलाज पसन्द करेंगे। जिस तिरस्कार और द्वेष का रक्तपात स्पष्ट प्रमाण है, उस तिरस्कार और द्वेष में ये भिन्न वृद्धि ही करेंगे। सत्याग्रह की प्रतिज्ञा लेनेवालों ने हर प्रकार के दुःख सहन करने का दृढ़ संकल्प कर लिया है। सरकार के प्रति उन्हें द्वेष नहीं और इसलिए उनकी माँग में इतना अधिक बल छिपा हुआ है कि उनका मुकाबला किया ही नहीं जा सकता। इसलिए सरकार की तरफ के दुःखों का निवारण करने के लिए जो लोग रक्तपात को कारगर उपाय मानते हैं, उन्हें इनके बदले में वे ऐसा अमोघ अस्त्र भेंट करते हैं। साथ ही, यह अस्त्र उसका उपयोग करनेवाले और विरोधी दोनों को सुखदायी है। अगर सत्याग्रही अपने इस अस्त्र का उपयोग अच्छी तरह समझते होंगे, तो मुझे परिणाम का जरा भी डर नहीं है। उनकी इसे समझने की शक्ति के बारे में शंका करना मेरा काम नहीं। सत्याग्रह जैसा वैद्य उपाय करने लायक यह रोग है या नहीं और उसे मिटाने के लिए दूसरे हल्के उपाय किये गये हैं या नहीं, यह जान लेना सत्याग्रहियों का काम है। उन्हें विश्वास हो गया है कि रोग भयंकर है और नरम उपाय बेकार साबित हुए हैं। बाकी सब कुछ हरि के हाथ है।"

प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करनेवाले स्वयंसेवकों के लिए नीचे लिखी हिदायतें जारी कीं :

किसी भी मनुष्य से हस्ताक्षर कराने के पहले स्वयंसेवक को चाहिए कि सत्याग्रह-प्रतिज्ञा उसे पढ़कर सुना दे। इस प्रतिज्ञा के तीन भाग हैं : पहला भाग प्रतिज्ञा का हेतु बतानेवाला है। अर्थात् प्रतिज्ञा करनेवाला मानता है कि रौलट-बिल अन्यायपूर्ण हैं, स्वतन्त्रता के सिद्धान्त का भंग करते हैं और मनुष्य के स्वाभाविक अधिकारों का नाश करते हैं। ऐसा कहनेवाले को रौलट-बिल का अच्छा ज्ञान होना चाहिए, इसलिए प्रतिज्ञा लेनेवाले को उस बिल का ज्ञान कराना स्वयंसेवक का कर्तव्य है। [इस ज्ञान के लिए सभा द्वारा प्रकाशित बिल की जानकारी स्वयंसेवक को ध्यानपूर्वक पढ़नी चाहिए।]

दूसरा भाग प्रतिज्ञा का है। इसमें रौलट-बिल और दूसरे कुछ कानूनों का विनयपूर्वक अनादर करने की बात है। 'विनयपूर्वक' का अर्थ हस्ताक्षरकर्ता को अच्छी तरह समझाया जाय; जैसे नीति का भंग करके कानून तोड़ना विनयपूर्वक अनादर नहीं है अथवा कानून का भंग करते समय सम्बद्ध अधिकारियों के विरुद्ध उद्दंडता बरतना भी विनयपूर्वक अनादर नहीं है। परन्तु जिन पुस्तकों को सरकार ने आपत्तिजनक मान रखा हो और हम उन्हें शुद्ध बुद्धि से निर्दोष समझते हों, तो उन पुस्तकों का खुला उपयोग और प्रचार करना विनयपूर्वक अनादर है। ऐसे अनेक उदाहरण स्वयंसेवकों को सीख लेने चाहिए और यथावसर हस्ताक्षरकर्ताओं को समझाने चाहिए।

कानून का उल्लंघन करने में जो दुःख उठाने पड़ें, उन्हें उठाने और जरूरत पड़ने पर तो अपना जानमाल कुर्बान कर देने की भी प्रतिज्ञा करनेवाला तैयार रहेगा और जब तक कानून रद्द न हो जायें, तब तक इस प्रकार की लड़ाई अकेले दम भी जारी रखने का आग्रह रखेगा—जो इस प्रकार की जोखम उठाने को तैयार हो, स्वयंसेवक उसीसे हस्ताक्षर करायेगा।

प्रतिज्ञा का तीसरा हिस्सा यह है कि सत्याग्रह करनेवाला सत्याग्रह काल में सत्य और अहिंसा-व्रत का निर्भय होकर पालन करेगा अर्थात् कभी अपना अज्ञान छिपाने और किसीको भी दुखाने का दोष नहीं करेगा। स्वयंसेवक सबसे पहले हरएक को सत्य और अहिंसा का व्रत पालन करने की भारी जिम्मेदारी समझकर ही दस्तखत करने की चेतावनी देगा। वह न सिर्फ अपने ज्ञान से बाहर की बात ही कभी न करे या किसी प्रकार की झूठी आशा ही किसीको न दिलाये, बल्कि उससे पूछी गयी बात का स्पष्टीकरण खुद न कर सके तो कमेटी से पूछकर करे या उसके पास जाकर समझ लेने को पूछनेवाले से कहे। अहिंसा में आक्षेप तो आ ही जाता है इसलिए अनजाने भी स्वयंसेवक विरोधियों की निन्दा या बदनामी हरगिज नहीं करेगा, अपना काम करने में पुलिस या और किसीकी तरफ से रुकावट हो, तो उसका सामना न करके विनयपूर्वक उसे अपना कर्तव्य समझायेगा और कुछ भी हो जाय, तो भी यह आग्रह रखेगा कि उसे अपना कर्तव्य पूरा करना ही है। बाद में कुछ साधारण सूचनाएँ हैं :

१ हस्ताक्षर कराने के लिए निकलनेवाले हरएक स्वयंसेवक को ध्यान में रखना चाहिए कि समझे बिना दस्तखत करनेवाले सौ व्यक्तियों से ज्ञानपूर्वक हस्ताक्षर करनेवाले एक व्यक्ति की कीमत ज्यादा है। इसलिए वह हस्ताक्षरों की संख्यामात्र बढ़ाने का लालच कभी न रखे।

२ रौलट-बिल की जानकारी उसने समझकर पढ़ और सोच ली होगी, इसलिए जिन्होंने मूल बिल या उनका अनुवाद नहीं पढ़ा हो, उन सत्याग्रह धारण करनेवाले भाइयों को वह समझा देगा।

३ प्रतिज्ञा समझाते समय इस बात पर वह उचित जोर दे कि सत्याग्रही की सच्ची परीक्षा, असली बल उसकी दुःख सहन करने की शक्ति है। और हस्ताक्षर करनेवाले को चेतावनी दे दी जाय कि सत्याग्रह करने से जेल भुगतने अथवा जानमाल जोखम में डालने जैसे संभव संकटों के

लिए उसे शुरू से ही तैयार होकर दस्तखत करने चाहिए। इस ढंग से समझाने के बाद अगर उसे दिखाई दे जाय कि प्रतिज्ञा करने की इच्छा रखनेवाले मनुष्य ने पक्का निश्चय कर लिया है, तो उससे नम्रतापूर्वक विनती करके कहा जाय कि सत्याग्रह-कार्यालय में आकर हस्ताक्षर कर जायें। जो किसी खास कारणवश दफ्तर में न आ सकते हों, उनसे दफ्तर के बाहर हस्ताक्षर करा लेने में हर्ज नहीं।

४ १८ वर्ष के भीतर के सभी पुरुषों तथा विद्यार्थियों के हस्ताक्षर उन लोगों के आग्रह के बावजूद न कराये जायें। १८ वर्ष से अधिक उम्र के होने पर कच्ची समझ के लगते हों, तो ऐसे लोगों के हस्ताक्षर भी न कराये जायें। जिनकी कमाई पर ही उनके परिवारों और सगे-सम्बन्धियों का आधार हो, ऐसे लोगों को दस्तखत न करने को समझाया जाय।

५. हस्ताक्षर ले लेने के बाद हरएक आदमी का पूरा पता और धंधा शुद्ध अक्षरों में खुद ही लिख लिया जाय। जिस आदमी के हस्ताक्षर पढ़े न जा सकें, उनके हस्ताक्षर के नीचे शुद्ध साफ अक्षरों में उनकी नकल की जाय। हस्ताक्षर लेने की तारीख भी हर बार लिखते रहें।

६ हरएक हस्ताक्षर के साक्षी के रूप में स्वयंसेवक स्वयं दस्तखत करे।

१८-३-१९ से [illegible]-१९

मद्रास यात्रा* : ता० १८-३-१९ को मद्रास के समुद्रतट पर मरीना

---

* इस यात्रा में महादेवभाई ने डायरी लिखी नहीं मालूम होती। परन्तु बापूजी के भाषणों की और मद्रास छोड़ते समय उनके श्री रंगस्वामी को लिख भेजे हुए संदेश की जानकारी अखबारों में छपी थी, उसे संग्रह करके रख छोड़ी है। इसके सिवा तंजौर में हुई एक मुलाकात के नोट भी दूसरे कागजों पर लिख रखे हैं। इन सब पर से उपर्युक्त विवरण तैयार किया गया है।

इस यात्रा में राजाजी पहले-पहल बापूजी से मिले। इसके लिए देखिये। 'आत्मकथा' भाग ५ प्रकरण ३ 'वह अद्भुत दृश्य!'

मानव-समूह के सम्मुख बापू का भाषण हुआ। पहले वे इस प्रकार थोड़ा-सा बोले :

मैं थोड़ा-सा बैठे-बैठे ही बोल रहा हूँ, इसके लिए क्षमा कीजिये। मेरा हृदय दुर्बल होने के कारण जरा भी श्रम न करने का मुझे डाक्टरों का सख्त हुक्म है। इसलिए मुझे जो कुछ कहना है, उसे पढ़कर आपको सुनाने के लिए मुझे दूसरे की मदद लेनी पड़ेगी। परन्तु मैं महादेव देसाई को यह पढ़कर सुनाने के लिए कहूँ, इससे पहले आपको एक चेतावनी देना चाहता हूँ। प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करने के पहले खूब विचार कर लीजिये। परन्तु एक बार हस्ताक्षर करने के बाद ध्यान में रखिये कि प्रतिज्ञा कभी भंग न हो। हमारी प्रतिज्ञा के पालन करने में भगवान् आपको और मुझे शक्ति दे, यह मेरी उससे प्रार्थना है।

बाद में महादेवभाई ने बापू का लिखा हुआ भाषण पढ़ सुनाया :

आपने बहुत-सी सभाएँ देखी होंगी, किन्तु आजकल की सभाएँ पहले की सभाओं से अलग ही ढंग की हैं। 'रौलट' नाम से प्रसिद्ध बिलों के रूप में जो आपत्ति हम पर आ पड़ी है, उसे दूर करने के लिए कोई सुनिश्चित तात्कालिक उपाय करने और कोई सुनिश्चित तात्कालिक त्याग करने के लिए इन सभाओं में आपसे कहा जाता है। इनमें से पहले बिल में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं और उस पर विचार करना फिलहाल मुल्तवी हो गया है। परन्तु इतने हेर-फेर होने पर भी यह बिल काफ़ी भयंकर है और उसका विरोध करने की ज़रूरत अवश्य है। दूसरा बिल शायद इसी वक्त धारासभा में पास हुआ होगा। परन्तु धारासभा के सभी गैरसरकारी सदस्यों ने एक आवाज़ से और कठोर शब्दों में उसका विरोध किया है। इसलिए असल में यह बिल उस सभा द्वारा पास हुआ कहा ही नहीं जा सकता। हम इन बिलों का इसीलिए विरोध नहीं करते कि वे खराब हैं, परन्तु हम इन बिलों का विरोध इसलिए भी करते हैं कि इन्हें पेश करनेवाली सरकार ने लोकमत का अनादर करना उचित समझा है और कुछ सरकारी सदस्यों ने तो शेखी भी बघारी है कि हम

लोकमत का इस तरह अनादर कर सकते हैं। यहाँ तक तो बिलों के विरोध में देश के विभिन्न विचारवाले सभी सहमत हैं।

प्रतिज्ञा लेनेवालों का धर्म

किन्तु मैंने सार्वजनिक हित से खूब विचार करने और सरकार का दृष्टिकोण बहुत ही ध्यानपूर्वक देखने के बाद इन बिलों के विरुद्ध सत्याग्रह करने की प्रतिज्ञा ली है और मेरे साथ सहमत होनेवाले भाई-बहनों को वैसा ही करने का निमंत्रण दिया है। हमारे कुछ देश-नायकों ने, जिनमें हमारे उत्तम नेता भी हैं, घोषणापत्र जारी करके हमें सचेत किया है और यहाँ तक कहा है कि यह सत्याग्रह-आंदोलन देशहित के विरुद्ध है। उनके लिए और उनके मत के लिए मुझे बड़ा आदर है। उनमें से कुछ के अधीन मैंने काम किया है। जब सर दिनशा वाच्छा और सुरेन्द्रनाथ बनर्जी हिन्दुस्तान के सम्माननीय लोकनेता माने जाते थे, तब मैं तो बिलकुल बच्चा था। श्री शास्त्रियार ने तो देश के लिए सब कुछ समर्पण कर दिया है। उनके दिल की सच्चाई और आत्मत्याग अनुपम है। देशभक्ति में वे किसीसे पिछड़नेवाले नहीं हैं। मैं उनके साथ पवित्र और अटूट स्नेह-ग्रंथि में बँधा हुआ हूँ। इन घोषणापत्रों पर हस्ताक्षर करनेवालों के प्रति मुझे स्वभाव से ही आकर्षण हो सकता है। इसलिए उनका विरोध करते हुए मुझे अत्यंत दुःख हुआ है और मैंने कठोर हृदय-मंथन किया है। परन्तु कभी-कभी ऐसे अवसर आते हैं, जब हमें अन्तरात्मा की आवाज के अधीन होना ही चाहिए। वही हमारा सबसे बड़ा पथप्रदर्शक है। ऐसे अवसरों पर दुःख के आँसू ही नहीं बहते, बल्कि अपने मित्रों से अपने कुटुम्ब से जिन सबसे हमारा संबंध हो सकते— सार यह है कि जो हमें अधिक-से-अधिक प्रिय हों, उनसे-जुदा होना पड़ता है। इस प्रकार अन्तरात्मा के अधीन होना ही जीवन का सबसे महान् कानून है। मैंने जो कदम उठाया है, उसके लिए मेरी ओर कोई सफाई नहीं। घोषणापत्रों पर हस्ताक्षर करनेवालों के प्रति मेरा आदर

ज़रा भी कम नहीं हुआ है। सत्याग्रह की शक्ति के बारे में मुझे इतनी श्रद्धा है कि यदि प्रतिज्ञा लेनेवाले अपनी प्रतिज्ञा पर कायम रहेंगे, तो मेरा ख़याल है कि लड़ाई के अन्त में हम उन्हें बता सकेंगे कि उसमें भय या अन्देशा रखने जैसी कोई बात नहीं थी। मुझे पता है कि इन घोषणा-पत्रों के विरुद्ध कुछ सत्याग्रहियों ने भी क्रोध किया है। मैं उनका ध्यान इस ओर दिलाता हूँ कि इस प्रकार रोष करना सत्याग्रह के सिद्धान्त के विरुद्ध है। कोई भी आदमी और फिर वह भी मित्र यदि अपना मतभेद प्रकट करे, तो मैं स्वयं तो प्रसन्न ही हूँगा, क्योंकि इससे हम सावधान होते हैं। हमारे सार्वजनिक जीवन में एक-दूसरे पर आक्षेप करने एक-दूसरे को ताने मारने और आड़े-टेढ़े रोष लगानेका रोग बहुत घुस गया है। अगर सत्याग्रह हमारी इस ख़ामी को निकाल दे और वह अवश्य निकाल सकता है, तो यह भी एक अमोल लाभ ही है। मैं सत्याग्रहियों को एक बात और सुझाना चाहता हूँ कि इन दो घोषणापत्रों पर रोष प्रकट करना तो हमारी कमज़ोरी होगी। हरएक आन्दोलन और ख़ास तौर पर सत्याग्रह का आन्दोलन उसके आलोचकों की निर्बलता अथवा मौन पर नहीं, परन्तु अपने आन्तरिक बल पर टिकना चाहिए।

सत्याग्रह की शक्ति

तो सत्याग्रह की शक्ति किस चीज़ में छिपी हुई है, यह देखें। सत्याग्रह का अर्थ है, सत्य का आग्रह। इसका सक्रिय रूप है, प्रेम। इसके क़ानून के अनुसार हम बैर का बदला बैर से और मार का बदला मार से नहीं ले सकते, बल्कि अपकार के बदले उपकार करते हैं। सत्याग्रह की शक्ति उसके भीतर की सभी कर्मशक्ति को भलीभाँति समझने और तदनुसार चलने में है। एक बार आपने राजनैतिक मामलों में धर्म का तत्त्व दाख़िल किया कि आपकी राजनैतिक दृष्टि में बड़ी क्रान्ति हो जायगी। फिर आप अपने विरोधियों को दुःख पहुँचा कर नहीं, बल्कि स्वयं दुःख उठाकर सुधार करायेंगे। इस लड़ाई में हम कष्ट सहन करके सरकार पर असर डालेंगे और इन भद्दे बिलों को वापस लेनेका उसका निश्चय

बदलवायेंगे। लेकिन कुछ लोगों की तरफ से कहा जाता है कि सरकार इन मुट्ठीभर सत्याग्रहियों को छुएगी तक नहीं और उन्हें शहीद नहीं बनावेगी। परन्तु मेरे नम्र मतानुसार तो इस दलील में तर्क-दोष भरा है। ऐसा कहनेवालों की बात निराधार है। अगर सरकार सत्याग्रहियों का कुछ भी न करे, तब तो उनकी पूरी तरह जीत हो गयी, क्योंकि रौलट-बिल का और साथ ही दूसरे कानूनों का भी उल्लंघन करने में वे सफल हुए। उन्होंने बता दिया कि सरकार का विनयपूर्वक अनादर करने में कुछ भी हर्ज नहीं। परन्तु यह मान लेना ही उचित नहीं कि यह लड़ाई मुट्ठीभर स्त्री-पुरुषों तक ही सीमित रहकर रुक जायगी।

सत्याग्रह का मेरा अनुभव तो यह है कि वह ऐसी जबर्दस्त शक्ति है कि एक बार उसका प्रयोग शुरू कर देने के बाद वह इतनी व्यापक बन जाती है कि सारे समाज में सर्वोपरि बन्द हो जाती है और इतनी फैल जाती है कि कोई भी सरकार उसकी उपेक्षा कर ही नहीं सकती। सरकार या तो झुक जायगी या आन्दोलन करनेवालों को पकड़ेगी। परन्तु मैं बहस नहीं करना चाहता। अंग्रेजी में कहावत है कि मिठाई का स्वाद उसे चखने से ही मालूम हो सकता है। यह भला हुआ हो या बुरा, लड़ाई में कदम हम आगे किये गये हैं। हमारी परीक्षा हमारे शब्दों से नहीं, केवल हमारे कार्यों से ही होगी। इसलिए प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करना ही काफी नहीं। हमारा हस्ताक्षर करना तो इस बात की निशानी है कि हमने प्रतिज्ञानुसार बर्ताव करने का निश्चय किया है। जिन्होंने हस्ताक्षर किये हैं, वे प्रतिज्ञानुसार चलेंगे तो मैं सादर पूर्वक वचन देता हूँ कि हम दोनों बिल वापस लिवा सकेंगे और सरकार के या हमारे आलोचकों के लिए हमारे प्रति एक भी गरम उद्गार करने की बात नहीं रहेगी। हमारा ध्येय महान् है। हमारा उपाय भी उतना ही महान् है। हम इन दोनों को शोभायमान करें, यही मेरी प्रार्थना है।

ता. २४-३-१९ को तंजौर में कार्यकर्ताओं के साथ हुई मुलाकात आगे दी जाती है।

प्रश्न : सत्याग्रह और निष्क्रिय प्रतिरोध एक ही चीज है या अलग अलग ? एक राजनैतिक अस्त्र है और दूसरा धार्मिक, यह भेद ठीक है ? एक भाई ने यह अर्थ किया है कि सत्य का अर्थ पुण्य और आग्रह अर्थात् प्रकोप ।

उत्तर : इस बारे में आपने मेरा ध्यान दिलाया, इससे मुझे प्रसन्नता हुई। लैंड़ा में तो वक्ताओं के लिए मैंने नियम कर दिया था कि वे अपना वक्तव्य पहले मुझे दिखा दें, ताकि मेरे पास किये बिना और मंजूर किये बिना कोई कुछ न बोले। आप जो कहते हैं, सो बिलकुल सच है कि लोगों के सामने जब कोई नयी बात रखी जाती है, तब वे आधी ही बात समझते हैं, उसमें अपने विचार जोड़ देते हैं और सारी बात की हत्या कर डालते हैं।

सत्याग्रह और 'पैसिव रेजिस्टेंस' (निष्क्रिय प्रतिरोध) के बीच मैंने जो फर्क किया है, वह नया नहीं है। जब दक्षिण अफ्रीका में लड़ाई हो रही थी, तभी मैंने यह भेद पहचान लिया था। शुरू-शुरू में तो मुझे अंग्रेज श्रोताओं को सत्याग्रह शब्द का अर्थ समझाने में हमेशा दिक्कत होती थी। मेरी समझ में यह भी आ गया था कि 'पैसिव रेजिस्टेंस' शब्द इस्तेमाल करने में अनर्थ होने का बड़ा भय है। हमारी लड़ाई के लिए उत्तम नाम ढूँढ निकालनेवाले के लिए मैंने पुरस्कार की घोषणा की थी। एक साथी ने लड़ाई के लिए उसका ठीक-ठीक संपूर्ण स्वरूप व्यक्त करनेवाला शब्द* सुझाया। वह मुख्य अर्थ के बहुत नजदीक था। मैंने उसमें थोड़ा सुधार करके सत्याग्रह शब्द गढ़ लिया। इसका अर्थ है, सत्य से आग्रहपूर्वक चिपके रहना। सत्य सिक्के का एक पहलू है। उसका दूसरा पहलू प्रेम है। प्रेम सत्य का सक्रिय रूप है। इंग्लैंड के इतिहास में हम जो 'पैसिव रेजिस्टेंस' देखते हैं, वह सदा कमजोरों का हथियार माना गया है। 'पैसिव रेजिस्टेंस' का यह सिद्धान्त नहीं होता कि वह कभी हिंसा या छल-कपट का आश्रय न ले। सत्याग्रह महादशवानों

* श्री मगनलाल भाई गांधी ने 'सदाग्रह' शब्द सुझाया था।

का शस्त्र है। आप जिस कमजोर से कमजोर हिंसक योद्धा की कल्पना कर सकते हैं, उससे भी सत्याग्रही अधिक बलवान् है। सफ्रेजिस्ट (स्त्रियों के अधिकारों के हिमायती) लोगों का 'पैसिव रेजिस्टेंस' आप जानते हैं। उन्होंने अवश्य हिंसा का आश्रय लिया है। मैं श्रीमती पैंकहर्स्ट* से मिला हूँ। जब मैंने उनसे यह बात कही कि दक्षिण अफ्रीका में हम क्या करते थे तब वे इतनी हर्षोन्मत्त हो गयीं कि उसका आपके सामने वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। मैं जो भेद करता था उसे दक्षिण अफ्रीका के एक परोपकारी खान-मालिक समझते नहीं थे। एक बार वे बोले कि हिन्दुस्तानी भाई कमजोर हैं, इसलिए उनके पास यही उपाय है। उन्हें मैंने सत्याग्रह के सिद्धान्त की बिलकुल स्पष्टता करके जवाब दिया। सत्याग्रह में किसी भी स्थिति में हिंसा की गुंजाइश होने से हम इनकार करते हैं। 'पैसिव रेजिस्टेंस' तो एक सुविधानुसार काम में लेने का राजनैतिक अस्त्र है। सत्याग्रह हमारे धार्मिक जीवन के साथ गुँथी हुई वस्तु है। हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी में हम इसका प्रयोग करते हैं। सत्याग्रह में यह बात स्वीकार कर ली गयी है कि कुटुम्ब के शासन पर जो कानून लागू होते हैं, वे राष्ट्र-शासन पर भी लागू होने चाहिए।

प्रश्न : कुटुम्ब-शासन और राष्ट्र-शासन के बीच फर्क करनेवाली रेखा कहाँ खींची जाय ?

उत्तर : दोनों के बीच की तुलना को ठेठ आखिरी हद तक नहीं ले जाया जायगा। परिवार के बुजुर्ग कभी-कभी लकड़ी का प्रयोग भी कर लेते हैं, इसलिए यह कहना उचित नहीं कि राष्ट्र के बुजुर्ग भी वैसा कर सकते हैं। मेरी राय में शासक और जनता के बीच का सम्बन्ध पूरी तरह पिता-पुत्र के बीच के सम्बन्ध जैसा नहीं है। हम ऐसे शब्दों का इस्तेमाल तो करते हैं, परन्तु उनके पूरे अर्थ में नहीं। मनु इस प्रकार की कल्पना का समर्थन करता है, मगर मैं उसे स्वीकार नहीं करता। हमारे प्रश्न पर पूरी तरह लागू होनेवाला दृष्टान्त तो प्रह्लाद का है। उसके पिता के बनाये हुए

* एक प्रसिद्ध सफ्रेजिस्ट।

कानून उसके अन्तःकरण को मान्य नहीं थे। वह उसका हिंसा से विरोध कर सकता था, परन्तु उसने कहा कि "मैं आपका अहिंसा से—सविनय विरोध करूँगा। आपकी ताकत के सामने मैं अपना प्रेम रखूँगा। आपके नाम का जप करने के बजाय मैं राम-नाम का जप करूँगा।" यहाँ मैं वाइस राय से मिलने जा रहा हूँ, परन्तु उन्हें मैं सिद्धपुरुष नहीं मानता। उनका आदर मैं इसलिए करता हूँ कि मेरे ख्याल से उनके द्वारा राष्ट्र का हित हो सकता है। उनकी हुकूमत से कुछ मिलाकर राष्ट्र का भला होता हो, तो इस हुकूमत को मैं बर्दाश्त कर लूँगा। किन्तु सब बातों के देखते हुए अगर उससे मेरे राष्ट्र का अकल्याण होता हो, तो मैं क्या करूँ? अगर मैं हिंसावादी हूँ, तो जितना बल मैं जुटा सकूँ, उतना जुटाकर उसका उपयोग करूँगा। परन्तु सत्याग्रही होने के कारण मैं उनके कानूनों का सविनय भंग कर रहा हूँ। अब कुछ कानून सनातन नीति-नियमों के आधार पर बने होते हैं। ऐसे कानूनों का तो मैं आदर ही करूँगा। परन्तु कुछ कानूनों में नीति-अनीति का प्रश्न नहीं होता। वे केवल राजतन्त्र की सुविधा के लिए बनाये जाते हैं। ऐसे कानून उपयोगी हों या निरुपयोगी, उनको मैं भंग करूँगा। कारण ऐसे कानूनों द्वारा वह हुकूमत मुझ पर राज्य करती है।

प्रश्न : कानूनों के बारे में यह भेद कौन करे?

उत्तर : मैं करूँगा।

प्रश्न : परन्तु क्या ऐसे मामलों में सर्वसम्मति न होनी चाहिए?

उत्तर : नहीं भी हो सकती। मान लीजिये कि हिरण्यकशिपु के पाँच हजार पुत्र होते, तो क्या प्रह्लाद ने दूसरे ४९९९ की सम्मति मिलने तक प्रतीक्षा की होती? और तब तक विष्णु का जप करने का काम मुल्तवी रखा होता?

प्रश्न : तब तो यह व्यक्तिगत प्रतीति की बात हो गयी!

उत्तर : आपको औरों की सम्मति और सहयोग मिल जाय, तो बहुत अच्छी बात है। परन्तु न मिले, तो आपको अकेले आगे बढ़ना चाहिए और ध्येय तक पहुँचने के लिए मरने को तैयार रहना चाहिए। ईश्वर

मिलों की मिसाल लीजिये। मेरे घर में जब ये दो बम पड़े, तब मैंने इन कानूनों को पास न होने देने की चेम्सफोर्ड साहब से बड़ी विनती की। मैं उनके प्रति आदर रखता हूँ। वे किसी भी तरह ढुलमुल-पोचे आदमी नहीं हैं। वे मेरा साथ नहीं देते थे, इसका मुझे दुःख होता था। परन्तु बाद में मेरी अहिंसा जाग्रत हुई। मैंने सोचा कि वे बेचारे क्या कर सकते हैं? उन्हें सिविल सर्विस की मदद से शासन करना है। उनके जबर्दस्त दबाव के कारण वे झुकते जा रहे हैं। फिर मैंने अपना विचार किया। ऐसे कम-जोर हृदय के साथ इतनी बड़ी लड़ाई का भार वहन करने की जिम्मेदारी लेना मूर्खतापूर्ण साहस लगता था। अपने साथियों से मैंने सलाह ली। मित्र भी मेरे हैं, इस बारे में तो वे सहमत ही थे। साथ ही सत्याग्रह की शक्ति के बारे में उन्हें पूरा विश्वास था। एक व्यक्ति ने तो यहाँ तक कहा कि हमें अपनी संख्या बढ़ाने के लिए क्यों इन्तजार करना चाहिए? यह सुनकर मैं तो बड़ा खुश हुआ और हम कूद पड़े।

प्रश्न : आप रौलट-कानून के विरुद्ध किस तरह सत्याग्रह करेंगे? हमारे जैसे लोगों पर वे थोड़े ही लागू किये जायेंगे?

उत्तर : जब सरकार कोई बुरा काम करे, तब मुझे उसका विरोध करने के लिए ऐसा विचार करके बैठ नहीं रहना चाहिए कि वह बुरा काम सीधे मुझपर लागू नहीं होता। अगर उससे देश का अपमान होता हो, तो उसके विरुद्ध सारी ताकतें लगा देनी चाहिए। हम दूसरे कानून भी तोड़ सकते हैं।

प्रश्न : परन्तु दूसरे कौन-से कानून तोड़ें?

उत्तर : समाज में कम-से-कम अस्तव्यस्तता करके अपने ध्येय तक पहुँचने के लिए मैंने कुछ राजनैतिक कानून चुन लिये हैं। मैं पहले वर्जित साहित्य लूँगा। सरकार ने मूर्खतापूर्ण ढंग से कुछ साहित्य जब्त कर रखा है। उसमें से जो सत्याग्रह की दृष्टि से स्वच्छ साहित्य मालूम होता है, उसका प्रचार करने का मेरा निश्चय है। मेरे ध्यान में दूसरा कानून अखबारों

भी रजिस्ट्री कराने-संबंधी है, क्योंकि यह कान्ने की पुस्तक में सबसे बुरे कानूनों में से है। इससे पत्रकारों को और राष्ट्र को निर्वीर्य कर डाला है। पत्रकार संदिग्ध और द्वयर्थक भाषा का आश्रय लेना सीख गये हैं। सारे राष्ट्र को उसकी छूत लगने लगी है। ये सब अधःपतन करनेवाली चीजें हैं। इन कानूनों को भंग करने से मैं उन्हें रद्द करा सकूँगा, यह आशा नहीं है। परन्तु हमारे अखबार निन्यानवे फीसदी बेकार और एक फीसदी अच्छी बातों से भरे हुए, तो भी संदिग्ध न होने चाहिए। मेरा विचार तो यह है कि हमारा पत्र भले ही एक ही पन्ने का हो पर स्पष्ट और अच्छे लेखोंवाला होना चाहिए।

मेरे ध्यान में नमक-कर और जमीन का लगान भी है। मैं मानता हूँ कि नमक-कर से सहमत होकर हमने राष्ट्र के प्रति महापाप किया है। अगर हम इतनी भयी जाति न होते, तो कभी के उसके विरुद्ध खड़े हो गये होते। दक्षिण अफ्रीका में था, तभी से यह कानून मुझे खटकता था। परन्तु मैं कटे हुए पंखोंवाले पक्षी की तरह था।

प्रश्न : किन्तु सरकार नमक बनाना बंद कर दे, तो उसे कौन बनाये?

उत्तर : हम बनावें। सरकार ने इसका ठेका लिया उससे पहले हमें काफी नमक मिल जाता था। पानी की तरह नमक तो आजादी के साथ मिलना चाहिए। जमीन के लगान के बारे में रोहा ने हमें बहुत से पाठ पढ़ाये हैं। सारा हिन्दुस्तान का एक अत्यंत उत्तम किया है। परन्तु आजकल उसकी अवनति होने-लगी है क्योंकि सरकार को जो चाहिए, सो धार्ई-भार्ई किसानों से ले लिया जाता है। उनका यह जोर करते हैं कि लोगों के लिए यह सब जरूरी है, इसलिए सरकार ले लेती है।

प्रश्न : परन्तु हम क्या करें? हम भूमि-कर देने से इनकार कर दें पर लोगों में एकता कहाँ है? हमारी सारी जमीन छिन जाय।

उत्तर : रैयतम ने पंडित मन्त्री देने से इनकार किया, तब वह लोगों

---

* : भारत में पुराने जमाने में यह रिवाज था कि राजा को कर में [illegible] की [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] के लिये [illegible] चाहिए, के कारण था।

डाकू और चोर थे। पठान तो प्रहार के बदले प्रहार ही करता है। परन्तु वे सब अहिंसा की प्रतिज्ञा में बँधे हुए थे और एक तरह से चलते थे।

उपवास के बारे में बोले : मैंने एक उपाय ऐसा ढूँढ निकाला है, जिस पर सब अमल कर सकते हैं। उसमें संयम और अनुशासन है।

उपवास के धार्मिक असर के अलावा उससे इन बिलों के भयंकर स्वरूप की लोगों को अच्छी तरह कल्पना करायी जा सकती है। उपवास करने के लिए मेरी पत्नी, मेरे बच्चे और मेरे नौकर, सबको मुझे समझाना पड़ेगा। इस प्रकार सबको जबर्दस्त शिक्षा दी जा सकती है। हड़ताल में यही शिक्षा भरी हुई है। सभी लोग हड़ताल कर दें, तो देशभर में जगह जगह जो सभाएँ होंगी, उनमें सब आ सकते हैं।

ता० २४-३-'१९ को बापू ने निम्नलिखित सन्देश प्रकाशित किया :

"जैसा कि मैंने बहुत-सी सभाओं में समझाने का यत्न किया है, तदनुसार सत्याग्रह सचमुच एक धार्मिक आन्दोलन है। यह शुद्धि और तप की क्रिया है। यह स्वयं कष्ट सहकर सुधार प्राप्त करने और दुःख-निवारण का एक रास्ता है। इसलिए मैं सूचना देता हूँ कि १९१९ के बिल नं० २ पर वाइसराय महोदय की मंजूरी जाहिर होने के बाद दूसरा रविवार मानभंग और प्रार्थना के दिन के रूप में मनाया जाय। इस अवसर के अनुरूप लोक-भावनाएँ कारगर तरीके से जाहिर करने के लिए मेरी नीचे लिखी तजवीज है। पहली रात के खाने के बाद चौबीस घंटे तक सभी वयस्क लोगों को, जिन्हें स्वास्थ्य या धर्म के कारण बाधा न हो, उपवास करना चाहिए। इस उपवास को किसी भी तरह अनशन के रूप में न माना जाय और न इसका उद्देश्य सरकार पर किसी भी प्रकार का दबाव डालना हो। सत्याग्रहियों द्वारा ली गयी प्रतिज्ञा में कानून के सविनय भंग की कल्पना की गयी है, उसके लिए तैयार होने की यह एक जरूरी तालीम होगी। सार्वजनिक हित के लिए जरूरी काम के सिवा बाकी सब

काम उस दिन बंद रखे जायें। बाजार और रोजगार-धंधे के दूसरे स्थान भी उस दिन बन्द रखे जायें।

"जिन मजदूरों को रविवार को भी काम करना पड़ता हो, वे पहले से छुट्टी लेकर काम बन्द कर सकते हैं। सरकारी नौकरों को भी उपर्युक्त सूचनाओं का पालन करने की सिफारिश करने में मुझे संकोच नहीं है। क्योंकि यद्यपि राजनैतिक सभाओं और चर्चाओं में भाग न लेना उनके लिए खास तौर पर वाजिब है, फिर भी मेरी राय में सिद्धान्त के मामलों में अपनी भावना यहाँ सुझाये गये मर्यादित रूप में प्रकट करने का उन्हें जरूर हक है। उस दिन भारत के सभी भागों में और देहातों में भी सार्वजनिक सभायें करके उनमें ये कानून रद्द करने की प्रार्थना करने के लिए प्रस्ताव पास किये जायें। अगर मेरी सलाह मानने योग्य समझी जाय, तो इस संबंध में व्यवस्था करने का मुख्य दायित्व सत्याग्रह-सभाओं पर रहेगा। मैं उम्मीद रखता हूँ कि अन्य सार्वजनिक संस्थायें भी इस कार्य को सफल बनाने में सहायता देंगी।"

तंजोर और त्रिचनापल्ली होकर मदुरा गये। वहाँ की सभा में भाषण देते हुए बापू ने कहा :

सरकार ने घोर अन्याय किया है। आपका, मेरा और देश में रहनेवाले सब भाई-बहनों का फर्ज है कि न्यायपूर्ण उपायों द्वारा हम इस अन्याय को दूर कराने का प्रयत्न करें। अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए पुराने ढंग के सभी उपाय तो हम आजमा चुके। हमने प्रस्ताव किये, अर्जियाँ दीं, ये बिल वापस ले लेने के लिए बड़ी धारासभा में हमारे प्रतिनिधियों ने भरसक प्रयत्न किये। किन्तु वह सब कारगर न हुआ। फिर भी किसी-न-किसी उपाय से यह अन्याय तो मिटाना ही चाहिए। कारण ये बिल हमारे समाज-शरीर को कुतरकर खा जानेवाले जहर जैसे हैं। जब राष्ट्र की आत्मा का हनन हो रहा हो, जब जिन लोगों के हृदय को आघात पहुँचा हो, वे इस अन्याय को दूर करने के लिए या तो हिंसा की पद्धति का आश्रय लेते हैं या मैं जिस

पद्धति को सत्याग्रह कहता हूँ, उसका आसरा लेते हैं। मैं मानता हूँ कि अव्यवस्थित हिंसा की पद्धति निष्फल सिद्ध होती है। साथ ही वह हम लोगों की प्रकृति के लिए बिलकुल अनुकूल वस्तु नहीं है। हिंसा की पद्धति मानव-गौरव के साथ सुसंगत नहीं है। यह कोई ठीक उत्तर नहीं है कि आज सारा यूरोप सैनिक-बल पर खड़ा है। सच्चा पौरुष, सच्ची बहादुरी, हमारे भीतर रहनेवाले पशु को निकाल डालने में है। तभी हमारी आत्मा के विकास का मार्ग खुलता है। यह दूसरी शक्ति का निरूपण जिसका मैंने बहुत जगह सत्याग्रह, आत्मबल अथवा प्रेमबल कहकर वर्णन किया है, प्रह्लाद की कहानी में भलीभाँति होता है।

ता० १०-३-'१९ की शाम को मद्रास में सभा थी, किन्तु उस समय गांधीजी को बेजवाड़ा के लिए रवाना होना था। इसलिए उन्होंने निम्न लिखित सन्देशा लिख भेजा :

भाईश्री रंगस्वामी,

आज के मित्रों को मैंने समय दिया है, उसे कायम रखने के लिए बेजवाड़ा की रेल मुझे अभी पकड़नी चाहिए। परन्तु इस प्रान्त के दक्षिण भाग का मुझ पर जो असर पड़ा है, उसके बारे में विदा लेने से पहले कुछ लिख डालने की भी इच्छा है। मित्रों की तरफ से बहुत-सी आलोचनाएँ हुई हैं और शंकाएँ उठायी गयी हैं। मैं उनका जवाब देने की कोशिश करूँगा।

मद्रास के सिवा तंजोर, त्रिचनापल्ली, मदुरा, तूतीकोरिन और नेगापट्टम आदि स्थानों का मैंने दौरा किया है। कम-से-कम हिसाब लगायें तो मेरा भाषण सुननेवालों की कुल संख्या तीस हजार होनी चाहिए। जिन्हें हमें चेतावनी देने और अपनी शंकाएँ व्यक्त करने का अधिकार है, जो मातृभूमि के प्रति हमारे बराबर ही प्रेम रखते हैं, उन्हें अन्देशा है कि हमारी नीयत कितनी ही अच्छी हो और हिंसा न होने की हमारी आतुरता कितनी ही तीव्र हो, तो भी जो लोग उत्साह के आवेश में इस लड़ाई में शरीक होंगे, वे पर्याप्त आत्म-संयम नहीं रख सकेंगे और हिंसा

ने इस बारे में मुझे लिखा है कि क्या तोड़ने के लिए कानून चुनने का काम एक कमेटी को सौंपना सत्याग्रह-सिद्धान्त के अनुसार ठीक है? दलील दी जाती है कि इसका अर्थ यह हुआ कि ऐसा कर हम अपना अन्तःकरण दूसरे को सौंप देते हैं। किन्तु इस शंका में प्रतिज्ञा के बारे में गलतफहमी भरी है। प्रतिज्ञा पर दस्तखत करनेवाला आवश्यक होने पर अपने से सत्याग्रही द्वारा तोड़े जानेवाले सभी कानूनों को तोड़ने का बीड़ा उठाता है। परन्तु उस पर यह बन्धन नहीं है कि ऐसे सभी कानून उसे तोड़ने ही चाहिए। इसलिए कौन-से कानून तोड़े जायँ इसका चुनाव करने का काम ऐसे मामलों में ऐसे लोगों के विवेक पर, जो विशेषज्ञ हैं और जु" भी प्रतिज्ञा की मर्यादाओं से निश्चय ही बँधे हुए हैं, छोड़ने में अन्तःकरण को बाधा नहीं हो सकती।

(यहाँ की लगभग दस पंक्तियाँ छूट गयी हैं)

मैं इस विचार को माननेवाला नहीं हूँ कि एक ही राज्य-सत्ता साथ-साथ लोगों पर विश्वास भी रखे और उन पर अविश्वास भी करे, लोगों को स्वतंत्रता भी दे और उनका दमन भी करे। जो सुधार होने वाले हैं उनका अर्थ उन पर रौलट-कानून द्वारा पड़नेवाले असर की रोशनी में करने का मुझे अधिकार है। मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि हमारे मार्ग में रौलट-कानूनरूपी महाविघ्न है। उसे दूर करने लायक जोर हम न आजमायें तो सुधार सुनेरी की हुई कब्र की तरह भंयकर साबित होंगे।

अभी एक आपत्ति का उत्तर देना बाकी रह जाता है। कुछ मित्र यह दलील देते हैं कि "हमें बोलशेविज्म के आने का डर बना हुआ है, उसे 'आपके सत्याग्रह-आन्दोलन' से वेग मिलता है।" परन्तु हकीकत यह है कि हमारे देश पर इस आपत्ति के टूट पड़ने से रोकना किसी भी तरह संभव हो, तो वह सत्याग्रह से ही। बोलशेविज्म आधुनिक भौतिक सुधार का आवश्यक परिणाम है। उसने भौतिक संपत्ति की जो पागल आराधना शुरू की है, उसीसे ऐसा पथ निर्माण

हुआ है, जिसने भौतिक उन्नति को ही अपना ध्येय मान लिया है और जो जीवन की सुन्दरतम वस्तुओं को पहचानने की शक्ति खो बैठा है। बोलशेविज्म का ध्येय भोगविलास है, सत्याग्रह का ध्येय आत्मसंयम है। अगर मैं राष्ट्र से सत्याग्रह का मार्ग सामाजिक अथवा राजनैतिक जीवन के प्रधान अंग के तौर पर स्वीकार करा सकूँ, तो बोलशेविज्म के प्रचार से भय रखने की हमें कोई जरूरत नहीं। राष्ट्र को सत्याग्रह स्वीकार करने के लिए कहने में वस्तुतः मैं कोई नयी चीज जीवन में शुरू करने के लिए नहीं कहता। जो प्राचीन कानून आज तक हमारे जीवन का नियमन करता आया है, उसके लिए मैंने केवल एक नया शब्द गढ़ दिया है। मेरी भविष्यवाणी है कि भौतिक तत्त्व पर आध्यात्मिक तत्त्व की प्रभुता पर प्रेम और सत्य की अंतिम विजय के कानून की हम अवहेलना करेंगे, तो हिन्दुस्तान की इस पवित्र भूमि पर थोड़े ही वर्षों में बोलशेविज्म फूट निकलेगा।

रात को बेजवाड़ा से रवाना हुए। हमारी गाड़ी देर से पहुँची अतः आगे की गाड़ी चूक गयी।

११ ४ १९

१४ १९

कुमारी फेरिंग को पत्र :

प्यारी मिरिया,

"मेरा हाथ अभी तक इतना काँपता है कि मैं स्थिर और स्पष्ट नहीं लिख सकता। किन्तु मेरा ख्याल है कि तुम्हें कुछ-न-कुछ मेरे हाथ का ही लिखा भेजने की मुझे कोशिश करनी चाहिए। तुम्हारे और महादेव के लिए मुझे बहुत ख्याल हो आया। तुम दोनों बड़े भावनाप्रधान हो। एक ही साँचे में ढले हुए हो। गाड़ी चल पड़ी, तब खिड़की से देखते हुए मैं काँप रहा था। ऐसा लग रहा था

के रास्ते चले जायेंगे, जिसके परिणामस्वरूप जान-माल की व्यर्थ बरबादी के सिवा राष्ट्रहित की भी हानि होगी। लड़ाई छेड़ने का निश्चय करने के बाद मैं दिल्ली, लखनऊ और इलाहाबाद जाकर बंबई होकर मद्रास आया हूँ। इन सब स्थानों की सभाओं के अनुभव पर से मुझे मालूम हुआ है कि सत्याग्रह का प्रस्ताव होने के बाद सत्याग्रह की सभाओं में शरीक होनेवालों की वृत्ति में भारी परिवर्तन हो गया है।

(इसके बाद की कतरन की करीब दस लकीरें कट गयी हैं।)

दूसरे शहरों की तरह इस प्रान्त के शहरों में भी लोगों ने सभाओं में बड़ी शान्ति रखी है। यह सच है कि मेरे स्वास्थ्य की खातिर वे शोर गुलवाले प्रदर्शन करने से रुक गये हैं। साथ ही वे इससे अधिक ऊँचे उद्देश्य से यह भी समझ गये हैं कि उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। अपने अनुभव से मुझे भविष्य के लिए भारी आशाएँ हो गयी हैं। हमारे मित्रों को जोखमों का जो डर है, वह मुझे नहीं है। मैंने जिन अनेक सभाओं का उल्लेख किया है, वे मेरे आशावाद का समर्थन करती हैं। इसके सिवा मैं सादरपूर्वक कहता हूँ कि उस भय को टालने के लिए मनुष्य के लिए जो सावधानियाँ रखना सम्भव है, वे सब रखी जायेंगी।

इसीलिए हमारी प्रतिज्ञा में उस पर हस्ताक्षर करनेवालों के लिए यह बन्धन रखा गया है कि सत्याग्रहियों की कमेटी चुनेगी, उन्हीं कानूनों का सविनय भंग किया जायगा। मुझे यह बताते हुए आनन्द होता है कि सिन्ध के हमारे मित्रों ने प्रतिज्ञा को अच्छी तरह समझा है। उनका निर्दोष जुलूस बन्द करने का हैदराबाद के पुलिस-कमिश्नर ने हुक्म जारी किया उस हुक्म का उन्होंने पालन किया। क्योंकि यह लड़ाई देश के सभी कानूनों का भंग करने के लिए नहीं है। जो स्वाभाविक वृत्ति से कानून माननेवाला न हो, वह सत्याग्रही हो ही नहीं सकता, कानून पालन करने का उसका स्वभाव ही उससे सर्वोच्च कानून अर्थात् अंत रात्मा की आवाज का जो सब कानूनों से ऊपर है, परिपूर्ण पालन कराता है। वह कुछ कानूनों का सविनय भंग करता है, परन्तु वह केवल जाहिरा भंग

ही होता है। हरएक कानून लोगों को विकल्प देता है कि उसके पहले आदेश (विधेयक) का पालन करें या दूसरे आदेश (निषेधक) का। मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि उसके दूसरे आदेश को अर्थात् उसके भंग की सजा को निमंत्रित करके सत्याग्रही कानून का पालन ही करता है। साधारण अपराधी राज्य के कानून अच्छे हों या बुरे, उनका भंग ही नहीं करता बल्कि उस भंग के परिणामों से बचना भी चाहता है। लेकिन सत्याग्रही भंग के परिणाम का स्वागत करता है। इससे जान पड़ेगा कि कोई भी अवांछनीय परिणाम न होने देने के लिए जो उपाय करना बुद्धिमानी माना जा सकता है, वे सब उपाय किये गये हैं।

कुछ मित्र कहते हैं कि आप रौलट-कानून का भंग करें यह तो हम समझ सकते हैं, किन्तु सत्याग्रही की हैसियत से आपके लिए उसे भंग करने की कोई बात ही नहीं है। अब दूसरे कानूनों को जिन्हें आप अब तक मानते आये हैं और जो अच्छे भी हो सकते हैं आप कैसे भंग कर सकते हैं! अच्छे कानूनों का यानी जो नीति-नियमों के आधार पर हैं, भंग तो सत्याग्रही हरगिज नहीं करेगा। ऐसे कानून तोड़ने की बात प्रतिज्ञा में सोची ही नहीं गयी। परन्तु कुछ कानून ऐसे होते हैं, जो अच्छे भी नहीं और खराब भी नहीं—नीति से संबंध नहीं रखते और अनीति से भी नहीं रखते—ऐसे कानून उपयोगी भी हो सकते हैं और हानिकारक भी। देश के हमारे माने हुए अच्छे शासनतंत्र की खातिर ऐसे कानूनों का पालन किया जाता है। राज्य को लाभ देने के लिए बनाये गये अथवा राजनैतिक उद्देश्य से कुछ कार्यों को अपराध माननेवाले कानून इस दूसरी श्रेणी के हैं। ऐसे कानूनों से सरकार अपना शासन चलाती है। जब सरकार यहाँ तक दुष्ट बने कि उससे राष्ट्र के प्राणों को आघात पहुँचे जैसा कि रौलट कानून बनाकर उसने किया है तब लोगों को हक हो जाता है उनका धर्म बन जाता है कि राष्ट्र की इच्छा के सामने सरकार को झुकाने के लिए आवश्यक हद तक ऐसे कानूनों का पालन न किया जाय।

इस भाषा से हलचल एक और गाँठ उलझी गयी है। कुछ मित्रों

ने इस बारे में मुझे लिखा है कि क्या तोड़ने के लिए कानून चुनने का काम एक कमेटी को सौंपना सत्याग्रह-सिद्धान्त के अनुसार ठीक है। दलील दी जाती है कि इसका अर्थ यह हुआ कि ऐसा कर हम अपना अन्तःकरण दूसरे को सौंप देते हैं। किन्तु इस शंका में प्रतिज्ञा के बारे में गलतफहमी भरी है। प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करनेवाला आवश्यक होने पर अपने से समस्त सत्याग्रही द्वारा तोड़े जानेवाले सभी कानूनों को तोड़ने का बीड़ा उठाता है। परन्तु उस पर यह बन्धन नहीं है कि ऐसे सभी कानून उसे तोड़ने ही चाहिए। इसलिए कौन-से कानून तोड़े जायँ, इसका चुनाव करने का काम ऐसे मामलों में ऐसे लोगों के विवेक पर, जो विशेषज्ञ हैं और खुद भी प्रतिज्ञा की मर्यादाओं से निश्चय ही बँधे हुए हैं छोड़ने में अन्तःकरण को बाधा नहीं हो सकती।

(यहाँ की लगभग दस पंक्तियाँ कट गयी हैं)

मैं इस विचार को माननेवाला नहीं हूँ कि एक ही राज्य-सत्ता साथ-साथ लोगों पर विश्वास भी रखे और उन पर अविश्वास भी करे, लोगों को स्वतंत्रता भी दे और उनका दमन भी करे। जो सुधार होने वाले हैं उनका अर्थ उन पर रौलट-कानून द्वारा पड़नेवाले असर की रोशनी में करने का मुझे अधिकार है। मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि हमारे मार्ग में रौलट-कानूनरूपी महाविघ्न है। उसे दूर करने लायक और हम न आजमायें, तो सुधार सुनहरी की हुई कब्र की तरह बेकार साबित होंगे।

अभी एक आपत्ति का उत्तर देना बाकी रह जाता है। कुछ मित्र यह दलील देते हैं कि "हमें बोलशेविज्म के नाम का जो डर लगा हुआ है, उसे 'आपके सत्याग्रह-आन्दोलन' से वेग मिलता है।" परन्तु हकीकत यह है कि हमारे देश पर इस आफत के टूट पड़ने से रोकना किसी भी तरह संभव हो तो वह सत्याग्रह से ही। बोलशेविज्म आधुनिक भौतिक सुधार का आवश्यक परिणाम है। उसने भौतिक संपत्ति की जो पागल आराधना शुरू की है, उसीसे ऐसा पंथ निर्माण

हुआ है, जिसने भौतिक उन्नति को ही अपना प्रेम मान लिया है और जो जीवन की सुन्दरतम वस्तुओं को पहचानने की शक्ति खो बैठा है। बोलशेविज्म का प्रेम भोगविलास है, सत्याग्रह का प्रेम आत्मसंयम है। अगर मैं राष्ट्र से सत्याग्रह का मार्ग सामाजिक अथवा राजनैतिक जीवन के प्रधान अंग के तौर पर स्वीकार करा सकूँ, तो बोलशेविज्म के प्रचार से भय रखने की हमें कोई जरूरत नहीं। राष्ट्र को सत्याग्रह स्वीकार करने के लिए कहने में वस्तुतः मैं कोई नयी चीज जीवन में शुरू करने के लिए नहीं कहता। जो प्राचीन कानून आज तक हमारे जीवन का नियमन करता आया है, उसके लिए मैंने केवल एक नया शब्द गढ़ दिया है। मेरी भविष्यवाणी है कि भौतिक तत्त्व पर आध्यात्मिक तत्त्व की, पशुबल पर प्रेम और सत्य की अंतिम विजय के कानून की हम अवहेलना करेंगे, तो हिन्दुस्तान की इस पवित्र भूमि पर थोड़े ही वर्षों में बोलशेविज्म फूट निकलेगा।

रात को बेजवाड़ा से रवाना हुए। सबेरे गाड़ी देर से पहुँची अतः आगे की गाड़ी चूक गयी।

११ ४ १९

१ ४ १९

कुमारी फेरिंग को पत्र :

"प्यारी बिटिया,

"मेरा हाथ अभी तक इतना काँपता है कि मैं स्थिर और सतत नहीं लिख सकता। किन्तु मेरा खयाल है कि तुम्हें कुछ-न-कुछ मेरे हाथ का ही लिखा भेजने की मुझे कोशिश करनी चाहिए। तुम्हारा और महादेव के लिए मुझे बहुत खयाल हो आया। तुम दोनों बड़े भावनाप्रधान हो। एक ही साँचे में ढले हुए हो। गाड़ी चल पड़ी, तब खिड़की से देखते हुए मैं काँप रहा था। ऐसा लग रहा था

कि गाड़ी पकड़ने के लिए महादेव ऐसी दौड़ लगायेगा कि केवल थककर ही वे *खिसककर* गिर जायगा। देवदास में उसे देखा, तब मेरे जी में जी आया।

"तुमने लिखना स्वीकार किया था तदनुसार आशा है, तुमने कलकत्तर को लिख दिया होगा। मुझे बताना कि उसने कोई जवाब दिया है या नहीं।

"लड़कियों से कहना कि तुमने मुझे जो कम्बल दिया है उसे मैं रोज काम में लेता हूँ। परन्तु उनसे मैं यह आशा रखता हूँ कि वे जल्दी बुनना सीख लेंगी और खुद ही कात भी लेंगी। चरखे का संगीत मैं जानता हूँ कि किसी भी संगीत से बढ़कर है, क्योंकि अंत में इस संगीत से लोगों को ढँका जा सकता है। अब काम में लिये बिना यंत्रों को जंग लग रहा होगा (क्योंकि यंत्रों के बेहद प्रवाह से मनुष्य किसी दिन ऊब जायगा) तब भी लोगों को कपड़े की तो जरूरत होगी ही और हाथ के कते कपड़े का फैशन पसन्द पड़ेगा। मगनलाल को लिख रहा हूँ कि तुम्हें थोड़ा-सा हाथ-कता सूत भेज दे।

"हमारी गाड़ी देर से पहुँची थी, इसलिए हमें जो गाड़ी पकड़नी थी, वह हम चूक गये। अतएव आज यहाँ पड़े हैं। इसी कारण तुम्हें यह पत्र लिख सका हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम अपनी पाठशाला में हिन्दी जारी करा सको। अपने सुपरिंटेंट से सलाह करना। हिन्दी की आवश्यकता के विषय में तुमने कुछ पढ़ा है? प्यार।"

५-४-१९

१ मार्च के दिल्ली के हत्याकांड के बारे में श्री एंड्रूज को पत्र :
प्रिय चार्ली

"दिल्ली की करुण घटना के बारे में २४ घंटे तक तो मैं बहुत गमगीन रहा। अब उस बारे में उतना ही आनन्द में हूँ। दिल्ली में जो खून बहाया गया है, वह निर्दोषों का था। संभव है दिल्ली में सत्याग्रहियों

मे कुछ भूल भी हो। परन्तु सब बातों को देखते हुए तो उन्होंने अपने मत का विस्तार ही किया है। मैं खुशी से तो इसीलिए पूछ रहा हूँ कि पहले ही इन पूरी मात्रा में कुर्बानी दे चुके हैं और वह भी शैतानी हुकूमत की राजधानी के शहर में। इस मुल्क में आप शरीक हो सकें, तो मैं आपको शरीक करना तो चाहता हूँ।

"मैं आशा रखता हूँ कि आपकी शंकाओं का उत्तर देनेवाला मेरा पत्र आपको मिला होगा। मुझे आपके खिलाफ एक अपील दायर करनी है। उसकी नकल साथ में भेज रहा हूँ। आपको जो करना हो, कीजिये परन्तु गुरुदेव की राय मुझे मिलनी चाहिए।

'सप्रेम प्यार।

आपका मोहन"

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर को :

प्रिय गुरुदेव,

मेरी यह अपील हमारे साधारण मित्र चार्ली एण्ड्रूज के खिलाफ है। यह गम्भीर लड़ाई यद्यपि एक ही कानून के विरुद्ध रखी गयी है फिर भी वास्तव में यह स्वाभिमानी राष्ट्र को सुशोभित करनेवाली आजादी की लड़ाई है। इस अवसर पर प्रकाशन के लिए आपका संदेश भिजवाने की प्रार्थना में इनसे कभी से कर रहा हूँ। मैंने बहुत धीरज रखा और बड़ी प्रतीक्षा की। चार्ली ने आपकी बीमारी का मुझसे जो वर्णन किया था, उसने मुझे आपको सीधा लिखने में संकोच हो रहा था। आपका स्वास्थ्य राष्ट्र की सम्पत्ति है। चार्ली की आपके प्रति भक्ति अद्भुत है दैविक है। मैं जानता हूँ कि उनकी चले तो किसी भी मनुष्य को या हवा या अपनी उपस्थिति से आपकी शान्ति और आराम में खलल न पड़ने दें। किसी भी प्रकार की तकलीफ से आपको बचा लेने की उनकी उग्र अभिलाषा का मैं आदर करता था। आपके स्वास्थ्यसम्बन्धी चार्ली के वर्णन से मैं डरता गया था। परन्तु मुझे पता चला कि आप तो ब्यारस में भाषण दे रहे हैं। इसलिए चार्ली के वर्णन का सुधार लेता हूँ और आपसे सन्देश

माँगने का साहस कर रहा हूँ। जिन्हें इस आग से गुजरना है, उनके लिए आशा और प्रेरणा देनेवाला सन्देश मुझे चाहिए। जब मैं इस लड़ाई में झोंक दिया गया, तब आपने मुझे आशीर्वाद भेजने की कृपा की थी। इसलिए सन्देश माँगने का मुझे हक है। आप जानते हैं कि मेरे विरुद्ध बहुत-सी शक्तियाँ लगी हुई हैं। मुझे उनका जरा भी डर नहीं, क्योंकि मेरा दृढ़ विश्वास है कि वे सब असत्य का समर्थन कर रही हैं। अगर हममें पर्याप्त श्रद्धा होगी, तो उस श्रद्धा से हम शक्तियों को खदेड़ सकेंगे। ये सारी शक्तियाँ भी मनुष्य के द्वारा ही काम करती हैं। इसलिए इस महान् युद्ध में मैं उन लोगों की जो इस युद्ध को मान्यता देते हैं, पवित्र सहायता लेना चाहता हूँ। देश के राजनैतिक जीवन को विशुद्ध बनाने वाले इस प्रयत्न के बारे में आपका विचारपूर्ण मत जब तक नहीं मिल जायगा तब तक मुझे शान्ति नहीं मिलेगी। इस सम्बन्ध में आपकी पहली राय में कोई फर्क पड़ा हो, तो वह भी मुझे बता देने में आप कोई संकोच न करें। मित्रों के विरुद्ध मत हों, तो उन्हें भी मैं कीमती समझता हूँ क्योंकि यद्यपि उनसे मेरा मार्ग बदलेगा नहीं फिर भी वे मत हमारे लिए दीपस्तंभ होंगे और जीवन के तूफानी मार्ग में विद्यमान भयस्थानों की हमें चेतावनी देते रहेंगे। इस प्रकार चार्ली की मित्रता मेरे लिए अमूल्य खजाना बन गयी है, क्योंकि पूरा विचार कर लेने से पहले की अपनी विरोधी टिप्पणियों में भी वे मुझे हिस्सेदार बनाते रहे हैं। इसे मैं बड़ा लाभ मानता हूँ। चार्ली मुझे जो विशेष अधिकार देते हैं, मैं चाहता हूँ कि इस नाजुक समय में आप भी मुझे वे प्रदान करें।

'आप आनन्द में होंगे और मद्रास प्रान्त की यात्रा की थकावट दूर होकर अब आप पूरी तरह तन्दुरुस्त हो गये होंगे।

आपका

मो० क० गांधी"

दिल्ली की घटना० पर सत्याग्रही के कर्तव्य के बारे में बापू ने नीचे लिखा अखबारी बयान प्रकाशित किया :

"दिल्ली की करुण घटना पर मैं कुछ आलोचना करना चाहता हूँ। इसके लिए आपके पत्र में मुझे कुछ स्थान देने की कृपा कीजिये। दिल्ली के जो लोग रेलवे-स्टेशन के सामने इकट्ठे हुए थे, उन पर यह आक्षेप किया जाता है।

१ उनमें से कुछ लोग मिठाई बेचनेवालों पर अपनी दूकानें बन्द करने के लिए जबर्दस्ती कर रहे थे।

२ कुछ लोगों को ट्राम या ताँगे में बैठने से जबरन रोका जा रहा था।

---

० रौलट कानून के विरुद्ध सत्याग्रह का आरम्भ प्रार्थना, उपवास, चौबीस घंटे की हड़ताल और रौलट-कानून के प्रति विरोध प्रकट करनेवाला प्रस्ताव आम सभा में पास करके करना था। इसके लिए पहले रविवार ३० मार्च का दिन तय किया गया था। परंतु सारे देश में ३० मार्च को समाचार नहीं भेजा जा सकेगा, यह खयाल होने से बाद में दिन बदलकर उसके बाद का रविवार अर्थात् ६ अप्रैल निश्चित किया गया था। परन्तु यह खबर दिल्ली नहीं पहुँच सकी, इसलिए वहाँ ३० मार्च को विरोध दिवस मनाया गया। शहर में पूरी हड़ताल थी। शाम को चार बजे जुलूस और बाद में सार्वजनिक सभा रखी गयी थी। ऐसी सम्पूर्ण हड़ताल दिल्ली जैसे शहर के इतिहास में अपूर्व थी, इसलिए यह देखकर गोरे पुलिस अधिकारी चौंक उठे। दोपहर का समय तो शांति से गुजर गया, परन्तु दोपहर को दो बजे बाद जुलूस में शामिल होने के इरादे से जानेवाले लोगों पर किसी-न-किसी बहाने स्टेशन के सामने गोरे सिपाहियों ने गोलियाँ चला दीं। इससे करीब दर्जनभर आदमी घायल हो गये और मारे गये। फिर एक बार चांदनी-चौक में घंटाघर के सामने गोलीबार किया गया और उसमें कोई दस आदमी घायल हुए। फिर भी स्वामी श्रद्धानन्दजी के नेतृत्व में जुलूस निकला और सार्वजनिक सभा हुई। उसमें पचीस हजार आदमी उपस्थित थे। सभा समाप्त होने के बाद स्वामी श्रद्धानन्दजी इस बात की व्यवस्था कर रहे थे कि लोग शान्तिपूर्वक अपने अपने घर पहुँच जायें कि इतने में एक गुरखा सिपाही ने स्वामीजी की छाती पर बन्दूक तानकर कहा था, 'तुमको छेद देंगे।' स्वामीजी ने जवाब दिया, 'मैं खड़ा हूँ; गोली चलाओ।' फिर तो दस-बारह बन्दूकें उन पर तान दी गयीं। परन्तु स्वामीजी अटल खड़े रहे। [illegible] हथियार नीचे कर दिये।

१. कुछ लोगों ने धारा १ से ५ ।

४. भारी भीड़ स्टेशन पर घुस कर गयी थी और उसने उन भाइयों को छोड़ देने की माँग की थी जिन्हें जबरदस्ती करने के अपराध पर रेलवे-अधिकारियों के कहने से पकड़ा गया था ।

५. मजिस्ट्रेट ने जब भीड़ को बिखर जाने का हुक्म दिया तब भीड़ ने बिखरने से इनकार कर दिया ।

इसमें मैं स्वामी श्रद्धानन्दजी का इस घटना का वृत्तान्त पढ़ा है । उसे मुझे तब तक सही मानना ही चाहिए, जब तक कि अधिकारी उसे गलत साबित न कर दें । उनका वृत्तान्त पहले तीन आरोपों से इनकार करता है । परन्तु चाहे आप उन्हें मान लें, तो भी मैं मानता हूँ कि स्थानीय अधिकारियों ने एक मक्खी को कुचलने के लिए घन का इस्तेमाल किया है । किन्तु भीड़ पर गोली चलाने की जो कार्रवाई उन्होंने की है उसके बारे में फिर कभी अधिक कहूँगा ।

यह पत्र लिखने का हेतु तो सब सत्याग्रहियों को चेतावनी देना है । मैं यह कहना चाहता हूँ कि आरोप नं० १ से ४ में कही गयी बातें सही हों तो यह सत्याग्रह की प्रतिज्ञा के साथ असंगत है । पाँचवें आरोप में वर्णन किया गया व्यवहार प्रतिज्ञा के साथ सुसंगत हो सकता है । परन्तु आरोप यदि सत्य हो तो ऐसा बरताव उसके उचित अवसर से पहले हुआ, क्योंकि प्रतिज्ञा में कमेटी की बात कही गयी है और उस कमेटी ने रौलट ऐक्ट (दमनकारी कानून) की रू से दिये गये मजिस्ट्रेट के हुक्म का अनादर करना तय नहीं किया है । मैं यह बात अत्यन्त स्पष्टता से कहना चाहता हूँ कि इस आन्दोलन में जो लोग हमारी सलाह और सूचना स्वीकार करना न चाहते हों, उन लोगों पर हम जरा भी दबाव नहीं डाल सकते । इस आन्दोलन का मूल उद्देश्य यह है कि सबकी अधिक-से-अधिक स्वतंत्रता की रक्षा की जाय । इसलिए जो लोग गलत या सही तौर पर पकड़े गये हों उन्हें छोड़ देने की माँग सत्याग्रही बलपूर्वक नहीं कर सकते ।

हमारी प्रतिज्ञा का अर्थ यह है कि हम जेल की सजा मोल ले लें। जब तक कमेटी 'दगा-कानून' तोड़ना तय न करे, तब तक सत्याग्रहियों का फर्ज है कि कुछ भी भागदौड़ किये बिना मजिस्ट्रेट की गिरफ्तार जाने की आज्ञा का पालन करें और इस प्रकार यह बता दें कि वे कानून को माननेवाले हैं। मैं आशा रखता हूँ कि आगामी रविवार की सत्याग्रही-सभाओं में जो भाषण होंगे, वे आवेश, क्रोध या रोषरहित होंगे। इस आन्दोलन की विजय का आधार पूर्ण शांति आत्मसंयम, सत्यपालन तथा कष्टसहन की असीम शक्ति पर है। (बाद की लगभग सात पंक्तियाँ कट गयी हैं।)

६ ४ १९

रविवार का दिन बम्बई में बकर्नेस मनाया गया। लगभग दो लाख आदमी समुद्र पर इकट्ठे हुए थे। माधवबाग तक जिस शांति से उन्होंने कूच की, वह किसीको भी हैरत में डालनेवाली थी। मालिकों की इजाजत न होने के कारण मिल-मजदूर शरीक न हो सके थे। परन्तु उन्हें शरीक होने को मजबूर भी नहीं किया गया। मुसलमानों ने भी कमाल कर दिया। पीला-हाउस के ऊपर की मस्जिद में बापू, श्रीमती नायडू तथा जमनादास गये और दिल हिला देनेवाले भाषण दिये। रामनवमी को स्वदेशी-व्रत लेने का निश्चय किया, मस्जिद में एक और व्रत लेने की सूचना दी कि जुम्मा मस्जिद में एकत्र होकर हिन्दू-मुसलमान सत्याग्रह का व्रत लें कि एक-दूसरे के साथ दिल साफ करके वे आइंदा इस तरह बर्ताव करेंगे मानो दोनों एक ही हैं और सपने में भी जुदा नहीं थे और न होंगे।

'इण्डियन सोशल रिफॉर्मर' में 'अपमान और प्रार्थना का दिन' के बारे में बहुत सुन्दर अग्रलेख प्रकाशित हुआ।

बहुत-से पत्र आये। उनमें सबसे बढ़िया पत्र बड़ा दादा द्विजेन्द्रनाथ टागुर का था :

"अति पूजनीय मित्र श्री गांधी,

"अपने हृदय की गहराई से चाहता हूँ कि हमारे उस्ते रास्ते ले जाये गये लोगों को पाप पर पुण्य की विजय प्राप्त करने के अपने कार्य में आप अटल होकर लगे रहें। कभी-कभी मुझे ख्याल होता है कि आप लोगों से तपस्या और उपवास करने की जो बात कहते हैं, वह खास जरूरी वस्तु नहीं और वैसा नहीं करना चाहिए। परन्तु तुरत ही दूसरा विचार आता है कि हमें अपने दृष्टिकोण से क्या इस चीज का न्याय करने का अधिकार है? आपको ऐसी ऊँची जगह से प्रेरणा मिल रही है कि आपके वचनों और कृत्यों के औचित्य-अनौचित्य के बारे में शंका उठाने के बजाय हमें तो साभार स्वीकार करना चाहिए कि इनमें परम पिता का दिव्य ज्ञान और दिव्य शक्ति से भरा हुआ आदेश ही है।

सर्वशक्तिमान् और परम कृपालु परमात्मा इस भारी परीक्षा में आपकी ढाल और आपकी शक्ति बनकर रहे।

आपका प्यारा बूढ़ा बड़ा दादा"

यह पत्र मि० हार्निमैन को छपने के लिए भेजते हुए बापू ने उन्हें लिखा :

"प्रिय हार्निमैन,

इसके साथ एक बड़ा सुन्दर पत्र भेज रहा हूँ। आप द्विजेन्द्र बाबू को तो जानते हैं। सर रवीन्द्रनाथ टागोर के वे सबसे बड़े भाई होते हैं। अपने स्वर्गीय पिताजी देवेन्द्रनाथ टागोर की तरह वे भी असल में संन्यासी जीवन बिताते हैं। मेरे अनुमान से उनकी उम्र अस्सी बरस से भी ऊपर है। मेरे ख्याल से यह पत्र छापने लायक है। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि इसका ब्लाक लाया जाय। परन्तु यह पत्र आपको इसी काम के लिए नहीं भेज रहा हूँ। मुझे तो यह कहना है कि [illegible] प्रेम की स्याही में कलम डुबोकर लिखो। मैं आपको इसका [illegible] दर्शित हो गया हूँ कि ऐसा भक्त जिसमें भी आपने अपनी तरह शान्ति

है। मेरा सुझाव आपको स्वीकार हो तो मैं यह भी कहना चाहता हूँ
कि इस लेख के नीचे आपके हस्ताक्षर होने चाहिए।"

७-४-१९

आज 'इंडियन प्रेस एक्ट' भंग करने के लिए सरकार में दर्ज कराए
बिना नीचे लिखा अखबार प्रकाशित किया :

(यह पत्र पढ़िये उसकी नकल कीजिये और मित्रों में इसका प्रचा
कीजिये।)

सत्याग्रही

सम्पादक : मोहनदास करमचंद गांधी
लेबरनम रोड, गामदेवी, बम्बई

अंक १ ७-४-१९१९ मूल्य एक पै

[हर रविवार को सुबह दस बजे प्रकाशित होगा]

ग्राहकों से :

यह पत्र कानून के अनुसार रजिस्टर्ड नहीं कराया गया। इसलि
इसका वार्षिक चंदा नहीं हो सकता। यह विश्वास दिलाना भी संभव ना
कि पत्र बिना किसी रुकावट के जारी रखा जा सकेगा। सम्पादक को सरका
किसी भी समय पकड़ सकती है। जब तक हमारा देश इस तरह स्थि
में न आ जाय कि जो सम्पादक पकड़ा जाय, उसका स्थान लेने के लि
सम्पादकों की धारा जारी रह, तब तक यह विश्वास भी नहीं दिलाया
सकता कि यह पत्र नियमित रूप में प्रकाशित होता ही रहेगा। सम्पाद
का प्रवाह अवश्य जारी रहे, इसके लिए प्रयत्न करने में हम कोई कस
नहीं रखेंगे।

समाचारपत्र निकालने-सम्बन्धी जो कानून है, उसे सदा-सर्वदा तोड़
ही रहने का हमारा इरादा नहीं है। इसलिए जब तक रौलट-कानून र
नहीं हो जाये, तभी तक यह पत्र जारी रहेगा।

हमारा ध्येय :

'सत्याग्रही' क्या करेगा, इस प्रश्न के उत्तर में हमारे ध्येय का स्पष्टीकरण आ जाता है। रौलट-कानून रद्द कराने के उद्देश्य से ही 'सत्याग्रही' ने जन्म लिया है। इसलिए इसका काम यह होगा कि सत्याग्रह के सिद्धान्तों का अनुसरण करके किस तरह ये कानून रद्द कराये जायँ। सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करनेवाले का फर्ज है कि कुछ कानूनों का सविनय भंग करके जेल को निमंत्रित करे। एक दृष्टि से इस पत्र का प्रकाशन ही इसका उत्तम मार्ग बता देता है, क्योंकि यह पत्र प्रकाशित करने में ही कानून का सविनय भंग मौजूद है। आजकल सार्वजनिक कामों में यह विचार फैला हुआ है कि उन कामों को करनेवाले खुद जैसा बोलें वैसा करने के लिए बँधे नहीं होते। यह असंगति एक भारी दोष है। सार्वजनिक काम करने का यह गलत तरीका है। सत्याग्रह की रीति अनोखी है। उसमें आचरण ही उपदेश है। इसलिए इसमें जो कुछ कहा जायगा वह अपने अनुभव की कसौटी पर कसकर देखा हुआ होगा। इसमें जो उपाय बताये जायँगे वे अच्छी तरह आजमाकर देखी हुई दवा जैसे होंगे। इस प्रकार हमारी सलाह स्वयं अनुभूत होने के कारण उसे स्वीकार करने में पाठक नहीं हिचकिचायेंगे।

खबरें :

कल बहुत भारी घटनाएँ हो गयीं। परन्तु सत्याग्रहियों के अविरत प्रयास से मिल-मजदूरों ने अपनी-अपनी मिलों में काम पर रहकर—क्योंकि मालिकों की तरफ से उन्हें छुट्टी नहीं मिल सकी थी—जिस ढंग से राष्ट्र-दिवस मनाया, उसके जैसा जबर्दस्त काम कोई नहीं था।

आज ही सत्याग्रही लोगों के नाम नीचे लिखी सूचनाएँ पत्रिका के रूप में छपवायी गयीं :

'अब हमें किसी भी समय पकड़े जाने की आशा रखनी चाहिए। इसके लिए यह ध्यान में रखना चाहिए कि किसी मनुष्य को गिरिफ्तार

किया जाय, तो उसे कोई भी कठिनाई खड़ी किये बिना गिरफ्तार हो जाना चाहिए। अदालत में हाजिर होने का समन मिले तो अदालत में हाजिर हो जायँ। उन्हें अपने मुकदमे में किसी वकील को नहीं रखना चाहिए और न कोई सफाई ही देनी चाहिए। अगर जुर्माना किया जाय और वह न देने पर कैद की सजा हो, तो स्वीकार कर लेना चाहिए। केवल जुर्माना ही किया गया हो तो जुर्माना नहीं देना चाहिए और उसके बदले में अपनी कोई सम्पत्ति हो तो उसे बिक जाने देना चाहिए। अपने साथी को पकड़ा जाय या कैद की सजा दी जाय, तो बाकी के सत्याग्रहियों को उसके लिए शोक का या ऐसा और कोई प्रदर्शन नहीं करना चाहिए। बार-बार यह कहने की जरूरत है कि हम कैद को निमंत्रण करने के लिए निकल पड़े हैं, इसलिए जब हमें कैद मिले, तो उसकी कोई शिकायत नहीं हो सकती। एक बार जेल में चले गये, तो जेल के सभी नियमों का हमें पालन करना है, क्योंकि जेल में सुधार कराना हमारी इस लड़ाई का भाग नहीं है। दूसरे मामूली कैदी करते पाये जाते हैं वैसी किसी भी किस्म की गुस्ताखी का आश्रय सत्याग्रही हरगिज न लें। सत्याग्रही जो कुछ करें वो मुलायमियत से ही हो सकता है।"

८ ४ १९

रात को दिल्ली के लिए रवाना हुए। इससे पहले हिन्दू-मुसलिम एकता और स्वदेशी-व्रत के बारे में दो पत्रिकाएँ लिखकर अखबारों में भेज दीं।*

९ ४ १९

शाम को दिल्ली के नजदीक पलवल नामक स्टेशन के पास दिल्ली और पंजाब में न घुसने और बम्बई प्रान्त में ही रहने का हुक्म तामील किया गया। बापू ने आज्ञा का अनादर किया इस लिए उन्हें पकड़ लिया

* ये पत्रिकाएँ परिशिष्ट ३ में दी गयी हैं।

गया। मुझे दिल्ली जाकर श्रद्धानन्दजी को खबर देने और लोगों को शांत रखने के लिए कहा। अपना सन्देश भी मुझे जल्दी से लिखवा दिया। मैंने वल्लभभाई को तार से खबर दे दी। श्रद्धानन्दजी से मिलने के बाद मैं दिल्ली से बम्बई के लिए रवाना हुआ। मगनलालभाई और नरहरि को बम्बई मिलने बुलाया।

यह है बापू का सन्देश :

॥ 'मेरे देशबन्धुओं को

'मेरे लिए यह बड़े सन्तोष की बात है और आपके लिए भी होनी चाहिए कि मैं जो मांग रहा हूँ, वह मुझे मिल गया। पंजाब और दिल्ली सरकार की तरफ से मुझे हुक्म मिले हैं कि मैं पंजाब और दिल्ली की हद में न घुसूँ। इसके सिवा भारत-सरकार की तरफ से मुझे आज्ञा हुई है कि मैं बम्बई प्रान्त की हद न छोड़ूँ। जिन अफसरों ने मुझ पर यह हुक्म तामील किया है, उन्हें बता देने में मुझे कुछ भी देर न लगी कि अपनी प्रतिज्ञा के कारण इन आज्ञाओं का उल्लंघन करना मेरा कर्तव्य है। तद्नुसार मैंने आज्ञाओं का उल्लंघन किया है, इसलिए थोड़ी ही देर में गिरफ्तार होकर मैं स्वतंत्र मनुष्य बन जाऊँगा। मेरे शरीर को वे बंधन में डाल देंगे। जिस समय रौलट-कानून हमारे देश के कानून की पुस्तक को कलंकित कर रहे हैं, उस समय बाहर मुक्त रहना मुझे बहुत खटक रहा था। अब आप सबको सत्याग्रह-प्रतिज्ञा में स्पष्ट बताया हुआ कर्तव्य पालन करना है। उसका पालन करते हुए आप देखेंगे कि वह आपकी कामधेनु है। मैं आशा रखता हूँ कि मुझे पकड़ने से आप किसीको गुस्सा नहीं आयेगा।

'मैं जो मांग रहा था, वह मुझे मिल गया अर्थात् या तो रौलट कानून रद हो जायें या मैं जेल में बंद कर दिया जाऊँ। अगर हम सत्य के मार्ग से जरा भी विचलित होंगे या अंग्रेज या हिन्दुस्तानी किसीके विरुद्ध भी हिंसा करेंगे तो हम शुरू किये हुए काम को जरूर बिगाड़ देंगे।

"हिन्दू-मुसलिम एकता की जड़ें लोगों में इस समय अच्छी तरह जमी हुई दिखाई देती हैं। मैं आशा रखता हूँ कि यह सत्य घटना बन जायगी। मुझे विश्वास है कि अखबारी बयान में मैंने जो सूचनाएँ की हैं, उन पर अच्छी तरह अमल किया जाय, तभी यह सत्य घटना बन सकती है। इस मामले में मुसलमानों से हिन्दुओं की जिम्मेदारी ज्यादा है, क्योंकि मुसलमान अल्पसंख्यक जाति हैं। मैं आशा रखता हूं, हिन्दू अपनी जिम्मेदारी इस ढंग से निभायेंगे जिससे हमारे देश की शोभा हो।

"हमने स्वदेशी-व्रत लेने का जो विचार किया है, उसके बारे में मैंने कुछ सूचनाएं की हैं। उन पर आप गंभीरतापूर्वक ध्यान दीजिये। ज्यों-ज्यों सत्याग्रहसंबंधी आपके विचार परिपक्व होते जायँगे, त्यों-त्यों आपको मालूम होता जायगा कि हिन्दू-मुस्लिम एकता और स्वदेशी सत्याग्रह के ही अंग हैं।

"मेरा दृढ़ विश्वास है कि इंग्लैण्ड से टपक पड़नेवाले सुधार कितने ही खुले दिल से दिये जायें, तो भी उनसे नहीं, बल्कि अपने खुद के कष्ट-सहन से ही हम अपने ध्येय तक पहुँच सकेंगे। अंग्रेज लोग महान् जाति के हैं परन्तु यदि कमजोर लोग उनके सम्पर्क में आयें तो वे उन्हें दबा देते हैं। वे खुद बड़े बहादुर हैं व स्वयं बहुत से कष्ट भुगते हुए हैं, इसलिए वे बहादुरी और कष्ट-सहन की कद्र करना जानते हैं। हम अदम्य साहस और अपार कष्ट-सहन के गुण पैदा करेंगे, तभी उनकी बराबरी के हिस्सेदार बन सकेंगे। अलबत्ता उनकी और हमारी संस्कृति में बुनियादी फर्क है। आखिरी फैसले के लिए वे हिंसा या पशुबल के प्रयोग में विश्वास रखते हैं। हमारी संस्कृति के विषय में मेरी समझ यह है कि अन्तिम निर्णय के लिए हमसे आत्मबल या नैतिक बल के प्रयोग की आशा रखी जाती है। सत्याग्रह यही वस्तु है। हमारी प्राचीन संस्कृति ने जो मार्ग हमें बताया है उस मार्ग से हम विचलित हो गये हैं। इसीलिए हम उन दुःखों में पड़ रहे हैं, जिनसे बचा जा सकता है।

"मैं आशा रखता हूँ कि हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी,

यहूदी और दूसरे सभी लोग जिन्होंने हिन्दुस्तान में जन्म लिया है और जिन्होंने भारत-भूमि को अपनाया है इन राष्ट्रीय मतों में पूरी तरह भाग लेंगे। मुझे तो यह भी आशा है कि इसमें स्त्रियाँ पुरुषों से जरा भी कम नहीं रहेंगी।"

११४ ११

आज दोपहर को एक बजे बापू को बम्बई लाकर छोड़ दिया गया। उनका इरादा तो कानून भंग करके तुरन्त दिल्ली जाने का था। किन्तु बम्बई पहुँचने पर उन्हें पता लगा कि लोग दंगे पर उतारू हो रहे हैं, उन्हें शान्त करने के लिए बापू पायधुनी पहुँचे, जहाँ भारी भीड़ जमा हो गयी थी। भीड़ को तितर-बितर करने घुड़सवार खड़े थे। उन पर भीड़ ने पत्थर फेंकना शुरू कर दिया। बापू लोगों से शान्त रहने की विनती करने लगे। परन्तु बापू की आवाज भीड़ तक न पहुँच सकी। अन्त में भालेवाले घुड़सवारों ने भीड़ पर हमला करके लोगों को बिखेर दिया। बापू पुलिस-कमिश्नर से मिले। उसने कहा कि लोग आपके काबू में नहीं रहेंगे और हम सख्त उपाय न करें तो अधिक हानि होगी।

शाम को चौपाटी पर सभा की गयी। बापू ने नीचे लिखे अनुसार अपना लिखित सन्देश लोगों को पढ़ सुनाया :

"मैं इस वक्त पिछली बातों में नहीं जाना चाहता। नयी ही बात सुनाऊँगा। मुझे सरकार ने छोड़ दिया है और मैं इस समय आपके सामने खड़ा हूँ। मैं दो दिन कैदी रहा। वह मेरे लिए कैद नहीं स्वर्ग समान थी। सरकारी अफसरों ने मेरी अत्यंत सेवा की है। मुझे जो कुछ चाहिए था वो सब मुहैया किया गया था और मैं जितनी सुविधायें बाहर भोग सकता हूँ, उससे ज्यादा सुविधा मैंने वहाँ अपने लिए पायी। मुझे बंधन में रखा गया इसके विरुद्ध इतने अधिक स्थानों पर इतनी अधिक उग्रता कैसे हुई यह मैं जरा भी नहीं समझ सकता। यह सत्याग्रह नहीं, दुराग्रह से भी बुरी चीज है।

'जो सत्याग्रह की मंडली में शरीक हुए, उनसे यह आशा रखी जाती थी कि कुछ भी हो जाय, तो भी ज़रा भी मारपीट नहीं करनी चाहिए, पत्थरों के वार नहीं करना चाहिए और किसीको भी दुःख नहीं देना चाहिए। परन्तु इसने तो मंजर में पत्थर फेंके, रास्तों को आमदरफ्त बन्द करने के लिए रास्ते में पत्थर रखे, लकड़े रख दिये। यह कोई सत्याग्रह नहीं कहलाता।

'लगभग ५० आदमियों को गिरफ्तार किया गया है, उन्हें छोड़ देने की माँग की गयी। चुपचाप गिरफ्तार होना हमारा धर्म है। मारपीट करने वाले गिरफ्तार हो जायें तो उन्हें छुड़ाने की कोशिश करना अधर्म है। इसलिए हम किसी भी तरह पकड़े हुए लोगों को छोड़ने की माँग नहीं कर सकते।

मुझसे पूछा गया है कि जो चीज़ सत्याग्रह की लड़ाई से पैदा हो, उसके लिए सत्याग्रही जिम्मेदार हैं या नहीं? मैंने कहा है कि उसके लिए सत्याग्रही जिम्मेदार हैं। इसलिए उन्हें सूचना कर देना चाहता हूँ कि अगर हम इस लड़ाई को ज़रा भी मारपीट के बिना खून-खराबी के बिना नहीं चला सकते हों, तो मुझे लड़ाई बन्द ही कर देनी पड़ेगी या उसे दूसरा ही और अधिक संकुचित स्वरूप देना पड़ेगा। इतना ही नहीं ऐसी भी नौबत आ सकती है कि मुझे अपने ही विरुद्ध सत्याग्रह करना पड़े।

सत्याग्रही मरेंगे तो इसमें मुझे ज़रा भी दोष दिखाई नहीं देता। उनकी मृत्यु से मुझे दुःख ज़रूर होगा किन्तु इसे मैं लड़ाई के सिलसिले में दिया गया उचित बलिदान मानूँगा। लेकिन जो सत्याग्रही नहीं हैं, जो उसमें शरीक नहीं हैं और जो उसके विरुद्ध हैं, उन्हें नुकसान होगा, तो इसका पाप हरएक सत्याग्रही को लगेगा और मुझ पर करोड़ गुना अधिक रहेगा। अपनी इस जिम्मेदारी को समझकर मैं लड़ाई में पड़ा हूँ।

"मैंने सुना है कि अंग्रेज भाइयों को भी चोटें आयी हैं। शायद किसीकी मौत भी हुई हो। तो, यह सत्याग्रह के लिए ज़बरदस्त लांछन है। मेरे लिए तो अंग्रेज भी अपने भाई के समान हैं। उन पर कटाक्ष नहीं किया जा सकता। मुझ जैसे के लिए सत्याग्रह के प्रति किया गया

एसा घोर पाप असह्य हो जायगा। राजा की तरह अपने विरुद्ध भी सत्याग्रह करना मुझे आता है। ऐसे अवसर पर अपने विरुद्ध मैं कौन-सा सत्याग्रह कर सकता हूँ? कौन सा प्रायश्चित्त एसे पापों के लिए कर सकता हूँ? यह सत्याग्रह और प्रायश्चित्त एक ही है। वह यह कि मैं अनशन व्रत ले लूँ और जरूरत आन पड़े तो इस शरीर को कुर्बान करके सत्याग्रह की विजय सिद्ध करूँ।

मैं आप सबसे बार-बार प्रार्थना करता हूँ कि आप सब शान्त रहिये, शान्ति बनाये रखें और आइंदा ऐसा कोई काम न करें, जिससे बंबई के लोगों पर जरा भी कलंक लगे।

'पुलिस के बर्ताव का विचार हमें नहीं करना है। वह विचार करने का यह स्थान भी नहीं है। मुझे इतना तो कहना ही पड़ेगा कि गोली न चलाने के लिए हम गवर्नर महोदय और पुलिस के आभारी हैं। परन्तु इस अवसर पर याद रखने की मुख्य वस्तु तो यह है कि हम पूरी तरह शान्ति रखना और ज्ञानपूर्वक दुःख भोगना सीखें। इसके बिना सत्याग्रह हरगिज नहीं चल सकता।

[ता॰ १२ से २ अप्रैल तक की डायरी महादेवभाई से नहीं लिखी थी। अहमदाबाद में दंगे छिड़ जाने के समाचार १२ ता॰ को बंबई में मिले। इसलिए उसी रात को बापू अहमदाबाद के लिए रवाना हो गये। सुबह अहमदाबाद पहुँचे तब वहाँ फौजी कानून जारी था। स्टेशन से सीधे कमिश्नर मिस्टर प्रैट से मिलने उनके बँगले पर गये। उनके सामने जो घटनायें हुईं, उनके लिए दुःख प्रकट किया और लोगों को समझाने के लिए सभा बुलाने की इजाजत माँगी। उन्होंने आश्रम में सभा करने की मंजूरी दी। परन्तु उसी दिन शहर में सबको सभा की खबर नहीं दी जा सकती थी इस ख्याल से सभा १४ ता॰ को दोपहर में रखी गयी, ताकि अँधेरा पड़ने से पहले लोग अपने-अपने घरों में पहुँच जायें। लोगों को आने-जाने में सिपाहियों की तरफ से कोई तकलीफ न ... ... गया था।

सभा बड़ी अच्छी हुई। दो-एक हजार मनुष्यों की उपस्थिति थी। श्री वल्लभभाई ने बापू का लिखा हुआ भाषण लोगों को पढ़ सुनाया। यह भाषण और उसके बाद लोगों को सत्याग्रह का रहस्य समझाने के लिए उनकी प्रकाशित की हुई पत्रिकाएँ परिशिष्ट दो में दी गयी हैं। इस मौके पर अपने प्रायश्चित्त के रूप में बापू ने तीन दिन के उपवास किये थे। बाद में दंगे में शरीक होनेवाले लोगों से रूबरू मिलकर उन्हें इस रास्ते से हटाने का काम शुरू किया। इस संबंध में उनका खुफिया पुलिस के साथ कुछ संघर्ष हुआ। इस विभागवाले कहते थे कि जब आपके पास हकीकत आ गयी है, तो दंगा करनेवालों को सजा दिलवाने में आपको मदद करनी चाहिए। बापू का यह कहना था कि मैं तो सुधारक हूँ। मेरा काम अपराधी से पश्चात्ताप कराकर उसे सुधारना है। मैं पुलिस को खबर देकर उन्हें सजा दिलाने लगूँ, तो मुझसे सुधारक का काम नहीं हो सकता।

थोड़े दिन आश्रम में रहकर बापू बंबई चले गये। वहाँ गवर्नर के साथ उनकी मुलाकात हुई। वहाँ से लौटने पर उनके साथ हुई बातचीत महादेवभाई ने लिखी है।

२१ ४ १९

आज अहमदाबाद आना हुआ। थोड़ी देर पहले ही वल्लभभाई का पत्र आया हुआ था। अहमदाबाद में शाही बाग के सभी बँगले खाली कराकर फौज भर दी गयी है, गुजरात-क्लब में सेना भर दी गयी है। लाहौर की तरफ से हवाई जहाज मँगाये हैं। उनके अपने बंगले के आसपास सेना रख दी गयी है। यह भी पता चला कि गुजरात पर कोई मार्शल आर्डिनेंस नं ४ लागू कर दिया गया है। मुझे कुछ खीज कुछ उत्तेजना और कुछ घबराहट हुई। मुझे ख्याल हुआ कि अब कुछ नयी-पुरानी बात होनेवाली है। बापू कासाया से बैठे, मैं मादर रोड से बैठा। एक-दो मित्रों को मैंने इशारा कर दिया था इसलिए उनमें से एक मेरे

आप गाड़ी में चढ़कर बैठ गये थे। दूसरे लोग गांधीजी के साथ जाने की उत्सुकता दिखा रहे थे। इसलिए गांधीजी ने कहा : "अवसर के लिए तैयार रहना।" मैंने कहा : "क्या अवसर आज ही नहीं आ गया है?' गांधीजी बोले "हाँ नहीं क्या आ सकता।" मुझे जरा घबराया हुआ देखकर पूछने लगे : 'तुम सब आज घबराहट में हो?" मैंने कहा : 'हाँ घबराने का कारण आपको प्रतीत नहीं होता?' वे कहते हैं : "जरा भी नहीं—रत्तीभर नहीं।" मैंने कहा : 'मैं यह नहीं कहना चाहता कि आप घबरा गये हैं या आपके लिए घबराने का कारण है। ऐसा भी कहीं कोई कह सकता है? मैं तो पूछता हूँ कि क्या हमारी घबराहट आपको सकारण नहीं लगती?" वे बोले : 'हाँ-हाँ, यह तो मैं समझा। तुम्हारी घबराहट के लिए ही मैं कहता हूँ कि यह अकारण है।" मैंने कहा : आपका यह खयाल क्यों है? वल्लभभाई की पकड़ की हुई तैयारी क्या सूचित करती है? क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि आपको सरकार ने थोड़े दिन छोड़ा, सो अपना बल संगठित करने को छोड़ा, जरा दम लेने का वक्त जुटाने के लिए छोड़ा? यह सारी तैयारी मुझे तो आपको पकड़ने की दीखती है। जरा हँसकर बोले : 'अरे क्या बात करते हो? मुझे क्या पकड़ेंगे? उनकी ताकत नहीं। उनका मकदूर नहीं मकदूर। यह सच है कि औरों को पकड़ेंगे। शायद और बहुतों को पकड़ेंगे, परन्तु मुझे नहीं पकड़ सकते। मुझे ये लोग अलग बरतर कर देना चाहते हैं।" मैंने कहा : 'बापू, आप भले ही ऐसा कहें परन्तु मेरा खयाल है कि ऐसा करने की भी इनकी हिम्मत हो जायगी। आपको क्या कल ही नहीं पकड़ लेंगे? मैं यकीनन कहता हूँ कि यहाँ पहले पकड़ा उस समय मेरी आँख से एक आँसू निकला था। इस बार वह भी हरगिज नहीं निकलेगा परन्तु मैं तो सहज पूछ लेता हूँ। और बापू, क्या आप पर गोली नहीं चला देंगे? इन पर आ बने तो गोली भी चला देंगे।" बापू : 'अरे क्या बात करते हो? इनका शासन कैसे हो सकता है? यह तो बड़ी करुण घटना हो जायगी। मैंने कहा : सरकार की मैद और सर विलियम विन्सेट ऐसे

हैं इसलिए उन्हें ख्याल हो सकता है कि सबको रवा दूँ।" बापू ने कहा : 'दक्षिण अफ्रीका में सच्चे सत्याग्रही तो उँगलियों पर गिनने लायक ही थे, यहाँ सच्चे सत्याग्रही बहुत अधिक हैं। कुछ भी हो, मैं देख रहा हूँ कि देश का सितारा बड़ा बुलन्द है। ऐसा ऊँचा पहुँचेगा कि पूछो नहीं। मुझ पर गोली चला दें, तो चलाना ही है काम, अमन अमन काम और ऐसा होने पर जो रक्तपात हो, उसके लिए मैं रत्तीभर भी जिम्मेदार नहीं समझा जाऊँगा।" मैंने कहा : "बापू, यह पूछना जरा विचित्र लगेगा। परन्तु पूछ हो लेता हूँ कि अगर आपको फाँसी लगा दें और वैसा होने पर आप पर मुग्ध हुए अनुयायियों को गुस्सा आ जाय और वे खून बहावें, तो यह आपकी आत्मा को दुःख पहुँचाना होगा न?' बापू कहने लगे : 'बेशक, भारी दुःख होगा। यही कहा जायगा कि वे लोग सत्याग्रह का एक अक्षर भी नहीं समझे। सत्याग्रह अपवित्र हो जायगा उसे अपार हानि पहुँचेगी। तुम केवल इतना कर सकते हो कि ऐसे जबर्दस्त सत्याग्रही कदम उठाते रहो कि तुम्हें भी फाँसी लगा दें।' मैंने कहा : 'बापू, सच है। अच्छी तरह पालन किया जायगा।'

इसके बाद उन्होंने सोने की आज्ञा दी। परन्तु मेरा मन चक्कर खा रहा था इसलिए कुछ कैसे सोता? मैंने कहा : "एक बात, यदि इजाजत हो तो।" हँसते-हँसते कहा : 'अच्छा पूछो।' मैंने बात आगे बढ़ायी : 'बापू एक बार आप कहते थे कि मनुष्य को उसकी कृति से अलग करके विचार नहीं किया जा सकता। आपको जो लोग पूछते हैं, उन्हें आपके कार्यों के कारण ही पूछना चाहिए। आप हमें बार-बार कहते थे कि मुझे पूछना हो तो मेरे कार्य को पूछो, मेरे कार्यों का अनुसरण करो। तो अब आज मातावस्था के आपके एक वाक्य से मुझे यह बात याद आ रही है और उस वाक्य पर विचार करने की इच्छा होती है। आपने मुझ कहा कि 'हमें मनुष्य के प्रति तिरस्कार कैसे हो सकता है? उसके कार्य के प्रति हो सकता है। अगर आपका प्रथम उपदेश सच हो, तो इस दूसरे में जरा त्रुटि आ जाती है। जैसे हम मनुष्यों की उनके कार्यों से अलग

करके नहीं पूज सकते, वैसे ही एक आदमी की उसके कार्यों से अलग रख कर निन्दा भी नहीं कर सकते।"

बापू बोले : "तुम भूल कैसे जाते हो ? काम के लिए तिरस्कार हो तो वह हमें ऊपर उठाता है। मनुष्य के लिए तिरस्कार हो, तो वह हमें गिराता है और उस मनुष्य का कुछ भी लाभ नहीं करता। मनुष्य की उसके गुणों के लिए पूजा की जाय, तो हम ऊपर उठते हैं।" मैंने कहा : "मैं नैतिक दृष्टि से आपकी बात स्वीकार करता हूँ। परन्तु मानस-शास्त्र के खयाल से यह असंभव-सी लगती है।' बापू : "मेरी समझ में ही नहीं आता कि तुम्हें क्यों असंभव लगती है। तुमने तो इस तरह पर (मेरा सिर का) रख दिया कि मनुष्य के गुणों के लिए उसकी पूजा की जाय तो उसके दोषों के लिए उसकी निन्दा की जाय। परन्तु यह बात ठीक नहीं, मनुष्य हमेशा गुणों या कार्यों की पूजा नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ शाक्रिआर और मेरेथान की मेरे काम से काम रही मालूम पड़ती हैं परन्तु मुझे मैं खूब पूजते हैं। तब जैसे उनके लिए मुझे पूजने की खातिर मेरे कामों को पूजना कठिन हो जाता है, वैसे ही मनुष्य के बुरे कामों के लिए उस मनुष्य की निन्दा से दूर रहना साधारण आदमी के लिए कठिन है। इसलिए मानसशास्त्र की दृष्टि से तुम्हें यह असंभव प्रतीत हो सकता है, परन्तु मुझे ज़रा भी नहीं होता। देखो न उस दिन मैं गवर्नर से मिला। उसने अत्यंत खराब उद्गार प्रकट किये। किन्तु क्या मुझे उसके प्रति ज़रा भी रोष हुआ था ? तिलभर भी नहीं हुआ। मुझे मौका मिल जाय तो मैं इस आदमी की खूब सेवा कर डालूँ। मुझे किस कारण उसके प्रति तिरस्कार पैदा हो ? संसार में एक भी मनुष्य यह समझकर कि 'मैं दुष्ट हूँ', दुष्कर्म नहीं करता। मनुष्य स्वभाव के अनुसार काम करता है। तब उसे क्या दोष दिया जाय ? मुझे धर्मेको के प्रति ज़रा भी तिरस्कार नहीं होता, इसका क्या कारण है ? मैं देख सकता हूँ कि शासन करनेवाली जातियाँ ऐसा ही करती हैं। मेरा फ़र्ज़ तो उसकी सेवा करके उसे सुधारना है। वह श्रीमती कसेण्ड आजकल कितना ज़हर

उगल रही है उसका किसीसे उगला है ? परन्तु क्या उसके प्रति मुझे जरा भी तिरस्कार है ? उसने इतने वर्ष देश की सेवा की और बुढ़ापे आने पर उसकी मति फिर गयी तो उसकी निन्दा की जाय या उसे दया का पात्र माना जाय ? निन्दा करना तो गिरे हुए को लात मारने के बराबर है। मैं तो वर्क कमिटि-कमेटी की बैठक में खास तौर पर उसीके पास की कुरसी पर बैठा था और इस बात को बराबर सावधानी रख रहा था कि कोई उसका अपमान न करे। कोई अपमान करता तो तुरंत उसे धमका देता।

'मनुष्य की तिरस्कार-वृत्ति उसकी दुर्बलता की सूचक वस्तु है। तिरस्कार कमजोर आदमी को ही शोभता है। प्रेम कहो या दया, यह बलवान् मनुष्य की निशानी है। तिरस्कार-वृत्ति धर्म-वृत्ति का अभाव सूचित करती है। मनुष्य की दया उदारता में निहित है। उदारता ही दया में निहित है और ऐसे उदारचरित ही सच्चे मर्द हैं। मैं दब गया, निरुत्तर हो गया। दो शब्द बोला। "मैं अच्छी तरह समझ गया हूं। मैंने मानसशास्त्र की दृष्टि से असंभव कहा सो एक प्रकार से अब सच मालूम होता है कि इसी प्रकार की मेरी मानसिक दशा में यह चीज—बाली कामों की निन्दा की जाय काम के करनेवाले की निन्दा न की जाय यह वृत्ति—असंभव है। मेरी धर्मवृत्ति इतनी शिथिल है, इसमें आश्चर्य नहीं। आज दिनभर मैं इस शिथिलता के वशीभूत हो गया था। पंचट को परेश को गवर्नर का मैं धिक्कारता रहा हूं। यह मेरे दिमाग की कमजोरी जाहिर करता है। अब यह भाव नहीं रहा यह भी कह देता हूं। बापू बोले : 'हॉ यह समझ मैं आने योग्य वस्तु है। मुझे तो जरा भी तिरस्कार नहीं होता यह मैं ठीक कहता हूं। लेकिन यह कहकर मैं अपने में भारी उदारता होने का आरोप मोल ले लेता हूं। परन्तु कोई हर्ज नहीं। जो वस्तु मुझमें है, उसके कहने में मुझे संकोच कैसा ? मुझे पचास वर्ष हो गये तो क्या मैं किसीसे उनचास कहूंगा ? मेरा शरीर घट रहा हो या बढ़ रहा हो जैसा हो वैसा मुझे कहना ही चाहिए। यह बात

भी ऐसी ही है। मैं उदारता में प्रतिदिन आगे बढ़ रहा हूँ। यह बात मैं अस्वीकार कैसे कर सकता हूँ? ऐसा करूँ, तो वह मिथ्या विनय कहा जायगा। मैं कहता हूँ कि आजकल मुझमें यह चीज़ अच्छी तरह प्रकट हो रही है। सचमुच मुझे किसीके लिए तिरस्कार नहीं होता। मेरा भाई शराबी चोरी करनेवाला बीड़ी पीनेवाला था। क्या मैं उसे धिक्कारता? नहीं, कभी नहीं। मैंने उससे कहा था कि भाई मैं तब तक तुम्हारे साथ सम्बन्ध नहीं रखूँगा, जब तक तुम ये बुराइयाँ नहीं छोड़ दोगे। परन्तु यह सब कुछ प्रेम से ही कहा था।" मैंने कहा : 'बापू इस मिसाल में तो यह उत्तर दिया जा सकता है कि वे आपके भाई थे इसलिए आप प्रेम से व्यवहार कर सकते थे।' तुरन्त ही उत्तर मिला : 'ठीक है। इसीलिए मैंने सत्याग्रह-पत्रिका नं. ३ में कहा है कि कुटुम्ब में प्रेम से बरताव करनेवाला इन्सान पशु-कोटि से निकलकर एक सीढ़ी चढ़ जाता है। वही प्रेम अपने गाँव के लोगों के प्रति अनुभव करने वाला मनुष्य उससे भी जरा आगे बढ़ा हुआ होता है। भारत के सभी लोगों के लिए अनुभव करनेवाला उससे भी कुछ आगे बढ़ा हुआ है। इसी तरह सारे संसार में अपना कितना भी विरोध हो, उसके साथ तिरस्कार, द्वेष न करके प्रेम से व्यवहार करनेवाला—सत्याग्रह पर चलने वाला—कोई-न-कोई जरूर है और वह है, वसुधैव कुटुम्बकम् को माननेवाला उदारचरित पुरुष। इस उदारता की क्या जबर्दस्त खूबी है! मनुष्य राजा की तरह व्यवहार कर सकता है फिर भले ही कितने ही प्रहार क्यों न होते रहें! गुलिवर* में उन ब्रॉबडिंगनेगियनों की हथेली

---

* गुलिवर की यात्राएँ के लेखक। इस पुस्तक में गुलिवर नामक मनुष्य की इन्हीं के दूर-दूर के विचित्र देशों में की गयी यात्राओं का वर्णन है। लिलिपुट के लोग सिर्फ़ है। ब्रॉबडिंगनेग के लोग इन्सान से दस-बारह गुने ऊँचे और लम्बे-चौड़े राक्षसी कद के हैं। और भी विचित्र प्राणियों के देशों में गुलिवर भटक चुका है। गुलिवर की हथेली में लिलिपुटियन भटके और ब्रॉबडिंगनेगियनों की हथेली में गुलिवर देखना ही चाहिए। यह पुस्तक अंग्रेजी-साहित्य में मशहूर मानी

मैं सिसिलपुटमिन बैठते, उन्हें चिमटियाँ भरते, मारते-पीटते, तूल निकाल देते परन्तु डॉमाङिगनेगिमर्नो का कुछ भी होता था ? उन्हें तो यह गुदगुदी-सी लगती थी। इसी तरह हमें करना है। मुझे दक्षिण अफ्रीका में और आसाम में जो घाव लगाये थे वे सचमुच जरा भी महसूस नहीं हुए। यह यही वृत्ति है। अंग्रेज-सरकार के एक भी घाव की मैं परवाह नहीं करता यह भी उसी वृत्ति के कारण है। इसीलिए मुझे उसके प्रति तिरस्कार नहीं होता।"

मेरा अन्तर तो इस उदारचरित आत्मा के लिए पूजा से उमड़ रहा था परन्तु उसे बाहर प्रकट किये बिना भी नहीं रहा गया। मुझे प्रेमाश्रु आ गये। मैंने नमस्कार करके कहा : मुझे क्षमा कीजिये। मेरा तिरस्कार भी चला गया, इतना विश्वास दिलाऊँ ?'

२६-४-'३९

हार्निमैन निर्वासित। इस बारे में लोगों को सन्देश। बहुत-से लोग इस बारे में बापू के उद्‌गार सुनने के लिए उत्सुक होकर रमाशंकरभाई के मकान पर बैठे थे। बापू ने लोगों को सम्बुद्ध करके पत्रिका लिखवायी। बाद में कई दिनों तक रोज लोगों को पत्रिकाओं द्वारा अच्छी लोकशिक्षा दी। (ये सारी पत्रिकाएँ परिशिष्ट ५ में दी गयी हैं।)

[इसके साथ फुटकर कागजों में महादेवभाई की एक निम्नलिखित टिप्पणी है। उस पर तारीख नहीं है, परन्तु वह उन्हीं दिनों की मालूम होती है। उसमें बापू की बम्बई की पुलिस-कमिश्नर के साथ हुई बात-चीत का सार है।]

जाती है। यूरोप की सामाजिक और राजनैतिक संस्थायें राजनीतिज्ञों के दाँव-पेचों राज्य-विस्तार की कामना, युद्ध वगैरह पर खड़ा हुआ है। युरोप की खूबी यह है कि कुछ मानी को छोड़कर उसके मनोरंजक धर्म शास्त्र और नीति दोनों को पसन्द करनेवाले हैं।

शुरू में कमिश्नर तपाक से मिलकर कहने लगा कि गवर्नर ने मुझसे पूछा कि हार्निमैन को पकड़ा जाय, तो क्या कोई अशान्ति होगी? मैंने उत्तर दिया: "गांधी धार्मिक मनुष्य है, इसलिए देश के सारे हिन्दू उनके लिए उबल पड़ेंगे। हार्निमैन के लिए ऐसा होना संभव नहीं।" बापू ने उसे जवाब दिया: 'यह सत्याग्रह न होता, तो आप उनकी तबीयत मालूम हो जाती। सत्याग्रह के अलावा और किसी समय इन्हें पकड़ा होता तो भी आप देख लेते। बम्बई में मार-काट होती, देश में दंगे मचाएँ होतीं और आपको सालभर तक चैन न लेने देते। परन्तु यह सब दबा हुआ रह गया, सो सत्याग्रह के ही कारण। हाँ, यह सही है कि हिन्दुस्तान में आग लगानेवाला सत्याग्रह ही है। लेकिन यह आग सत्याग्रह के बिना भी आग नहीं, तो कब तक लगे बिना रह जाती?'

कमिश्नर ने पूछा: "हार्निमैन वगैरह ने अहमदाबाद-आश्रम में आकर सत्याग्रह का सुझाव आपको दिया तब आपने उसे स्वीकार क्यों नहीं कर लिया? उस समय आपकी आश्रमवाली सभा में क्या-क्या हुआ बतायेंगे?" बापू ने उस से 'इति तक सारा हाल कह सुनाया। कहा: "सत्याग्रह का सुझाव तो मैंने खुद ही बम्बई में रोगशय्या पर पड़े-पड़े दिया था। उन्होंने स्वीकार कर लिया। मैंने उनसे कहा कि मैं अपंग आदमी हूँ; आपमें सामर्थ्य हो तो तैयार हो जाइये। वे तैयार हो गये। उन तैयार होनेवालों में हार्निमैन, वल्लभभाई, मोहनलाल पंड्या वगैरह सब सामने आ गये थे। परन्तु यह तो इसलिए कि उन्हें मुझ पर विश्वास था।"

कमिश्नर: "क्या आपको मालूम है कि आपके साथ काम करनेवाले कैसे बदचलन हैं?" बापू ने कहा: "हाँ मालूम है।"

बाद में हार्निमैन, शंकरलाल, वल्लभभाई, मोहनलाल पंड्या और दूसरों की बात चली। शंकरलाल के लिए वह काफी नाराज था। शंकरलाल के बारे में वह जान-बूझकर न बोलता हो ऐसा लगता था। उसने कहा: "हार्निमैन जैसा चरित्रहीन मनुष्य आपको कहाँ से हाथ लग गया?" बापू ने उसे कहने से रोका और बोले: 'मैं उनके बारे में

हम आपको समझा सकेंगे कि रौलट-कानून के संबंध में सत्याग्रह करके आपने भारी भूल की है।"

बापू : "मैं समझने को तैयार हूँ।" यह बोला : "हाँ, यह तो हम समझते हैं कि आप भूल स्वीकार कर लेनेवाले तो हैं।"

इस प्रकार गप्पें लगाकर हँसते-हँसते जुदा हुए। बापू को इसका तात्पर्य यह प्रतीत होता है कि ऊपर की बातचीत में आये हुए सभीको पकड़ेंगे और खुद उन्हें एक निरुपद्रवी पागल समझकर फिलहाल रहने देंगे। बाद में यह निरुपद्रवी पागल भी उपद्रवकर्ता बन जायगा, तो उसे भी पकड़ लेंगे। देखें इन लोगों की मुराद कहाँ तक पूरी होती है।

'क्रॉनिकल' से 'सेन्सरशिप' की आज्ञा उठा ली जाय तो बापू ने सम्पादक बनना स्वीकार किया था। पंडितजी इस मामले में गवर्नर से बातचीत करने गये हैं। किन्तु एक कठिनाई है। 'क्रॉनिकल' की जमानत जब्त की गयी है और बापू कोई जमानत देकर पत्र नहीं चलायेंगे। इसलिए संभव है कि 'यंग-इंडिया'* को दैनिक बनाकर बापू उसे चलाने लगें।

पोपटशंकर पंड्या का आगरा से ता० १८-४-१९ का पत्र : 'गांधीजी के चरणों में' शीर्षक एक छोटा-सा गीत साथ में भेज रहा हूँ। यह काला कानून नहीं है। इस बेचारे के विरुद्ध तो आप सत्याग्रह नहीं करेंगे!"

[सत्याग्रही गीत]

गांधीजी के चरणों में शिर झुका रहे,
शिर झुका रहे—दिल झुका रहे। गांधीजी

---

* यह 'यंग-इंडिया' बम्बई से निकलनेवाला साप्ताहिक पत्र था। एक सिंडीकेट इसे निकालती थी। उसके मुख्य कर्त्ता-धर्त्ता थी शंकरलाल बैंकर और उमर सोबानी थे। हॉर्निमैन की गिरफ्तारी के बाद उन्होंने यह पत्र बापू को सौंप दिया और 'क्रॉनिकल' की कुछ क्षति-पूर्ति करने के लिए सप्ताह में दो बार निकालने का निश्चय किया गया। बाद में अक्तूबर तक यह पत्र बम्बई से चला। ८ अक्तूबर से इसे साप्ताहिक बनाकर अहमदाबाद में नवजीवन मुद्रणालय में छापना शुरू

काले-काले कानून सरकार ने बनाये,
लोगों की पुकार पर ध्यान कौन लगाये !
जनता दुःख-दर्द को किससे जा कहे ! गांधीजी•

अंग्रेज तेरा कितना रक्खा भरोसा हमने
यूं खाक में मिलाकर भारत को लूटा तुमने।
चुपचाप अब कहाँ तक यह मार हम सहें ! गांधीजी
वे नर्म थक गये हैं, व गर्म थक गये हैं
ये सबके सब जतन यूं व्यर्थ हो गये हैं
आओ यह सत्याग्रह का व्रत अब हम सब गह। गांधीजी
चारों तरफ निराशा छाई हुई यहाँ है,
उम्मीद एकमात्र बस अब लगी यहाँ है,
गांधीजी महात्मा की जाकर शरण रहें। गांधीजी

इन्हें उत्तर :

"तुम्हारा पत्र पढ़कर तो मैं बहुत प्रसन्न हुआ, क्योंकि मैं यह जानने को उत्सुक था कि तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है। ऐसा ज्यादा तुम्हें क्या रोग है कि अभी तक तुम अच्छे नहीं हो रहे हो ! आगरे में 'कूने-स्नान करानेवाली एक संस्था है। पंडित हृदयनाथ कुंजरू मुझसे उसकी प्रशंसा करते थे। तुम आगरे में ही हो तो वहाँ जाकर थोड़े कूने-स्नान करो। शायद उससे ठीक हो जाओ।

'तुम्हारी कविता सुधारने के लिए लौटा रहा हूँ। इसमें तुम्हारी प्रीति बहुत दिखाई देती है। परन्तु तुमने जोर उस पर भी दीमार है मैं अधिक ज्यादा रखता हूँ। कानून के लिए 'काला' शब्द निकालकर दूसरा रखो। जैसे हो पक्का रखो। 'काला' तो रोषसूचक है। भाषा भी तो सत्याग्रह की शोभा देनेवाली ही होनी चाहिए न ! 'अंग्रेजों का भरोसा ही क्या' ये विचार सत्याग्रह का वर्णन करते समय अप्रासंगिक हैं। हमने अंग्रेजों पर भरोसा रखकर कोई भूल नहीं की। भूल यह की कि हमने अपने पर

कुछ नहीं सुनना चाहता। उनका खानगी चरित्र कैसा भी क्यों न हो, उन्होंने बड़ी सेवा की है।' यह बात नरमाया और कहने लगा: "मैं तो इसलिए कहता हूँ कि वह भविष्य में मुक्त होकर आगे और उसके साथ आपको काम करना पड़े, यह मुझे ठीक नहीं लगता। बापू ने कहा: 'आपकी उदारता के लिए उपकार मानता हूँ, मगर मुझे इस बाजारू बदगोई से कोई वास्ता नहीं। फिर भी यह बन्द नहीं हुई, तो बापू ने कहा: 'अच्छा कहिये।'' इसलिए उसने हॉर्निमैन का जितना काला चित्र खींचा जा सकता था खींचा। उमर की तसवीर भी खींची। उसके लिए बताया कि यह तो हार्निमैन से भी बुरा है। जमनादास खरा आदमी है, पर वह विचारहीन है, आदि-आदि। वल्लभभाई का अहमदाबाद की गड़बड़ में कुछ भी हाथ नहीं। मोहनलाल पंड्या का नहीं? यह पूछा। बापू ने कहा: "रत्तीभर नहीं। उन्होंने जो शान्तिपूर्ण काम किया है उसका आपको पता नहीं। मोहनलाल पंड्या भी वल्लभभाई के साथ मेरे मातहत ही खेड़ा में काम करते थे। सत्याग्रह का रहस्य समझनेवाला उनके जैसा कोई नहीं।'' फिर उमर की बात निकली। ऐसा लगा मानो उमर के लिए कितने ही समय से जहर भरा हुआ था। बापू ने कहा: 'उमर के बारे में मुझसे सुनेंगे?'' वह बोला: 'हाँ।'' बापू ने कहा: "करोड़पति का जवान लड़का। शायद कुछ स्वच्छंद होगा। परन्तु उसके जैसा सुन्दर मनुष्य जमाने में ढूँढ़े नहीं मिल सकता। उसके लिए आपके दिल में कुछ भी कौंस हो तो उसे निकाल दीजिये। आपको उसके लिए अपने हृदय में कोना बनाना चाहिए।' उसने कहा "कोना तो आप बना दें तब पैदा हो।''

इसलिए बापू अपने सिद्धान्त की बात करने लगे। कहा: 'मेरे सामने ऐसी बात करना मिथ्या है। मैं ठगों, मुजरिमों और आतंकवादियों तक को संग्रह करनेवाला। मैं तो उन सबको सुधार लूँगा, मैंने बदुओं को सुधारा है।' उसने कहा: 'तब आपको तो पुलिस-उलिस की जरूरत नहीं!'' बापू बोले: "क्या करूँ! जैसे रेल-तार को आवश्यक बुराई है,

हम आपको समझा सकेंगे कि रौलट-कानून के संबंध में सत्याग्रह करके आपने भारी भूल की है।"

बापू : "मैं समझने को तैयार हूँ।" वह बोला : "हाँ, यह तो हम समझते हैं कि आप भूल स्वीकार कर लेनेवाले ही हैं।"

इस प्रकार गप्पें लगाकर हँसते-हँसते जुदा हुए। बापू को इसका तात्पर्य यह प्रतीत होता है कि ऊपर की बातचीत में आये हुए सभीको पकड़ेंगे और खुद उन्हें एक निरुपद्रवी पागल समझकर छिटका रहने देंगे। बाद में वह निरुपद्रवी पागल भी उपद्रवकर्ता बन जायगा, तो उसे भी पकड़ लेंगे। देखें इन लोगों की मुराद कहाँ तक पूरी होती है।

'क्रॉनिकल' से 'सेंसरशिप' की आज्ञा उठा ली जाय, तो बापू ने सम्पादक बनना स्वीकार किया था। पंडितजी इस मामले में गवर्नर से बातचीत करने गये हैं। किन्तु एक कठिनाई है। 'क्रॉनिकल' की जमानत जब्त की गयी है और बापू कोई जमानत देकर पत्र नहीं चलायेंगे। इसलिए संभव है कि 'यंग-इंडिया' को दैनिक बनाकर बापू उसे चलाने लगें।

चंद्रशंकर पंड्या का आगरा से ता॰ १८-४-'१९ का पत्र : "गांधीजी के चरणों में श्रीफल के एक छोटा-सा गीत साथ में भेज रहा हूँ। यह कोई कानून नहीं है। इस बेचारे के विरुद्ध तो आप सत्याग्रह नहीं करेंगे।"

[सत्याग्रही गीत]

गांधीजी के चरणों में सिर झुका रहे,
सिर झुका रहे—दिल झुका रहे। गांधीजी

यह 'यंग-इंडिया' बम्बई से निकलनेवाला साप्ताहिक पत्र था। यह सिंडिकेट द्वारा निकलती थी। इसके मुख्य कर्ता-धर्ता भी शंकरलाल बैंकर और उमर सुबानी थे। हार्निमैन की गिरफ्तारी के बाद उन्होंने यह पत्र बापू को सौंप दिया और 'क्रॉनिकल' की कुछ क्षति-पूर्ति करने के लिए सप्ताह में दो बार निकालने का निश्चय किया गया। मई से अक्टूबर तक यह पत्र बम्बई से निकला। ७ अक्टूबर को इसे साप्ताहिक बनाकर अहमदाबाद से नवजीवन मुद्रणालय में छपना शुरू किया गया।

काले-काले कानून सरकार ने बनाये,
लोगों की पुकार पर ध्यान कौन लगाये।
जनता दुःख-दर्द को किससे जा कहे। गांधीजी

अंग्रेज तेरा कितना रक्खा भरोसा हमने
यूं खाक में मिलाकर भारत को लूटा तुमने।
चुपचाप अब कहाँ तक यह भार हम सहें। गांधीजी०
ये नर्म थक गये हैं, वे गर्म थक गये हैं
ये भटके सब जतन यूं व्यर्थ हो गये हैं
आओ यह सत्याग्रह का व्रत अब हम सब गहें। गांधीजी
चारों तरफ निराशा छाय हुए यहां है,
उम्मीद एकमात्र बस आप लगी यहीं है,
गांधीजी महात्मा की जाकर शरण रहें। गांधीजी

इन्हें उत्तर :

"तुम्हारा पत्र पढ़कर तो मैं बहुत प्रसन्न हुआ क्योंकि मैं यह जानने को उत्सुक था कि तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है। ऐसा ज्यादा तुम्हें क्या रोग है कि अभी तक तुम अच्छे नहीं हो रहे हो? आगरा में 'कूने'-स्नान करानेवाली एक संस्था है। पंडित हृदयनाथ कुंजरू मुझसे उसकी प्रशंसा करते थे। तुम आगरे में ही हो तो वहाँ जाकर कोई कूने-स्नान करो। शायद उससे ठीक हो जाओ।

'तुम्हारी कविता सुधारने के लिए लौटा रहा हूँ। इसमें तुम्हारी भक्ति स्पष्ट दिखाई देती है। परन्तु तुमसे और उस पर भी बीमार से मैं अधिक आशा रखता हूँ। कानून के लिए 'काला' शब्द निकालकर दूसरा रखो। भले ही 'बुरा' रखो। 'काला' तो दोषसूचक है। भाषा भी तो सत्याग्रह के शोभा देनेवाली ही होनी चाहिए न। 'अंग्रेजों का भरोसा ही रखा' ये विचार सत्याग्रह का वर्णन करते समय असामयिक हैं। हमने अंग्रेजों पर भरोसा रखकर कोई भूल नहीं की। भूल यह की कि हमने अपने पर

विश्राम नहीं रखा। जो अपनी मदद करता है, उसीको ईश्वर सहायता देता है। यही हाल अंग्रेजों का है। अंग्रेज क्या ईश्वर से बड़ जायेंगे? चुपचाप मार सहन करना तो सत्याग्रही का मंत्र है, परन्तु यह कुछ लिखा रखने की खातिर। सत्याग्रह के बारे में कविता लिखते समय नरम-दलवालों की तुलना में तो न करू। अपनी अंतिम (पिछली) पत्रिका भेज रहा हूँ। इसे पढ़ लेना और फिर सत्य-अहिंसा की अपार शक्ति बतानेवाली, सविनय भंग और अज्ञानमय उद्दत भंग के बीच का भेद दिखानेवाली कड़ियाँ तुम्हें सरस्वती देवी सुझाये और तुम दे सको तो देना, यह मेरी इच्छा है।

'तुम्हारा पत्र दुबारा पढ़ने पर देखता हूँ कि तुम्हें अपनी कविता के विरुद्ध भी सत्याग्रह का डर था। डर तो लगभग सच ही निकला। खैर! सत्याग्रही बेचारा क्या करे! मेरे हाथ मुझे पूरा काम नहीं देते, नहीं तो यह पत्र मैं अपने हाथ से ही लिखता। दूसरी कविता भेजने में जल्दी करने की कोई जरूरत नहीं, अपनी तबीयत सँभालकर ही लिखना। A thing of beauty is a joy for ever (सौन्दर्यपूर्ण कृति शाश्वत आनन्द है।) यह अमर वाक्य लिखने से पहले कीट्स को कितना अधिक समय लगा था।"

[महादेवभाई के हाथ का लिखा बापू के उद्गारों का बिना तारीख का निम्नलिखित नोट फुटकर कागजों पर है। वह भी यहाँ देना ठीक है।]

धर्म और अधर्म के बीच युद्ध हो रहा है। हार्निमैन की अलौकिक सेवा। 'क्रॉनिकल' के लेखों में दोष होने पर भी मैं कहता था कि उसने जो सेवा की वह किसीने नहीं की। सच्ची पत्रकारिता उसने समझी थी। सबको खूब छूट दे रखी है। उसकी इन सेवाओं के लिए क्या किया जाय? उपवास। मैं काँपकर रह गया। धंधा तो यही करना है। इस महायुद्ध में हम जैसे-जैसे यह करते रहेंगे, वैसे-वैसे हम ऊपर उठते रहेंगे।

हम सबको चुन-चुनकर ले जायें, तो भी क्या ? हमें मार डालें, तो बहुत ही अच्छा । परन्तु यह अंग्रेजों के स्वभाव में नहीं है । हार्निमैन को चुन्न नहीं गी । उन्हें तो अपनी बात रखनी है । हमें यह दिखा देना है कि हम उनकी बात नहीं रहने देंगे । उपवास मन की स्थिति है । हार्निमैन जैसा दूसरा कौन था ? इस समय हम लोग बकर्स्व तालीम पा रहे हैं । लोगों को हम समझा सकते हैं कि यह महादारुण, पर धर्म-युद्ध है । रौलट-कानून तो कभी भी रद हो जायगा । सरकार को हमें चुनौती देनी है । मैंने तो कांग्रेस-कमेटी के सामने भी तीन बातें रख दीं । परन्तु भिड़ जाने से पहले लोगों को समझा देना चाहिए कि अवर्णनीय शान्ति रखनी होगी । हिन्दू-मुसलिम एकता के लिए कोई भी प्रस्ताव न करें, परन्तु अपनी तैयारी पूरी रखें । इस्तफा करें तो ठीक बात ही है । किन्तु हिन्दुस्तान भलीभाँति समझ जाय तो अच्छा है । भूल कहने में उपवास नहीं परन्तु उसके पीछे जो इरादा छिपी हुई है, प्रार्थना छिपी हुई है, उसमें उपवास है । प्राचीन युद्ध क्या हैं ? पुराने जमाने में लड़ते थे, परन्तु हमेशा लड़ने की तैयारी में नहीं रहते थे । मुगल-राज्य के समय भी इतना उत्पात नहीं था । उनकी तलवार मोटी थी । कोई उसके लिए खेद करनेवाले भी नहीं थे । हमें युद्ध की जंगली दशा से निकलने की इच्छा थी । ऐसे समय ये लोग तो इसीमें बड़प्पन मान रहे हैं । मैं प्रो॰ विलसन के वाक्य को भूल नहीं सकता । हिन्दुस्तान इनके साथ रहने का निर्णय करे, तो यह मुझे पशुओं के साथ रहने से बेहतर नहीं लग सकता ।

४-५-१९

बम्बई : एण्ड्रूज का पत्र । मताधिकारी झगड़ा । अपनी जिन्दगी में मैंने बचपन में दो बार गिने थे, जो हारने पड़े थे । इनका मुझे युद्ध हरा मत विकास के लिए बाधक हैं, आदि दलीलें । पंजाब की स्थिति संबंधी तार ।

उन्हें उत्तर :

श्री "प्रिय चार्ली,

"तुम्हें एक पुस्तक लिख भेजने का मेरे पास समय नहीं है। केवल पत्र से मुझे सन्तोष नहीं होता। मुझे रत्तीभर शंका नहीं कि मैं तुम्हें बता सकता हूँ कि मत के बारे में तुम्हारे विचार भूलभरे हैं। राम के आचरण का तुम जो अर्थ लगा रहे हो, इससे जाहिर होता है कि इस वस्तु को तुमने अच्छी तरह नहीं समझा। बाइबिल का जो उद्धरण दिया है, उसमें 'swear' का क्या अर्थ होता है? क्या इस उद्धरण का तुम्हारा किया हुआ अर्थ गलत नहीं हो सकता? मेरा खयाल तो यह है कि ईसा का सारा जीवन एक सीधा-सादा व्रत ही था, जिससे दुनिया की कोई सत्ता उन्हें विचलित नहीं कर सकती थी। तुमने अपने पत्र में जिन दो शर्तों का उल्लेख किया है, वो तो शर्तों की विडम्बना है। ऐसी शर्तों के व्रत लिये ही नहीं जा सकते। मनुष्य अपने सिरजनहार के सामने खड़ा होकर यह क्यों नहीं कह सकता कि 'हे पिता, तुम्हारी मदद से मैं कभी झूठ नहीं बोलूँगा?' फिर भी वह अपने सिरजनहार के सामने खड़ा होकर यह नहीं कह सकता कि 'अमुक या अमुक समाज या संस्था को मैं कभी नहीं छोड़ूँगा' संभव है, अपनी बात मैं अच्छी तरह स्पष्ट न कर सका हूँ, परन्तु तुम स्वीकार करोगे कि मैंने पूरे साफ दिल से बात की है। फिर जहाँ प्रेम है, वहाँ और हो ही क्या सकता है?

'तुमने पक्का मालूम कर लिया कि कोड़े किसलिए लगाये गये थे? मैं भी जानना चाहता हूँ।

"सिखों को पहले से सेंसर (जाँच) कराने की आज्ञा के कारण 'क्रॉनिकल' बन्द कर दिया गया है। इसलिए 'यंग-इंडिया' हफ्ते में दो बार निकलता जाता है। आगे चलकर इसे दैनिक भी किया जा सकता है। वह मेरी देखरेख में छपेगा। उसमें लिखने को समय निकाल सकोगे? तुम स्वदेशी हिन्दू-मुसलिम एकता सत्याग्रह, रौलट-कानून आदि विषयों पर लिख सकते हो।

"तुम्हें यह शर्त सुझायी गयी है कि धारासभा की पहले से मंजूरी लिये बिना उस पर अमल नहीं किया जायगा। हम इस शर्त पर भी रौलट कानून स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। हमारी आपत्ति तो उस स्वेच्छा चारी पद्धति के विरुद्ध भी है, जो इसमें बताये हुए अपराधों के मुकदमे चलाने के लिए रखी गयी है। कथित अराजकतावादियों के मामले की सरसरी (समरी) सुनवायी हो या इन्साफ की सावधानी के लिए रखे गये अंकुश हटाकर खास ढंग से मुकदमा चलाया जाय या साधारण कानून के अनुसार भी असाधारण अधिकार देकर मुकदमा चलाया जाय, तो मैं इन सभी बातों के विरुद्ध हूँ। अपवादस्वरूप परिस्थिति के लिए अपवादस्वरूप अधिकार सुरक्षित रखे जाते हैं। परन्तु पहले से ही यह मानकर कि ऐसी परिस्थिति पैदा होगी उसका सामना करने के लिए प्रबन्ध-विभाग के अधिकारियों को विशेष अधिकार नहीं देने चाहिए।

"मेरा आग्रह है कि जब तक जरूरत हो, तब तक तुम्हें श्रद्धानंदजी का साथ देना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि वहाँ से छूटने पर तुम यहाँ आओ ताकि हम सारे हालात का सिंहावलोकन कर सकें।

'यह रक्तपात, ये जोर-जुल्म, यह फौजी कानून, ये सैनिक ढंग की सजाएं—इन सबके बीच प्रेम का कानून पूरी तरह काम कर रहा है। उसके अपार प्रमाण मिलते रहते हैं।

'तुम्हें और स्वामीजी को प्यार।

सदा ही तुम्हारा
मोहन"

मौलाना अब्दुल बारी को पत्र लिखा :

'["मेरा खयाल है कि इस्लामी सवालों पर मुस्लिम मत अच्छी तरह संगठित नहीं है। हरएक की भावना खूब होती है, पर कोई तर्क शुद्ध और सर्वसम्मत वक्तव्य नहीं देता। मैं चाहता हूँ कि उलेमा जाति-वालों को ऐसी कोई चीज करनी चाहिए। यह उर्दू या अरबी भाषा में

हो, तो कोई हर्ज नहीं। उसका सही अनुवाद आसानी से हो सकता है। दोनों जातियों के बीच के झगड़ों के कारणों की जाँच करने और दोनों के बीच स्थायी एकता स्थापित करने के उपाय सुझाने के लिए हिन्दू मुसलमानों के मिले-जुले पंच मुकर्रर करने का आपका विचार मुझे बहुत पसन्द है। किन्तु मेरा ख्याल है कि उसके लिए यह ठीक अवसर नहीं है। अभी तो सबकी शक्ति रौलट-कानून, इस्लामी प्रश्नों और राजनैतिक सुधारों पर केन्द्रित हो गयी है और यही ठीक है। सारे हिन्दुस्तान के लिए संतोषप्रद ढंग से इन प्रश्नों का निपटारा करने की क्रिया में ही हम उनको नजदीक लाना संभव है। इन सवालों का फैसला हो जाने के बाद आपका सुझाया हुआ पंच का सुझाव ज्यादा कारगर हो सकेगा।'

आज गाडगर को भी अहमदाबाद के भाषण में इस्तेमाल किये गये शब्दों के सम्बन्ध में पत्र लिखा।

५-५-१९

मगनलालभाई को लिखा :

"स्वदेशी आन्दोलन बहुत जोर पकड़ेगा। परन्तु हम तैयार नहीं, यह बड़ी अड़चन रहती है। सर फजलभाई के साथ बात करने के बाद एक बात मेरे मन में जम गयी है। वह यह है कि सबसे बड़ा स्वदेशी आन्दोलन स्वदेशी कपड़ा पैदा करने में है। इसलिए हम तो अपनी पहली स्थिति पर आ खड़े हुए हैं। हमें घर-घर रुई धुनने और कपड़ा बुनने लग जाना चाहिए। मेरी सलाह है कि संतोक बीजापुर जाय और सूत कातना सीख आये। जितना सूत हाथकता मौजूद हो वह जल्दी से बुनवा डालो। जितना दूसरा कपड़ा मिल के सूत का अहमदाबाद में बुनवा सको हो बुनवा लो। जो दक्षिणी साड़ियाँ यहाँ बुनी जाती हैं, उनमें मुख्यतः विलायती सूत और विलायती रेशम काम में लिया जाता है। क्या देशी सूत की दक्षिणी साड़ियाँ न [illegible] हम सकती [illegible] पहन में मुझसे कहा है कि मोटी होंगी [illegible] हैं। हमारी देशी

विषम स्थिति है कि हम स्त्रियों के लिए तो बिलकुल तैयार नहीं हैं। इस संबंध में तुमसे जो विचार हो सके, करना। काका वगैरह को पढ़ा देना। मेरे लिए तो तुम्हें अपने हाथ के कते हुए सूत की धोतियाँ समय पर तैयार करा ही लेनी चाहिए। आश्रम में सूत कातने का काम अवश्य होना चाहिए। मेरा अभी तो वहाँ आना होता नहीं दीखता।

'अपनी तन्दुरुस्ती सँभाले रखना।"

उसी दिन हरिलाल को पत्र :

"तुम्हारा चैत्र वदी १ का पत्र मिल गया। मेरा स्वास्थ्य अब कुछ गिरने लगा है। दिमाग पर बहुत भार रहता है। ईश्वर को जब तक इस शरीर से काम लेना होगा, तब तक यह निभा लेगा। 'इंडियनमैन' मुझे पढ़ने को नहीं मिला और न मिलता ही है। मुझे वहाँ की खबरें भेजते रह सको तो अच्छा हो।

"श्रीमती बेसेंट की स्थिति दयाजनक है। उन्हें समझ ही नहीं कि क्या मार्ग अपनायें।

"तुम यह सवाल पूछ ही कैसे सकते हो कि क्या सचमुच सरकार रोलट-बिल नामंजूर कर देगी? जब तक सत्याग्रही जिन्दा हैं, तब तक रोलट बिल कैसे रह सकता है? मैं तो मानता हूँ कि कुछ भी खून खराबा न हो तो थोड़े समय में ही रोलट-बिल रद्द हो जायगा। यह खबर इसलिए नहीं दे रहा हूँ कि मुझे कुछ मालूम है, परन्तु सत्याग्रह के प्रति अपने अटल विश्वास के कारण दे रहा हूँ।

भाई आगाखी को मैंने रोका ही नहीं। सब उन्हीं पर छोड़ दिया है। अब तो वे मद्रास जाने के निश्चय पर पहुँच गये दीखते हैं। पार्वती को मद्रास ले जाने का निश्चय किया है। इसमें भी मैं बीच में नहीं पड़ा हूँ।

'तुम्हारा दक्षिण अफ्रीका जाना मुझे उचित नहीं जान पड़ता। मैं तो यह चाहता हूँ कि चूँकि तुम सबने सत्याग्रही नाम धारण किया है, इसलिए तुम कम नफे से सन्तोष करके केवल स्वदेशी व्यापार करो।

"बच्चे मौज करते हैं। राजकोट या कलकत्ते को बहुत याद करते हो, ऐसा मैंने तो नहीं देखा। मुख्य संतोष की बात यह है कि उन्हें आबोहवा अनुकूल हो गयी ऐसा मालूम पड़ता है। रामी ठीक होती जा रही दीखती है। यहाँ से सबसे अच्छा 'जीवन' उसके लिए भेजा है।

"माधवदास ने तुम्हारी पूँजी की तंगी की बात कही है। उसने मेरी सलाह मान ली है। मैंने यह सलाह दी है कि मैं चाहता हूँ कि तुम किसीके भी रुपयों की मदद के बिना उन्नति कर सको। वणिक् की चंचल वृत्ति से उसके द्वारा बिना विचारे काम हो जाय, बहुत अधिक वादे कर दिये जायँ तुम ठहरे साहसी बहुत जल्दी बहुत रुपया कमाने का लोभ रखते हो; आगमी से सार्वजनिक आन्दोलनों में पड़े बिना रहा नहीं जायगा। ऐसी हालत में तुम्हें कलंक लगते देर नहीं लगेगी। इसलिए मैं हमेशा चाहूँगा कि तुम किसीके रुपये पर आधार न रखो। इसके अलावा, मुझे तो किसी भी समय निर्वासित कर दें या जेल में भेज दें। मैंने सोच लिया है कि उस समय तुम व्यापार में नहीं रह सकते। इसलिए तुम ज्यादा रुपया कैसे लगा सकते हो? जिस देश में अन्याय हो रहा हो, वहाँ गरीबी में ही कुलीनता है। अन्याय में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भाग लिये बिना वर्तमान स्थिति में धन-संग्रह करना असंभव है।

बापू के आशीर्वाद'

१-५-१९

"चि. निर्मला

'अभी तो सची लड़ाई शुरू नहीं की है। परन्तु अब होगी जरूर। रविवार को सब उपवास रखेंगे। मैं चाहता हूँ कि तुम भी रखो। भाई हार्निमैन के निमित्त यह उपवास करना है। उनमें बहुत गुण थे और उन्होंने हिन्दुस्तान की बड़ी भारी सेवा की है।

'मकान अपने कमाने में मेरी तरफ से तो अब कोई मदद मिल

नहीं समझी। यह काम चि० शामलदास का और चि० कानू का है। उन पर मैंने कोई दावा नहीं रखा।

"पूज्य बहन* और तुम दोनों आश्रम में रहो और मेरे कार्य में सहायता दो, तो इससे ज्यादा प्रिय मेरे लिए और क्या होगा? पूज्य बहन ने तो स्वयं अनुभव कर लिया है कि आश्रम में सब उन्हें हथेलियों पर रखते थे, सब आदर करते थे। मैं स्वयं तो सदा सुबह उनके दर्शन करके अपनी माताजी का चेहरा याद कर लेता, अपने पिताजी का चेहरा भी याद कर लेता और अपने को पवित्र मान लेता था। मेरी इच्छा है कि तुम दोनों जितना हो सके, उतनी आश्रम में आ जाओ। मेरी तीव्र इच्छा है कि तुम बुनने का काम, सूत कातने का काम अच्छी तरह सीख लो। इस काम को मैं धार्मिक और पवित्र मानता हूँ। अन्नदान और वस्त्रदान इस लोगों में भारी दान माना जाता है। मुझे विश्वास है कि जो पुरुष या स्त्री लोगों के लिए वस्त्र पैदा करता है, उसे अत्यंत पुण्य होता है।——"

१९-१-१९

अहमदाबाद से बम्बई जाते हुए रेल में।

"भाईश्री ५ शाकरलाल,

"मैंने सोचा था उससे कुछ देर से यह पत्र आपको लिखा जा रहा है। मैं भाई अमृतलाल की सवारी में हूँ। मुझे भरोसा है कि इस मास में मामा वहाँ पहुँच जायेंगे और मेरा खयाल है कि वे (मामा) अच्छी तरह काम पूरा करेंगे। यह पाठशाला अच्छी तरह चलाने की हममें शक्ति आनी ही चाहिए।

"आपने जो व्याकरण-शोर बताये हैं उनसे मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। इस बारे में भाई महादेव आपको अधिक लिखेंगे। मैं शुद्ध भाषा लिखने का खूब प्रयत्न कर रहा हूँ परन्तु रात रह जाना सवथा संभव है क्योंकि

---

* बापू की बड़ी बहन श्री र्गोकिबहन।

ज्यों-ज्यों मैं गीताजी को अधिक पढ़ता गया, त्यों-त्यों मेरी मिटकर मुझे उसमें सत्याग्रह का स्पष्ट दर्शन होता गया। स्थूल अर्जुन को समझाने के लिए कृष्ण जैसा चतुर मनुष्य गीता का ज्ञान कहा दे, यह तो बागर के लिए भैंस मारने के समान होगा। कृष्ण यदि परमात्मा है, तो यह मान्यता उसे लाञ्छित करनेवाली है और अर्जुन यदि अनुभवी और विवेकी हो तो उसके प्रति अन्याय करनेवाली है।

"मुझे यह तो विश्वास है कि आप इन विचारों को फेंक नहीं देंगे। किन्तु आप इनका परीक्षण कीजिये। यह तो आप सहज ही स्वीकार करेंगे कि विद्वत्तापूर्ण आलोचना का मूल्य एक असम्मति के अनुभव के सामने बहुत ही गौण है।"

'प्रिय मणिबहन,*

आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया यह मैंने कल सुना, परन्तु आपको दिलासा देने न आ सका। प्रियजनों का वियोग सदा दुःखद तो होता ही है। 'देही के स्नेही सकल स्वार्थी, अन्त अकेले रहना है।'—यह हमारे एक कवि ने कहा है। उसका नाम मैं भूल गया हूँ। गहराई में उतरकर देखें, तो दुःख देनेवाली चीज हमारा प्रेम नहीं, बल्कि स्वार्थ है। ऐसा न हो, तब तो जैसे जीर्ण हुए मकान को छोड़कर नये मकान में जाते समय हमें आनन्द होता है, वैसे ही जीर्ण शरीर को छोड़कर एक मित्र-आत्मा के नयी देह धारण करने में क्या शोक हो सकता है? यह बात छोटी या बड़ी उम्र में मरनेवाले सभी पर लागू होती है। कोई शरीर कब निकम्मा हो जाता है, यह तो उसे बनानेवाला ही जाने यह जानने का हमें अधिकार नहीं है। परन्तु मेरा तो ये सब बातें आपसे कहने का विचार नहीं था। इस समय मेरा मन दूसरी ही दिशा में जा रहा है, इसलिए इतना लिख दिया गया। मुझे कहना यह है: जो मरण मृत्यु आपके पिताजी की हुई है, वैसी सभी की हो, यह हमारे चाहने लायक बात है। किसीसे भी सेवा कराये बिना, स्वयं दुःख भोगे बिना अनायास मृत्यु पानेवाले

---

* मणिबहन परीख।

मनुष्य कम ही पाये जाते हैं। ऐसे लोगों में आपके पिताजी की सदा गिनती होगी। हर मौत का रंज करना बेकार है। ऐसी मृत्यु का शोक हो ही नहीं सकता। इसलिए तुम्हें मैं सान्त्वना नहीं, बधाई देता हूँ।"

२०-५ १९

सूरत के कुछ भाइयों का सत्याग्रहसंबंधी कुछ शंकाएँ पूछनेवाला पत्र, उन्हें उत्तर :

"आपका पत्र भटकता हुआ मेरे हाथ तो आज ही लगा है। मैं मानता हूँ कि मेरे दस्तखत का लोभ अनुचित है। मेरी शारीरिक स्थिति ऐसी है कि मैं सब पत्रों पर दस्तखत नहीं कर सकता और सब पत्र लिखता भी नहीं सकता।

'जब तक हिन्दुस्तान सत्याग्रह का सच्चा स्वरूप नहीं समझेगा, तब तक आपकी उठायी हुई शंकाएँ उठती ही रहेंगी और आपको धीरज भी रखना ही पड़ेगा।

"सत्याग्रह शुरू होने के बाद अंत तक पहुँचकर ही बन्द होता है। कितनी ही बार उसके बन्द होने का आभास होता है, परन्तु वास्तव में तो वह बन्द होता ही नहीं। जिस समय सत्याग्रह के दुराग्रह बन जाने की सम्भावना हो उस समय सत्याग्रह बन्द कर देने में सच्चा सत्याग्रह चला पड़ता है। सत्याग्रह ऐसी सूक्ष्म वस्तु है कि बार-बार संशोधन और अनुभव करते-करते ही कुछ अंशों में उसका ज्ञान होता है। हालात को जैसे मैं इस वक्त देख रहा हूँ, उनके आधार पर जून-जुलाई में सत्याग्रह के शुरू होने की संभावना है। इससे भी पहले शुरू होने के अवसर आ जायें तो हो जाय।

"सत्याग्रह के कुछ स्वरूप बार-बार मुल्तवी करने पड़ें यह संभव है। उपवासादि धर्मक्रियाओं में कितना बल है, यह आपको समझना किसी हद तक असंभव पड़ता है, क्योंकि उपवासादि तो आप बरसों से करते ही आये हैं। वे आपसे किये होंगे। किन्तु उनके लिए सत्याग्रह होता, तो वो

कुछ आपको लिखना पड़ा है, वह लिखने की बात ही न रहती। अगर आपने पहले उपवास किये हों, उनमें और हार्निमैन के लिए रविवार को जो उपवास किया, उसमें आपको कुछ भी फर्क न दिखाई दिया हो, तो मुझे कहना चाहिए कि आपने अपने-आपको धोखा दिया है। मेरा खास तौर पर विश्वास है कि हममें जिस हद तक सत्याग्रह की न्यूनता है उस हद तक हमारी लड़ाई लंबी जाती है। वैराग्यहीन त्याग त्याग नहीं है। आपमें से जिन्होंने नौकरी वगैरह सब कुछ खो दिया है, उन्होंने अगर खोने में कुछ पाया नहीं, तो वह खोना निरर्थक है। जो नौकरी छोड़े बिना रह ही न सकता हो, वह छोड़े। उसीका नाम नौकरी छोड़ना कहा जा सकता है। छोड़ने में दुःख होने के बदले मजा आना चाहिए था। मैं देख रहा हूँ कि छोड़नेवालों को वह नहीं आया। इसी-लिए आप अपनी दशा त्रिशंकु जैसी मान रहे हैं।

"सत्याग्रह का मौका देनेवाला मैं कौन ! सत्याग्रही सदा ही स्वतंत्र है। मुझसे आप सलाह-मशविरा कर सकते हैं। यह सही है कि जहाँ सामूहिक सत्याग्रह हो रहा हो, वहाँ मनुष्य को समूह के अधीन रहकर काम करना चाहिए। किन्तु सत्याग्रही बन जाने के बाद सत्याग्रह करने का अवसर तो उसके लिए सदा अपने-आप होता ही है। जो शंकाशील और चिन्तामय अवस्था में हों, उन्हें सत्याग्रही कैसे माना जाय ? सत्याग्रही होना तलवार की धार पर चलने के बराबर है।

"इतना लिखते हुए भी अगर मैं आपकी शंका का समाधान नहीं कर सका होऊँ, तो धीरज रखने की ही सलाह दे सकता हूँ। अगर सत्याग्रह का यही अर्थ आप किसी भी प्रकार जेल जाना ही करते हों तो किसी भी कानून को तोड़कर जेल जा सकते हैं। अगर इसी तरह सत्याग्रह किया जा सकता हो तो हर कैदी सत्याग्रही है।

"जिन कानूनों के तोड़ने में नीति-भंग न होता हो, उन्हींका सकारण सविनय भंग सत्याग्रह हो सकता है। अगर ऐसा भंग मैं आपको बता सकूँ, तब तो मैं ही कर डालूँ।"

२८-५-'१९

बम्बई से कुमारी पेरिंग को :

"प्यारी चिड़िया,

"अपने स्वच्छन्दपन से महादेव बीमार हो गये हैं। स्वच्छन्दी मित्र भाइ, लड़का अथवा मंत्री ऐन वक्त पर काम नहीं आता। महादेव एक शरीर में मेरे भाग्यों है। पहले तो मैंने विचार किया कि उपवास करके उसे सजा दूँ। परन्तु ऐसा करता, तो बाइबिल का वह अद्भुत वचन कि 'सजा देने का अधिकार मुझको ही है' (Vengeance is mine.) होकर तुम मुझ पर टूट ही पड़ती। इसलिए मैंने कम कड़ा उपाय किया है। सब पत्र स्वयं ही लिखने लगा हूँ। सामने समय तक खड़ा लिखने का काम करने में मुझे तो मजा आता है। मेरा हाथ भी काफी स्थिरता से काम देता है।

'जिन्हें तुम चाहती हो, मैं चाहता हूँ कि उनके दुःख में शरीक न होने के लिए तुम इतना कष्ट उठाओ। अपने लिए तो तुम समझौते को पूरा करो यही पूरा आत्मसंयम है। यह बिलकुल जरूरी है। तुममें सच्चा प्रेम हो—मैं जानता हूँ कि तुममें यह अवश्य है—तो वह तुम्हारे वर्तमान वातावरण पर मूक, किन्तु अचूक असर अवश्य करेगा। भगवद्गीता कहती है कि एक भी विचार, एक भी कार्य निष्फल नहीं जाता। इसलिए अपना मौजूदा काम धीरज के साथ और सच्चे दिल से करने में तुम्हारा कर्तव्य पूरा हो जाता है। पहाड़ पर जाने से तुम्हें जो नयी शक्ति मिलेगी, उसका उपयोग भी तुम्हारे काम के लिए ही होनेवाला है। फिर चिन्ता किसलिए करती हो ?

"स्वदेशी-व्रत अपने निजी कपड़ों के लिए ही है। मित्रजनों से मिली हुई डेनमार्क की मेजें को काम में न लेने के लिए तो मैं कह ही नहीं सकता। इतना काफी है कि भविष्य में तुम केवल स्वदेशी वस्तुएँ ही खरीदो और तुम्हारी दूसरी चीजें भी यथाशक्ति स्वदेशी हों। अधिक हर फेर करने की बात जब हम मिलेंगे, तब कर लेंगे।

"एण्ड्रूज थोड़े दिन मेरे साथ रह गये। आजकल वे दिल्ली में हैं। सुन्दरम् से कहना कि उनकी बीमारी की बात सुनकर मुझे दुःख हुआ है। उन्हें तन्दुरुस्त और सशक्त हो ही जाना चाहिए। प्यार।

बापू"

साबरमती से भाई रामदास को :

१-६ १

"चि रामदास,

"तुम्हारा पत्र मिल गया। तुम्हें पत्र तो मैं लिखवाता ही रहता हूँ। एक महीना पूरा खाली नहीं जाता होगा। तुम भाई मोहनलाल के यहाँ रहे, यह ठीक हुआ। यह तो मैं जानता ही हूँ कि उनकी जिस उदारता जिस मतामनसाहत और जिस प्रेम का तुमने चित्रण किया है, उसका तुम्हारे हाथों दुरुपयोग होगा ही नहीं। परन्तु मैं यह चाहता हूँ कि तुम ऐसी जगह दुगुनी मेहनत करके, दुगुनी सँभाल रखकर इस प्रेम आदि का कुछ-न-कुछ बदला दो। संबंधी या मित्र के यहाँ नौकरी करने में लाभ-हानि बराबर होते हैं। लाभ तो यह है कि यहाँ हम कुछ सुविधाएँ भोग सकते हैं जो हमें परायों की नौकरी में नहीं मिल सकतीं। हानि यह है कि उनकी सरलता के कारण हम उसका दुरुपयोग करें, काम की चोरी करने के लालच में फँस जायँ। मैं चाहता हूँ कि तुम अत्यंत सावधानी से रहो। साथ ही यह भी कहना चाहता हूँ कि मुझे तुम्हारे बारे में कोई डर नहीं है। मैंने अनुभव किया है कि तुम प्रेमपात्र हो और मुझे विश्वास है कि तुम्हें वहाँ यश ही मिलेगा। दूकान का सारा काम समझना जानकर करना। जो न आवे, उसे तुरंत पूछ लेना। शर्म के मारे अज्ञान को कभी भी न छिपाना। जब मैंने दक्षिण अफ्रीका में पहले-पहल प्रवेश किया, तब मैं यह नहीं समझता था कि पी नोट क्या है। दो-चार दिन तो अपना अज्ञान मैंने छिपाया, परन्तु ऐसा करते-करते मैं और पसोपेश में पड़ गया। मैंने देखा कि जब तक यह न जान लूँ कि पी नोट क्या होता है, तब तक दादा अब्दुल्ला सेठ का मामला नहीं जान सकता। इसलिए

मैंने अपना अज्ञान फौरन जाहिर कर दिया और यह जानकर कि पी नोट का मतलब 'प्रामिसरी नोट' है, खिलखिलाकर हँस पड़ा—अपने अज्ञान पर नहीं, बल्कि अपनी झूठी शाम पर; क्योंकि पी नोट शब्द तो मुझे शब्द कोश में भी नहीं मिल सकता था। इसलिए हमारे वास्ते राजमार्ग एक ही है कि जिस किसी बात का हमें पता न हो, उसके बारे में तुरंत पूछ लें। हम मूर्ख माने जायें, इसमें हर्ज नहीं। किन्तु अपने अज्ञान से हम भूल करें, यह सचमुच आपत्तिजनक है।

"तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। तुम वहाँ शान्ति से रहना और ईमानदारी से जो कुछ कमा सको कमाना। अपने उद्गार और अपनी इच्छाएँ मुझे बताना। बा मुझे कई बार कहती है कि रामदास अब बड़ा हो गया उसे बुलवाकर शादी कर देनी चाहिए। मैंने तुम्हें बुलाने से साफ इनकार कर दिया है और बा से यह कहा है कि अगर तुम्हारी शादी करने की इच्छा हो तो मुझे साफ तौर से कह दोगे। मैंने बा से यह भी कहा है कि मैंने तुमसे यह माँग की है कि तुम्हें साफ तौर पर कह देना चाहिए। इससे बा शान्त हो गयी है। इस महाकठिन काल में, हिन्दुस्तान की ऐसी विपन्न और विपरीत दशा में कोई भी भारतीय विवाह करने का विचार न करे, यह उसका विरोध और आपद्धर्म है, यह मैं कई बार कह चुका हूँ। इसलिए साधारण तौर पर मैं तुम्हारे लिए यही चाहूँगा कि तुम संयम का पालन करो और जीवनपर्यंत प्रौढ़ ब्रह्मचर्य रखो। ज्यों-ज्यों दिन बीतेंगे, त्यों-त्यों विवेक-बुद्धि परिपक्व होगी, तुम्हारा शरीर-बल और मनोबल बढ़ेगा और तुम विवाह करने की बात भूल जाओगे। परन्तु यह तो मैंने अपने पैमाने से तुम्हें नापा। मैंने तुम्हें वचन दिया है कि मेरे विचार कुछ भी हों, फिर भी यदि तुम शादी का विचार करोगे, तो मुझसे जितनी हो सकेगी, तुम्हारी सहायता करूँगा। इसलिए तुम निडर होकर मुझ पर विश्वास करके जो अपनी इच्छा हो जाहिर कर देना। इस मामले में तुम मुझे पिता के रूप में भूल जाना और अपना एक मात्र मित्र समझना और मित्र की परीक्षा लेना।

"मेरी तन्दुरुस्ती मेरे काम लायक ठीक रहती है। दो वक्त बकरी का दूध और तीन बार फल खाता हूँ। शरीर की शक्ति कम है, परन्तु मस्तिष्क-शक्ति जरा भी कमजोर हुई नहीं जान पड़ती। सुबह के ढाई बजे से रात के दस बजे तक किसी-न-किसी काम में लगा ही रहता हूँ। दिन में ३ × ४ मिनट की नींद के बिना अब काम नहीं चलता। इतना काम करने पर भी ९ बजे जितनी चाहिए, उससे ज्यादा थकावट दिमाग को महसूस नहीं होती। खुराक सभी हुई है। कानून-भंग कुछ समय बाद फिर शुरू होगा। अनुभव कुछ नये और कुछ मीठे-कड़वे मिलते रहते हैं। आशा-निराशा का हिसाब लगभग बराबर रहा है।

"तुम्हारे पत्र तो काफी आते हैं, परन्तु मणिलाल आलस्य दिखा रहा है। उसके मुकदमे का न उसने या तुमने कोई समाचार ही नहीं दिया। इस मुकदमे में मणिलाल ने स्वयं क्या सफाई दी, यह जानने की उत्सुकता है। यद्यपि मणिलाल को पत्र लिखना चाहता हूँ, फिर भी शायद रह भी जाय, इसलिए यह पत्र तो उसे भेज ही देना। तुम दोनों भाइयों के चित्र भेज दो, तो अच्छा। कुछ पढ़ते हो? प्रातःस्मरण करते हो? न करते हो, तो फिर याद दिलाता हूँ कि अवश्य करना, क्योंकि मुझे विश्वास है कि वह बहुत ही श्रेयस्कर है। इसका मूल्य तुम्हें संकट पड़ने पर मालूम होगा। विचार पूर्वक किये गये प्रातःस्मरण और संध्यादि की कीमत तो दिन-प्रतिदिन लगायी जा सकती है। यह तो अपनी आत्मा को भोजन देना है। जैसे शरीर भोजन के बिना सूख जाता है वैसे ही आत्मा भी उसे उचित भोजन न मिले, तो मुरझा जाती है।"

"चि मथुरादास,

"तुम्हारे दीनापुर जाने का समाचार मैंने यहाँ आकर सुना। यह ठीक हुआ। हाँ, तुमसे मिलने को उत्सुक था। सूत के बारे में मेरी आलोचना उलाहना देने के लिए नहीं थी, तुम्हें मैं उलाहना तो क्या दूँ, किन्तु यह आलोचना तुम्हें अधिक सचेत करने के लिए थी। सूत कातने का जो मूल्य मैंने लगाया है वही तुम लगाओ, इसलिए थी। मेरे कहने का

आशय यह था और अब भी है कि दूसरे काम जो किये जा सकें, उन्हें कम करने की तरफ झुकाव रखा जाय। यह तो तुम ही विचार करके कह सकते हो कि कौन-सा काम कौन कम कर सकता है। मेरा खयाल था कि स्वदेशी सूत के कपड़े बनवाकर खूब तैयार करवाओ। अधिक विचार कर देखा कि शुरू में मेरी यह माँग थी जरूर, पर उसे मैंने सूत के पक्ष में सुधार लिया। मेरी पहली माँग भूलभरी थी। जो काम दूसरे ले लेंगे, ऐसा हमें लगे, तो उन कामों को हम छोड़ते जायँ या कम कर दें। जिनमें दूसरों का विश्वास न हो या थोड़ा हो और उस काम की जरूरत तो हो ही, उस काम को हमें हाथ में ले लेना चाहिए। सूत कातने का काम ऐसा ही है। साथ ही मैं ज्यों-ज्यों अधिक अनुभव प्राप्त करता जाता हूँ, त्यों-त्यों समझता जा रहा हूँ कि मशीन हमें सदा के लिए गुलाम बना देगी। मैं अनुभव कर रहा हूँ कि मशीनों के बारे में मैंने जो मत 'हिन्द स्वराज्य' में प्रकट किया है वह अक्षरशः सही है। सत्याग्रह को भी और सीख रहा हूँ। मैं देख रहा हूँ कि सत्याग्रह कमजोर-से-कमजोर और सबल-से-सबल दोनों तरह के मनुष्यों के लिए सुन्दरतम हथियार है। मिल के बने हुए स्वदेशी सूत से बहुत से व्यापारी अपने-आप कपड़ा बुनवा लेंगे। थोड़ों से मैं यह काम सस्ती करा लूँगा। परन्तु सूत कातने का काम तो हम ही शुरू करें। परसों मेरे पास कुछ पंजाबी आये थे। उन्होंने कहा कि पंजाब की ऊँच-नीच सभी महिलाएँ घर घर सूत कातकर अपने जुलाहे से बुनवाती हैं। इसलिए सूत रूई के भाव पड़ जाता है। यह बात खूब मनन करने लायक है। तुम केवल जो से रखे, तो ठीक किया। केवल यहाँ से रूई भेजना ठीक जायेगा, तो [illegible] । इस [illegible] भी एक आदमी वहाँ से सीख ले, तो [illegible] हो जाय [illegible]

[illegible] इस कदम इसेलिए, [illegible]

[illegible] मैं मुझे [illegible] पास

[illegible] ऊँचा [illegible]

जल्दी-जल्दी अपनी अन्तिम परीक्षा में पास हो जाओ, क्योंकि मेरी इच्छा यह है कि तुम थोड़े समय में यहाँ आकर अपना स्थान ले लो। यहाँ गर्मी सख्त होती है, परन्तु जाड़े में उसका काफी बदला मिल जाता है। मैं आशा रखता हूँ कि बिना किसी दिक्कत के तुम्हारी जरूरतें पूरी हो जाती होंगी। कुछ भी चाहिए, तो मुझसे कहने में संकोच न रखना।

"सत्याग्रह अच्छी तरह चल रहा है। थोड़े ही समय में सविनय कानून-भंग शुरू होने की आशा है। अनेक कारणों से मैं बार-बार यह चाहता रहता हूँ कि तुम यहाँ रहो। परन्तु मुझे अपना रास्ता अकेले ही काटना है। जब दक्षिण अफ्रीका के अपने साथियों का विचार करता हूँ, तब अक्सर उदास हो जाता हूँ। यहाँ डोक[1] नहीं, यहाँ कैलनबैक[2] नहीं। यह भी पता नहीं कि इस समय वे कहाँ हैं। पोलाक[3] इंग्लैण्ड में है।

---

१ जोहान्सबर्ग में रहनेवाले एक गोरे पादरी। दक्षिण अफ्रीका में हिन्दुस्तानियों की लड़ाई से बहुत हमदर्दी रखते और मदद देते थे। सन् १९०८ में एक पठान ने बापू पर हमला किया और उन्हें घायल कर दिया था, तो मि. डोक बापू को सेवा-शुश्रूषा के लिए अपने घर ले गये थे और उन्होंने और उनकी पत्नी ने बड़े प्रेमपूर्वक बापू की सेवा की थी। मि. डोक ने 'M. K. Gandhi' नाम से बापू का एक जीवन-चरित्र भी लिखा है, यह मूल और उसका हिन्दी अनुवाद 'अफ्रीका में गांधी' नाम से अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ, वाराणसी से प्रकाशित हुआ है।

२. बापू के जर्मन मित्र। जोहान्सबर्ग में उनका स्थापत्य का धंधा अच्छा चलता था। बापू के सम्पर्क में आने के बाद उन पर सादे जीवन का रंग चढ़ गया। लड़ाई के कारण जोहान्सबर्ग का मकान छोड़ देने के बाद बापू उन्हीं के घर रहते थे। कैलनबैक सत्याग्रह की लड़ाई में भी शरीक हुए और जेल गये थे। सत्याग्रही कैदियों के परिवारों के रहने के लिए उन्होंने अपना बड़ा फार्म दे दिया था। उस फार्म का नाम 'टॉल्स्टॉय फार्म' रख दिया गया। लड़ाई पूरी हो जाने के बाद वे बापू के साथ इंग्लैण्ड गये थे और वहाँ से हिन्दुस्तान आनेवाले थे। परन्तु उस समय युद्ध छिड़ जाने से जर्मन होने के कारण उन्हें इंग्लैण्ड में नजरबन्द कर दिया गया।

३ दक्षिण अफ्रीका के गोरे साथियों में अत्यंत निकट के और वफादार। वे ट्रांसवाल के 'क्रिटिक' नामक पत्र के उप-सम्पादक थे। उसे छोड़कर गांधीजी के 'इंडियन ओपीनि-

काछलिया[1] और सोराबजी[2] की जोड़ का कोई नहीं। रुस्तमजी[3] का दूसरा संस्करण मिलना तो असंभव ही है। यह कुछ विचित्र-सा लग सकता है, मगर दक्षिण अफ्रीका से मुझे यहाँ ज्यादा अकेलापन महसूस होता है।

मिशन' में आ गये थे। दक्षिण अफ्रीका की लड़ाई के सिलसिले में उन्होंने इंग्लैण्ड और सारे भारत का दौरा किया था। वे गांधीजी के दफ्तर में 'आर्टिकल्ड क्लर्क' रहकर वकील हो गये थे। लड़ाई के सिलसिले में जेल भी गये थे।

१ अहमद मुहम्मद काछलिया। दक्षिण अफ्रीका की लड़ाई के साथी। इनके बारे में गांधीजी 'दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह' नामक पुस्तक में लिखते हैं: "बहादुरी और दृढ़ता में इनसे बढ़कर किसी भी मनुष्य का अनुभव न मुझे दक्षिण अफ्रीका में हुआ और न हिन्दुस्तान में ही। कौम के लिए इन्होंने सर्वस्व होम दिया था। मेरा इनसे जितना भी वास्ता पड़ा उसमें मैंने इन्हें सत्याग्रह के रूप में ही देखा है। वे कट्टर मुसलमान थे। साथ ही हिन्दू-मुसलमानों के लिए समदर्शी थे।" "दक्षिण अफ्रीका के महान युद्ध में जिन लोगों ने अपनी प्रतिज्ञा का अक्षरशः पालन किया, उनमें काछलिया सेठ सदा सबसे आगे रहे थे।"

२. सोराबजी शापुरजी अडाजणिया। दक्षिण अफ्रीका की लड़ाई में प्रथम पंक्ति के सत्याग्रही। उन्होंने लड़ाई का बहुत गहरा अध्ययन किया था। इसलिए लड़ाई के मामले में वे उनके सलाहकार बन सकते थे। गांधीजी कहते हैं कि उनकी सलाह में हमेशा इतना विवेक, उदारता और शान्ति वगैरह पायी जाती थी। लड़ाई खत्म होने के बाद उनके सत्याग्रहियों में से किसीको विलायत भेजकर बैरिस्टर बनाने के लिए डॉ. मेहता ने छात्रवृत्ति दी थी। उद्देश्य यह था कि वह बैरिस्टर बनकर दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी की जगह लेकर जाति की सेवा कर सके। सोराबजी दक्षिण अफ्रीका में गोखलेजी के सम्पर्क में आये थे। विलायत में और आये और उन्होंने गोखलेजी का भी मन हर लिया। बैरिस्टर बनकर आने के बाद उन्होंने जोहान्सबर्ग में वकालत शुरू की। साथ ही सेवा-कार्य भी आरंभ किया और अपनी सादगी, सरलता और मिलनसारी से जाति के प्रिय बन गये। ३५ वर्ष की उम्र में भरी जवानी में गुजर गये।

३ पारसी रुस्तमजी। दक्षिण अफ्रीका के एक बड़े व्यापारी। गांधीजी के पुराने मुवक्किल और निजी मित्र। दक्षिण अफ्रीका की लड़ाई में उन्होंने उन्हें हजारों रुपये की मदद दी और जेल में भी गये थे। गांधीजी के भारत आ जाने के बाद भी उनके कामों में आर्थिक सहायता देते थे।

इसका अर्थ यह नहीं कि यहाँ मुझे साथी नहीं मिले हैं। परन्तु उनमें से बहुतों के और मेरे बीच ऐसा पूरा आन्तरिक सम्बन्ध नहीं बन सका है, जैसा कि दक्षिण अफ्रीका के साथियों के साथ बन गया था। आप उनके साथ जो सुरक्षा की भावना में अनुभव कर सकता था, वह यहाँ नहीं कर सकता। यहाँ मैं लोगों को नहीं पहचानता। वे मुझे नहीं पहचानते। यह सब मैं मन में सोचता रहूँ, तो उदास हो जाऊँ। परन्तु मैं इस तरह सोचता नहीं रहता। ऐसा करने की मुझे फुरसत ही नहीं। अभी ज़रा समय मिल गया तो लिख डाला। रामदास के पत्र से मुझे स्मरण हुआ कि तुम्हारा अस्तित्व दक्षिण अफ्रीका में है और अपने अन्दर की गहराई के विचार मैंने तुम्हारे साथ भोग लेने का क्षणिक आनन्द ले लिया। परन्तु अब आगे और नहीं बढ़ाऊँगा।"

९-६-'१९

श्रीमती नायडू, रामस्वामी, मि० और मिसेज बिना मिलावट रवाना हो गये। श्रीमती नायडू के साथ नीचे लिखे तीन पत्र दिये। इनमें मांटेग्यू के भाषण और वर्तमान स्थिति के बारे में बापू के विचार संक्षेप में आ जाते हैं :

लेबर्नम रोड, बम्बई

प्रिय हेनरी (पोलाक)

"मैं देख रहा हूँ कि हॉर्निमन के साथ तुम कुश्ती में उतर पड़े हो। मेरे ख्याल से तुम्हें उसमें 'वर्नेक्युलर प्रेस ऑफ इण्डिया' का उद्धरण देकर पछाड़ दिया है। फिर भी हम दोनों इस पछाड़ के बावजूद डटे हुए हैं।

"मेरी सेना में पड़ी हुई फूट से मुझे तो आनन्द ही होता है। भरूचा-जैसी गये, जमनादास छोड़ गये। कुछ और भी जायेंगे। किन्तु मैं इससे नहीं घबराता। लोग हिंसा के मार्ग पर अग्रसर हो जायें, तो घबराऊँ। पहली जुलाई*

---

* इस दिन बापू रौलट-कानून के विरुद्ध स्थगित की हुई सविनय भंग की लड़ाई आरम्भ करनेवाले थे।

की विश्वासपूर्वक प्रतीक्षा कर रहा हूँ। सरकार हमारे विरोध से निपट लेने के लिए तैयार मालूम होती है। मैं किसी भी प्रकार के प्रदर्शन करने की बात टालूँगा। इस बार सविनय कानून-भंग गहरा होगा और व्यापक भी। मिस्टर माण्टेग्यू से साफ-साफ कह देना कि जब तक रौलट-कानून वापस नहीं ले लिये जायँगे, तब तक हिन्दुस्तान में शान्ति नहीं होगी। यहाँ के अधिकारियों ने उसकी उपेक्षा की है। मिस्टर हार्निमैन के मामले में कितनी भयंकर गलत-बयानी की गयी है! उन्हें निर्वासित करने का असली कारण शायद कभी नहीं बताया जायगा। 'यंग-इण्डिया' ध्यानपूर्वक पढ़ते रहना। अग्रलेख ज्यादातर मेरे ही होते हैं। सच पूछो तो मैं ही उसका संपादक हूँ। खिलाफत-सम्बन्धी लेख देखना। अभी तो और अधिक चीजें सामने आयेंगी। मिस्टर माण्टेग्यू को न्याय करना हो, तो उन्हें अधिकारियों की आँखों से देखना बन्द कर देना चाहिए। ये लोग तो अपनी मौजूदा सत्ता का जिस पद्धति पर आधार रखते हैं, उसे कायम रखना चाहते हैं, इसलिए उन्हें यहाँ की परिस्थिति का निष्पक्ष विवरण इन लोगों से नहीं मिल सकता। रौलट कानून रद होने ही चाहिए, मुसलमानों को सन्तुष्ट करना ही चाहिए और उन्हें सुधार देने ही चाहिए। पंजाब के अत्याचारों की जाँच करने के लिए दी हुई सजाओं में हेरफेर करने के अधिकारसहित निष्पक्ष पंच मुकर्रर होना खास तौर से जरूरी है। ये चार बातें की जायँ, तभी इस दुःखी देश में शान्ति हो सकती है। जब तक ब्रिटेन के लाभ के लिए हिन्दुस्तान का शोषण जारी है, तब तक इस देश में अमनचैन नहीं हो सकती। देखो, हुंडी करने की दर में दुगुनी वृद्धि कर दी गयी है। इसका परिणाम यह होगा कि बदले में हिन्दुस्तान का कुछ भी लाभ हुए बिना करोड़ों रुपये का नुकसान होगा। इसका अर्थ यह होता है कि तुम लंकाशायर को और सिविलियन अफसरों को इतना अधिक बोनस दे रहे हो। इन सब चीजों का समझौता तो हो सकता है, यदि ऊपर बतायी हुई बातों में राहत देकर लोगों के दिल ठंडे कर दिये जायँ। रौलट-कानूनों का अर्थ यही होता है कि सरकार ने लोकमत की [illegible] निरपेक्ष [illegible] है। जिस समय

सुधारों की बातचीत हो रही है, उस समय सरकार का ऐसा रवैया अजब है।

"यह पत्र तुम्हें श्रीमती नायडू देंगी। वे अद्भुत महिला हैं। मैंने इनकी मीराबाई से तुलना की है। अपनी इस राय में परिवर्तन करने का मुझे कोई कारण नहीं मिला। तुम्हें और तुम्हारे कुटुम्ब को यह मेरा प्रेम का सन्देसा देंगी।

तुम्हारा भाई

'पुनश्च : 'यंग इंडिया' के लिए कुछ लिखोगे? मैं चाहता हूँ कि कुछ लिखो।'

¶ 'भाईश्री हार्निमैन,

"यह जानकर कि आप यहाँ सही-सलामत पहुँच गये हैं, मेरी चिंता मिटी। मिस्टर मान्टेग्यू ने आपके बारे में जो कुछ कहा है उसे पढ़कर मुझे बहुत बुरा लगा। मुझे विश्वास है कि आपने अपनी निर्दोषता प्रमाणित कर दी। इस बारे में 'यंग इंडिया' में मैंने जो लिखा है, उसे आप देख लें।

यहाँ का सारा हाल तो श्रीमती नायडू आप से कहेंगी। जब तक रौलट-कानून रद न हो जाय, तब तक हिन्दुस्तान में शांति नहीं हो सकती। मुसलमानों की भावना का ख्याल अवश्य होना चाहिए। और पंजाब की सजाओं में परिवर्तन होना ही चाहिए।

" 'यंग इंडिया' में कुछ लिखेंगे?"

¶ "भाई श्री शास्त्रियार,

"मेरी प्रार्थना है कि 'यंग इंडिया' के अग्रलेखों पर आप दृष्टिपात करते रहें। सब अग्रलेख मेरे लिखे हुए होते हैं या मेरी देखरेख में लिखे जाते हैं। उनमें लिखी गयी सभी बातों की सचाई के बारे में मैं विश्वास दिला सकता हूँ। उनमें जो टीकाएँ प्रकाशित होती हैं, वे अधिकारियों के रवैये को गलत साबित कर देती हैं। रौलट-कानून उसका

मूर्तस्वरूप है। इसीलिए उसके विरुद्ध मेरा प्रबल विरोध है। क्रांतिकारी अपराधों का उन्मूलन करने के लिए सरकार को इस कानून की जरूरत नहीं। लोगों को तंग करने के लिए ही यह कानून चाहिए। भारत-रक्षा-कानून का जिस तरह अमल हुआ, उससे साबित है कि लोगों को किस तरह तंग किया जा सकता है। ये कानून जब तक रद्द न हो जायें तब तक भारत में शांति हो नहीं सकती, होगी नहीं। मिस्टर माण्टेग्यू की सफाई ठिक नहीं सकती। मिस्टर हार्निमैन के संबंध में उन्होंने जो आलोचनायें की हैं, वे अन्यायपूर्ण और गलत हैं। पंजाब के अत्याचारों ने कवि (रवीन्द्रनाथ ठाकुर) को धधकता हुआ पत्र लिखने को विवश किया। मेरी अपनी राय यह है कि यह पत्र समय से पहले लिखा गया है। परन्तु इसके लिए कवि को दोष नहीं दिया जा सकता। असन्तोष के जो सच्चे कारण हैं, उन्हें दूर करके लोगों को संतुष्ट न किया जायगा, तब तक आप और दूसरे मित्र सुधार स्वीकार करने से इनकार करेंगे, क्या मैं ऐसी आशा रखूँ?

मुझे उम्मीद है कि सफर से आपको लाभ हुआ होगा।"

७-६ १९

बम्बई के एक युवक पत्रकार को कड़ी भाषा में लिखा थी।

"भाई"

"इस पत्र से तुम देखोगे कि मुझे 'पूज्य पिताजी' कहना कितना कठिन है। तुम्हारे आचारधर्म में मुझे जरा भी शक नहीं। तुम्हारी अव्यवस्थित लिखावट उसका बोलता सबूत है। किसी भी तरह पढ़नीय हुआ, दुबारा नहीं देखा हुआ और पंक्तियों की पंक्तियाँ कटा हुआ पत्र अपने मान्य किये हुए 'पूज्य पिताजी' को आवारा लड़का ही लिख सकता है। लड़का सचमुच आज्ञापालक हो, तो जान-बूझकर स्वीकार किये हुए पिता को जब पत्र लिखेगा तब खूब ध्यानपूर्वक अपने सुन्दर-से-सुन्दर अक्षरों में लिखेगा और विशेषण लगाने में कंजूसी करेगा। उसके पास इतना समय

सकते हो। किन्तु मेरा खयाल है कि इस समय ऐसा कुछ भी लिखने का समय तुम शायद ही निकाल सको।"

"चि॰ छगनलाल,

"तुम्हारा पत्र मिला। मेरी धारणा तो यह है कि कलकत्ता वगैरह से हमारी खादी कोई भी नहीं मँगायेगा, इक्के-दुक्के मँगानेवाले बंबई या अहमदाबाद से शायद मँगा लें। हमारा ५ फीसदी दाम बढ़ाना मुझे तो हरगिज ठीक नहीं लगता। हमें अपनी मेहनत सिर्फ मुफ्त ही देनी चाहिए, तभी स्वदेशी-स्टोर से ९ प्रतिशत मुनाफा लेकर सन्तोष कराया जा सकता है। नयी वस्तु का प्रचार करने में हम मुनाफा कैसे लें? हमें खाने को मिल ही जाता है। बंबई माल न भेजा हो, तो जब तक मैं न लिखूँ, न भेजना। विठ्ठलदास के साथ बातचीत कर लें, उसके बाद ही भेजो तो ठीक होगा। मैंने यहाँ सुना है कि पुराने स्वदेशी-स्टोर में अब हमारी खादी को कोई छूता भी नहीं है। ऐसा हो, तो हमें विचार करना पड़ेगा। तुम किसी भी मनुष्य का उपयोग कर लेना। परन्तु मैं उम्मीद रखता हूँ कि छोटेलाल और जगन्नाथ का जरा भी उपयोग नहीं करोगे। स्वदेशी-स्टोरवालों की तरफ से एतबार न मिले, तो मुझे लिखना, मैं तजवीज करूँगा।"

१-७-१९

सत्याग्रह के भविष्य के बारे में राजगोपालाचारी को पत्र लिखा :

"॥ कालीनाथ रॉय के प्रश्न के साथ आपको दक्षिण अफ्रीका का प्रश्न छोड़ देना चाहिए। श्री सत्यमूर्ति, दीवान बहादुर और अलग-अलग संस्थाओं के दूसरे प्रतिनिधियों को आपको इकट्ठा करना चाहिए। मैं देखता हूँ कि हमें सत्याग्रह का कार्यक्षेत्र विस्तृत करना पड़ेगा। जीवन के एक-एक क्षेत्र पर और दूसरे सभी प्रश्नों पर यह लागू हो सकता है। (सत्याग्रह) सभा का विधान बदलने और उसे स्थायी संस्था बनाने की

बात में गंभीरतापूर्वक सोच रहा हूँ। सारी चीज बापू जैसी स्थिति में है। दक्षिण अफ्रीका का प्रश्न हमें अपने आन्दोलन के इस रूप की तरफ अनिवार्य रूप से ले जा रहा है। हम किसी दल से बँधे नहीं हैं, इसलिए जहाँ जहाँ संभव हो, और जिस प्रश्न पर मतभेद न हो अथवा पैदा न हो सकता हो वहाँ सब दलों अथवा संस्थाओं को हमें एक मंच पर इकट्ठा करना चाहिए।

"दक्षिण अफ्रीका के प्रश्न पर अखबारों को मैंने जो पत्र लिखा है, उसे आप देखिये। हमें सभाएँ करनी चाहिए और सरकार से अपना कर्तव्य पालन करने का आग्रह करनेवाले प्रस्ताव पास करने चाहिए। भारत-मंत्री के नाम भी तार देने चाहिए। आप देखेंगे कि 'टाइम्स ऑफ इंडिया' हमारी तरफ झुका है। उधर के एंग्लो-अखबारों को अपने पक्ष में करने की आपको कोशिश करनी चाहिए। रौलट-कानून के बारे में मैं अब भी वाइसराय के साथ पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ, इससे सविनय भंग में देर हो रही है। पंजाब जाने का प्रयत्न करने का मेरा विचार नहीं है। परन्तु और किसी स्थान से बंबई प्रान्त की हद पार करूँगा। मेरा खयाल है कि पंजाब के मामले में झगड़ा करने की खातिर झगड़ा करने की चुनौती देना शायद ही उचित होगा। अपनी स्थिति के बारे में मन में लेशमात्र भी शंका हो, तो वैसा न करना मेरा कर्तव्य होगा। मेरे कहने का मतलब यह है कि इस किस्म की कोई चुनौती देना नाटक-सा दिखाई देगा और ऐसे प्रदर्शनों को तो मैं धिक्कारता ही हूँ। मुझे नज़रबन्दी करकर भी स्वतंत्र रहने दिया है, इसीमें पंजाब-सरकार काफी मूर्ख दिखाई देती है। अब अगर उससे मैं यह कहने के लिए जाने की मूर्खता करूँ कि तुम मुझ पर मुकदमा क्यों नहीं चलाते, तो मैं अपने हाथों ही हारा अपर मिया जाउँगा, जब कि मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि वे मुझ पर मुकदमा नहीं चलाना चाहते, उनकी हिम्मत नहीं होती। मेरी दलील आपकी समझ में आ रही है न? मैं आपके दिल पर यह बिठा देना चाहता हूँ कि आपका सुझाव स्वीकार कर लेने में भूल होगी।"

५-७-१९

खास तौर पर राजनैतिक सुधारों के मामले में ऐसा कार्यक्रम, जिसके लिए सब सहमत हों, शुरू कर देने की सलाह देनेवाला मि [illegible] का पत्र आया था। उसका उत्तर :

"आपका प्रेमपूर्ण पत्र मैंने बार-बार पढ़ा। पत्र के लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। अपने इस उत्तर के साथ उसे 'यंग इंडिया' में छपवा रहा हूँ।

"आपकी सलाह के अनुसार करना तो मुझे पसन्द है, परन्तु मेरा खयाल है कि अपने पत्र में आप जिस कार्य की रूपरेखा बता रहे हैं, वह मेरे क्षेत्र से बाहर है। मुझे अपनी मर्यादाओं का अच्छी तरह पता है। मेरे मन का झुकाव राजनैतिक नहीं परन्तु धार्मिक है। राजनैतिक मामलों में मैं भाग लेता हूँ, क्योंकि मेरे खयाल से जीवन का एक भी अंग ऐसा नहीं, जिसे धर्म से अलग किया जा सके। दूसरा कारण यह है कि आज राजनैतिक प्रश्न भारत के मर्मभाग को हर जगह स्पर्श करते हैं। इसलिए यह बिलकुल जरूरी है कि अंग्रेजों के और हमारे बीच के राजनैतिक सम्बन्ध किसी ठोस नींव पर रखे जायँ। इस क्रिया में मदद देने के लिए मैं अपनी सारी शक्ति से प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं राजनैतिक सुधार में ज्यादा दिलचस्पी नहीं लेता क्योंकि मैं जानता हूँ कि योग्य व्यक्ति उस पर ध्यान दे रहे हैं। रौलट कानून के साथ राजनैतिक सुधार मेरी राय में तो एक गुत्थी ही है। रौलट एक्ट द्वेषपूर्ण मानस का परिणाम है। और अन्त में तो अंग्रेज अधिकारी, यदि भारतीय लोकमत उन पर अच्छा असर न डाल सके तो सुधारों को व्यवहार में बेकार कर डालेंगे। वे हमारा अविश्वास करते हैं और हम उनका अविश्वास करते हैं। हरएक एक-दूसरे को अपना स्वाभाविक शत्रु मानता है। इसीलिए रौलट-कानून आये हैं। सिविलियन अफसरों ने हमें दबाये रखने के लिए ही ये कानून बनाये हैं। मेरे मत से तो ये कानून भारतीय जन-शरीर पर नागपाश की तरह हैं। इनके विरुद्ध लोकमत इससे अधिक स्पष्ट रूप में प्रदर्शित किया जाने पर भी इन

धिक्कारने-योग्य कानूनों से सरकार इतने हठपूर्वक चिपकी हुई है, इसलिए मुझे तो बुरे-से-बुरे अनिष्ट की कुशंका पैदा होती है। चूंकि मेरे ऐसे विचार हैं, इसलिए सुधारों में दिलचस्पी लेने की मेरी अनिच्छा पर आपको आश्चर्य नहीं होगा। रौलट-कानून हमारे रास्ते को रोक रहे हैं। और अर्थों के साथ मार्ग की इस बाधा को दूर करने के लिए मेरा जीवन समर्पित है।

"इस बारे में कोई अन्देशा न होना चाहिए कि सविनय कानून-भंग सदा के लिए आ गया है। यह जीवन का एक सनातन सिद्धान्त है। जीवन के बहुत-से क्षेत्रों में जाने अनजाने हम उस पर अमल करते हैं। इतनी शंकाएँ और उत्पात इसीलिए खड़े हुए हैं कि उस सिद्धान्त का नया और विस्तृत प्रयोग किया गया है। वह इसीलिए स्थगित किया गया है कि उसके सच्चे स्वरूप का दर्शन कराया जा सके और रौलट कानून रद्द करने की जिम्मेदारी सरकार पर और उन नेताओं पर डाली जा सके, जिन्होंने (आमतौर से) उसे मुल्तवी करने की मुझे सलाह दी है। परन्तु मुनासिब मियाद में ये कानून रद्द न किये गये तो जैसे रात के बाद दिन का आना निश्चित है, वैसे ही सविनय कानून-भंग भी निश्चित है। सरकार के शस्त्रागार में एक भी हथियार ऐसा नहीं है, जो इस सनातन सत्य को दबा सके अथवा नष्ट कर सके। सचमुच वह समय अवश्य आयेगा, जब यह जुल्मों के विरुद्ध न्याय प्राप्त करने में सबसे कारगर और साथ ही सबसे निर्दोष उपाय के रूप में स्वीकार किया जायगा।

'आप एकता की वांछनीयता के बारे में सुझाव देते हैं। मेरा खयाल है कि ध्येय की एकता तो हममें है ही। परन्तु देश में दल हमेशा रहेंगे। किसी भी सुधार के लिए सबके लिए एक-सा मान्य कार्यक्रम ढूँढ़ा नहीं जा सकता, क्योंकि कुछ लोग औरों से ज्यादा आगे जाने की इच्छा रखनेवाले हो सकते हैं। मुझे ऐसी धारोंमध्ये विविधता में कोई हर्ज मालूम नहीं होता। हममें से जो चीज मैं दूर करना चाहता हूँ, वह यह है कि हम एक-दूसरे का अविश्वास न करें और एक-दूसरे पर गलत हेतुओं

अभी अनुभव के बाद मुझे वह भूल हिमालय के बराबर बड़ी प्रतीत होती है। साथ ही खेड़ा के लोगों पर मेरा हक केवल जमीन के लगान की लड़ाई के कारण ही नहीं है। यहाँ मैंने फौजी भर्ती का काम भी किया है।

× × ×

"ऐसा दीखता है कि हमें स्थगित सविनय भंग कुछ समय बाद फिर शुरू करना पड़ेगा। इसलिए मैं आपसे सत्याग्रही के कर्तव्यों के बारे में कहना चाहता हूँ। जब तक हम सत्याग्रह का सही अर्थ अच्छी तरह नहीं समझ लेंगे, तब तक सत्याग्रही के फर्ज अच्छी तरह समझ नहीं सकते। मैंने सत्याग्रह की व्याख्या तो कर दी है। परन्तु केवल व्याख्या से सही अर्थ समझ में नहीं आता। दुर्भाग्य से लोगों की कल्पना में सत्याग्रह का अर्थ यह है कि उसमें केवल कानून-भंग करना पड़ता है। परन्तु यह भंग कभी-कभी सविनय होता है और कभी-कभी अविनयी भी हो जाता है। अब हम उसको जान लेना चाहिए कि कानून का अविनयी भंग तो सत्याग्रह से सौ कोस दूर है। कानून का सविनय भंग सत्याग्रह का बड़ा जरूरी अंग है। फिर भी वह सदा ही सत्याग्रह का मुख्य अंग नहीं होता। सिद्धान्त के लिए रौलट-कानून के प्रश्न पर आज हमने कानून के सविनय भंग को पीछे धकेल दिया है। राजनैतिक क्षेत्र में विशाल पैमाने पर सत्याग्रह का इस देश में पहली ही बार प्रयोग होने के कारण अभी तक वह प्रयोग-दशा में ही है। उसमें मैं नयी-नयी खोज करता जा रहा हूँ। पूरी तैयारी किये बिना लोगों के सामने कानून का सविनय भंग रखने की मैंने जो भूल की, जो मुझे हिमालय जैसी बड़ी मालूम हो रही है, क्योंकि मैंने दूसरी खोज यह भी की है कि वही मनुष्य कानून का सविनय भंग करने की शक्ति रखता है और हक रखता है, जो स्वयं जिस राज्य में रहता हो उसके कानूनों का स्वेच्छापूर्वक और ज्ञानपूर्वक पालन करना अच्छी तरह जानता हो। मनुष्य ने ऐसे कानूनों का हजार बार स्वेच्छापूर्वक पालन किया हो तब उसके सामने कुछ कानूनों का सविनय भंग का अवसर जीवन में एक-आध बार ही आता है। साथ ही कानून के स्वेच्छापूर्वक पालन के लिए

यह भी जरूरी नहीं कि जिन कानूनों का हम पालन करें, वे अच्छे ही होने चाहिए। ऐसे बहुत से अन्यायपूर्ण कानून होते हैं, जिनका अच्छा नागरिक तब तक उनसे स्वाभिमान का हनन न होता हो या उसकी नीति की भावना को धक्का न पहुँचे, तब तक पालन करता है। मैं अपने भूतकाल पर नजर डालता हूँ तो मुझे एक भी अवसर ऐसा याद नहीं आता, जब मैंने समाज या राज्य के कानून का पालन सजा के डर से किया हो। मैंने राज्य और समाज दोनों के बुरे कानूनों का भी पालन किया है, इस विश्वास में कि ऐसा करना मेरे लिए और जिस समाज या राज्य में मैं रहता हूँ, उसके लिए भी अच्छा है। चूंकि मैंने नियम के रूप में और अनुशासन के साथ ऐसा किया था, इसलिए १८८८ में जब मैं इंग्लैण्ड गया, तब समाज के कानून का भंग करना और दक्षिण अफ्रीका में ट्रान्सवाल-सरकार ने एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट पास किया, तब राज्य के कानून का भंग करना मेरा धर्म हो गया। इसलिए मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि हमें सविनय कानून-भंग करना पड़े, तो उसके लिए अधिक-से-अधिक योग्य मनुष्य के रूप में पहले मैं ही सविनय कानून भंग करूँगा। उस समय बाकी सत्याग्रहियों का फर्ज यह होगा कि सविनय कानून भंग का प्रथम पाठ जो मैंने ऊपर बताया है, उसे अच्छी तरह हजम कर लें। मैंने जो सूचनाएँ लिख रखी हैं, उनमें बता दिया है कि मुझे सरकार पकड़ ले, तो उसके बाद कम-से-कम एक महीने तक तो और किसीको भी कानून का सविनय भंग नहीं करना चाहिए और उस समय भी जरूरत पड़े, तो एक-दो चुने हुए सत्याग्रही ही उपर्युक्त ढंग पर कानून का सविनय भंग करें। एक और बात भी याद रखनी है कि मेरी गिरफ्तारी के बाद चुनिंदा सत्याग्रहियों अथवा उनके साथ काम करनेवाले दूसरे लोगों की तरफ से कभी भी हिंसा का प्रदर्शन न होना चाहिए। बाकी सत्याग्रहियों का कर्तव्य तो यह होना चाहिए कि वे पूर्ण शान्ति रखें और दूसरों से शान्ति रखवायें। सत्याग्रहियों को यह देखना होगा कि मुझे पकड़ लिया जाय, तब हड़ताल न हो, सार्वजनिक सभाएँ न हों और न जेल

ऐसे प्रदर्शन हों, जिनसे लोगों में उत्तेजना फैले। मुझे विश्वास है कि मेरी गिरफ्तारी के बाद पूर्ण शान्ति रखी जाय, तो इस एक ही कृत्य से रौलट कानून रद्द हो जायेंगे। किन्तु यह भी संभव है कि सरकार हठ पकड़कर बैठ जाय और कुछ न करे। ऐसा हो, तो मैंने जो शर्तें बतायी हैं, उनके अनुसार दूसरे सत्याग्रही कानून का सविनय भंग कर सकते हैं और एक-एक सत्याग्रही जेल में चला जाय, तब तक उसे जारी रख सकते हैं।

× × ×

"अब एक बात आपसे और कहनी है। पिछले अप्रैल मास में अहमदाबाद और वीरमगाँव में पागल बने हुए लोगों ने जो अत्याचार किये, वह दुःखदायक है। किन्तु खेड़ा के लोगों के कृत्य तो अधिक दुःखद हैं। इसके परिणाम कैसे हुए होंगे, इसका आप विचार करें तो मेरी बात आपकी समझ में आ जायगी। यहाँ तार काट डाले गये और रेल की पटरियाँ उखाड़ दी गयीं, उसकी बात कर रहा हूँ। अहमदाबाद की भीड़ ने जो फसाद किये, उनमें पागल उत्तेजना थी, किन्तु खेड़ा के कृत्यों की जड़ में तो निश्चित हेतु था। वे भी क्रोध में ही हुए थे। लेकिन क्रोध में विचारहीनता भी होती है और विचारशीलता भी। खेड़ा के अपराधों से अहमदाबाद की अपेक्षा दरअसल कम दुर्घटना हुई है। परन्तु सत्याग्रही की दृष्टि से खेड़ा के कृत्य अधिक अधम हैं। जहाँ तक मैं जानता हूँ अप्रैल के कृत्यों के लिए जो लोग जिम्मेदार हैं, वे वीरतापूर्वक अपने अपराध स्वीकार करने के लिए सामने नहीं आये। जमीन के लगान की लड़ाई के समय जिस खेड़ा ने इतनी उच्चता दिखाई थी उसी खेड़ा का अप्रैल में अपनी शराफत भूल जाना कष्टदायक है। अधिक कष्टप्रद तो यह है कि अपराध करनेवाले अब छिपने की कोशिश कर रहे हैं। सत्याग्रहियों का तो साफ कर्तव्य है कि वे किसी भी तरह पाप के लिए जिम्मेदार हों तो उन्हें खुले तौर पर अपराध स्वीकार कर लेना चाहिए और अगर उन्हें पता हो कि किसने दुष्कर्म किया है, तो उसे भी अपना अपराध स्वीकार करने के लिए समझायें। रेलवे की पटरियाँ

उत्पात उठाना और जो सिपाही शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने जा रहे थे, उनकी जान जोखिम में डालना कायर कृत्य है। बहादुरी के साथ अपना जुर्म कबूल कर लेने के बजाय छिपकर रहना उससे भी अधिक कायरता है। छिपाया हुआ पाप सारे शरीर को कुतरकर खा जानेवाले जहर की तरह है। यह जहर जितना जल्दी निकाल दिया जाय, उतना ही समाज के लिए अच्छा है। किसी दूध में संखिया मिला दिया गया हो तो फिर उसमें दूसरा अच्छा दूध मिला देने से वह दूध भी बिगड़े बिना नहीं रहता। इसी तरह समाज में हम भले कर्म करें तो उनसे छिपाया हुआ पाप मिटाया नहीं जा सकता। मैं आशा रखता हूँ कि जिन मनुष्यों के पागल क्रोध से उनसे अधम्य अपराध कराये, उन्हें ढूँढ निकालने का आप पूरा प्रयत्न करेंगे और उनसे अपने अपराध स्वीकार करने की अपील करेंगे, ताकि इस जिले का सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक वातावरण शुद्ध हो।

२१-७-१९

अप्रैल में जो सत्याग्रह मुल्तवी किया गया था उसे जुलाई में आरम्भ करने का बापू का विचार था, किन्तु वह फिर स्थगित कर दिया गया। अपना यह निर्णय सूचित करनेवाला निम्नलिखित पत्र अखबारों के नाम बापू ने लिखा :

"बम्बई के गवर्नर महोदय की मार्फत भारत-सरकार ने मुझे गंभीर चेतावनी दी है कि सविनय कानून-भंग फिर से शुरू करने में सार्वजनिक सुरक्षा की गंभीर हानि पहुँचने का खतरा है। बम्बई के गवर्नर ने मुझे रूबरू बुलाकर यह चेतावनी कई बार दी है। इस चेतावनी के जवाब में तथा दी० ब० गोविन्द राघव अय्यर, सर नारायण चन्दावरकर तथा अन्य पत्र-सम्पादकों ने मुझसे जो आग्रह किया है उसके जवाब में खूब विचार करने के बाद फिलहाल मैंने सविनय कानून-भंग स्थगित रखने का निश्चय किया है। यहाँ मैं इतना और कहूँगा कि जो गरम-दल कहलाता है, उसके बहुत-से प्रमुख मित्रों ने भी मुझे ऐसी ही सलाह दी है। उनका मुख्य

कारण यह है कि जो लोग सविनय कानून-भंग के सिद्धान्त को समझे नहीं हैं, उनके रुकावट पर उतर आने का इन्हें मय है। दूसरे साथी सत्याग्रहियों के साथ विचार करके अब मैं इस फैसले पर पहुँचा कि सत्याग्रह के सविनय कानून-भंग का अंग अमल में लाने का समय अब आ पहुँचा है, तब अपने इस निर्णय की सूचना देनेवाला एक पत्र मैंने वाइसराय महोदय को विनयपूर्वक लिखा। उसमें मैंने बताया कि सविनय कानून भंग तो कभी शुरू नहीं किया जायगा, यदि रौलट-कानून रद कर दिये जायेंगे। पंजाब के अत्याचारों की जाँच करने के लिए एक ऐसी निष्पक्ष और मजबूत कमेटी मुकर्रर की जायगी, जिसे यह अधिकार हो कि जिन लोगों को सजा दी गयी है उनके मामलों की वह दुबारा जाँच कर सके और जिन बाबू कालीनाथ राय के मुकदमे के कागजात से यह साबित हो सकता है कि उन्हें बेजा तौर पर सजा दी गयी है, उन्हें छोड़ दिया जाय। श्री राय के मामले में भारत-सरकार ने जो फैसला किया है, उसके लिए वह बधाई की पात्र है। यद्यपि श्री राय के साथ पूरा न्याय नहीं किया गया, फिर भी उनकी सजा में भारी कमी कर दी गयी है, इसलिए कहा जा सकता है कि उन्हें काफी न्याय मिल गया। मुझे विश्वास दिलाया गया है कि जिस जाँच कमेटी के लिए मैं आग्रह कर रहा हूँ, वह नियुक्त करने का विचार हो रहा है। सद्भाव के इतने चिह्न मिल जाने के बाद सरकार की दी हुई चेतावनी की उपेक्षा करना मेरे लिए समझदारी की बात नहीं। सरकार की सलाह स्वीकार करके सविनय कानून-भंग के सच्चे स्वरूप का मैं अधिक प्रमाण दे रहा हूँ। सत्याग्रही कभी सरकार को तंग नहीं करना चाहता। वह अक्सर सरकार के साथ सहयोग करता है। परन्तु जब विरोध करना उसका फर्ज हो जाता है, तब नम्रतापूर्वक विरोध करने में भी वह नहीं हिचकिचाता। वह अपना प्रेम विरोधी पक्ष में सद्भाव पैदा करके पूरा करता है। वह मानता है कि सरकार के हृदय अन्यायपूर्ण होने के बावजूद उसके साथ भी सदा सद्भाव का प्रयोग करने से अन्त में सरकार में भी सद्भाव पैदा होगा। इसलिए सविनय कानून-भंग

को दुबारा स्थगित करना सत्याग्रह के व्यावहारिक प्रयोग के सिवा और कुछ नहीं है।

"फिर भी जब तक रौलट-कानून हमारे कानून की पुस्तक को कलंकित कर रहे हैं तब तक सविनय कानून-भंग को एक दिन के लिए भी स्थगित करना पड़े, यह मेरे लिए सिर के घाव जैसा है। लाहौर और अमृतसर में दी गयी सजाएँ इस स्थगन को और भी कठिन बना देती हैं। मैंने इन मुकदमों के फैसले सर्वथा तटस्थ वृत्ति रखकर पढ़े हैं। मुझ पर ऐसी अमिट छाप पड़ी है कि पंजाब के अधिकांश नेताओं को काफी सबूत के बिना सजाएँ दे दी गयी हैं। साथ ही उनकी सजाएँ अमानुषिक और अत्याचारपूर्ण हैं। इन फैसलों पर से ऐसा भान पड़ता है कि नेताओं को और किसी कारण से नहीं, परन्तु सिर्फ इसीलिए कि वे रौलट-कानून के विरुद्ध तीव्र आन्दोलन के साथ संबंध रखते थे सजाएँ दे दी गयीं। इसलिए मुझसे अगर ऐसा हो सकता हो तो मैं उस मर्यादित स्वतंत्रता के, जो भारत-सरकार मुझे भोगने देती है, बदले में जेल को निमंत्रित करना पसंद करूँगा। परन्तु सत्याग्रही को बहुत-सी कड़वी घूँटें पी जानी पड़ती हैं। इस समय का स्थगन ऐसी ही एक कड़वी घूँट है। मेरा यह खयाल है कि मैंने फिलहाल सविनय कानून-भंग मुल्तवी करके देश की, सरकार की और पंजाब के नेताओं की, जिन्हें मेरे मतानुसार बेजा तौर पर और अत्याचारपूर्ण सजाएँ हुई हैं, अधिक अच्छी सेवा कर सकूँगा।

"मारकाट मच जाने का जो भय रखा जाता है, उसके लिए मेरी जिम्मेदारी इस स्थगन से हलकी हो जाती है। परन्तु सरकार और जो मित्र मेरा लड़ाई मुल्तवी करने की मुझे सलाह दे रहे हैं उनकी यह देखने की जिम्मेदारी बढ़ जाती है कि रौलट-कानून अविलम्ब रद कर दिये जायँ।

"मुझ पर यह आरोप लगाया जाता है कि मैं जहाँ-तहाँ जलती हुई दियासलाइयाँ फेंक रहा हूँ। प्रसंगानुसार मेरा सविनय कानून-भंग ही अगर जलती हुई दियास

पुस्तक में रखने की सरकार की जिद सारे हिन्दुस्तान में हजारों जलती दियासलाइयाँ फेंकने के बराबर है। सविनय कानून-भंग को बंद कराने का एक ही मार्ग है कि सरकार रौलट-कानून रद कर दे। इन कानूनों की सफाई में सरकार ने जो कुछ जाहिर किया है, उसमें से किसी बात से उसके विरुद्ध भारतीय जनता के रुख में तब्दीली नहीं हुई।

'इसलिए मैंने तो यह कानून जल्दी रद हो जाने के लिए सविनय कानून-भंग मुल्तवी किया है। फिर भी नरम उपायों से ये कानून रद न हुए, तो उन्हें रद कराने के लिए सत्याग्रहियों को अपने प्राण निछावर देने पड़ेंगे। इस स्थगन-काल में सत्याग्रहियों को एक और मौका मिल जाता है कि वे राज्य के कानूनों का ज्ञानपूर्वक, स्वेच्छा से पालन करने के अनुशासन का परिचय दें। कानून का सविनय भंग करने का हक स्वेच्छापूर्वक कानून-पालन के कर्तव्य से ही फलित होता है। सत्याग्रह केवल सविनय कानून-भंग में अथवा मुख्यतः सविनय कानून-भंग में समा नहीं जाता। सत्याग्रह तो कड़ाई के साथ सत्य से चिपके रहकर राष्ट्र-हित का पोषण करता ही है। साथी सत्याग्रहियों को मैं नम्रतापूर्वक सलाह देता हूँ और छोटे-बड़े सभी से सहयोग माँगता हूँ कि वे शुद्ध स्वदेशी का प्रचार करें और हिन्दू-मुस्लिम एकता बढ़ाने के लिए कोशिश करें। मेरा मत यह है कि हमारे राष्ट्र के अस्तित्व के लिए स्वदेशी आवश्यक है। हमारे ९ करोड़ किसानों को वर्ष में ६ महीने जबरदस्ती बेकार रहना पड़ता है। उनके श्रम का इतना बिगाड़ होता है, इसका विचार करने पर कोई भी हिन्दुस्तानी या अंग्रेज स्वस्थ-चित्त नहीं रह सकता। स्त्रियों के हाथ में हम चरखा रख दें और पुरुषों को करघा सौंप दें तभी इस बेकार रहनेवाली शक्ति का जल्दी और तात्कालिक सदुपयोग हो सकता है। ऐसा करने से लंकाशायर का अप्राकृतिक स्वार्थ और जापान का भय मिट जाता है। लंकाशायर का अस्वाभाविक स्वार्थ नष्ट हो जाने से ब्रिटेन के साथ हमारे सम्बन्ध विशुद्ध हो जायँगे और उसके साथ समानता संभव हो जायगी। जापान का

भय दूर हो जाने से एक राष्ट्रीय और सामाजिक आदत डल जायगी। अपने व्यापार द्वारा जापान हिन्दुस्तान पर जो पाश डालना चाहता है, उसके परिणाम हिन्दुस्तान के अधःपतन अथवा खूँख्वार लड़ाई के रूप में ही हो सकते हैं।

"हिन्दू-मुसलिम एकता राष्ट्र और साम्राज्य दोनों के लिए उतनी ही आवश्यक है। हिन्दू, मुसलमान और अंग्रेजों का स्वेच्छापूर्ण संघ बन जाय, तो मेरे विचार के अनुसार वह संघ अभी बनाये गये राष्ट्रसंघ से अनेकगुना श्रेष्ठ और विशुद्ध होगा। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच एकता होना इन दोनों के ऐसे संघ की पूर्व तैयारी है। खिलाफत, मक्का शरीफ और इस्लाम के दूसरे पवित्र स्थानों के सम्बन्ध में मुसलमानों की जो न्याय्य माँगें हैं, उनमें दिल से साथ देकर हिन्दू इस एकता को ठोस पोषण दे सकते हैं।

"स्वदेशी के प्रचार के लिए और हिन्दू-मुसलिम एकता के कार्य के लिए संगठन शक्ति, कामनिष्ठा, व्यापार में प्रामाणिकता तथा काफी आत्मत्याग और आत्मसंयम की शक्ति की जरूरत है। इससे यह आसानी से समझ में आ जायगा कि बिलकुल शुद्ध ढंग से स्वदेशी का प्रचार करें और हिन्दू-मुसलिम एकता को गति दें तो उसका अप्रत्यक्ष होते हुए भी प्रबल प्रभाव रौलट-कानून रद करने के आन्दोलन पर पड़े बिना नहीं रह सकता। यदि हम उपर्युक्त योग्यता का अचूक प्रमाण दें, तो रौलट-कानून के लिए सरकार के पास कोई उपाय नहीं रह जायगी यद्यपि आज भी वह कोई उपाय तो पेश कर ही नहीं सकती।"

२-८-१९

'हिन्दवासी' के मुकदमे में मजिस्ट्रेट के फैसले में से निम्नलिखित उद्धरण देकर 'मराठा' पत्र ने लिखा कि फैसले में जो मुद्दे उठाये गये हैं उनके बारे में गांधीजी को स्पष्टीकरण करना चाहिए। इस पर बापू ने 'मराठा' पत्र में यह उत्तर लिखा :

फैसले में से उद्धरण :

¶ "जैसा कि दिल्ली की घटनाओं ने बता दिया है, राजनैतिक दृष्टि से सत्याग्रह का एक और अंग साफ बताता है कि कानून का भंग करना उसके सिद्धान्त का अन्तर्गत स्वरूप है। सत्याग्रह-प्रतिज्ञा का मजमून सबकी जानकारी में है। सत्याग्रह-सभा जिन कानूनों को तोड़ना तय करे, उन कानूनों को तोड़ने का अधिकार उस प्रतिज्ञा के लेनेवाले को प्राप्त हो जाता है। अब 'सविनय भंग' का क्या अर्थ है, यह कहीं नहीं समझाया गया। यह सर्वविदित है कि बम्बई में 'सविनय भंग' ने जब्त साहित्य बेचने का स्वरूप ग्रहण किया। ऐसा करना ताजीरात हिन्द की दफा १२४ अ के अनुसार अपराध है। इसलिए ऐसा करने से फौजदारी कानून का स्पष्ट अनादर हुआ। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि कोई भी कानून, जो दूसरों के हकों की रक्षा करता हो, उसका 'सविनय भंग' करने से सभी कानून और व्यवस्था ताक में रख दी जाती है और कानून और व्यवस्था की रक्षक सरकार के प्रति वास्तविक रूप में द्वेष और तिरस्कार पैदा होता है। अर्थात् राजनैतिक सत्याग्रह का यह अंग तात्त्विक रूप में और परिणाम की दृष्टि से भी राजद्रोही है।"

गांधीजी का जवाब :

"आपने जो अंश उद्धृत किया है वैसे एक ही पैराग्राफ में जीवन के एक महान् सिद्धान्त के बारे में इससे अधिक गलतफहमी पैदा करना या दलीलों को गलत रूप में पेश करना बड़ा कठिन है। इस पैराग्राफ के आरंभ में लिखा है कि 'जैसा कि दिल्ली की घटनाओं ने बता दिया है, राजनैतिक दृष्टि से सत्याग्रह का दूसरा अंग स्पष्ट बताता है कि कानून का भंग करना उसके सिद्धान्त का अन्तर्गत स्वरूप है।' जब तक उभय पक्षों की तरफ से दिल्ली की घटनाओं के रहस्य का स्फोट न किया जाय तब तक हम यह नहीं जान सकेंगे कि दिल्ली में कसूर किसका था। परन्तु मैं इतना तो बता दूं कि गत ३० मार्च को अथवा ६ अप्रैल को सविनय कानून-भंग शुरू नहीं किया गया था। स्वामी श्रद्धानंदजी

का तो यह कहना है कि कानून का भंग अधिकारियों की तरफ से किया गया था। वहाँ जो मुट्ठीभर सत्याग्रही उपस्थित थे, उन्होंने तो अपनी जान जोखिम में डालकर भीड़ और स्थानीय अधिकारी दोनों के पागलपन को अंकुश में रखने की कोशिश की थी। फैसले में आगे बताया गया है कि 'सत्याग्रह-सभा जो कानून तोड़ना तय करे उन कानूनों का सविनय भंग करने का हक इस प्रतिज्ञा के लेनेवाले को प्राप्त हो जाता है। इस वाक्य में हकीकत को गलत रूप में पेश करने और साथ ही सही हकीकत को दबा देने का दोहरा दोष भरा है। प्रतिज्ञा लेनेवालों को सत्याग्रह-सभा के तय किये हुए किसी भी कानून का सविनय भंग करना नहीं परन्तु अपनी नियुक्त की हुई विरोध-समिति के चुने हुए कानूनों का सविनय भंग करना है। यह भेद महत्त्वपूर्ण है। साथ ही विद्वान् मजिस्ट्रेट ने यह चीज दिखाई ही नहीं कि सविनय कानून-भंग करते वक्त सत्याग्रही सत्य पर डटे रहने और किसीके भी जान-माल को नुकसान न पहुँचाने के लिए बँधा हुआ है। यह वस्तु कम महत्त्व की नहीं है। आगे के वाक्य में मजिस्ट्रेट अपने जिस अज्ञान का प्रदर्शन करते हैं वह तो अक्षम्य ही है। वे कहते हैं कि 'सविनय भंग क्या है, यह कहीं नहीं समझाया गया।' सविनय कानून भंग के लिए जब वे सजा देने बैठे थे तब उनका पूरी तरह यह समझ लेना फर्ज था कि यह वस्तु क्या है। सत्याग्रह-संबंधी सभी पत्रिकाएँ, जिनमें थोरो का प्रसिद्ध लेख 'कानून का विरोध करने का कर्तव्य' भी है, उन्हें उपलब्ध थीं।

'इसके बाद के मजिस्ट्रेट के वाक्यों का मंतव्य बताने से पहले संक्षेप में यह समझाने की कोशिश करूँगा कि कानून के सविनय भंग का क्या अर्थ है। सविनय कानून-भंग कानून के अविनयी अथवा अनीतिमय भंग से विपरीत है। सविनय कानून-भंग ऐसे ही कानूनों का हो सकता है, जो नीति से सम्बन्ध न रखते हों। साथ ही कानून भी फौजदारी और दीवानी दो प्रकार के होते हैं। कानून का सविनय भंग करनेवाला भारतीय दंड विधान की धारा १२४ अ जैसे कृत्रिम फौजदारी कानून का सविनय भंग

करने में संकोच नहीं करेगा। इस कानून के अनुसार न्यायाधीश की धुन अथवा पूर्वग्रह के अनुसार किसी भी वस्तु को राजद्रोही माना जा सकता है। सविनय भंग करनेवाला दूसरों के हक पर आँच लानेवाला कोई भी काम नहीं करेगा। वह किसी भी व्यक्ति अथवा संस्था के प्रति द्वेष अथवा तिरस्कार फैलाने के खयाल से कोई भी काम नहीं करेगा। परन्तु किसी भी व्यक्ति या संस्था के द्वेषजनक अथवा तिरस्कारयुक्त कार्यों का, परिणाम की परवाह किये बिना, अनादर करने या भंडाफोड़ करने में वह संकोच नहीं करेगा। ऐसा करके वह व्यक्ति अथवा संस्था को अकारण द्वेष अथवा तिरस्कार से बचा लेता है। राजद्रोह के कानून का ऐसा अर्थ तो नहीं हो सकता कि राज्य के किसी भी जुल्म या मनमानी के आगे सिर झुका दिया जाय। कानून की पुस्तक में भले ही ऐसा लिखा हो और जुल्म के प्रति द्वेष भी पैदा होने का भय हो। सविनय कानून-भंग करनेवाला किसी कृत्य के बारे में हेतुओं का आरोपण नहीं करेगा, परन्तु उस कृत्य की उसके गुण-दोषों से ही जाँच करेगा। सविनय कानून-भंग की रचना प्रेम और भाईचारे पर है, जब कि कानून के अविनयी भंग की रचना द्वेष और तिरस्कार पर है। प्रकाश और अंधकार में जितना फर्क है उतना ही अन्तर सविनय कानून-भंग और अविनयी कानून-भंग के बीच है। जब देश में सविनय कानून-भंग की भावना व्यापक हो जायगी और मैं आशा रखता हूँ कि हिन्दुस्तान के लोगों में थोड़े ही समय में ऐसा हो जायगा, तब अपराध और रक्तपात लगभग भूतकालीन घटना बन जायँगी।

मित्र और सरकार दोनों यह दलील देते हैं कि जीवन के एक सिद्धांत के रूप में सविनय कानून-भंग भले ही बहुत प्रशंसनीय वस्तु हो, परन्तु नासमझ लोग सविनय कानून-भंग और अविनयी कानून-भंग के बीच भेद नहीं कर सकते। जो चीज उन्हें पसन्द न आती हो, उसके अनादर करने का उनका रवैया होने के कारण किसी भी कानून-भंग को सविनय कानून-भंग समझने की वे भूल करते हैं और ऐसा करने से गैरकानूनी

काम करने की उनकी आदत पड़ती है। यह तर्क विचारणीय अवश्य है, परन्तु इससे सविनय कानून-भंग की आवश्यकता अथवा महत्ता गलत साबित नहीं हो जाती। इससे तो इतना ही साबित होता है कि मेरे जैसे आदमी को नये और विस्तृत क्षेत्र में सविनय कानून-भंग का प्रयोग करने से पहले बहुत सावधानी रखने की ज़रूरत है।

"इतने विवेचन से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उपर्युक्त उद्धरण के नीचे लिखे शब्दों का कितना मूल्य है। ये हैं वे शब्द :

"बम्बई में 'सविनय भंग ने' ज़ब्त साहित्य बेचने का स्वरूप ग्रहण किया। ऐसा करना भारतीय दंड-विधान की धारा १२४ अ के अनुसार जुर्म है। अर्थात् ऐसा करने से फौजदारी कानून का स्पष्ट उल्लंघन हुआ। वर्जित साहित्य की बिक्री का प्रयोग फौजदारी कानून का सक्रिय भंग करने के लिए नहीं किया गया था परन्तु प्रबंध-विभाग के अधिकारियों की निषेधाज्ञा को चुनौती देने के लिए किया गया था। अब तो स्पष्ट हो गया है कि ऐसी बिक्री में कानून का कोई भंग ही नहीं था, क्योंकि इससे किसी भी कानून अथवा हुक्म का उल्लंघन होता ही नहीं। सविनय भंग करनेवाले ने निषेधाज्ञा का अर्थ समझने में भूल की थी।

"उद्धरण में आगे बताया गया है कि 'साथ ही यह स्पष्ट है कि किसी भी ऐसे कानून का, जो दूसरों के हकों की रक्षा करता हो, 'सविनय भंग' करने से सभी कानून और व्यवस्था ताक में रख ही जाती है और कानून और व्यवस्था की रक्षा करनेवाली सरकार के प्रति वास्तविक रूप में द्वेष और तिरस्कार पैदा होता है। अर्थात् राजनैतिक सत्याग्रह का यह अंग तात्त्विक रूप में और परिणाम की दृष्टि से भी राजद्रोही है। सविनय कानून-भंग के उपर्युक्त स्पष्टीकरण के बाद इस पर अधिक आलोचना करना व्यर्थ है। यदि श्री जैठमल को सत्याग्रह के सिद्धान्तों की बिलकुल गलत कल्पना से ही सजा दे दी गयी हो, तो उन्हें अविलम्ब छोड़ देना चाहिए।"

८-८ १९

पेशावर के एक अनाम प्रमुख मुसलमान ने बापू को पत्र लिखा कि आपके सविनय कानून-भंग से देश में दंगे और रक्तपात हो सकते हैं—सरहद में तो खास तौर पर। इसलिए आपको यह विचार स्थायी तौर पर छोड़ देना चाहिए।

उन्हें उत्तर :

भाई "जब सर नारायण चन्दावरकर ने खुली चिट्ठी लिखी और जब सविनय प्रतीकार, जिसे गलत तौर पर पैसिव रेजिस्टेंस कहा जाता है, शुरू करने के अनौचित्य के बारे में सरकार में मेरे सामने दलीलें रखीं तब मैंने थोड़े समय के लिए उसे मुल्तवी करके नम्रतापूर्वक उनकी बात मान ली। इसलिए और कोई उत्तर देने की मेरे लिए कोई बात नहीं थी। परन्तु आपने मुझे पत्र में कुछ बुनियादी मुद्दे खड़े किये गये हैं और सविनय भंग के विरुद्ध कुछ आपत्तियों की उसमें चर्चा की गयी है। इस लिए उनका विस्तृत उत्तर देने की आवश्यकता उत्पन्न होती है।

"पहले तो आपने मुझे पत्र लिखने का प्रेम दिखाया इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देना चाहता हूँ। आपको यह जानने में दिलचस्पी होगी कि दक्षिण अफ्रीका में मैंने आठ साल तक लंबी लड़ाई चलायी तब उसमें आपके जिले के बहादुर पठान सत्याग्रही के रूप में मेरे साथ काम करते थे। उनमें से एक नेटाल की एक खान में काम करते थे। उन्हें उनके जमादार ने सख्त मार मारी। कारण इतना ही था कि वे मेरे साथ सविनय भंग की लड़ाई में शरीक हुए थे। अपकार करनेवाले का विरोध न करने और फिर भी उसकी इच्छा के आगे न झुकने की प्रतिज्ञा से वे बँधे हुए थे, इसलिए उसका कहना न मानने के बदले में हुई अपनी सजा उन्होंने चुपचाप सहन कर ली। वे मेरे पास आये उन्होंने अपनी सूजी हुई पीठ मेरे आगे खोलकर मुझसे कहा : 'मैंने अपनी प्रतिज्ञा और आपकी खातिर इसे सहन किया है। मैं पठान हूँ

मुझ पर जो मार करे, उसे किसी और मौके पर यों ही नहीं छोड़ दूँगा।' उनके इस कष्ट-सहन से ही और उनके जैसे हजारों दूसरों के कष्ट-सहन से ही वह तीन पौंड का मुंडा कानून रद्द हुआ। वह कर हमारे गरीब देश बन्धुओं को, उनकी स्त्रियों को और उनके प्रौढ़ अवस्था में पहुँचे हुए बालकों को गिरमिट से छूटने के बाद नेटाल में मुक्त मनुष्य की हैसियत से रहने की कीमत के तौर पर हर साल देना पड़ता था।

"आप जिस प्रयोग ने नेटाल के मूक मजदूरों को जुल्म से छुड़ाया, वही प्रयोग छोड़ देने को आप मुझसे कहते हैं। जिस प्रयोग ने इस्लाम को दुनिया के महान् धर्मों में एक जीवित धर्म बनाया उसे छोड़ देने को आप मुझसे कह रहे हैं। सन् १९१७ में चंपारन में अधिकारियों ने मुझे जिला छोड़कर चले जाने का हुक्म दिया। उसका जब मैंने सविनय भंग किया, तब कोई अनिष्ट परिणाम नहीं हुआ था। मेरा यह दावा है कि चंपारन के गरीब किसानों में भी और बिहार की सरकार में भी किसी हद तक जो जागृति हुई उसकी बुनियाद मेरे इस सविनय भंग से पड़ी है। जिस सिद्धान्त को मैं पिछले चालीस वर्ष से बहुत मूल्यवान् मानता रहा हूँ और गत तीस वर्ष से अपने जीवन में काफी सफलता के साथ ज्ञानपूर्वक जिसका प्रयोग करता रहा हूँ, उसे मैं कैसे छोड़ दूँ!

"परन्तु आप पिछले अप्रैल के भयंकर अनुभव उद्धृत करके क्या रहे हैं! क्या आपने परिस्थिति का अच्छी तरह विश्लेषण कर लिया है? छह अप्रैल का दिन कन्याकुमारी से पेशावर तक और कराची से कलकत्ते तक करोड़ों स्त्री-पुरुष और बच्चों द्वारा मनाया गया था। इसके जैसी घटना हमारी यादवाश्त में तो कभी हुई नहीं। उस दिन पेशावर में क्या हुआ यह मैं नहीं जानता। परन्तु मुझे मालूम है कि हिन्दुस्तान के हर एक मुख्य शहर में और लाखों गाँवों में वह दिन शान्ति से गुजरा था। इस पर से मैं आपको यह सूचित करना चाहता हूँ कि यह इसका चमत्कारी प्रमाण है कि सविनय भंग की संभावनाएं कितनी हैं। छह अप्रैल को असल में कहीं भी सविनय भंग नहीं किया गया, वह दिन तो तैयारी का

था। दुनिया की और किसी भी सरकार ने तो इस पर से दिखाई देनेवाले नये बल को मान्यता देकर उसे साहसपूर्वक स्वीकार किया होता और जो रौलट-कानून इन सबकी जड़ हैं, उन्हें रद कर दिये होते। परन्तु पंजाब-सरकार तो पागल हो गयी। उसने भारत-सरकार से अपनी जिद पूरी कराकर छोड़ी। निर्दय दमन-नीति शुरू हुई। दो नेताओं को नज़रबन्द करके निर्वासित कर दिया गया। वे जानते थे कि मैं दिल्ली और वहाँ से जल्दी हुआ, तो पंजाब शान्ति के काम के लिए जा रहा था। फिर भी मुझे वहाँ जाने से रोक दिया गया और मैं गिरफ्तार कर लिया गया। नज़रबन्दी में ही मुझे बम्बई लाकर छोड़ दिया गया। उसके बाद विद्रोह हुआ। मैं यह कहना चाहता हूँ कि पंजाब-सरकार ने जान-बूझकर और द्वेषपूर्वक पंजाब में बलवा कराने की योजना सोची होती, तो इससे ज्यादा कारगर कदम वह नहीं उठा सकती थी। फिर भी सत्याग्रह की शक्ति इतनी है कि पंजाब और गुजरात के तीन स्थानों को छोड़कर बाकी सारा हिन्दुस्तान इतनी भयंकर उत्तेजना होते हुए भी काफी शान्त रहा। मैंने अपनी भूल स्वीकार कर ली है। मेरी भूल क्या थी? मेरी भूल इतनी ही थी कि मैंने कितना ही दुःख और सताया जाना सहन करने की लोगों की शक्ति के बारे में गलत हिसाब लगाया। पंजाब के नेताओं की गिरफ्तारी से दिलायी जानेवाली उत्तेजना के बावजूद पंजाब के लोगों को शान्त रहना चाहिए था। किन्तु इतनी सहन-शक्ति वे नहीं दिखा सके। अमृतसर के लोग अपने-आप पर काबू न रख सके। अपने नेताओं को देश-निकाला दिया जाना वे बर्दाश्त न कर सके। उसके बाद जो कुछ हुआ, उसमें किसका कितना दोष था, इसका बँटवारा आप या मैं नहीं कर सकते। सत्याग्रह का सवाल एक तरफ रखकर निराकरण इस प्रश्न का करना पड़ेगा कि क्या सेना के गोली चलाने से लोग पागल बने या भीड़ के दंगों से सेना को मजबूर होकर गोली चलानी पड़ी?

"खैर, यह जो हुआ, सो हुआ। परन्तु देश के कुछ भागों में विशेष कारणों से पिछले अप्रैल मास में हिंसा का प्रयोग हुआ, इसलिए मैं

सविनय कानून-भंग फिर से शुरू करने का विचार स्थायी रूप से क्यों छोड़ दूँ ? संभव है, कुछ लोग उसी वक्त दुष्कृत्य करें, इसलिए क्या मैं सत्कृत्य करना छोड़ दूँ ? मैं मानता हूँ कि यह सवाल इतना सरल नहीं है, जितना मैंने पेश किया है। हरएक कार्य पर विविध प्रकार के भिन्न संयोगों का असर होता है। कुछ संयोग कर्ता के अधीन होते हैं और कुछ उसके काबू के बाहर होते हैं। इसलिए वे तो इतना ही कर सकते हैं कि आस पास के संयोगों पर जब तक वे अधिक-से-अधिक काबू प्राप्त कर सकें, तब तक खुद इन्तजार करें और फिर भगवान् पर भरोसा रखकर अपनी नाव चलावें। सविनय कानून भंग मुल्तवी करके मैंने ठीक ऐसा ही किया है। मैंने बताया है कि सविनय भंग अविनयी भंग से बिलकुल उलटा है। सविनय भंग सरकार के साथ सहयोग और आदर की वृत्ति के साथ पूरी तरह सुसंगत है।

"आप पेशावर का उदाहरण मेरे सामने रख रहे हैं इसलिए ऐसा कह रहे हैं कि लोगों ने विचार किये बिना अथवा दंगाई लोगों के पीछे लगकर ६ अप्रैल के कार्यक्रम में भाग लिया। शायद उन्होंने वैसा ही किया हो, जैसा आप कहते हैं। परन्तु जो घटनाएँ हुई हैं, उनका मैं आपसे भिन्न ही अर्थ लगाता हूँ। रौलट-कानून न बनाये गये होते, तो किसी भी किस्म के अनर्थ न करने पड़ते और भगदड़ मचानेवाले तत्त्वों को मौका नहीं मिल सकता था। इन अनर्थों का अथवा सविनय भंग की योजना बनाने में दोष नहीं-रहा था। बल्कि दोष सरकार द्वारा लोकमत को यहाँ तक ठुकराने में है कि उसकी कल्पना में न आ सके, ऐसा आन्दोलन उठ खड़ा हुआ।

"क्या इसमें से निकालने लायक सार स्पष्ट नहीं है ? सार यह है कि सरकार को लोकमत के आगे झुकना चाहिए और अपने कदम पीछे हटाने चाहिए। यह मान लें कि रौलट-कानून में दिये गये अधिकार जरूरी हैं, तो भी सरकार को इसके लिए धीरज से लोकमत तैयार करना चाहिए और ऐसे उपाय [illegible]

होने चाहिए, जिन्हें समभदार लोकमत स्वीकार कर सके। जहाँ तो सरकार ने अपने मित्रों की सलाह की उपेक्षा की है और ऐसा करके महत्त्व के मामलों में सरकार पर असर डालने में उनकी असमर्थता का पर्दाफाश करके उन्हें हँसी का पात्र बना दिया है। मेरी राय यह है कि आपको और आपकी तरह दूसरे नेताओं को मुझे खुली या खानगी चिट्ठियाँ लिखने के बजाय सरकार को लिखनी चाहिए और उससे अपनी भूलें सुधारने को कहना चाहिए। अपने मार्ग से विचलित होने के लिए मुझे आपको नहीं ललचाना चाहिए। मैं आशा रखता हूँ कि आप इसमें तो मुझसे सहमत होंगे कि जिन रौलट-कानूनों के प्रति इतना विरोध जागरित हुआ है और जिन्होंने इतना खून बहाया है, वे रद्द होने चाहिए। इसके लिए सविनय भंग के सिवा और कोई उपाय आपके पास हों, तो उन्हें आपको अवश्य आजमाने चाहिए और उसमें आपको सफलता मिलेगी तो अपने-आप सविनय भंग के लिए कोई गुंजाइश नहीं रहेगी। इस स्थगन काल में आपको और दूसरे नेताओं को, जिन्हें सविनय भंग से भय है या जो उसे नापसन्द करते हैं, अपनी सारी ताकत लगाकर इस परिणाम लाने की कोशिश करनी चाहिए।

९ ८ १९

भारतमंत्री मि. माण्टेग्यू ने आग्रह किया कि रौलट-कानून में अधिकारियों को दिये गये अधिकार जरूरी हैं। इसके जवाब में आज के 'यंग-इंडिया' में बापू ने संक्षिप्त, किन्तु जबर्दस्त लेख लिखा :

"मि. मॉण्टेग्यू बोले। वे मानते हैं कि रौलट-कानून के कारण प्रबंध-विभाग के अधिकारियों को दिये गये अधिकार आवश्यक हैं। बहुत से मित्र पूछते हैं कि ऐसा मामला हो जाने पर भी क्या कानून रद्द होगा? मेरा जवाब यह है कि बंग भंग के मामले में मि. मोर्ले ने कहा था कि यह निश्चित हुई घटना है, फिर भी वह रद्द कर दिया गया। इसी तरह रौलट-कानून भी रद्द होगा। जनरल स्मट्स ने एक बार जोर

देकर घोषणा की थी कि पारिपाटिक रजिस्ट्रेशन एक्ट कभी रद्द नहीं किया जायगा। फिर भी सन् १९१४ में वह कानून रद्द हुआ। इसलिए मुझे तो यकीन है कि रौलट-कानून भी रद्द जायगा, क्योंकि कष्ट-सहन की अर्थात् सविनय प्रतीकार की पहाड़ जैसी कठिनाइयों भी पार कर लेने की शक्ति के बारे में मेरा विश्वास है। फिर भी मुझे अफसोस हुए बिना नहीं रहता कि जिस कानून का उसमें भरे हुए अनिष्ट की दृष्टि से और इस दृष्टि से भी कि लोकमत ने इतने कठोर शब्दों में उसकी निन्दा की है, जरा भी समर्थन नहीं हो सकता उसका समर्थन करने मि मरिम्यू सामने आये हैं। अपनी स्थिति को मजबूत देने के लिए मि मरिम्यू को विसंगत तर्क करना पड़ा है और तथ्यों की तोड़-मरोड़ करनी पड़ी है। इस समय तो प्रबंध-विभाग के अधिकारियों को जो अधिकार दिये गये हैं, वे अनावश्यक हैं—सिर्फ इसीलिए कि भारत-रक्षा कानून अभी तो अमल में है और अगले कुछ मास तक अमल में रहेगा। उन्हें सचमुच विशेषाधिकार देना जरूरी ही हो, तो वे दूसरे और कम अपमानजनक तथा अधिक नियंत्रित रूप में दिये जा सकते हैं। राजनैतिक सुधारों की जैसी योजना है, उसके मि मरिम्यू लॉर्ड चेम्सफोर्ड के सहकारी हैं। इन सुधारों से कुछ भी मजा करने का इरादा रखा गया हो, तो जिस कानून से वह व्यर्थ हो जाता है, उस कानून का समर्थन करना मि मारिम्यू को शोभा नहीं देता।

"किन्तु यह लेख लिखने का उद्देश्य यह तक करना नहीं है कि मि मरिम्यू की बात ठीक नहीं सकती। मुझे तो यह दिखाना है कि यदि रौलट-कानून रखने का ही आग्रह किया जाय, तो सरकार को बहुत बड़े-पैमाने पर सविनय प्रतीकार के लिए तैयार रहना पड़ेगा। यह प्रतीकार पूर्ण रूप से विनयपूर्वक किया जायगा परन्तु वह उतना ही प्रबल होगा। मुद्दा यह रहता है। लोगों की इच्छा पर अमल हो या सरकार की इच्छा पर? मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि कोई भी सरकार, फिर वह कितनी ही बलवान् और स्वेच्छाचारी क्यों न हो निरपराध लोकमत के आगे झुकने के लिए बँधी हुई है। केवल पशुबल के नामी, फिर उसका प्रबंध

एक व्यक्ति करता हो या सरकार करती हो सत्य और न्याय को झुकना पड़, यह स्थिति बड़ी भयंकर है। मेरा जीवन-कार्य यह साबित करके दिखा देना है कि अधिक-से-अधिक बलवान् पशुबल्को सत्य का समर्थन करने वाले नीतिबल के आगे झुकना ही पड़ता है। पिछले अप्रैल मास में इतनी उत्तेजना होने पर भी लोगों ने हिंसा का आश्रय न लिया होता, तो कभी तक तो रौलट-कानून कभी के रद्द हो गये होते। मेरा इस समय यह लेख लिखना जितनी निःसंशय सचाई है, उतनी ही निःसंशय यह बात मेरे मन में है। मैं आशा रखता हूँ कि मि. मटिग्यू, लार्ड चेम्सफोर्ड और दूसरे अधिकारी अब देखेंगे कि सच्ची प्रतिष्ठा न्याय करने में और लोकमत का आदर करने में है। परन्तु संभव है कि उनके विचार दूसरी तरह के हों। ऐसी स्थिति में जो लोग सविनय प्रतीकार की तुरंत जीत चाहते हों उन्हें मैं कहूँगा कि ऐसे प्रतीकार के अच्छी तरह हो सकने के लिए वे वातावरण तैयार करें। हमें यदि लड़ना ही पड़ा तो दो ताकतों का जबर्दस्त मुकाबला होगा। परन्तु परिणाम निश्चित है। सविनय प्रतीकार की यह विलक्षण खूबी है। अन्याय के विरुद्ध न्याय करने का लोगों के पास कोई अन्तिम उपाय न हो तब तो उनका नाश ही हो जाय। अधिक-से-अधिक निश्चित और ज्यादा-से-ज्यादा सुरक्षित ढंग का उपाय सविनय प्रतीकार है।

'यूरोप का उदाहरण हमें हिंसा की पद्धति के विरुद्ध चौड़ी-चकली चेतावनी साबित हो रहा है। वहाँ जो युद्ध हुई उससे वहाँ के देशों को शान्ति नहीं मिली। जहाँ देखिये, वहीं हड़तालें, रक्तपात और लूट मार नजर आ रही है। इंग्लैण्ड शायद सबसे ज्यादा विजेता होगा। वह भी इन उत्पातों से मुक्त नहीं है। लड़ाई में हुई विजय से बड़े अनतमुदाय को कोई सन्तोष नहीं मिला। हिन्दुस्तान को दो रास्तों के बीच चुनाव करना है। हिंसा का रास्ता टूटा-फूटा है और सविनय प्रतीकार अथवा कष्ट सहन द्वारा प्रतीकार का हथियार अचूक, शान्तिमय और उन्नतिकर है।"

१८ ८ १९

'टाइम्स ऑफ इंडिया' में पेनसिलवेनियन ने एक पत्र लिखा था। उसका उत्तर बापू ने उसी पत्र में इस प्रकार दिया :

¶ 'पेनसिलवेनियन' ने आपके पत्र द्वारा मुझे सद्भावपूर्वक सलाह दी है। मैं जानता हूँ कि 'पेनसिलवेनियन' जैसे विचार रखते हैं, वैसे ही विचार बहुत से अंग्रेज हमदर्दी से रखते हैं। सत्याग्रह के बारे में कुछ गलतफहमियाँ फैली हुई हैं, जिन्हें दूर करने का मुझे मौका देने के लिए मैं उनको धन्यवाद देता हूँ। 'पेनसिलवेनियन' अपने मशहूर देशबन्धु अब्राहम लिंकन के उदाहरण का अनुसरण करने के लिए मुझसे कहते हैं। उनका एक वचन यह है कि 'हमें विश्वास रखना चाहिए कि सत्य से ही बल पैदा होता है और उसी विश्वास से जीवन के अन्त तक हमें अपनी समझ के अनुसार अपने कर्तव्य पूरे करते रहने चाहिए।' मैंने अपने जीवन में अपनी शक्तिभर इस वचन को कार्यान्वित करने का सदा प्रयत्न किया है।

'पेनसिलवेनियन' का 'नैतिक क्रान्ति' का आग्रह करना वाजिब है। अब सत्याग्रह उसके सिवा और कुछ नहीं। सविनय अवज्ञा उसका केवल एक भाग है, गोकि वह आवश्यक भाग है। सत्याग्रह का शब्दार्थ यह है कि 'कोई भी कुरबानी करके सत्य का आग्रह रखा जाय।' जिन्होंने अपना सारा जीवन सत्याग्रही बनाया है, वे सत्य, अहिंसा, गरीबी और ब्रह्मचर्य का सम्पूर्ण पालन करने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं। 'पेनसिलवेनियन' ने जो कार्यक्रम बताया है, वह लगभग सारा अमल में लाने का जहाँ प्रयत्न किया जा रहा हो ऐसी एक संस्था इस समय मौजूद है। अंग्रेज और अमेरिकी मित्र उसे देख चुके हैं। 'पेनसिलवेनियन' को मैं उसे देखने और उसके बारे में सार्वजनिक विवरण देने के लिए निमंत्रण देता हूँ। वहाँ वे देखेंगे कि जीवन में अलग-अलग दर्जा रखनेवाले स्त्री-पुरुष सम्पूर्ण समानता के भाव से रहते हैं। जो निरक्षर हैं, उनको दैनिक परिश्रम से कमानेवाल

समय में अक्षर ज्ञान कराया जाता है। जो पढ़े-लिखे हैं, वे कुदाली और फावड़ा लेकर काम करने में नहीं हिचकिचाते। वहाँ वे देखेंगे कि खेती के काम के सिवा वहाँ के सदस्य कातना फर्ज समझकर सीख लेते हैं। उसका पुराना इतिहास देखने पर उन्हें पता लगेगा कि जब इन्फ्लुएंजा फैल गया तब उसके सदस्यों ने आस-पास के गाँवों के लोगों को दवा देने का काम किया था। अकाल के समय गरीब लोगों को अनाज बाँटने में अकाल-समिति को सहायता दी थी। उसी कमेटी द्वारा जुलाहों को काम देकर उनमें हजारों रुपये बाँटे थे और साथ-साथ देश का उत्पादन बढ़ाने में सहायता दी थी। उसके सदस्यों की हलचल से ही आज बहुत-सी स्त्रियाँ, जो अब तक कुछ भी नहीं कमाती थीं अपने फुर्सत के समय में सूत कातकर थोड़ा-सा कमाने लगी हैं। सार यह कि 'जेनाब्धिवरोभिवन' द्वारा अंकित विस्तृत कार्यक्रम की अधिकांश बातें सत्याग्रही लोग अपनी पूरी शक्ति लगाकर वहाँ अमल में ला रहे हैं। वह इसमें से ही एक मूक नैतिक क्रान्ति है। *उसका विश्लेषण करने से उसमें न्यूनता आती है।* सत्याग्रही वहाँ जो काम कर रहे हैं, वह इस प्रकार जाहिर करने में मुझे बड़ा संकोच अनुभव हो रहा है।

मैं इतना और बता दूँ कि सत्याग्रह के आगमन से मेरी जानकारी के मुताबिक कितने ही आतंकवादियों को उनके रक्तपातवाले सिद्धान्तों से विमुख किया जा सका है। उनकी समझ में आ गया है कि गुप्त संस्थाएँ बनाने और छिपकर खून-खराबी करने से इस अभागे देश पर सैनिक और आर्थिक भार बढ़ने के सिवा और कोई परिणाम नहीं निकलता। उससे देश पर खुफिया-पुलिस का नागपाश और अधिक सख्त होता है और हजारों गुमराह जवानों की जिन्दगी पामाल होती है। उदीयमान पीढ़ी में सत्याग्रह ने नवीन आशाओं का संचार किया है। जीवन के अनेक अनिष्टों के लिए सत्याग्रह उत्कृष्ट नुस्खा और रामबाण उपाय बताता है। नयी पीढ़ी को सत्याग्रह एक अजेय और अनुपम बल का अनुभव कराता है। इस बल का उपयोग कोई भी मनुष्य बिना किसी आपत्ति के कर सकता है। सत्याग्रह

"हिन्दुस्तान में किसान परम्परा से ऐसा करते आये हैं। यह उनके जीवन का नियम बन गया है। हिंसा करना तो हमारे भीतर रहनेवाले पशु का स्वभाव है। स्वयं कष्ट उठाना अर्थात् सविनय प्रतीकार करना हमारे भीतर बसे हुए मनुष्य का स्वभाव है। सुव्यवस्थित राज्य अथवा समाज में सविनय प्रतीकार करने का अवसर शायद ही आता है। परन्तु अवसर उपस्थित हो जाय, तो जो मनुष्य अपने स्वाभिमान को या अपनी अन्तरात्मा को और सब चीजों से श्रेष्ठ समझता है, उसका ऐसा करना फर्ज हो जाता है। रौलट-कानून ऐसे कानून हैं, जो हममें से हजारों की अन्तरात्माओं को मंजूर नहीं। इसलिए मेरा नम्रतापूर्वक यह सुझाव है कि प्रतिनिधियों का मुझ पर सविनय कानून-भंग न करने का दबाव डालने के बजाय सरकार से ही अपील करनी चाहिए कि राष्ट्र के स्वाभिमान को आघात पहुँचानेवाले और निरपवाद लोकमत के विरोध के पात्र बने हुए कानूनों को वह रद कर दे।"

२०-८ १९

लालाजी को साबरमती से निम्नलिखित पत्र लिखा :

¶"प्रिय लाला लाजपतराय,

"आपका पत्र* मिला, इससे बहुत आनन्द हुआ। इसे मैं

---

* लालाजी का पत्र यह था

¶ "आपने हमारी मातृभूमि की उन्नति के लिए जो महान् आन्दोलन छेड़ा है, उसमें अपने देश से बाहर के प्रवास के कारण मैं भाग नहीं ले सकता। परन्तु आप जो अमर्यादित लड़ाई लड़ रहे हैं उसके लिए मैं अपनी हार्दिक प्रशंसा और आपकी स्वार्थहीन देश-भक्ति के प्रति अपनी गहरी कद्र आपके प्रति प्रकट करना चाहता हूँ।

"देश से अपनी गैरहाजिरी के समय में मैंने बहुत सीखा है और बहुत-सी बेकार बातें भुला दी हैं। इसका पूरा सबूत देने का यह स्थान नहीं है। यद्यपि आपकी विचार सरणी से मैं पूरी तरह सहमत नहीं हो सकता, फिर भी हमें क्या करना चाहिए, इस बारे में आपके विचारों से मैं ज्यादातर सहमत हूँ। हिन्दुस्तान में सत्याग्रह द्वारा शान्ति

२१-८ १९
गामदेवी, बम्बई

¶ "प्रिय दीवान बहादुर,*

'सविनय भंग स्थगित रखा गया है, इस बीच मेरे खयाल से रौलट कानून रद कराने के लिए सतत आन्दोलन तो जारी रखना ही चाहिए। मेरा सुझाव है कि नेता लोग वाइसराय को अथवा मि मॉन्टेग्यू को तर्क-शुद्ध दलीलोंवाला प्रार्थना-पत्र भेजें। इधर के नेताओं के साथ मैं बात कर रहा हूँ। परन्तु कुछ का खयाल है कि ऐसी अर्जी भेजने से भी सुधारों को जोखिम पैदा हो सकती है। मद्रास नेतृत्व करेगा?"

¶ "प्रिय बहन लेडी टाटा

"चरखे के मामले में माफी माँगने की कोई जरूरत नहीं थी। आप इतने समय चरखे के बिना रहीं इसके लिए मुझे अफसोस है। आप शुक्रवार को दोपहर में अपनी मोटर भेज दें, तो मैं चरखा और थोड़ी-सी पूनियाँ भेज दूँगा। साथ में बाबू को भेजूँगा। आप थोड़ा समय देंगी तो चरखा चलाने तथा उसे ठीक रखने के बारे में वे आपको कुछ हिदायतें दे देंगे।

"गवर्नर-सम्बन्धी बात मैं बचा रखूँगा। वह फैलाने लायक नहीं है। इसलिए उसका विज्ञापन होने का डर न रखिये। ईश्वरेच्छा होगी तो आपका बताया हुआ भविष्य सच्चा निकलेगा।"

देवदास को लिखे गये पत्र से :

लाला लाजपतराय का पत्र प्रकाशित होने से और क्यों नाराज हुए हैं? वह प्रकाशित होने के लिए ही भेजा हुआ है। इसमें उनकी कीर्ति बढ़ती है। फिर भी जो आलोचना हो, उसे हमें तो शान्ति से ही सुनना है।

---

* श्री विजयराघवाचारी जो १९२० की नागपुर-कांग्रेस के अध्यक्ष हुए थे।

"लालाजी का पत्र छापने के लिए ही है। हरदयाल के बारे में जो कुछ लिखा गया है, वह प्रसिद्ध ही है। मनुष्य इतने डरपोक हो गये हैं कि अपनी परछाईं तक से डरते हैं। मैंने तो पत्र छापकर लालाजी के लिए भारत आने का द्वार कुछ खोल दिया है। सत्याग्रह थोड़े ही अरसे में केवल गुजराती शब्द नहीं रह जायगा।"

१०-१ १९

बड़ी धारासभा का उद्घाटन करते समय वाइसराय महोदय अपने भाषण में पंजाब के दंगों के बारे में यों बोले :

"जब धारासभा की पिछली बैठक में रौलट-बिल पास किया गया तब कुछ माननीय सदस्यों ने मुझे लगभग धमकी के रूप में चेतावनी दी थी कि अगर यह कानून पास कर दिया गया, तो देश में बड़ी गंभीर प्रकार की हलचल पैदा हो जायगी। मेरे खयाल से माननीय सदस्य इतना समझ लेंगे कि कोई भी सरकार लुट को यो नीति प्रस्तन्य आव श्यक मान पड़ती होगी, उसे आन्दोलन की धमकी से छोड़ नहीं सकती। परन्तु कुछ लोग ऐसे थे, जिन्होंने यह सोचा कि दी हुई धमकी सच्ची साबित की जाय। इस कारण बड़ी दुखदायक घटनाएँ घटीं, जिनके लिए जाँच-समिति मुकर्रर करने की आवश्यकता उत्पन्न हुई है। इन घटनाओं की चर्चा में पड़ने का मेरा इरादा नहीं है। परन्तु मैं इतना कहूँगा कि इन घटनाओं की गंभीरता को कम समझना उचित नहीं। दंगे दबा दिये गये हैं मगर इससे जिन लोगों पर उन दंगों का मुकाबला करने की जिम्मेदारी थी, उनमें से कोई भी जिसे परिस्थिति का सामना करना पड़ा था उन्हें भूल नहीं सकता। हत्याएँ की गयीं, आग लगायी गयी, तार काट दिये गये रेल की पटरियाँ उखाड़ दी गयीं और थोड़े दिन तक तो पंजाब-सरकार के साथ मेरा सम्बन्ध बिना 'बेतार' द्वारा बातचीत करने का ही रह गया था। जो परिस्थिति हमारे सामने आ उपस्थित हुई थी और उसीके कारण जो लगानी पड़ी है, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके

शिकार बने हुए बहुत-से जिलों में अभी तक मौजूद है। इन दंगों की गंभीरता को कोई कम मानने की कोशिश करे, तो मैं उससे कहूँगा कि 'इन जिलों में जाओ और वहाँ जो अविवेकपूर्ण नाश हुआ है, उसके चिह्न आज भी आँखों देख लो।'"

इसका उत्तर देते हुए बापू ने 'यंग इंडिया' में लिखा :

"'यह कहकर कि भारतीय धारासभा के सदस्यों ने धमकी के रूप में चेतावनियाँ दीं, वाइसराय महोदय क्या बताना चाहते हैं? जब कोई चेतावनी वास्तविक रूप में अमल में लायी जाय तब क्या उसे धमकी के रूप में कहा जा सकता है? वाइसराय महोदय स्वयं ही जो जाँच समिति नियुक्त कर रहे हैं और जिसे जाँच के लिए कुछ मुद्दे सौंपे जाने वाले हैं उन मुद्दों के बारे में पहले से ही अपनी राय देकर क्या वे ज्यादती नहीं कर रहे हैं? सरकार पर असर डालनेवाला आन्दोलन देश में खड़ा करके अपनी दी हुई चेतावनी सही साबित करने का सदस्यों को हक था और सरकार ने जल्दबाजी करके मूर्खतापूर्ण ढंग से कठिनाइयाँ पैदा न की होतीं, तो वे ऐसा करके भी बता देते। १ अप्रैल के बाद जो दंगे हुए उनके साथ पहले के व्यवस्थित धार्मिक और शुद्ध आन्दोलन को, जिसका परिणाम ६ अप्रैल के प्रार्थना और तपश्चर्या के रूप में हुआ, वाइसराय महोदय क्यों मिला देते हैं? सरकार को अपना लाडला कानून हाथ से निकल जाता दिखाई दिया। सरकार खुद पागल हो गयी और अपना पूर्वज्ञान तथा औचित्य-अनौचित्य के नियम ताक में रखकर उसने गलत उपाय करने शुरू कर दिये। इसके परिणामस्वरूप ये शोकजनक दंगे हुए और निर्दोष यूरोपियनों और भारतीयों की जानें गयीं—ऐसा उराय बजाय सरकार को देना हमें उचित प्रतीत नहीं होता। इस मुद्दे का निर्णय तो पंच को करना है कि रौलट-कानून के विरुद्ध आन्दोलन के कारण दंगे हुए या सरकार ने ही भीड़ को दंगा करने के लिए उत्तेजित किया? मैं नम्रतापूर्वक कहता हूँ कि ऐसा स्वयं वाइसराय ही स्वीकार करते हैं, पंजाब-सरकार को कोरे कागज पर अधिकार

देकर और उसकी सिफारिशों के अनुसार हुक्म जारी करके वाइसराय पंजाब सरकार के बराबर ही अभियुक्त के कठघरे में आ गये हैं। अब पंच को उनका न्याय करना है।"

[इसके बाद बापू वाइसराय द्वारा अपने भाषण में उठाये गये दूसरे मुद्दों के बारे में लिखते हैं :]

"मेरे कुछ शब्दों को उनके पूर्वापर सम्बन्ध से अलग करके और बिलकुल भिन्न परिस्थिति को लागू करके वाइसराय महोदय ने मेरे साथ गंभीर अन्याय किया है। अहमदाबाद के लोगों के समक्ष ता० १४ अप्रैल को मेरे दिये हुए भाषण में से उन्होंने कुछ शब्द उद्धृत किये हैं। परन्तु मेरा वह सारा भाषण उन्होंने नहीं पढ़ा। न्याय की खातिर उनका फर्ज था कि मेरा भाषण मँगाकर पढ़ जाते। उन्होंने ऐसा किया होता तो उन्हें पता चलता कि मेरा भाषण केवल अहमदाबाद की घटनाओं से ही, जिनकी मैंने खुद जाँच की थी वास्ता रखता था। उस भाषण से वे देख सकते थे अब भी देख सकते हैं कि मेरी आलोचनाएँ अहमदाबाद के बारे में और केवल अहमदाबाद के ही बारे में थीं। ये आलोचनाएँ वीरमगाँव और खेड़ा के बारे में भी नहीं थीं, क्योंकि वहाँ की घटनाओं के बारे में उस समय मैं कुछ नहीं जानता था। वाइसराय महोदय ने जिन विचारों का मुझ पर आरोपण किया है मैं कहना चाहता हूँ कि उन विचारों के साथ मेरा कुछ भी वास्ता नहीं। अब भी पंजाब के बारे में और वहाँ के शिक्षित और होशियार आदमियों के बारे में मुझे कोई निश्चित निजी जानकारी नहीं। इसलिए मैं अहमदाबाद के अपने भाषण के एक-एक शब्द पर कायम हूँ। फिर भी मैं घोषणा करता हूँ कि इस कारण मैं पंजाब के बारे में कोई राय नहीं बना रहा हूँ यद्यपि पंजाब से मुझे काफी सबूत मिला है जो बताता है कि पंजाब-सरकार ने ऐसे काम किये हैं, जो किसी भी तरह माफ नहीं किये जा सकते।

"वाइसराय ने दयालुता को जो बात की है, वह उन्हें शोभा नहीं देती। लोग उनसे रहमदिली या दया की भीख नहीं माँगते, परन्तु शुद्ध

न्याय ही चाहते हैं। यदि सचमुच ही सम्राट् के विरुद्ध युद्ध करने अथवा सरकार को उलट देने का षड्यंत्र रचा जाता, तो जिन शख्सों को उचित अधिकारवाली अदालत अपराधी ठहरा दे, उन्हें भले ही फाँसी पर लटका दिया जाय। लाला हरकिशनलाल पंडित रामभजदत्त चौधरी, डॉ॰ किचलू डॉ॰ सत्यपाल और दूसरे कई प्रौढ़ व्यक्तियों ने, जो प्रसिद्ध सार्वजनिक कार्यकर्ता हैं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में भीड़ को दंगा करने के लिए उकसाया हो और स्थापित सरकार के विरुद्ध साजिश की हो, तो मेरी जरा भी इच्छा नहीं कि उन्हें फाँसी से बचाया जाय। जाँच-समिति को अपना फैसला देने दीजिये। उसके बाद दया की बात करना कुछ भी जरूर होगा तो उसके लिए बहुत वक्त रहेगा। भारत-सरकार की न्याय करने की सच्चे दिल से इच्छा हो तो जो लोग रक्तपात करते हुए रंगे-हाथों पकड़े गये हों और अपराधी कृत्यों के बराबर मुजरिम हों, उनके सिवा सभी राजनैतिक कैदियों को छोड़ देना चाहिए। वाइसराय महोदय की वास्तव में न्याय करने की इच्छा हो केवल न्याय करने की और उसके सिवा और कुछ न करने की इच्छा हो तो दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने जो किया था उसका वे अनुकरण करें। दक्षिण अफ्रीका में जब सत्याग्रह की लड़ाई के परिणामस्वरूप जाँच-समिति नियुक्त की गयी, तब उसकी सलाह से मुझे और मेरे कुछ साथी कैदियों को छोड़ दिया गया। उसमें साफ उद्देश्य यह था कि हम जिनके प्रतिनिधि थे उनकी तरफ से शहादत पेश करके समिति को सही फैसले पर पहुँचने में मदद दे सकें। मैं आशा रखता हूँ कि वाइसराय महोदय अपने-आप दक्षिण अफ्रीका के उदाहरण का अनुकरण करना उचित न समझें, तो ऐसा करने की जाँच-समिति उन्हें आग्रह पूर्वक सलाह देगी।”

देकर और उसकी सिफारिशों के अनुसार हुक्म जारी करके वाइसराय पंजाब सरकार के बराबर ही अभियुक्त के कटघरे में आ गये हैं। अब पंच को उनका न्याय करना है।"

[इसके बाद बापू वाइसराय द्वारा अपने भाषण में उठाये गये दूसरे मुद्दों के बारे में लिखते हैं।]

"मेरे कुछ शब्दों को उनके पूर्वापर सम्बन्ध से अलग करके और बिल्कुल भिन्न परिस्थिति को लागू करके वाइसराय महोदय ने मेरे साथ गंभीर अन्याय किया है। अहमदाबाद के लोगों के समक्ष ता० १४ अप्रैल को मेरे दिये हुए भाषण में से उन्होंने कुछ शब्द उद्धृत किये हैं। परन्तु मेरा वह सारा भाषण उन्होंने नहीं पढ़ा। न्याय की खातिर उनका फर्ज था कि मेरा भाषण मँगाकर पढ़ जाते। उन्होंने ऐसा किया होता तो उन्हें पता चलता कि मेरा भाषण केवल अहमदाबाद की घटनाओं से ही, जिनकी मैंने खुद जाँच की थी, वास्ता रखता था। उस भाषण से वे देख सकते थे अब भी देख सकते हैं कि मेरी आलोचनायें अहमदाबाद के बारे में और केवल अहमदाबाद के ही बारे में थीं। ये आलोचनायें वीरमगाँव और खेड़ा के बारे में भी नहीं थीं, क्योंकि वहाँ की घटनाओं के बारे में उस समय मैं कुछ नहीं जानता था। वाइसराय महोदय ने जिन विचारों का मुझ पर आरोपण किया है मैं कहना चाहता हूँ कि उन विचारों के साथ मेरा कुछ भी वास्ता नहीं। अब भी पंजाब के बारे में और वहाँ के शिक्षित और होशियार आदमियों के बारे में मुझे कोई निश्चित निजी जानकारी नहीं। इसलिए मैं अहमदाबाद के अपने भाषण के एक-एक शब्द पर कायम हूँ। फिर भी मैं घोषणा करता हूँ कि इस कारण मैं पंजाब के बारे में कोई राय नहीं बना रहा हूँ यद्यपि पंजाब से मुझे काफी सबूत मिला है, जो बताता है कि पंजाब-सरकार ने ऐसे कृत्य किये हैं, जो किसी भी तरह माफ नहीं किये जा सकते।

"वाइसराय ने दयालुता की जो बात की है, वह उन्हें शोभा नहीं देती। लोग उनसे रहमदिली या दया की भीख नहीं माँगते परन्तु शुद्ध

परिशिष्ट

(क)

खेड़ा की लड़ाई के बारे में अखबारी बयान

[खेड़ा जिले में लगान-मुल्तवी के सिलसिले में किसानों को सत्याग्रह की लड़ाई छेड़ने की सलाह देना कर्तव्य किन कारणों से जान पड़ा यह बात देशभर के लोगों को समझाने के लिए गांधीजी ने समाचार-पत्रों द्वारा नीचे लिखा बयान प्रकाशित किया।]

झगड़े का मुद्दा

खेड़ा जिले में सन् १९१७-१८ की फसल अधिकांश मारी गयी, यह सब लोग स्वीकार करते हैं। कर-वसूली के नियमों के अनुसार अगर फसल चार आने से कम हो, तो उस साल का सारा लगान मुल्तवी रखने का किसानों को हक है। अगर फसल छह आने से कम और चार आने से ज्यादा हो तो लगान आधा मुल्तवी रखा जाता है। मेरी जानकारी में कुल ६ गाँवों में से सिर्फ एक ही गाँव का पूरा लगान और लगभग १ ४ गाँवों का आधा लगान मुल्तवी रखने की सरकार ने कृपा की है। किसान कहते हैं कि दी गयी राहत जितनी होनी चाहिए, उतनी नहीं है। सरकार मानती है कि ज्यादातर गाँवों में फसल छह आने से अधिक हुई है। इसलिए विवाद का प्रश्न यही रह जाता है कि फसल कितनी हुई। चार आने, छह आने या इससे भी ज्यादा!

मिस्टर पटवारी

सरकार की तरफ से फसल का अंदाज गाँव के पटेल की मदद से पटवारी लगाता है। आम तौर पर उसके आँकड़ों की बारीकी से जाँच

फसल-संबंधी बारीक जाँच

सभी लोग जानते हैं कि माननीय गोकुलदास पारेख और माननीय विठ्ठलभाई को निमंत्रण देकर बुलाया गया था और उन्होंने गुजरात-सभा के सदस्यों की मदद से जाँच की थी। इसी प्रकार भारत-सेवक-समाज के सदस्यों ने भी जाँच की थी। उनकी जाँच प्रारम्भिक और संक्षिप्त थी, क्योंकि एक ही तालुका के कुछ गाँवों में घूमकर हालात मालूम किये गये थे। जाँच पर से उन्हें विश्वास हो गया कि फसल चार आने से कम हुई है। यह जानकारी आवश्यक रूप में विशाल पैमाने पर न की जाने के कारण उसे प्रमाणभूत साबित करना संभव नहीं था। इसलिए लगभग बीस प्रतिष्ठित, बुद्धिशाली, अनुभवी और निष्पक्ष भाव से काम करनेवाले भाइयों की मदद से पूरी जाँच करने का काम मैंने अपने सिर पर ले लिया। मैं खुद लगभग तीस गाँवों में गया। वहाँ जितने आदमियों से मिल सकता था मिला। उनके खेतों में घूमा और फसल के बारे में बहुत बारीक जाँच और जिरह की। इन सब बातों के अन्त में मैं इस निश्चय पर पहुँचा कि फसल चार आने से कम हुई है। मैं जिन लोगों के संपर्क में आया, उनमें से अधिकांश प्रामाणिकतापूर्ण और असत्य बातों से परहेज करते थे। ये लोग अच्छी तरह जानते थे कि सचाई से विमुख होने में क्या खतरा है।

रबी और खरीफ की फसलों में से जो फसलें इस समय खेतों में खड़ी हैं उन पर से किसानों की बतायी हुई हकीकतों को मैं प्रत्यक्ष देखकर तुलना कर सका। मेरे साथियों ने भी इसी ढंग से काम लिया। इस ढंग से लगभग चार सौ गाँवों की जानकारी प्राप्त की गयी है और उनमें से केवल थोड़े-से अपवादों को छोड़कर सब जगह फसल चार आने से कम होने का विश्वास हो गया है। सिर्फ तीन जगह ऐसा मालूम हुआ कि फसल छह आने से ऊपर हुई है। खरीफ की फसल का हिसाब लगाने का तरीका यह रखा गया था : सारे गाँव की सारी अलग-अलग फसलों का हिसाब किया गया और उसी गाँव में सेमद पाने वाले से उस फसल का

१

करने की जरूरत नहीं होती क्योंकि अधिकतर फसल मारी जाती है, तभी इन आँकड़ों के विरुद्ध शंका उठायी जाती है। पटवारियों का सारा ही वर्ग खुशामदी, बुरा करने में हिचकिचाहट न रखनेवाला और जालिम होता है। पटेलों को खास तौर पर उनकी कुलीनता के लिए चुना जाता है। पटवारी जैसे-तैसे पूरा लगान वसूल कर लेने की नीयत रखते हैं। लगानवाले पटवारियों को वसूली का काम अच्छा करने के बदले में पगड़ियाँ इनाम मिलने के उदाहरण बहुतों की जानकारी में होंगे। पटवारियों के लिए मैंने जो विशेषण काम में लिये हैं, वे किसी व्यक्तिविशेष के लिए नहीं हैं। केवल जो सत्य है वही कहता हूँ। वे जन्म से ही ऐसे नहीं होते परन्तु वातावरण के संस्कारों से ऐसे बन जाते हैं। दुनिया में वसूली का काम करनेवाले दिन-दिन निष्ठुर बनते ही जा रहे हैं। इसके बिना वे अपने मालिकों को सन्तुष्ट नहीं कर सकते। वर्तमान वसूली करनेवालों में खास तौर पर पटवारी कैसे हैं, इसकी किसानों से मुझे जो कल्पना दी है, उसका हूबहू चित्र खड़ा करने में मैं असमर्थ हूँ।

सरकार का दूषित और पक्षपातपूर्ण हिसाब

पटवारियों के बारे में लिखने का मेरा उद्देश्य इतना ही बताना है कि लगान-वसूली के लिए फसल का अन्दाज कितनी गलत पद्धति से तैयार किया जाता है और वह भी कितना पक्षपातपूर्ण होता है। सरकार के इस प्रकार के गलत हिसाब के खिलाफ छोटे-बड़े बहुत-से किसानों के प्रत्यक्ष निश्चित प्रमाण मेरे पास हैं। इनमें से बहुत-से प्रतिष्ठित और सुखी काश्तकार हैं। ये लोग अतुक्तिपूर्ण बात कहें तो इससे न सिर्फ उनकी प्रतिष्ठा को ही धक्का लगे बल्कि पटवारियों और ऊपर के अधिकारियों की नाराजी भी सहन करनी पड़े। यहाँ मुझे कह देना चाहिए कि इस आन्दोलन से सरकार या उसके किसी अफसर को बदनाम करने का मेरा बिल्कुल इरादा नहीं। इस लड़ाई का उद्देश्य जनता के मामलों को ठीक तरह से सुनाने का हक सुरक्षित करना है।

फसल-संबंधी बारीक जाँच

सभी लोग जानते हैं कि माननीय गोकुलदास पारेख और माननीय विट्ठलभाई को निमंत्रण देकर बुलाया गया था और उन्होंने गुजरात-सभा के सदस्यों की मदद से जाँच की थी। इसी प्रकार भारत-सेवक-समाज के सदस्यों ने भी जाँच की थी। उनकी जाँच प्रारम्भिक और संक्षिप्त थी क्योंकि एक ही ताल्लुका के कुछ गाँवों में घूमकर हालात मालूम किये गये थे। जाँच पर से उन्हें विश्वास हो गया कि फसल चार आने से कम हुई है। यह जानकारी आवश्यक रूप में विधिवत् रूप में न की जाने के कारण उसे सप्रमाण साबित करना संभव नहीं था। इसलिए लगभग बीस प्रतिष्ठित, बुद्धिशाली, अनुभवी और निष्पक्ष भाव से काम करनेवाले भाइयों की मदद से पूरी जाँच करने का काम मैंने अपने सिर पर ले लिया। मैं खुद लगभग तीस गाँवों में गया। वहाँ जितने आदमियों से मिल सकता था मिला, उनके खेतों में घूमा और फसल के बारे में बहुत बारीक जाँच और जिरह की। इन सब बातों के अन्त में मैं इस निर्णय पर पहुँचा कि फसल चार आने से कम हुई है। मैं जिन लोगों के संपर्क में आया, उनमें से अधिकांश आत्मुक्तिपूर्ण और प्रामाणिक बातों से प्रत्येक करते थे। वे लोग अच्छी तरह जानते थे कि सचाई से विमुख होने में क्या खतरा है।

रबी और खरीफ की फसलों में से जो फसलें इस समय खेतों में खड़ी हैं, उन पर से किसानों की बतायी हुई हकीकतों को मैं प्रत्यक्ष देखकर तुलना कर सका। मेरे साथियों ने भी इसी ढंग से काम लिया। इस ढंग से लगभग चार सौ गाँवों की जानकारी प्राप्त की गयी है और उनमें से केवल थोड़े-से अपवादों को छोड़कर सब जगह फसल चार आने से कम होने का विश्वास हो गया है। सिर्फ तीन जगह ऐसा मालूम हुआ कि फसल छह आने से ऊपर हुई है। खरीफ की फसल का हिसाब लगाने का तरीका यह रखा गया था : सारे गाँव की सारी अलग-अलग फसलों का हिसाब किया गया और उसी गाँव में सोलह आने माल हो, तो उस फसल का

हिसाब किसना आयेगा। लोगों ने जो आँकड़े दिये हैं, उन्हें यदि सच मान लिया जाय, तो अन्दाज लगाने का यह सम्पूर्ण और सही तरीका है। दूसरे किसी भी तरीके से ऐसा निश्चित परिणाम आ ही नहीं सकता। दूसरे तरीके गलत और भेदभाव होने के कारण स्वीकार नहीं करने चाहिए। मैं ऊपर कह चुका हूँ कि इस जाँच में रत्तीभर अतिशयोक्ति नहीं है। रवी की सारी फसल के लिए तो जाँच की आवश्यकता ही नहीं थी और यह ऊपर के तरीके से जाँच कर देखी गयी थी।

फसल का अन्दाज लगाने का सरकारी तरीका

सरकार जाँच की आवश्यकता से फसल का अन्दाज लगाती है। यह बिल्कुल ही अटपटांग हिसाब कहा जायगा। उसके विरुद्ध कुछ महत्व की आपत्तियाँ भी हैं, जो मैंने कलेक्टर को पत्र द्वारा सूचित कर दी हैं। एक गाँव की आजमाइश करने के लिए मैंने उन्हें बड़पल्ला गाँव चुनने को कहा। बड़पल्ला इस जिले का एक नामी गाँव है। वहाँ व्यापारिक केन्द्र और रेलवे स्टेशन है। कुल मिलाकर ग्रामवासियों की स्थिति अच्छी है। अगर इस गाँव की फसल चार आने से कम ही और मेरी मान्यता के अनुसार यह कम है ही तो फिर दूसरी साधारण और थोड़े कसबासी जमीनों के गाँवों में चार आने से अधिक फसल हो ही कैसे सकती है! कलेक्टर ने इस गाँव की फसल की फिर से जाँच की, तब मैंने उन्हें लिखा कि मुझे मौजूद रहने का मौका दिया जाय। परन्तु उन्होंने मेरी प्रार्थना पर ध्यान न देकर खुद अकेले ही जाँच की और परिणामस्वरूप वह एकतरफा साबित हुई। कलेक्टर ने इस गाँव की फसल के बारे में बड़ी लम्बी रिपोर्ट तैयार की है। मेरे जवाब में मैंने उस रिपोर्ट का पर्याप्त खंडन किया है। मुझसे यह कहा गया था कि सरकार ने पहले इस गाँव की फसल बारह आने कूती थी। अब कलेक्टर खुद जाँच करके कम-से-कम सात आने बताते हैं। कलेक्टर की बतायी हुई हिसाब की बिल्कुल गलत पद्धति काम में लें तो भी उस हिसाब से इस गाँव की फसल छह आने से कम होती है जब कि किसानों के हिसाब से तो फसल चार आने भी नहीं बैठती।

स्वतंत्र पंच नियुक्त करने की आवश्यकता

कलेक्टर साहब की रिपोर्ट और उस संबंध में मेरा जवाब, दोनों में गहरे उतरे बिना जन-समाज मतभेद का यह मुद्दा समझ नहीं सकता। मैंने सुझाया है कि जब सरकार और किसान दोनों अपने को सच्चे मानते हैं, ऐसी सूरत में अगर सरकार को लोकमत का जरा भी लिहाज हो, तो उसे किसानों के प्रतिनिधित्ववाला एक निष्पक्ष पंच मुकर्रर करके जाँच करवानी चाहिए या स्वयं आगे आकर लोकमत का आदर करना चाहिए। इन दोनों सूचनाओं की अवहेलना करके सरकार लगान वसूल करने के लिए कड़े उपायों का आश्रय ले बैठी है। मुझे यहाँ कहा देना चाहिए कि इन कड़े उपायों से काम लेने में अब तक सरकार ने कोई कसर नहीं रखी और किसानों ने दबाव से ही रुपया जमा कराया है। पटवारी ढोर डंगर छीनकर ले जाते और लगान वसूल होने पर वापस देते थे। एक जगह मैंने अत्यन्त दुःखद घटना देखी : एक किसान की दुधार भैंस ले जायी गयी। मैं उस गाँव में जा पहुँचा, इसलिए भैंस वापस मिल गयी। उस किसान के लिए यह भैंस सबसे कीमती चीज थी क्योंकि इससे उसका गुजर होता था। ऐसी अशोभन घटनाएँ हो चुकी हैं। अगर लोकमत इन किसानों की मदद नहीं करेगा, तो ऐसी और भी कई घटनाएँ होंगी। नम्रतापूर्वक राहत प्राप्त करने का एक भी उपाय आजमाना मैंने बाकी नहीं रखा। इसी तरह इससे पहले कलेक्टर कमिश्नर और माननीय गवर्नर से मुलाकात की गयी और उनके सामने नीचे लिखे प्रस्ताव पेश किये गये थे :

अधिकारियों के सामने प्रस्ताव

यद्यपि लगभग सभी गाँवों में लगान मुल्तवी रखने की किसानों की माँग उचित और न्यायपूर्ण है, तथापि भिन्न थोड़े-से गाँवों में फसल छः आने से अधिक है, उनके सिवा सारे जिले में आधा लगान मुल्तवी रखा जाय। सरकार इस प्रकार उदारता से रियायत दे और उसीके साथ

हिसाब कितना आवेगा। लोगों ने जो आँकड़े दिये हैं, उन्हें यदि सच मान लिया जाय तो अन्दाज लगाने का यह सम्पूर्ण और सही तरीका है। दूसरे किसी भी तरीके से ऐसा निश्चित परिणाम आ ही नहीं सकता। दूसरे तरीके गलत और बेढंगे होने के कारण स्वीकार नहीं करने चाहिए। मैं ऊपर कह चुका हूँ कि इस जाँच में रत्तीभर अतिशयोक्ति नहीं है। रबी की खड़ी फसल के लिए तो आँख की अटकल ही काफी थी और वह ऊपर के तरीके से जाँच कर देखी गयी थी।

फसल का अन्दाज लगाने का सरकारी तरीका

सरकार आँख की अटकल से फसल का अन्दाज लगाती है। यह बिल्कुल ही ऊटपटाँग हिसाब कहा जायगा। उसके विरुद्ध कुछ महत्त्व की आपत्तियाँ भी हैं, जो मैंने कलेक्टर को पत्र द्वारा सूचित कर दी हैं। एक गाँव की आनावारी करने के लिए मैंने उन्हें बढ़वल गाँव चुनने को कहा। बढ़वल इस जिले का एक नामी गाँव है। वहाँ व्यापारिक केन्द्र और रेलवे स्टेशन है। कुल मिलाकर ग्रामवासियों की स्थिति अच्छी है। अगर इस गाँव की फसल चार आने से कम हो और मेरी मान्यता के अनुसार वह कम है ही, तो फिर दूसरी साधारण और थोड़े कसवाली जमीनों के गाँवों में चार आने से अधिक फसल हो ही कैसे सकती है? कलेक्टर ने इस गाँव की फसल की फिर से जाँच की, तब मैंने उन्हें लिखा कि मुझे मौजूद रहने का मौका दिया जाय। परन्तु उन्होंने मेरी प्रार्थना पर ध्यान न देकर खुद अकेले ही जाँच की और परिणामस्वरूप वह एकतरफा साबित हुई। कलेक्टर ने इस गाँव की फसल के बारे में बड़ी लम्बी रिपोर्ट तैयार की है। मेरे खयाल से मैंने उस रिपोर्ट का पर्याप्त खंडन किया है। मुझसे यह कहा गया था कि सरकार ने पहले इस गाँव की फसल बारह आने कूती थी। अब कलेक्टर खुद जाँच करके कम-से-कम सात आने बताते हैं। कलेक्टर की बतायी हुई हिसाब की बिल्कुल गलत पद्धति काम में लें, तो भी उस हिसाब से इस गाँव की फसल छह आने से कम होती है, जब कि किसानों के हिसाब से तो फसल चार आने भी नहीं बैठती।

स्वतंत्र पंच नियुक्त करने की आवश्यकता

कलेक्टर साहब की रिपोर्ट और उस संबंध में मेरा बयान, दोनों में गहरे उतरे बिना जन-समाज मतभेद का यह मुद्दा समझ नहीं सकता। मैंने सुझाया है कि जब सरकार और किसान दोनों अपने को सच्चे मानते हैं, ऐसी सूरत में अगर सरकार को लोकमत का जरा भी लिहाज हो, तो उसे किसानों के प्रतिनिधित्ववाला एक निष्पक्ष पंच मुकर्रर करके जाँच करवानी चाहिए या स्वयं इसमें आकर लोकमत का आदर करना चाहिए। *इन दोनों सूचनाओं की अवहेलना करके सरकार लगान* वसूल करने के लिए कड़े उपायों का आश्रय ले बैठी है। मुझे यहाँ बता देना चाहिए कि इन कड़े उपायों से काम लेने में अब तक सरकार ने कोई कसर नहीं रखी और किसानों से दबाव से ही रुपया जमा कराया है। पटवारी ढोर डंगर छीनकर ले जाते और लगान वसूल होने पर वापस देते थे। एक जगह मैंने अत्यन्त दुःखद घटना देखी : एक किसान की दुधार भैंस ले जायी गयी। मैं उस गाँव में जा पहुँचा, इसलिए भैंस वापस मिल गयी। उस किसान के लिए यह भैंस सबसे कीमती चीज थी क्योंकि इससे उसका गुजर होता था। ऐसी सर्वस्व घटनाएँ हो चुकी हैं। अगर लोकमत इन किसानों की मदद नहीं करेगा तो ऐसी और भी कई घटनाएँ होंगी। नम्रतापूर्वक राहत प्राप्त करने का एक भी उपाय आजमाना मैंने बाकी नहीं रखा। इसी तरह इससे पहले कलेक्टर कमिश्नर और माननीय गवर्नर से मुलाकात की गयी और उनके सामने नीचे लिखे प्रस्ताव पेश किये गये थे :

अधिकारियों के सामने प्रस्ताव

यद्यपि लगभग सभी गाँवों में लगान मुल्तवी रखने की किसानों की माँग उचित और न्यायपूर्ण है, तथापि जिन थोड़े-से गाँवों में नुकसान हद आने से अधिक है, उनके लिए सारे जिले में आधा लगान मुल्तवी रखा जाय। सरकार इस प्रकार उदारता से रियायत दे और उसीके साथ

कहा है कि वह यह चाहती है कि जो असामी अच्छी स्थितिवाले हों, वे स्वेच्छा से सारी रकम जमा करा दें। मैं और मेरे साथी लोग ऐसे आसुदा (सुस) असामियों को ऊपर की बात समझाने की जिम्मेदारी ले रहे थे। ऐसा हो जाता तो बहुत-से गरीब किसानों को राहत मिल जाती। मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि अधिकारियों ने यह प्रस्ताव मंजूर किया होता, तो सरकार की बात रह जाती और उसे यश भी मिलता। लोकमत का विरोध करने से अशांति फैलती है और वह अशांति देहाती किसानों को पागल बनाकर उलटे रास्ते ले जाती है और बुरे परिणाम पैदा करती है। मेरा प्रयत्न सरकार और जनता, दोनों को ऐसी बदनामी की हालत से बचा लेना है।

कानून का दुरुपयोग

सरकार अपने पद और प्रतिष्ठा का समर्थन कितने बेहूदे ढंग से करती है! 'लगान-कानून' अधिकारियों को असमर्यादित सत्ता देता है। माल-विभाग के अधिकारियों के निर्णय के खिलाफ जनता को न्याय माँगने का हक भी नहीं है। ऐसी हालत में जनता शिकायत के लिए और अधिकारी प्रतिष्ठा के लिए लड़ते हैं। ऐसे अवसर पर अधिकारी सत्ता का दुरुपयोग करके न्याय का खून करते हैं।

इसी तरह सत्य और न्याय के मार्ग से हटने के लिए लगान-कानून का आश्रय लिया जाता है। इस कानून में निरंकुश अधिकार इस प्रकार का है:

१ कानून का तात्कालिक प्रयोग करने का अधिकार।
२ लगान पर चौथाई दण्ड लेने का अधिकार।
३ रैयतवारी ही नहीं, परन्तु इनामी या तनखी जमीनें भी जब्त करने का अधिकार।
४ दलालों को हवालात में रखने का अधिकार।

उपर्युक्त उपाय अलग अलग या इकट्ठे काम में लिये जा सकते हैं। परन्तु उनमें से अन्तिम अधिकार को छोड़कर दूसरे सभी अधिकारों का उपयोग वसूली के काम में अफ़सर लोग कर चुके हैं। इस प्रकार वंश परम्परा से किसानों के कब्जे में रही हजारों की कीमत की सैकड़ों बीघा जमीन लगान की थोड़ी-सी रकम के लिए अधिकारियों के हाथों होनेवाले कानून के दुरुपयोग से किसान खो बैठते हैं, क्योंकि वे अपने सिद्धान्त पर डटे रहकर स्वेच्छा से लगान जमा कराने से इनकार करते हैं और उसका जो परिणाम हो उसे शांति से, परन्तु सख्त विरोध के साथ सहन करने को तैयार हैं।

× × ×

सार्वजनिक अपील

खेड़ा के किसानों ने न्याय और सत्य की लड़ाई लड़ने का बीड़ा उठाया है। उनकी सहायता करने के लिए मैं पत्रकारों और जन-समाज से सार्वजनिक अपील करने की इजाजत चाहता हूँ। पाठकों को यह भी याद रखना चाहिए कि प्लेग से खेड़ा जिले की जनता का कचूमर निकल गया है। अब भी लोग गाँवों के बाहर घास-फूस के झुग्गों में पड़े हुए हैं। अनाज के भाव बढ़ गये हैं, परन्तु फसल के मारे जाने से किसान उससे लाभ नहीं उठा सकते। इतना ही नहीं उससे होनेवाली हरएक हानि उन्हें उठानी पड़ रही है। उन्हें रुपये की सहायता नहीं चाहिए। वे केवल इतना ही चाहते हैं कि देश की जनता एक आवाज से इस आन्दोलन का नैतिक समर्थन करे और उनके प्रति हमदर्दी दिखाये। ● ● ●

(ख)

कमिश्नर मि० प्रेट को जवाब

[१२ अप्रल १९१८ को प्रट साहब के दिये हुए भाषण में सत्याग्रहियों और गांधीजी के बारे में जो संकेत किया गया था उसका उत्तर गांधीजी ने समाचार-पत्रों में इस प्रकार दिया]

लड़ाई की गुत्थी

खेड़ा जिले के किसानों के सामने कमिश्नर ने गुजराती में जो भाषण दिया उसके सम्बन्ध में किसानों और कार्यकर्ताओं दोनों के साथ न्याय करने के लिए उत्तर देना जरूरी मालूम होता है। मेरे सामने उस भाषण का अक्षरशः विवरण है। उसमें सरकारी नीति स्पष्ट शब्दों में बता दी गयी है। कमिश्नर कहते हैं कि लगान मुल्तवी करने के सम्बन्ध में माल विभाग के अफसरों का निर्णय अन्तिम है। वे किसानों की शिकायत सुन तो सकते हैं, परन्तु अधिकारियों के आखिरी निर्णय के विरुद्ध कोई शंका नहीं उठायी जा सकती। लड़ाई की गुत्थी यही है। किसानों की तरफ से यह दलील दी जाती है कि जब स्थानीय अधिकारियों और उनके बीच तीव्र मतभेद हो जाय तब ऐसे मामले का निर्णय करने का काम तटस्थ पंच को सौंप देना चाहिए। यह माना जाता है कि ब्रिटिश विधान इस सिद्धान्त पर रचा हुआ है। कमिश्नर ने इस सिद्धान्त को छोड़कर कठिनाई मोल ले ली है। और इसके समर्थन में लार्ड विलिंग्डन का इस आशय का पत्र मँगवाकर अपने हाथ मजबूत कर लिये हैं कि गवर्नर साहब उनके निर्णय में बाधक नहीं होंगे।

वे अपने रवैये का बचाव करने के लिए युद्ध को बीच में लाते हैं और सारे साम्राज्य के संकट के समय किसानों को और मुझे इस लड़ाई से हट जाने को समझाते हैं। किन्तु मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि कमिश्नर की नीति में जर्मनों के आक्रमण के संकट से भी अधिक संकट समाया हुआ है। साम्राज्य के भीतर उपस्थित ऐसे संकट से उसे मुक्त करने में मैं साम्राज्य की सेवा कर रहा हूँ। हिन्दुस्तान लम्बी नींद से जाग रहा है यह बात भूलने की नहीं है। किसानों को अपने अधिकार और कर्तव्य समझने के लिए और कोई विद्या सीखने की जरूरत नहीं। उनमें ऐसी महान् शक्ति छिपी हुई है कि कोई भी समर्थ राज्य उनकी इच्छा के विरुद्ध नहीं जा सकता। उन्हें सिर्फ उसका भान कराने की जरूरत है। तभी वे कह सकते हैं कि जनता की सम्मति के बिना राज्य करना सम्भव नहीं है।

खेड़ा की जनता हिन्दुस्तान में प्रथम श्रेणी के एक शाही सवाल का निपटारा कराने को खड़ी रही है। जब सिविल सर्विसवाले एक बार इस प्रश्न को समझेंगे, तभी वे लोगों के हकों के रक्षक बननेवाले सच्चे सिविल अधिकारी साबित होंगे। आजकल के सिविल अफसरों का राज भय और आतंक का राज है। खेड़ा के किसान प्रेम की हुकूमत के लिए लड़ रहे हैं। मामले को इतना नाजुक बनाने की जिम्मेदारी कमिश्नर पर है। जब उन्हें लगा कि मतभेद का कारण पैदा हो गया है, तब जनता को समझा लेना उनका फर्ज था। लोगों की इच्छा के सामने झुककर मिसेज बेसेण्ट को उलहना देने में न्याय-विभाग के कारोबार के लिए जितना खतरा था या इसी तरह की माँग के आगे झुककर कानपुर की मस्जिद का एक कोना फिर से बनवा देने में साम्राज्य की प्रतिष्ठा की जो हानि थी, उतना खतरा या हानि लोगों की माँगों को स्वीकार करके कमिश्नर द्वारा रियायतें दे देने से भारत सरकार की साख को नहीं होनेवाली थी। लोगों की फरियाद सुनने की माँग के कमिश्नर द्वारा अस्वीकार कर दिये जाने पर उनके विरुद्ध मौजूदा खुला और सुरक्षित मार्ग अपनाने की किसानों को सलाह देने में मैंने आगा-पीछा किया होता, तो जनता में गहरा असंतोष पैदा होता और भयंकर कटुता पैदा होती। पिता का सच्चा पुत्र तो वही है जो पिता की आज्ञा वापस उसे पालन न कर सकने पर उसके विरुद्ध बुरा भाव मन में रखने के बजाय उसे जैसा महसूस हो, वैसा ही विरोध किये बिना मन दुःख पुत्रे दिख से और स्वाभिमानपूर्वक कह दे। मैं सरकार और प्रजा इन दोनों के बीच के सम्बन्ध पर ऐसा ही कानून लागू करता हूँ। मनुष्य अपने अन्तःकरण की कभी उपेक्षा नहीं कर सकता। परन्तु जैसे एक बुद्धिमान् पिता अपने पुत्र के साथ तुरन्त ही निपटारा कर लेता है और उसमें भी खास तौर पर उस समय जब बाहर से कुटुम्ब पर खतरा आनेवाला हो अपनी नाराजगी प्रकट नहीं होने देता इसी तरह अगर बुद्धिमान् सरकार किसानों के साथ जल्दी समझौता कर लेगी, तो उसे उनकी नाराजगी मोल नहीं लेनी पड़ेगी। किसानों को अधिकारियों के

फरमान गैरवाजिब और अन्यायपूर्ण लगते हों, तो भी उन्हें मनवाने का अधिकारियों को परवाना देने के लिए युद्ध को बीच में नहीं छोड़ा जा सकता।

कमिश्नर के गंभीर वचन

अपने मार्ग का अनुसरण करने में लोगों के मन को कमिश्नर यह कहकर विचलित करना चाहते हैं कि चार लाख के लगान के लिए तीन करोड़ से ज्यादा कीमत की डेढ़ लाख एकड़ जमीन मैं सदा के लिए जब्त कर लूँगा और उनके मालिकों को तथा उनके स्त्री-बच्चों को सदा में जमीन रखने के लिए अयोग्य घोषित कर दूँगा। वे मानते हैं कि किसान उलटे रास्ते से चलाये गये हैं और हठ किये हुए हैं। उनके गंभीर वचन ये हैं :

> "तुम कहीं यह न समझ लेना कि हमारे तहसीलदार और पटवारी तुम्हारी जंगम सम्पत्ति जब्त करके और उसे बेचकर तुम्हारा लगान वसूल करेंगे। हमारे अफसरों का समय कीमती है। वे केवल तुम्हारा रुपया लाकर खजाना भरेंगे यह कोई धमकी नहीं है। मेरा कहना तब समझना कि माँ-बाप बच्चों को धमकी नहीं देते वे सिर्फ सलाह देते हैं। परन्तु अगर तुम अपना लगान नहीं चुकाओगे, तो तुम्हारी जमीन जब्त होगी। कई लोग कहते हैं कि ऐसा नहीं होगा। परन्तु मैं कहता हूँ कि ऐसा होगा। मुझे कोई प्रतिज्ञा करने की जरूरत नहीं। जो वाजिब रकम जमा नहीं करायेंगे उनकी जमीनें जब्त हो जायेंगी। जो जिद करेंगे उनको भविष्य में कोई जमीन नहीं मिलेगी, सरकार उनके नाम 'रेकर्ड ऑफ राइट' वाली जमीन के रजिस्टर में नहीं रखना चाहती। जिनके नाम निकल जायेंगे उनके नाम फिर कभी दर्ज नहीं होंगे।"

मेरा यह कहना है कि जुल्म और वैर करने की ऐसी नीयत के विरुद्ध मरते दम तक लड़ना हरएक वफादार नागरिक का पवित्र कर्तव्य है।

अहमदाबाद के हड़तालियों ने जान-बूझकर अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी, यह कहकर कमिश्नर ने मेरे और उनके प्रति घोर अन्याय किया है। जिस सभा में समझौते की घोषणा हुई उसमें वे मौजूद थे। वे भले ही यह राय रखें कि मिल-मजदूरों ने अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी (यद्यपि उस सभा में उनके भाषण का इससे उलटा असर हुआ था), परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि हड़तालियों ने जान-बूझकर हड़ताल तोड़ी है। इसके विपरीत, अपनी माँग के अनुसार पहले दिन मजदूरी लेकर वे काम पर गये और पंच को फैसले का काम सौंप दिया। जिन मिल-मालिकों ने पंच को अस्वीकार किया था, उनसे मिल-मजदूरों ने उसका स्वीकार कराया। उनकी लड़ाई ही इसलिए थी कि उन्हें मजदूरी में ३५ फी सदी या पंच के फैसले के अनुसार वृद्धि दिलायी जाय और उसीके अनुसार हुआ है। इसलिए मुझे अफसोस के साथ कहना चाहिए कि हड़तालियों के और मेरे विरुद्ध कमिश्नर का कथन एक झूठी और स्पष्ट चोट है। ● ● ●

(ग)

सत्याग्रही किसानों को सन्देश

[गांधीजी के सत्याग्रह-मण्डप में दिये हुए भाषण का लाभ सिर्फ वहीं उपस्थित श्रोताओं को ही मिला, जब कि अधिकारी अपने अधीन मनुष्यों द्वारा प्रेट साहब के भाषण की मनचाही बातें फैलाने लगे। अतः गांधीजी ने यह सोचकर कि लोग गुमराह न हो जायें और अपने निश्चय पर अटल रहें नीचे लिखा सन्देश पत्रिका द्वारा गाँव-गाँव पहुँचाया।]

श्रीमान् प्रेट साहब का भाषण आपने ध्यानपूर्वक और विनयपूर्वक सुना यह बहुत अच्छा किया। सत्याग्रहियों को यही शोभा देता है। संयोगवश हमें सरकार के लगान सम्बन्धी हुक्म का अनादर करना पड़ा है, परन्तु सरकारी अफसरों का जो सम्मान करना चाहिए, उसे करना हम न

भूलें। हम भय और गुलामी से मुक्त होना चाहते हैं, विनय नहीं छोड़ना चाहते। उद्दत तो हम बन ही नहीं सकते। सत्याग्रह में विनय तो सदा होता ही है।

श्रीमान् कमिश्नर साहब ने किसानों के हक बताये और फर्ज भी बताया। दोनों सलाहें ठीक हैं। परन्तु मनुष्यमात्र का एक सच्चा अधिकार और कर्तव्य है, जिसे वे साहब बताना भूल गये। हरएक मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह डर से कोई काम न करे, इसलिए जब डर दिखाकर कोई हमसे काम कराना चाहे, तब उस काम का विरोध करना हमारा हक है। इस हक के कारण खेड़ा की जनता इस समय सरकार की आज्ञाओं का आदरपूर्वक अनादर कर रही है। हम मानते हैं कि इस साल फसल चार आने से कम हुई है, इसलिए कर-वसूली मुल्तवी रहनी चाहिए। जो कर मुल्तवी रहना चाहिए, उसे अगर अब्र करायेंगे तो सिर्फ इसी डर से करायेंगे कि सरकार हमारी जंगम सम्पत्ति बेच डालेगी या जब्त कर लेगी। अगर हम ऐसे डर के वश हो जायेंगे, तो पुरुषार्थहीन बन जायेंगे। ऐसे डर के मारे लगभग ८ फी सदी किसानों ने लगान अदा कर दिया है। इसलिए २ फी सदी के हाथ में १ फी सदी की लाज रह गयी है। जिसने अपना पुरुषार्थ खो दिया है वह पहवारी भी नहीं दिखा सकता। पशुओं और मनुष्यों के बीच का भेद पुरुषार्थ में ही निहित है। यह लड़ाई पुरुषार्थ दिखाने की है।

माल-विभाग के या दूसरे सरकारी हुक्म जनता के जंचों देने पर भी न पटें तो उन्हें चुपचाप शिरोधार्य कर ही लेना चाहिए ऐसा किसिय विधान नहीं है। यह राजनीति नहीं है। जिस आज्ञा को जनता अनायास अन्यायपूर्ण या जुल्मी माने उसका विरोध करना उसका अन्यतिल अधिकार है और ऐसा करना प्रजा का धर्म है। जो कानून कुटुम्ब पर लागू होता है वही राजा प्रजा के बीच भी लागू होता है और जहाँ इस कानून का भंग होता है वहाँ राजा और प्रजा के बीच कलह पैदा होता है। प्रजा गुप्त रूप से वेवफाई करती है। राजा अधिकारी और शंकाशील

बनता है। सरकार के हुक्म का विरोध करते समय एक बात याद रहनी ही चाहिए। हम यह पूरी तरह नहीं कह सकते कि सरकार का हुक्म अनुचित है। हम उसे अनुचित मानें, तो भी संभव है असल में वह उचित हो। इसलिए जैसे निजी व्यवहार में, वैसे ही राजा-प्रजा के बीच भी मतभेद का निपटारा पंच द्वारा ही होना चाहिए। यही पहले के राजा करते थे और अंग्रेज सरकार रोज करती है। ऐसे पंच को वह 'कमीशन' या 'कमेटी' का नाम देती है। राज्य का सम्मान कायम रखने के लिए इस पंच के निर्णय का अमल अदालतों में नहीं होता, बल्कि हुकूमत की न्याय-परायणता पर निर्भर माना जाता है। फिर भी अन्तिम परिणाम तो जैसा साधारण पंच का होता है, वही इसका भी होता है। लोकमत का आदर किये बिना हुकूमत चलाना असंभव है। परन्तु अगर राजा कमेटी या कमीशन भी मुकर्रर न करे, तो प्रजा क्या करे? जिस राष्ट्र में पशु-बल की प्रधानता होती है, वहाँ मारपीट होती है और प्रजा शस्त्रों का उपयोग कर न्याय-प्राप्ति के लिए लड़ती है। मेरा अपना तो यह अनुभव है कि यह पद्धति बेकार है। मैं यह भी मानता हूँ कि सभी धर्म-शास्त्रों ने मारकाट द्वारा न्याय प्राप्त करने की पद्धति की निन्दा की है और यह पद्धति हम पारिवारिक व्यवहार में तो कभी लागू ही नहीं करते। सीधा रास्ता यह है कि सरकारी आज्ञाओं का अनादर करने में हमें जो दुःख उठाना पड़े उसे धीरज से और क्रोध किये बिना उठायें। इससे बहुत-से मतभेद हल होते हैं। अगर हम झूठ साबित हों तो जो दुःख हमने उठाया, वह उचित माना जायगा और अगर सच्चे हों, तो विरोधी पक्ष यानी सरकारी दल में दया उत्पन्न हुए बिना रह नहीं सकती। नतीजा यह होगा कि सरकार को अन्त में न्याय करने के सिवा कोई चारा नहीं रह जायगा। यह शास्त्र प्रमाण है। इसमें सत्य की सदा जय ही मानी गयी है और इस वाक्य की सिद्धि हम समय-समय पर अनुभव करते हैं। इस प्रकार न्याय के लिए यानी धर्म के लिए दुःख उठाने की रीति की जनता निकल पड़ी है।

यहाँ हम कमजोर न हो जायें, इसलिए हमने अपने को प्रतिज्ञा से

सौंप दिया है। इस प्रकार प्रतिज्ञा किये बिना कोई राष्ट्र उन्नति नहीं करता। प्रतिज्ञा का अर्थ है, अटल निश्चय। जो निश्चय नहीं कर सकता, वह मनुष्य बिना सुकान की नाव की तरह इधर-उधर टकराकर नाश को प्राप्त होता है।

कमिश्नर साहब कहते हैं कि प्रतिज्ञा अनुचित है और बिना सोचे-विचारे की गयी है। अनुचित नहीं है, यह हम पहले देख चुके। क्योंकि हम जिसे अनुचित मालूम मानते हैं, उसका विरोध करने का हमें हक है। वह प्रतिज्ञा बिना विचारे नहीं की गयी यह हरएक प्रतिज्ञा लेने वाला जानता है। सूर्य की गति बदल सकती है, परन्तु यह विचारपूर्वक की गयी उचित प्रतिज्ञा हरगिज नहीं बदल सकती।

मुझे दुःख है कि माननीय प्रेट साहब ने अहमदाबाद की मिल-मजदूरों की हड़ताल के बारे में अपने भाषण में सचाई से विरुद्ध बात कही है। उसमें इन महाशय ने विनय, न्याय-मर्यादा और मित्रता का भंग किया है। मैं आशा रखता हूँ कि उन्होंने ये दोष अनजान में किये हैं। किसीने इस दुनिया में अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया हो, तो अहमदाबाद के मिल-मजदूरों ने किया है। उन्होंने सदा कहा था कि पंच जो तय कर देगा वह वेतन लेना वे मंजूर कर लेंगे। हड़ताल के दिनों में मालिकों ने इन तत्त्व को अस्वीकार किया। इसीलिए मजदूरों ने पैंतीस फीसदी वृद्धि की माँग की। उसके बाद भी उन्होंने पंच को अस्वीकार नहीं किया था। उन्होंने पहले दिन के पैंतीस फीसदी के लिए और प्रतिज्ञा कायम रखी। बाद में उसके लिए पंच मुकर्रर हुए और उन्होंने मंजूर किया कि वे जो तय कर देंगे, वह हम ले लेंगे। इस बीच मालिकों के बीस फीसदी और मजदूरों के पैंतीस फीसदी के बीच की दर लेना तय हुआ। इसमें भी पंच के निर्णय के बाद लेने-देने की बात तय हुई। इस प्रकार प्रतिज्ञा का रहस्य कायम रहा। और कुछ भी हुआ हो परन्तु माननीय प्रेट साहब जैसा कहते हैं, उस तरह मजदूरों ने जान-बूझकर प्रतिज्ञा तोड़ी ही नहीं। माननीय प्रेट साहब को मानना हो, तो मजे से मान सकते हैं

कि मजदूरों ने प्रतिज्ञा तोड़ी। यह उनके अख्तियार की बात है। परन्तु मजदूरों की मान्यता सच्ची बात है। इस हकीकत को माननीय प्रेट साहब उलटे रूप में पेश करते हैं। जब सुलह की शर्तें मजदूरों को समझायी गयीं, तब प्रेट साहब मौजूद थे। प्रतिज्ञा का पालन किस तरह हुआ, यह समझाया गया और मजदूरों ने उस समझौते का स्वागत भी किया। इन सब बातों के ये महाशय साक्षी थे। उन्होंने उस सुलह के बारे में भाषण दिया था :

"आप लोगों के बीच समझौता हो रहा है, इससे मुझे बड़ी खुशी है। मुझे पूरा विश्वास है कि जब तक आप गांधी साहब की सलाह लेंगे और उनका कहना मानेंगे तब तक आपका सुधार होगा और आपको न्याय मिलेगा। आपको याद रखना चाहिए कि आपके लिए गांधी साहब और उनके सहायक स्त्री-पुरुषों ने खूब दुःख उठाया है, कष्ट सहन किया है और आप पर प्रेम प्रकट किया है।

इतने पर भी वे प्रतिज्ञा-भंग की बात करते हैं, यह मेरी तुच्छ बुद्धि समझ नहीं पाती।

कमिश्नर साहब ने खूब धमकी दी है। उन्होंने यह भी कहा कि इस धमकी को वे सच साबित करेंगे। इसलिए ये महाशय प्रतिज्ञा करनेवालों की सारी जमीन जब्त करेंगे और उनके वारिसों को भी खेड़ा जिले में जमीन के मालिक बनने के अधिकार से वंचित कर देंगे।

यह भयंकर, क्रूर, कठोर वचन है। मैं मानता हूँ कि इस वचन में अत्यन्त तीव्र रोष प्रकट हुआ है। जब माननीय कमिश्नर साहब का क्रोध शान्त होगा, तब ऐसे घोर वचन के लिए वे पश्चात्ताप करेंगे। सरकार और जनता के बीच के सम्बन्ध को उन्होंने 'माता-पिता और बच्चों के बीच के सम्बन्ध जैसा' माना है। किसी माता-पिता ने अपने लड़के को अविनय विरोध करने पर धन जब्त किया हो ऐसा उदाहरण सारी दुनिया के इतिहास में नहीं पाया जाता। खेड़ा के लोगों की प्रतिज्ञाओं का भूल भरा होना संभव है। परन्तु उन प्रतिज्ञाओं में अविनय उद्दतता या

उद्दण्डता का लेशमात्र भी नहीं है। यह बात मुझे अभी भी असह्य मालूम होती है कि ऐसी धार्मिक भावना से उन्नति के लिए की गयी प्रतिज्ञाओं की उपर्युक्त घोर सजा मिले। हिन्दुस्तान ऐसी सजा को बर्दाश्त नहीं कर सकता और ब्रिटिश राज्याधिकारी उसे कभी कायम नहीं रख सकते। ब्रिटिश जनता को ऐसी सजा से अवश्य दुःख होगा। अगर ऐसा घोर अन्याय ब्रिटिश राज्य में हो तो ऐसे राज्य में मैं विद्रोही बनकर ही रह सकता हूँ। परन्तु ब्रिटिश शासन-नीति में माननीय कमिश्नर साहब की अपेक्षा मेरा विश्वास अधिक है। अब भी मैंने जो वचन आपसे पहले कहे हैं, वे फिर यह सुनाता हूँ कि शुद्ध भाव से किये गये काम के लिए तुम अपनी जमीन खो बैठो, इसे मैं असंभव मानता हूँ। फिर भी हमारी तैयारी जमीन खोने की भी होनी चाहिए। एक तरफ प्रतिज्ञा और दूसरी तरफ हमारा सर्वस्व रखें। उस सारी जायदाद—स्थावर और जंगम—की कीमत प्रतिज्ञा के मुकाबले में कुछ भी नहीं है। आपकी प्रतिज्ञा के पालन का विरसा लाखों रुपये की जायदाद से कहीं ज्यादा कीमती है। उसमें सारे हिन्दुस्तान को ऊँचा उठाने का रास्ता छिपा हुआ है। मुझे विश्वास है कि यह रास्ता आप कभी नहीं छोड़ेंगे। ईश्वर इस प्रतिज्ञा के पालन करने का आपको बल दे, यही मेरी कामना है।

नाडियाद
१७-४-१८

(५)

सरकारी विज्ञप्ति का जवाब

[खेड़ा की लड़ाई के संबंध में निष्पक्ष पंच मुकर्रर करने से इनकार करनेवाली प्रजापक्ष की माँगों और दलीलों को अस्वीकार करनेवाली और गांधीजी और उनके साथियों के पथ-प्रदर्शन को अनुचित बतानेवाली

सरकारी विज्ञप्ति २४ अप्रल को प्रकाशित हुई। उस समय गांधीजी दिल्ली की युद्ध-परिषद् में गये थे। वहाँ से आने के बाद उन्होंने इस विज्ञप्ति का जवाब देते हुए नीचे लिखा स्पष्टीकरण प्रकाशित किया।]

सरकारी विज्ञप्ति के दोष

खेड़ा की कठिनाइयों के संबंध में प्रकाशित सरकारी विज्ञप्ति में कुछ बातें दबा दी गयी हैं और कुछ बढ़ा-चढ़ाकर बतायी गयी हैं। इस प्रकार वह दोनों तरह से दूषित है। माननीय पारेख और पटेल की की हुई जाँच के मिलनेवाली जानकारी के सच्चे होने पर कमिश्नर ने आपत्ति की थी और मैंने तुरन्त ही जाँच करने के लिए एक पंच मुकर्रर करने का सुझाव दिया था। सचमुच सरकार के लिए यही उचित मार्ग था। अगर इस तरह किया जाता तो जो काम आँखों से नहीं देखे जा सकते—मिसाल के तौर पर, किसानों को ढुमार मेंसें के जाना स्त्रियों के गहने कुर्क करना और जमीनें जब्त करने की आज्ञाएँ देना—उन्हें करने से सरकार बच जाती। इसके बजाय जैसा विज्ञप्ति में बताया गया है, एक बहुत लम्बे अनुभव-वाले कलेक्टर की नियुक्ति कर दी गयी। परन्तु वह क्या कर सकता है! अच्छे-से-अच्छे अधिकारी को भी बुरे वातावरण में रहना पड़ता है। प्रतिष्ठा को सबसे ज्यादा महत्त्व देनेवाली और यह माननेवाली कि सरकार की तरफ से हमेशा अच्छा ही किया जाता है नौकरशाही के बन्धन और प्रणालिका के अनुकूल उसे बनना पड़ता है।

श्री देवधर और उनके साथियों की जाँच के बारे में विज्ञप्ति में जो उल्लेख किया गया है, उससे साफ पता चलता है कि कमिश्नर ने उनकी सिफारिशें मंजूर की थीं। परन्तु यह रिपोर्ट पेश करते समय की मुलाकात के वक्त मैं मौजूद था कमिश्नर ने इस निरूपण के विरुद्ध आपत्ति की और साफ कहा था कि अगर राहत दी गयी, तो उनकी रिपोर्ट के कारण तो हरगिज नहीं दी जायगी। क्योंकि रिपोर्ट में जो विशेष बातें बतायी गयी हैं, वे सच्ची और महत्त्व की नहीं हैं।

मातर ताल्लुके की विपत्ति तो सचमुच हृदयद्रावक है। इस ताल्लुके के कुछ गाँवों के क्षेत्र में नहरें पड़ती हैं। उनमें दोहरा संकट है : १ अतिवृष्टि से आमतौर पर फसल का न होना और २ बाढ़ से होनेवाला सर्वनाश। इस दूसरे कारण से तो लगान पूरा ही माफ होना चाहिए, परन्तु मेरी जानकारी के अनुसार बहुतों को यह लाभ नहीं मिला।

ठासरा ताल्लुके में संकट नहीं है, इसलिए जाँच करने का कोई कारण नहीं था, और इसीलिए मातर-सेवक-समाज के सदस्यों ने वहाँ जाँच नहीं की यह बात बिलकुल झूठी है। उनके जाँच न करने का कारण तो यह था कि मैं एक-एक गाँव की जाँच करनेवाला था। यह बात उन्होंने अपनी टिप्पणी में भी लिखी है।

फसल का अन्दाज

मेरी जाँच को सरकार ने 'निराधार जाँच' बताकर अन्याय किया है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि अगर किसानों के तथ्यों पर विश्वास रखा जाय, तो मेरे ढंग से बिलकुल सच्चा ही परिणाम आयेगा। कितनी फसल हुई, यह किसानों के सिवा अधिक निश्चित रूप में और कौन कह सकता है? मैं यह मान ही नहीं सकता कि लाखों किसान झूठ बोलने के लिए बड़ा षड्यंत्र रचेंगे। क्योंकि उसके परिणामस्वरूप तो बड़ा लाभ होने के बजाय दुःख सहना पड़ा था। साथ ही यह भी संभव नहीं था कि लाखों किसान फसल का कुल अन्दाज अमुक आने के भीतर लगाने के लिए सभी फसल के आने रटकर तैयार कर लें। मैं दावे के साथ कहता हूँ कि मेरा हिसाब गलत साबित नहीं हो सकता क्योंकि भूल न होने देने के लिए कुछ कुञ्जियाँ हैं। मैंने खरीफ और रबी दोनों फसलों के सरकारी अन्दाज पर आपत्ति की थी। उस समय रबी की फसल खड़ी थी। मैंने सुझाया था कि जब यह फसल काट ली जाय उस समय इसका सच्चा अन्दाज कर लिया जाय। इसके लिए मैंने नडियाद गाँव चुना था। मेरी दलील यह थी कि अगर किसानों का रबी की फसल का हिसाब सही निकले

और सरकार का गलत साबित हो, तो उसी नियम के अनुसार खरीफ फसल के किसानों के हिसाब को सही मान लेना अनुचित नहीं होगा। मेरी यह माँग मंजूर नहीं की गयी। साथ ही मुझे यह भी कहना चाहिए कि जब कलेक्टर ने वड़कस गाँव की फसल की जाँच की, तब उन्होंने मुझे मौजूद रहने देने की मेरी माँग पर ध्यान नहीं दिया था।

फसल का अन्दाज लगाने में मैंने रबी या कपास की फसल को नहीं गिना विज्ञप्ति में यह लिखकर सरकार ने गम्भीर भूल की। मैंने इन दोनों फसलों का अन्दाज लगाया था। मैंने केवल सरकारी पद्धति पर सैद्धान्तिक आपत्ति की थी। कारण बिल्कुल साफ है। अगर एक हजार आदमियों की आबादी में दो सौ रबी की फसल पैदा करें और आठ सौ मनुष्यों की खरीफ की फसल चार आने से कम हो, तो ऐसे मौके पर फसल का कुल अन्दाज लगाने में रबी की फसल गिन ली जाय, तो इससे ८ मनुष्यों के साथ निश्चित अन्याय होगा।

गम्भीर भूलें

सिवासी गाँव की फसल के बारे में सरकारी विज्ञप्ति में जो जिक्र किया गया है उसे देखकर मुझे भारी आश्चर्य होता है। जब अधिकारी फसल की जाँच कर रहे थे, तब मैं वहाँ मौजूद नहीं था। दूसरे, गेहूँ की फसल की कीमत का अन्दाज ११३४५ रुपया लगाया गया है। परन्तु यह तो तीन गाँवों की गेहूँ की फसल है। इसलिए उस फसल पर तीन गाँवों को लगान जमा कराना था। साथ ही १८० आदमियों की आबादीवाले गाँव की ११४४५) की फसल किस हिसाब में है? इसके सिवा सिवासी के लोगों को लगभग उतनी ही रकम की घास की फसल हुई थी, यह मुझे बता देना चाहिए। परन्तु फी आदमी ४) साल की खुराक के हिसाब से सिवासी के लोगों को ७२ रुपये का तो सिर्फ अनाज ही चाहिए। अधिकारियों ने गेहूँ की फसल का जो अनुमान लगाया है, वही सही हो तो ८१ २१) की कीमत का गेहूँ होता

है। यह आँकड़ा मुझे कलेक्टर साहब ने बताया था। यह बताते हुए कि सरकारी बयान कितना निराधार है, मुझे कहना चाहिए कि सारे गाँव की फसल खलिहानों में पड़ी हुई थी और लोगों के हिसाब के अनुसार वह लगभग ९) से भी कम कीमत की थी। सरकार ने गेहूँ की फसल का १ आने अन्दाज लगाया था जब कि फसल की उत्पत्ति से हिसाब लगाने पर फसल का अन्दाज एक ख्याल होता है। इसके सिवा भी एक बात है। वह यह कि गेहूँ बोने के लिए फी बीघा एक मन बीज चाहिए और सिंगाली गाँव में कुल १९६५ बीघे में गेहूँ की फसल पैदा की गयी थी। इसके मुकाबले में ३ मन गेहूँ मानी कुल ९ रुपये की फसल कुछ भी नहीं है। इस बात का सरकार को यकीन दिलाने के लिए मैंने कलेक्टर साहब से कहा था कि हम दोनों की उपस्थिति में फसल तौल ली जाय तो सरकार का भ्रम दूर हो जाय। उन्होंने मेरी इस बात पर ध्यान नहीं दिया। इसलिए यह जरूर मान लेना चाहिए कि किसानों का हिसाब सच्चा है।

सत्याग्रह की हिमायत

सरकारी विज्ञप्ति में बिलकुल झूठी बातें लिख दी गयी हैं, यह कहते हुए मुझे बता देना चाहिए कि गुजरात सभा ने सत्याग्रह का आश्रय लेने की सिफारिश करने का प्रस्ताव पास नहीं किया था। सभा ने अपने सिर पर आनेवाली जिम्मेदारी से बचने के लिए ऐसा किया हो सो बात नहीं परन्तु सभा के विधान के अनुसार बहुमत का आदर करके सभा से सत्याग्रह का प्रस्ताव पास कराना खुद मुझे ही ठीक नहीं लगा। इसलिए सदस्यों को अपनी इच्छानुसार बरतने की स्वतन्त्रता मिली। फिर भी वास्तविक यह है कि सभा के बहुत से प्रमुख सदस्य खेड़ा की लड़ाई में भाग ले रहे हैं।

जो लोग लगान जमा कराने को राजी थे उन लोगों को मैंने उलटा कर रुपया जमा करने से रोक दिया इस इल्जाम से मैं बिलकुल इनकार करता हूँ। सरकारी विज्ञप्ति में अलग-अलग तालुकों की वसूली के आँकड़े दिये गये हैं। वे ही चौकीदारों और पटवारियों की क्रूरता सूचित

करते हैं। लोगों को तो कानून के आधार पर एक गहरा धोखा ही लगा है। यह कहा ही कैसे जा सकता है कि चूँकि जमीनें जब्त करके नीलाम करने से पूरा लगान वसूल हो गया, इसलिए जाँच करने या राहत देने का बिलकुल कारण नहीं था?

मैं स्वीकार करता हूँ कि कानून के आधार पर नहीं, बल्कि रहमदिली से लगान मुल्तवी किया गया है। परन्तु इस राहत का आधार अफसरों की सनक या धुन पर नहीं है। इसके लिए कुछ नियम निश्चित हो चुके हैं और यह नहीं हो सकता कि फसल चार आने से कम कूती जाय तो भी सरकार वह राहत देने के नियमों पर अमल न करे। फसल का अनुमान सही है या गलत, यही एक मुख्य मुद्दा है। अगर अनुमान ठीक हो, तो राहत देते समय सरकार बाद में दूसरे प्रश्न बीच में लाती है। उदाहरण के लिए : 'जिले की साधारण आर्थिक स्थिति। जिले में प्लेग फैला हुआ है और महँगाई है, इसलिए लोगों को राहत मिलने के कई कारण हैं।' कलक्टर साहब ने मुझसे कहा था कि यह अंतिम बात मैं ध्यान में नहीं लूँगा। केवल फसल पर ही आधार रखूँगा।

मेरा खयाल है कि एक स्वतंत्र पंच मुकर्रर करने की माँग के समर्थन में मुझे जो कुछ कहना चाहिए वह मैं कह चुका हूँ। जब तक एक भी किसान का लगान बाकी रहता है तब तक ऐसे पंच की गुंजाइश है, क्योंकि जब्ती में कोई दूसरी चीज हाथ न लगे, तो उसकी जमीन जब्त करने में सरकार कसर नहीं रखेगी। किसान यह साबित कर देने को तैयार हैं कि पटवारियों के आँकड़े झूठे हैं और कुछ पटवारी हिम्मत के साथ यह कहने को तैयार हैं कि फसल के अन्दाज के आँकड़े ऊपर के अफसरों के कहने के अनुसार रखे गये हैं। परन्तु अगर इस समय स्वतंत्र पंच नियुक्त करने की आवश्यकता न जान पड़ती हो, तो फिर लगान की केवल थोड़ी-सी जो रकम बाकी है, उसे सरकार मुल्तवी क्यों नहीं कर देती। क्योंकि ऐसा करने पर अच्छी स्थितिवाले किसान झटपट लगान जमा कर देने को तैयार हैं।

इससे साफ़ प्रतीत होता है कि सरकार हठ किये बैठी है और कमिश्नर उसका नायक बन गया है।

वाइसरॉय का सुलह-सन्देश

वाइसरॉय साहब आपस के झगड़े मिटा देने की सिफ़ारिश करते हैं। क्या यह प्रार्थना लोगों के लिए ही है या अधिकारी-वर्ग पर भी लागू होती है? जब जनता की माँग न्यायपूर्ण और उचित हो, तो क्या उन्हें लोकमत का आदर करके शांति नहीं फैलानी चाहिए?

अगर संकट का अर्थ केवल भुखमरी ही किया जाता हो तो मैं कह देता हूँ कि खेड़ा के लोग भूखों नहीं मर रहे हैं। लेकिन अगर लगान की ख़ातिर पूँजी माल बेचना पड़े और खाने के लिए अनाज ख़रीदकर लाना पड़े और इस स्थिति का 'संकट' शब्द की व्याख्या में समावेश होता हो, तो यह संकट आज खेड़ा ज़िले के घर-घर में है। असंख्य किसानों ने पेड़ मवेशी और पूँजी सामान बेचकर लगान चुकाया है। ऐसे उदाहरणों की मेरे पास कमी नहीं है। आश्चर्य की बात है कि यह हक़ीक़त सरकारी विज्ञप्ति में बिल्कुल दबा दी गयी है कि अधिकारी-वर्ग ने एक रुपये में लगान वसूल कर लिया। सरकार ने किसानों को भी हठीलेपन का अच्छा पाठ पढ़ाया। किसान इस धमकी के आतंक से मुक्त नहीं हैं कि चार लाख के लगान की ख़ातिर वे तीन करोड़ की ज़मीन खोयेंगे। क्या उपर्युक्त कथन से यह पता नहीं चलता कि अधिकारी-वर्ग का पक्ष भूठा है?

● ● ●

(ज)

खेड़ा की लड़ाई की पूर्णाहुति

[सरकार के समझौता कर लेने पर गांधीजी ने श्री वल्लभभाई के और अपने हस्ताक्षर से खेड़ा ज़िले के भाइयों और बहनों के लिए निम्न लिखित सन्देश भेजा।]

खेड़ा ज़िले की जनता ने तारीख़ २२ मार्च को जो लड़ाई शुरू की

थी, वह खतम हो गयी है। उस तारीख को लोगों ने इस प्रकार प्रतिज्ञा की थी :

"हम यह जानते हैं कि हमारे गाँव की फसल चार आने से कम हुई है। इसी कारण अगले साल तक लगान वसूल करना मुल्तवी रखने के लिए सरकार से अर्ज करने पर भी वसूली बन्द नहीं की गयी। इसलिए हम नीचे दस्तखत करनेवाले प्रतिज्ञा करते हैं कि हम इस वर्ष का पूरा या बाकी रहा सरकारी लगान नहीं चुकायेंगे किन्तु उसे वसूल करने के लिए सरकार जो कानूनन जो कार्यवाही करती हो, वह करने देंगे और उससे होनेवाले सभी दुःख सहन करेंगे। हमारी जमीन जब्त हो जायगी तो हम खुद पर अपने हाथों रुपया जमा कराकर तथा झूठ साबित होकर स्वाभिमान नहीं खोयेंगे। अगर माननीय सरकार दूसरी किस्त सभी जगह मुल्तवी कर दे तो हममें से जो समर्थ होंगे वे पूरा या बाकी रहा लगान चुका देने को तैयार हैं। हममें से जो समर्थ हैं, उनके लगान न देने का कारण यह है कि अगर समर्थ लोग चुका दें तो असमर्थ लोग घबराहट में अपनी चाहे जो चीज बेचकर या कर्ज करके लगान भरा करेंगे और दुःख उठायेंगे। ऐसी हालत में हम मानते हैं कि गरीबों का बचाव करना समर्थों का फर्ज है।"

इस प्रतिज्ञा का तात्पर्य यह है कि अगर सरकार गरीबों का लगान मुल्तवी रखे, तो समर्थ असामी लगान जमा करा देंगे, ऐसा हुक्म उत्तर सँडा के तहसीलदार ने तारीख २ जून को जारी किया। उस पर से उत्तर सँडा के लोगों में से समर्थों को लगान जमा करा देने की सलाह दे दी गयी है और वहाँ लगान जमा कराना शुरू हो गया है।

उत्तरसँडा में जब इस प्रकार हुक्म हुआ, तो श्रीमान् कलेक्टर साहब को पत्र लिखकर प्रार्थना की गयी कि अगर उत्तरसँडा जैसे हुक्म सब जगह जारी हो जायँ तो लड़ाई का अन्त हो जाय और माननीय गवर्नर महोदय को १ तारीख को युद्ध-परिषद् की बैठक के समय कहा था

सके कि लेवा जिले का अर्थात् घर का झगड़ा निपट गया है। श्रीमान् कलेक्टर साहब ने उत्तर दिया है कि उत्तरखंड के तहसीलदार का हुक्म सारे जिले पर लागू होता है। इससे अन्त में लोगों की माँग स्वीकार हो गयी है। चौथाई सम्बन्धी प्रश्न के बारे में श्रीमान् कलेक्टर साहब ने बताया है कि जिन पर चौथाई के हुक्म जारी हुए हैं, वे अपने आप लगान चुका देंगे, तो उन्हें चौथाई माफ हो जायगी। इसके लिए हमें इन महाशय का उपकार मानना चाहिए।

हमें अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि लड़ाई का अन्त तो हो गया परन्तु यह अन्त माधुर्यरहित है। उसमें जो खूबी होनी चाहिए, वह नहीं है। ऊपर का हुक्म उदार हृदय से खुश होकर नहीं दिया गया। उसमें मजबूरन देने की महक आती है। श्रीमान् कलेक्टर साहब सूचित करते हैं कि उपर्युक्त रियायतें देने का हुक्म ता० २५ अप्रैल को तहसीलदारों के नाम भेज दिया गया था। और उस पर अच्छी तरह अमल हो इस उद्देश्य से ता० २२ मई को दूसरी सैकिण्ड भेजी गयी थी और उन्हें यह भी सूचित कर दिया गया था कि जो दे सकें, उनका और न दे सकें, उनका नकशा तैयार किया जाय। सरकार की ये आज्ञाएँ जनता में क्यों घोषित नहीं की गयीं? ता० २५ अप्रैल को इन आज्ञाओं की जानकारी लोगों को हो गयी होती, तो लोग कितने कष्टों से बच जाते! विशेष अधिकारियों को रखकर कुर्कियाँ करने का बहुत-सा व्यर्थ खर्च बच जाता। जहाँ लगान बाकी है वहाँ के लोग भयाक्रान्त रह रहे हैं। कुर्की न हो सके, इसके लिए वे घर छोड़कर बाहर जंगल में रहे और उन्हें जो भी धूप नहीं लगा। स्त्रियों ने अनेक कष्ट सहन किये हैं कभी-कभी उद्धत सर्किल इन्स्पेक्टरों के अपमान भी सहन किये हैं, दुधार मैंस उनकी नजर के सामने ले ली गयी हैं। ये सब कष्ट उन्होंने बरदाश्त किये हैं। चौथाई का जुर्माना चुकाया है। उपर्युक्त आज्ञाएँ लोगों को मालूम हो जातीं, तो लोग बहुत-से दुःखों से बच जाते। अधिकारी-वर्ग को मालूम था कि लड़ाई की जड़

ही लोगों की प्रशक्ति थी। लोगों की इस कठिन अवस्था की तरफ देखने से माननीय कमिश्नर साहब ने शुरू से ही इनकार कर दिया था। बहुत-से पत्र लिखने पर भी उनकी 'ना' 'हाँ' में नहीं बदली। यथासीमाधार छूट नहीं दी जा सकती। ऐसा कानून नहीं है। ये उनके शब्द थे। अब कलेक्टर साहब कहते हैं कि इस तरह छूट देने की बात तो विचार-विदित है। तब तो लोगों ने आज तक उनके हठ से ही दुःख उठाया। दिल्ली जाते समय मैंने (गांधीजी ने) श्रीमान् कमिश्नर साहब से इस आशय का हुक्म जारी करने की प्रार्थना की, जिससे मैं वाइसरॉय साहब को समझौते की खुशखबरी दे सकूँ। माननीय कमिश्नर साहब ने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी। रावसाहब दादूभाईसाहब ने भी हम दोनों से पूछकर ता० २५ अप्रैल के बाद यही माँग की थी। उनसे श्रीमान् कलेक्टर साहब ने कहा कि अब इस तरह की माँग स्वीकार करने का समय ही नहीं रहा।

लोगों के दुःख देखकर वे पिघले। अन्त में उन्हें अपनी भूल मालूम हुई और लोगों को सन्तुष्ट करने के लिए यथासीमाधार छूट देने को तैयार हो गये। इस प्रकार अधिकारी-वर्ग ने शुरू से उदार दिल होकर यश लेने के मार्ग को हठपूर्वक छोड़ दिया और अब भी जो कुछ दिया है, वह मजबूर होकर भूल स्वीकार किये बिना और अनिवार्य होने पर दिया है। इसीलिए हम कहते हैं कि इस समझौते में मिठास नहीं है।

लोगों के सामने अपने दोष स्वीकार न करने का मूठा हठ और मान्यता से और लोगों के माँगने के कारण दिया यह न कहा जाय ऐसे निरंकुश सत्ता के सिद्धान्त से चिपके रहने के कारण अधिकारी-वर्ग लोकप्रिय नहीं बन सका। उपर्युक्त आलोचना करते हुए हमें दुःख होता है, परन्तु हमने ऐसी आलोचना करने की यह धृष्टता इस वर्ग के मित्र की हैसियत से की है।

अधिकारी-वर्ग का ऐसा व्यवहार होते हुए भी हमारी माँगें स्वीकार हो रही हैं इसलिए उनका स्वागत करना हमारा फर्ज है। अब आठ चौथाई लगान ही वसूल होना बाकी है। अब तक लगान अदा न करने

में ही स्वाभिमान था। उस स्थिति के बदल जाने पर सत्याग्रहियों के लिए लगान चुकाने में स्वाभिमान है। जो समर्थ हैं, उन्हें सरकार को जरा भी तकलीफ दिये बिना लगान तुरन्त जमा कराकर बता देना है कि जहाँ आध्यात्मिक और मानवीय कानून के बीच विरोध नहीं है, वहाँ सत्याग्रही कानून का आदर करने में किसीके साथ भी होड़ कर सकता है। इस लड़ाई में कानून और सत्ता का शुद्ध भाव से आदर करने के खातिर हम कर्मचारियों का अनादर करते हुए दिखाई दिये हैं।

असमर्थ किसानों के नाम लिखने में हमें ऐसा कड़ा अनुशासन रखना चाहिए कि उन नामों का कोई विरोध ही न कर सके। जिनकी असमर्थता के बारे में जरा भी शंका हो उनका फर्ज है कि वे लगान अदा कर दें। असमर्थ कौन है, इसका अन्तिम निर्णय तो अधिकारी-वर्ग ही करेगा। फिर भी हम यह मानते हैं कि वह लोकमत का पूरा आदर करेगा।

खेड़ा के लोगों ने अपनी बहादुरी से सारे हिन्दुस्तान का ध्यान अपनी ओर खींचा है। सत्य निर्भयता एकता दृढ़ता और स्वार्थ-त्याग का रस लेकर खेड़े के लोग आज छह महीने से चल रहे हैं। हमें आशा है कि लोग इन महान् गुणों का अधिक विकास करेंगे और मातृभूमि का नाम अधिक उज्ज्वल करेंगे। हमारा दृढ़ विश्वास है कि यह लड़ाई छेड़कर खेड़ा जिले की रैयत ने अपनी स्वराज्य की और साम्राज्य की शुद्ध सेवा की है।

ईश्वर प्रजा का कल्याण करे।

हम हैं
जनता के चिरसेवक
मोहनदास करमचंद गांधी
वल्लभभाई झवेरभाई पटेल

नडियाद
वैशाख वदी १२, ७४
६ जून १९१८

(क)

सैनिक-भरती की अपील

[पहली पत्रिका]

खेड़ा जिले के भाइयों और बहनों से,

आपने अभी-अभी सत्याग्रह की भारी लड़ाई पूरी की है। उसमें आपकी विजय हुई है। इस लड़ाई में आपने ऐसे शौर्य और चातुरी वगैरह गुणों का परिचय दिया है कि देश के लिए इससे भी ज्यादा महत्त्व के काम में लगने की आपको सलाह देने और आग्रह करने की मैं हिम्मत करता हूँ।

आपने यह दिखा दिया है कि सरकार का विनयपूर्वक विरोध किस तरह किया जा सकता है, विरोध करते हुए भी उसके सम्मान की रक्षा कैसे की जा सकती है और अपना स्वाभिमान कैसे प्राप्त किया जा सकता है। सख्त लड़ाई लड़ने पर भी सरकार के साथ आपका कुछ भी विरोध नहीं है, यह दिखाने का अवसर आपके सामने रखता हूँ।

आप सब स्वराज्यवादी हैं, कुछ 'होमरूल लीग' के मेम्बर हैं। होम रूल का एक अर्थ यह है कि साम्राज्य में रहकर हम साम्राज्य के हिस्सेदार बनें। आज हम मातहत प्रजा हैं। आज हमें अंग्रेजों के बराबर हक नहीं हैं। कनाडा, दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया जैसे इंग्लैंड के हिस्सेदार माने जाते हैं, वैसे हम नहीं हैं। हम तो अधीन देश माने जाते हैं। हम अंग्रेजों जैसे ही हक चाहते हैं, दक्षिण अफ्रीका वगैरह उपनिवेशों के बराबरी के बनना चाहते हैं और ऐसे समय की कामना करते हैं, जब हम वाइसरॉय तक की पदवी ले सकें। ऐसी स्थिति लाने के लिए हममें

अपनी रक्षा करने अर्थात् शस्त्र-धारण करके लड़ने की शक्ति आनी चाहिए। जब तक हमारी रक्षा का आधार केवल अंग्रेजों पर है और जब तक हमें सिपाही-वर्ग से डर है, तब तक हम अंग्रेजों की बराबरी के कहला ही नहीं सकते। इसलिए हमें शस्त्र चलाना सीखकर अपनी रक्षा करने की शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। अस्त्र चलाना खूब जल्दी सीखना हो तो सेना में भरती होना हमारा कर्तव्य है।

मर्द और नामर्द के बीच मित्रता नहीं हो सकती। हम नामर्द माने जाते हैं। अगर नामर्दों की गिनती से बचना हो, तो शस्त्र चलाना सीखना जरूरी है।

यह निश्चय है कि हमें साम्राज्य में हिस्सेदार बनना है। तो फिर हमें कितना ही दुःख उठाकर और मरकर भी साम्राज्य का बचाव करना चाहिए। अगर साम्राज्य का नाश हो जाय तो उसके साथ हमारी महान् आशाएँ भी नष्ट हो जाती हैं।

इस प्रकार स्वराज्य लेने का सबसे सरल और सबसे सीधा उपाय साम्राज्य के बचाव में भाग लेना है। रुपया बहुत देने की हमारी ताकत नहीं है। और रुपए से ही जीत हो भी नहीं सकती। जीत अटूट सेना से ही हो सकती है। वह सेना हिन्दुस्तान जुटा सकता है। अगर मुख्यतः हमारी सेना से साम्राज्य की जीत हो तो स्पष्ट है कि हम मुँहमाँगे हक प्राप्त कर सकते हैं।

कोई कहेगा कि अभी हक प्राप्त न करें, तो बाद में धोखा होगा। जिस रूप से हम साम्राज्य का बचाव करेंगे, उसी रूप से हक भी ले सकते हैं। साम्राज्य की कमजोरी से लाभ उठाकर प्राप्त किये हुए अधिकार साम्राज्य के बलवान् होने पर खो बैठने की संभावना है। साम्राज्य की सेवा करके हमें जो हक मिलेंगे वे उसे इस तरह तंग करके हरगिज नहीं मिल सकते। साम्राज्य के संचालकों का अविश्वास करना अपने बल का अविश्वास है, हमारी दुर्बलता का चिह्न है। हमारे हकों का आधार संचालकों

की भलाई या कमजोरी पर न होना चाहिए, बल्कि उनका आधार हमारी योग्यता हमारी ताकत होनी चाहिए।

देशी राज्य साम्राज्य की मदद कर रहे हैं, इसलिए उन्हें इसका बदला मिल जाता है। धनाढ्य लोग सरकार को रुपये की मदद दे रहे हैं। इसका उन्हें बदला मिलता है। दोनों में से कोई भी शर्तों के साथ मदद नहीं देता। फौजी सिपाही अपने नमक के लिए, अपनी आजीविका के लिए मदद कर रहे हैं। उन्हें आजीविका और उसके सिवा इनाम-इकराम मिल जाता है। ये सब हमारे ही अंग हैं, परन्तु ये स्वराज्यवादी नहीं माने जा सकते। उनका ध्येय स्वराज्य नहीं है। वे स्वदेश प्रेम की खातिर मदद नहीं देते। ऐसा भी हो सकता है कि अगर हम वैरभाव से स्वराज्य लेना चाहें, तो साम्राज्य के संचालक इन तीनों शक्तियों का हमारे विरुद्ध उपयोग करें और हमें हरा दें।

अगर हम स्वराज्य चाहते हैं, तो हमारा फर्ज है कि हम भी साम्राज्य की मदद करें और हमें अपना बदला अवश्य मिलेगा। हमारी नीयत साफ होगी तो सरकार भी हमारे साथ साफ नीयत से काम करेगी। अगर घड़ीभर के लिए यह मान लें कि सरकार साफ नीयत न रखेगी, तो भी हमें अपनी शुद्धता पर विश्वास रखना चाहिए। भले के साथ ही भलाई करने में चीरता नहीं है। बुरे के साथ भी भलाई का प्रयोग करने में ही वीरता है।

सरकार हमें सेना में कमिशन यानी अफसर बनने का अधिकार नहीं देती हथियार रखने का कानून रद नहीं करती फौजी तालीम देने के स्कूल नहीं खोलती तब हम कैसे मदद दे सकते हैं? आपत्तियाँ ठीक हैं।

सरकार इस विषय में सुधार न करके बड़ी भूल कर रही है। अंग्रेज जाति ने बहुत-से पुण्य-कार्य किये हैं। उनके लिए भगवान् उसका भला करे। परन्तु अंग्रेज जाति के नाम पर जिन अंग्रेज अधिकारियों ने भारत को निःशस्त्र बनाकर जो घोर पाप किया है, वह अधिकारी-वर्ग अब भी

नहीं चेतेगा, तो उसके सारे पुण्य नष्ट कर देगा। ईश्वर न करे, यदि हिन्दुस्तान की कुछ भी हानि हुई हिन्दुस्तान अन्य जाति के अधीन हो गया, तो भारतीय जाति की बददुआ अंग्रेज जाति को ऐसी सख्त लगेगी कि उस जाति को दुनिया के सामने झेंपना पड़ेगा और उसे तैंतीस करोड़ लोगों को नामर्द बनाने के लिए फटकार पड़ेगी। मैं मानता हूँ कि अंग्रेज जाति के महान् पुरुष इस चीज को समझ गये हैं, वे चेत गये हैं। परन्तु अपनी बनायी हुई स्थिति को वे एकदम बदल नहीं सकते। अंग्रेज मात्र को हिन्दुस्तान में घुसते ही हमारे प्रति तिरस्कार की, अपने बड़प्पन की और हमसे अलग रहने की शिक्षा दी जाती है। उनके वातावरण में ही यह बात रहती है। ऊँचे अधिकारी इस वातावरण से मुक्त होने और नीचेवालों को मुक्त करने की कोशिश करते हैं, परन्तु एकदम सफल नहीं हो पाते। अगर वक्त नाजुक न होता, तो हम उनके साथ लड़ते, परन्तु ऐसे वक्त में कमिशन वगैरह की प्रतीक्षा करते रहना मुँह से बदला लेने के लिए नाक काट लेने के बराबर है। यह भी हो सकता है कि हम कमिशन का इंतजार करते रहें और हमें साम्राज्य को मदद देने का अवसर ही न मिले।

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि सरकार कमिशन वगैरह न देकर या देने में देर करके हमें सेना में भरती होने या और किसी तरह मदद देने से रोकना चाहती हो तो भी हमें आग्रहपूर्वक फौज में भरती होने की जरूरत है।

सरकार को इस समय सेना के लिए पाँच लाख आदमी चाहिए। ये आदमी सरकार किसी भी तरह जुटायेगी। इतने मनुष्य हम दे देंगे, तो यश हमें मिलेगा हम सेवा करेंगे और कभी-कभी यह जो सुना जाता है कि रंगरूट भरती करनेवाले एजेंट लोगों को अनुचित ढंग से ले जाते हैं, वह भी बंद हो जायगा। भरती का सारा काम हमारे हाथ में आ जाय यह कोई ऐसी-वैसी बात नहीं है। अगर सरकार का हम पर अविश्वास होगा, अगर उसकी नीयत साफ नहीं होगी तो वह हमारे द्वारा भरती नहीं करायेगी।

ऊपर लिखी दलीलों और तथ्यों से देखा जा सकेगा कि फ़ौज में भरती होकर और साम्राज्य को मदद देकर हम स्वराज्य के लिए योग्य बनते हैं, हिन्दुस्तान का बचाव करना सीखते हैं और कुछ अंशों में फिर से खोयी हुई मर्दानगी प्राप्त करते हैं।

अंग्रेज जाति के गुणों पर मेरा विश्वास है। इसीलिए मैं उपर्युक्त सलाह दे सकता हूँ, यह मुझे स्वीकार करना चाहिए। मैं मानता हूँ कि इस जाति ने हिन्दुस्तान का बहुत नुकसान किया है। फिर भी उसके साथ रहने में हमारा लाभ है। इस जाति के गुण-दोष का हिसाब लगाने पर मुझे तो गुणों की मात्रा अधिक मालूम होती है। इस जाति के अधीन रहना गुणकर है। अंग्रेजों में अपने अधीन रहनेवाली जातियों के स्वाभिमान को भुला देने के महान् दोष हैं। परन्तु उसमें बराबरीवालों का पूरा आदर करने और उनके प्रति वफ़ादारी दिखाने के गुण भी हैं। हमने देखा है कि इस जाति ने औरों के जुल्म से कुचले हुए लोगों को अक्सर मदद दी है। इनके साथ में रहकर हम बहुत कुछ ले सकते हैं और बहुत कुछ दे भी सकते हैं। और सम्भव है हमारा ऐसा सम्बन्ध संसार के लिए हितकर हो। अगर मेरा यह विश्वास न हो और इस जाति से बिल्कुल स्वतन्त्र होना मुझे इष्ट प्रतीत हो तो मैं मदद देने की सलाह न दूँ। इतना ही नहीं, उनके विरुद्ध विद्रोह करने की सलाह देकर, विद्रोह की सजा का पात्र बनकर जनता को सचेत करूँ। हमारी अभी तो ऐसी स्थिति नहीं है कि हम किसी भी जाति की मदद के बिना केवल स्वतन्त्र होकर खड़े रह सकें। मैं यह मानता हूँ कि हमारी उन्नति साम्राज्य में बराबरी के हिस्सेदार बनकर रहने में है। मैंने सारे भारतवर्ष में अनुभव किया है कि सभी स्वराज्यवादी ऐसा ही मानते हैं। खेड़ा जिला और गुजरात से मैं पाँच-सात सौ आदमी की नहीं, बल्कि हजारों की भरती करने की आशा रखता हूँ। गुजरात 'नामर्दी' के कलंक से बचना चाहे तो उसे हजारों सिपाही देने पड़ेंगे। मैं आशा रखता हूँ कि इस सेना की कल्पना में शिक्षित वर्ग, पाटीदार, बारैया और वाघरी वगैरह सब आ जाते हैं और

सब एक कतार में खड़े होकर लड़ेंगे। जब तक शिक्षित अथवा तालीम-यापता भेद-वर्ग आगे नहीं आयेगा, तब तक दूसरे वर्गों से आशा रखना व्यर्थ है। पढ़े-लिखे लोगों में से जो बड़ी उम्र के होते हुए भी तन्दुरुस्त हों, वे सब भरती हो सकेंगे, ऐसी मुझे उम्मीद है। उनका उपयोग लड़ने में नहीं, तो लड़ाई से सम्बन्ध रखनेवाले कर कामों में हो सकता है, सिपाहियों की सेवा में हो सकता है। मुझे आशा है कि जिनके वयस्क लड़के हैं, वे लड़कों को भेजने में जरा भी न हिचकिचायेंगे। लड़ाई में पुत्र की कुर्बानी और पुरुषों के लिए दुःखकर नहीं परन्तु सुखकर होनी चाहिए। इस समय पुत्र की कुर्बानी स्वराज्य की खातिर दी गयी कहलायेगी।

बहनों से मेरी प्रार्थना है कि आप मेरे इस प्रार्थना-पत्र से घबरायें नहीं परन्तु उसका स्वागत करें। इसमें आपकी रक्षा की आपकी लाज की कुंजी छिपी हुई है।

खेड़ा जिले में ६ गाँव हैं। हर गाँव में औसतन एक हजार से अधिक आबादी है। अगर हर गाँव कम-से-कम बीस आदमी निकाले, तो खेड़ा जिला १२ मनुष्यों की सेना दे सकता है। खेड़ा जिले में सात लाख की आबादी है। इस प्रकार सौ के पीछे १.७ मनुष्यों का अनुपात होता है। मृत्यु-संख्या इससे अधिक है। अगर हम इतनी कुर्बानी भी साम्राज्य के लिए—स्वराज्य के लिए देने को तैयार न हों, तो इसमें आश्चर्य नहीं कि हम नालायक ठहरेंगे। अगर हर गाँव बीस आदमी दे दे, तो वे लड़ाई से लौटकर जीवित किले के रूप में गाँव के रक्षक बन जायेंगे। अगर वे लड़ाई में खेत रहे, तो अपने को गाँव और देश को अमर कर देंगे और उनके पीछे वैसे ही और बीस तैयार होकर देश की रक्षा करेंगे।

यह काम करना ही हो तो उसके करने में हम देर नहीं कर सकते। मैं यह चाहता हूँ कि हर गाँव से सबसे अधिक बलवान् मनुष्य चुनकर उनके नाम मंगे जायें। माताओं और बहनों से मैं यह भीख करता हूँ। आपको समझने और तरह-तरह के जो सवाल उठेंगे, उनका जवाब देने के लिए मुख्य गाँवों में सभाएँ की जायेंगी और स्वयंसेवक भी निकल पड़ेंगे।

भाई वल्लभभाई झवेरभाई पटेल (बैरिस्टर), भाई कृष्णलाल नरसिंहलाल देसाई (एम ए, एल-एल बी) भाई इन्दुलाल कन्हैयालाल याज्ञिक, भाई हरिप्रसाद पीताम्बरदास मेहता (हितेच्छु प्रेस के मालिक), भाई प्रागजी खंडुभाई देसाई भाई मोहनलाल कामेश्वर पण्ड्या, भाई गणेश वासुदेव मावलंकर (बी ए, एल-एल बी) भाई कालीदास जसकरण झवेरी (बी ए, एल-एल बी), भाई फूलचन्द बापूजी शाह, भाई गोकुलदास द्वारकादास तलाटी (बी ए एल-एल बी), भाई शिवाभाई मोतीलालभाई पटेल (बी ए, एल-एल बी) और भाई राघवजी भाई, मणिभाई पटेल वगैरह सज्जन इस काम में शरीक हुए हैं।

नडियाद, ता २२-६ १८
('प्रजाबन्धु' १०-६-१८) मोहनदास करमचंद गांधी

(ख)

सैनिक भरती की अपील

[दूसरी पत्रिका]

पहली पत्रिका लिखे हुए आज एक महीना हो गया। इस बीच मुझे और मेरे साथ काम करनेवाले भाइयों को बहुत-सा अनुभव हुआ है। नडियाद, करमसद, रास कठलाल और कपडवंज वगैरह जगहों पर सभाएँ की गयीं। सैकड़ों स्त्री-पुरुषों से बातचीत हुई।

जो अनुभव हुआ, उसे आपके सामने रखने की इजाजत चाहता हूँ। मुश्किल से सौ आदमी भरती हुए होंगे। एक मास का विचार करता हूँ और जो प्रयास हुआ है, उसका खयाल करता हूँ, तब यह संख्या मुझे बहुत थोड़ी लगती है। लोगों की स्थिति का खयाल करता हूँ, तो मुझे महसूस होता है कि इतने आदमी तैयार हो गये, यह आश्चर्य की बात है। जिस

वर्ग ने कभी लड़ने में भाग नहीं लिया और जिसने किसी पर लाठी तक नहीं उठायी, उस वर्ग के मनुष्य फौज में भरती हुए हैं। अब जो वर्ग लड़ने के योग्य है, उसे तैयार किया जा सके, तो बहुत सेना खड़ी की जा सकती है।

समझदार वर्ग की खामियाँ इस अवसर पर साफ दिखाई देती हैं। मैं 'शिक्षित' के बजाय 'समझदार' शब्द काम में ले रहा हूँ। ऐसे पुरुष और स्त्रियाँ अपना कर्तव्य पालन करें, तो जो वर्ग कुदरती तौर पर लड़ाई में भाग के लायक हों, उस पर असर डाल सकते हैं। मेरा अनुभव समझदार वर्गों की बड़ी कमजोरी साबित करनेवाला है। वे राष्ट्रीय काम में पूरी दिलचस्पी नहीं लेते, इसलिए भरती का काम कठिन हो जाता है। अतएव जिन समझदार लोगों के हाथ में यह पत्रिका आये, वे अगर इस काम में विश्वास रखते हों, तो तैयार होकर इस महान् कार्य के लिए अपढ़ और नासमझ लोगों को प्रेरित करें।

किन्तु समझदार लोगों में मैंने ऐसे भी देखे हैं, जिन्हें इस कार्य में विश्वास नहीं है। यह पत्रिका उन्हींके लिए लिखी गयी है। उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे पत्रिका को ध्यानपूर्वक पढ़ें। समझदार आदमी का काम है कि वह प्रस्तुत परिस्थिति का समाधान करके कर्तव्य की रूपरेखा तैयार करे। अगर हम अंग्रेजों के साथ अपना संबंध तोड़ना चाहते हों, तब तो हमें मदद नहीं देनी चाहिए। यह कहनेवाले थोड़े ही पाये गये हैं कि इस संबंध को हम तोड़ना चाहते हैं। यह तो सभी देख सकते हैं कि आज की स्थिति में तोड़ना चाहनेवाले भी नहीं तोड़ सकते। कुछ भी हो इस समय हमारा उद्धार अंग्रेजों की सहायता करने में ही है। उनकी मदद करना हमारी अपनी मदद करने के बराबर है। जहाँ हमारा और उनका स्वार्थ एक ही दिशा में जाता है, वहाँ एक-दूसरे के दोषों का हिसाब करके आपस में मदद न देना पढ़ी मादानी का काम होगा। हम जिस गाँव में रहते हों, उसमें हमारे शत्रु पर धावा हो और उससे सारे गाँव को नुकसान होने की संभावना हो, तो हम शत्रुता को भूल जायेंगे और

आये हुए संकट को दूर करने के लिए शत्रु की मदद करेंगे और डाकुओं को निकाल बाहर करेंगे। इस समय इस युद्ध में यही हो रहा है। इस समय समान विपत्ति का सामना करना हमारे लिए जरूरी ही नहीं है, बल्कि हमारा फर्ज भी है। दूसरी शंका यह उठायी गयी है कि युद्ध में सबसे अच्छे मनुष्यों को भेजकर हम उन्हें मरवा डालें, यह कहाँ का धर्म है? इस तरह तो सारे स्वराज्यवादी मारे जायँगे, फिर हम स्वराज्य कैसे लेंगे? यह शंका अगर बुद्धिमान् समझे जानेवाले मनुष्यों ने न उठायी होती, तो इसे मैं हास्यजनक कहता। यह तो स्पष्ट है कि हिन्दुस्तान में यदि पाँच ही लाख स्वराज्यवादी हों, तो हम स्वराज्य के लायक नहीं हैं। परन्तु शंका उठानेवालों का कहना यह है कि स्वराज्यवादी कितने ही हों, स्वराज्य का आन्दोलन करनेवाले समझदार आदमी तो पाँच लाख से भी कम हैं। यह सच है। सिर्फ एक बात भुला दी जाती है। पाँच लाख मरनेवाले आदमियों को तैयार करने में पचास लाख आदमियों के मन पर युद्ध और स्वराज्य वगैरह की बातें पहुँचेंगी। हम पाँच लाख स्वतन्त्र मनुष्यों को तैयार करना चाहते हैं। ये समझकर अपनी इच्छा से जायँगे। उन्होंने अपने मित्रों और सगे-सम्बन्धियों वगैरह से सलाह ली होगी। यानी जानेवाले पाँच लाख आदमी अपने पीछे अपने जैसे लाखों को छोड़ जायँगे। सच बात तो यह है कि हम लड़ाई करने की शक्ति ही खो बैठे हैं और हमारी वीरता का नाश हो गया है। हममें अपनी स्त्रियों की रक्षा करने तक की शक्ति नहीं है। धर्म के नाम पर हम फर्ज (कर्तव्य) को भूल गये हैं। दिन दहाड़े देहात में डाका पड़, तो उसके विरुद्ध भी हम लड़ नहीं हो सकते। एक हजार की आबादी में आठ आदमी आकर सफाया करके चले जायँ यह दृश्य सारी दुनिया में हिन्दुस्तान में ही संभव है। शरीर से गाँववाले बिल्कुल इतने दुर्बल नहीं हैं कि आठ आदमियों को लपेट न सकें। परन्तु उन्हें मौत का बड़ा डर है। ऐसे झगड़े में पड़कर अपना शरीर कौन खतरे में डाले? भले ही लूट लें। सरकार का काम है, वह निबट लेगी यह सोचकर घर में घुसे रहते हैं। पड़ोसी का घर जले, उसकी इज्जत लुटे

और मारा जाय, तो भी इन तत्त्वज्ञानियों को परवाह नहीं। जब तक उस तत्त्वज्ञान (अंधकार) का नाश नहीं हो जाता, तब तक हिन्दुस्तान में सच्ची शान्ति नहीं होगी। स्वाभिमान रखनेवाले के लिए यह स्थिति असह्य होनी चाहिए कि सरकारी या दूसरे सिपाही आयें, तभी हम गाँव को बचा सकते हैं। ऐसी स्थिति से बचने का तात्कालिक उपाय हमारे हाथ में मौजूद है। सेना में भरती होने से हमें हथियार चलाना आयेगा इसमें राष्ट्रीय जोश पैदा होगा और हम देहात की रक्षा करने योग्य बनेंगे।

हम चले जायँ, तो हमारे बाल-बच्चों का क्या होगा? यह सवाल तो अभी पूछ सकते हैं। लड़ाई में जमीदारों को हर महीने भोजन-वस्त्र के सिवा वेतन मिलता है कम-से-कम १८ रुपये मिलते हैं। योग्यतानुसार दरजा भी बढ़ता है और वेतन भी बढ़ता है। अगर किसीकी मौत हो जाय तो उसके बाल-बच्चों का भरण-पोषण सरकार करती है। लड़ाई से लौटनेवालों को इनाम-इकराम मिलता है। मुझे विश्वास है कि अन्त में जो आर्थिक लाभ सिपाहीगिरी में है, वह दूसरे धंधों में हरगिज नहीं मिलता।

परन्तु ये लाभ तो अंग्रेजों को ही मिल सकते हैं, हमें कहाँ मिलते हैं?—ऐसा कहनेवाले भी हैं। उनसे मुझे कहना है कि हमारी मेहनत से पाँच लाख समझदार आदमियों की सेना बन जाय और उन्हें अंग्रेजों के बराबर ही हक न मिलें यह हो नहीं सकता। ऐसा हो तो पाँच लाख की और नेताओं की खामी ही साबित होगी। पाँच लाख स्वयंसेवकों की सेना खड़ी हो जाय तो उसे अंग्रेज सेना की बराबरी मिलेगी और उतने ही हक भी मिलेंगे। पाँच लाख की इस तरह की सेना बन जाने में ही अधिकार समाये हुए हैं।

आप कहते हैं कि बिना शर्त के लड़ाई में जाओ। दूसरे सलाहकार कहते हैं कि दफ्तर के अधिकारों का वचन लेकर जाओ। तीसरे कहते हैं, जाने के लिए हम बैठे हुए ही नहीं हैं। खुद होकर अपने सिर मुसीबत न

लो। इन तीन सवालों से हम चक्कर में पड़ जाते हैं। हमारे खयाल से तो समझदारी इसीमें मालूम होती है कि हम जिस हालत में हैं, उसीमें रहें। मेरा नम्र उत्तर यह है कि ऐसे वाक्य तो कायर लोगों के होते हैं। ज्यों-ज्यों समय बीतेगा, त्यों-त्यों दल बनेंगे, अलग-अलग मत बनेंगे उन सब पर आपको विचार करना पड़ेगा। जो स्वराज्य लेने की आप और हम सबने प्रतिज्ञा ली है, उस प्रतिज्ञा के लिए ही लड़ाई में भाग न लेने की बात करना मैं तो स्वराज्य का द्रोह मानता हूँ। शर्त कराकर सेना में भरती होने से हमारा भरती होना रह जाने और स्वराज्य की योजना भी स्थगित हो जाने का खतरा है। सेना में भरती होने में ही स्वराज्य की और हमारे देश की सुरक्षा है। यह तो सभी दल मंजूर करते हैं कि सेना में भरती हुए बिना स्वराज्य को धक्का हरगिज नहीं पहुँचेगा। इसलिए मैं यह मानता हूँ कि तुलनात्मक दृष्टि से भी तीनों पक्षों में से भरती में शरीक होना ही अच्छा पक्ष माना जायगा। मुझे उम्मीद है कि खेड़ा जिले के भाई अपना फर्ज अदा करेंगे और अपना नाम स्वयंसेवकों में लिखा देंगे या सीधे आश्रम में भेज देंगे।

मुझे उम्मीद है कि बहनें इस काम में सहायता देंगी। मैं जानता हूँ कि कुछ बहनें अपने पति और पुत्रों को जाने से रोकती हैं। वे गहराई में जाकर विचार करेंगी तो समझ जायेंगी कि उनके पति या पुत्र के सैनिक बनने में उनका हित है, देश का तो है ही।

आपका चिरसेवक

नडियाद ता. २२-७-१८
(अखबारों में ४-८-१८)

मोहनदास करमचंद गांधी

परिशिष्ट १

[इस परिशिष्ट में हिन्दू-मुसलिम एकता और स्वदेशी का व्रत लेने सम्बन्धी पत्रिकाएँ दी गयी हैं।]

(क)

हिन्दू-मुसलिम एकता का व्रत

पिछले रविवार को सोनापुरी मस्जिद के आँगन में हिन्दू-मुसलमानों की एक विराट् सभा हुई थी। उसमें जैसे चौपाटी पर स्वदेशी व्रत की सूचना हुई थी, वैसे ही यहाँ भी हिन्दू-मुसलिम एकता का व्रत लेने की सूचना हुई और जैसे स्वदेशी व्रत के विषय में मुझे चेतावनी देनी पड़ी वैसे ही इस सम्बन्ध में भी किया। अमुक अवसर पर हम हर्षावेश में आकर बहुत से काम करने को तैयार हो जाते हैं और बाद में कभी-कभी पछताना पड़ता है। व्रत धार्मिक वस्तु है और कोई भी व्रत हम आवेश में हरगिज नहीं ले सकते। मन को शुद्ध करके, चित्त को शान्त करके, ईश्वर को साक्षी रखकर ही व्रत लिये जा सकते हैं। स्वदेशी व्रत के बारे में लिखते हुए मैंने जो आलोचना की है, वह यहाँ भी लागू होती है। जो काम हम साधारण संयम रखकर सम्पन्न नहीं कर सकते, उसे करने में मदद मिलने के लिए व्रतरूपी महासंयम का पालन करते हैं। इसीलिए व्रत के विषय में ऐसी कल्पना है कि मनुष्य व्रत लेकर और पालन करके ही बनते हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियाँ आपस में मित्रता रखें और ऐसा ही वर्ताव करें जैसा एक माँ के जाये (सगे) भाई करते हैं यह स्थिति अलौकिक कहलायेगी। ऐसी स्थिति भारत में पैदा होने से पहले दोनों जातियों को बहुत त्याग करना पड़ेगा और आज तक सँजोये विचारों में काफी परिवर्तन करने होंगे। दोनों जातियों अपनी धर्मों में

बहुत बुरी कहावतें काम में लाती हैं, जिनका भाव एक-दूसरे के बीच विरोध प्रकट करने और बढ़ानेवाला होता है। केवल हिन्दुओं की मंडली में हम अक्सर मुसलमानों की बातें करते समय कठोर शब्द इस्तेमाल करने में नहीं हिचकिचाते और वैसा ही मुसलमान मण्डली में होता है। बहुत-से तो यही मानते हैं कि हिन्दू-मुसलमानों में जन्मजात बैर है और वह किसी भी तरह नहीं मिट सकता। कई जगह हम देखते हैं कि दोनों में परस्पर अविश्वास होता है। मुसलमानों को हिन्दुओं की तरफ से डर है हिन्दुओं को मुसलमानों का भय लगता है। इसमें शक नहीं कि इस विषम और हीन स्थिति में दिन-दिन सुधार होता जा रहा है। समय अपना काम करता ही रहता है। हम चाहें या न चाहें तो भी हमें इकट्ठे होकर रहना पड़ता है। परन्तु प्रश्न उठने का अर्थ यह है कि जो बीच समय के कारण आगे-पीछे होने की संभावना है उसे हम यथासंभव रोककर जल्दी मंजिल में ले जायें। यह कैसे हो सकता है? हिन्दुओं अर्थात् कट्टर हिन्दुओं की सभा होनी चाहिए और उन्हें इस बारे में पुख्ता विचार करना चाहिए। हिन्दुओं की मुसलमान भाइयों के प्रति हमेशा एक शिकायत रहा करती है कि वे गोमांस का भक्षण करते हैं और खास तौर पर बकर-ईद के दिन गाय का बलिदान करते हैं। जब तक गाय को बचाने के लिए बहुत-से हिन्दू मुसलमानों को मारने तक तैयार रहते हैं, तब तक साधारण मुसलमानों और साधारण हिन्दुओं में सच्ची एकता होना असंभव ही दिखाई देता है, क्योंकि हमारे डर से मुसलमान भाई गोवध का त्याग कर देंगे इसे मैं अधर्म की आशा मानता हूँ। मैं नहीं मानता कि गोरक्षिणी सभाओं के प्रयासों से गोवध की संख्या में कुछ भी कमी हुई हो। ऐसा मानने का मुझे एक भी कारण नहीं मिला। मैं अपने-आप को कट्टर हिन्दू मानता हूँ। मेरा यह खयाल है कि [illegible] शुद्ध रूप में हिन्दू-धर्म का पालन करनेवाला गोवध करनेवाले की हत्या करके गाय को नहीं बचा सकता। हिन्दुओं के पास गाय को बचाने का एक ही उपाय है और वह यह है कि वे गाय का वध न देख सकें तो अपना

बलिदान दे दें। इस प्रकार योग्य अधिकारी हिन्दू थोड़े-से भी बलिदान दे दें, तो मुझे विश्वास है कि अधिकांश मुसलमान भाई गोवध का त्याग कर देंगे। परन्तु यह तो सत्याग्रह हुआ, यह तो विनय हुई। जैसे मैं अपने भाई से कुछ भी इन्साफ चाहूँ, तो अपने पर कष्ट झेलकर ही चाह सकता हूँ। अपने भाई को दुःख देकर नहीं माँग सकता। हक से तो कुछ माँगा ही नहीं जा सकता। अपने भाई के विरुद्ध मुझे एक ही हक है और वह यह है कि मैं मर मिटूँ। जब हिन्दुओं के हृदयों में ऐसा शुद्ध प्रेमभाव स्फुरित हो उठे, तभी हिन्दू-मुस्लिम एकता की आशा रखी जा सकती है। जैसे मैं हिन्दू भाइयों के साथ बातचीत करूँ वैसे ही मुसलमान भाइयों के साथ बातचीत करना चाहिए। उन्हें जान लेना चाहिए कि हिन्दुओं के प्रति उनका क्या कर्तव्य है। दोनों के बीच यह स्पर्धा ही रहे, दोनों अपने हकों के लिए कोशिश न करें और फर्ज अदा करने का ही प्रयत्न करें, तभी बहुत वर्षों से चले आ रहे भेद-भाव मिट सकते हैं। दोनों के मन में एक-दूसरे के धर्म के लिए आदर होना चाहिए। कोई एक-दूसरे का बुरा एकान्त में भी न चाहे और कोई कड़े शब्द काम में ले तो उसे ऐसा करने से रोकने के लिए विनयपूर्वक समझाये। इस प्रकार महान् प्रयत्न हो तभी भेदभाव मिट सकता है। जब ऐसा करने को बहुत से हिन्दू और बहुत-से मुसलमान तैयार हो जायँ, तब हमारा किया हुआ व्रत सुशोभित हो। इस व्रत की महत्ता और कठिनाई आसानी से समझ में आ सकती है। मुझे आशा है कि इस शुभ अवसर पर और जिस समय देश में सत्य का बड़ा आग्रह हो रहा हो वह अवसर शुभ ही है—ऐसे अवसर पर मैं चाहता हूँ कि हम एकता का व्रत लें। इसके लिए प्रमुख मुसलमान भाई और प्रमुख हिन्दू भाई शुरू में मिलकर खूब विचार करें। बाद में इकट्ठे होकर वे एक निश्चय पर पहुँच सकें, तो मैं अवश्य व्रत लेने की सलाह दूँगा। ऐसा प्रयत्न जो अभी हो रहा है, यदि जारी रहा, तो मुझे उम्मीद है कि थोड़े ही दिनों में हम उसका फल देख लेंगे। व्यक्तिगत रूप में तो व्रत आज भी लिया जा सकता है और मैं चाहता हूँ कि

बहुत-से हिन्दू-मुसलमान सभा लेते रहें। परन्तु मेरी चेतावनी तो केवल बड़े समूहों से व्रत लिवाने के बारे में ही है। मेरी राय के अनुसार हम व्रत लें, तो यह इस प्रकार होना चाहिए :

"हम ईश्वर—खुदा को हाजिर जानकर प्रतिज्ञा लेते हैं कि हम हिन्दू और मुसलमानों को सगे भाइयों की तरह मानकर दोनों में जरा भी भेदभाव नहीं रखेंगे एक-दूसरे के दुःख में दुःखी होंगे और उसमें अपनी शक्ति के अनुसार पूरा भाग लेंगे। हम एक-दूसरे के धर्म का किसी भी प्रकार विरोध न करेंगे एक-दूसरे की धार्मिक भावनाओं को नहीं दुखायेंगे, एक-दूसरे के धर्म के पालन में दखल नहीं देंगे और एक-दूसरे के साथ आदरपूर्वक व्यवहार करेंगे और धर्म के बहाने कभी एक-दूसरे की हत्या नहीं करेंगे।"

८४ १९

(ख)

स्वदेशी व्रत . १

स्वदेशी-व्रत लेने की जो भावना लोगों में आ गयी है, वह अत्यन्त सुन्दर है। फिर भी मेरे खयाल से इस व्रत के पालन में जो कठिनाइयाँ हैं, उनकी हमें पूरी तरह कल्पना हो गयी प्रतीत नहीं होती। हमेशा जो व्रत लिये जाते हैं, वे केवल कठिन वस्तुओं के लिए ही होते हैं। बहुत प्रयत्न करने पर भी जब हम किसी कार्य में सफलता प्राप्त नहीं करते, तब व्रत लेकर अपने-आपको इस प्रकार बाँध लेते हैं कि उसमें से छूट ही न सकें। इसके सिवा अन्य कृतियों को व्रत माना ही नहीं जा सकता। यह कहने से कि जहाँ तक हो सकेगा, अमुक काम करेंगे व्रत लिया नहीं कहा जा सकता। यदि यह कहकर कि यथाशक्ति स्वदेशी चीजें ही काम में लेंगे, हम स्वदेशी-व्रतधारी कहला सकते हों, तब तो वाइसराय से लेकर मजदूर

तब थोड़े ही आदमी होंगे, जो यथाशक्ति इस व्रत का पालन करनेवाले न हों! किन्तु हम इस पंक्ति से बाहर निकलकर बहुत अधिक काम करना चाहते हैं। उस कार्य में और उपर्युक्त कार्य में उतना ही अन्तर है जितना अन्य कोषों और शब्दकोष में है। इस प्रकार स्वदेशी-व्रत लेने का विचार करें, तो इतना साफ प्रतीत हो जायगा कि अभी सब चीजों के लिए ऐसा व्रत लेना असंभव है। बहुत विचार करने पर मुझे तो बहुत वर्षों से स्पष्ट मालूम हो गया है कि यह व्रत पूरी तरह तो हमारे पहनने और काम में लेने के सूती रेशमी या ऊनी कपड़ों के लिए ही लिया जा सकता है। इतना-सा व्रत भी पूरी तरह पालने में शुरू में तो बहुत-सी मुश्किलें उठानी पड़ेंगी और यह ठीक ही है। हमने विदेशी वस्त्रों को प्रोत्साहन देकर घोर पाप किया है। हमने भारत में खेती के बाद दूसरे नम्बर का सबसे बढ़िया धंधा छोड़ दिया, जिसे कबीर ने उज्ज्वल किया है, उस धंधे का लगभग नाश होने आया है। मेरे बताये हुए स्वदेशी-व्रत का अर्थ यह है कि हम इस घोर पाप का प्रायश्चित्त करना चाहते हैं लगभग नष्ट हुए धन्धे का जीर्णोद्धार करना चाहते हैं और जो करोड़ों रुपया इस समय भारत के बाहर चला जाता है, उसको हम बन्द करना चाहते हैं। ऐसे परिणाम आसानी से हर्गिज नहीं लाये जा सकते। परन्तु कितनी ही कठिन होने पर भी यदि हम भारत की सच्ची उन्नति चाहते हैं, तो कभी-न-कभी यह व्रत लेना ही पड़ेगा। व्रत की सफलता तभी हो सकेगी जब हम अपना धर्म समझकर अपने मुल्क में पैदा हुआ कपड़ा ही पहनेंगे और दूसरे कपड़े का त्याग करेंगे। मित्र लोग कहते हैं कि अभी तो हमारे पास इतने कपड़े भी नहीं हैं। जो मिलें अभी मौजूद हैं, वे इतना कपड़ा दे नहीं सकतीं। इस विचार में बड़ा दोष है। भारत का ऐसा सौभाग्य नहीं कि तीस करोड़ मनुष्य एक ही बार यह व्रत ले लें। अधिक आशा रखनेवाला मनुष्य भी अभी तो लाखों की संख्या की ही आशा रख सकता है। उनके लिए पूरा कपड़ा जुटाने में मुझे कठिनाई नहीं दीखती परन्तु

जहाँ धर्म-भावना पैदा हो जाती है, वहाँ कठिनाई के विचार की गोंजाइश ही नहीं रहती है। भारत का जलवायु ऐसा है कि उसमें हम थोड़े बहुत कपड़ों से गुजर कर सकते हैं। यह कहने में अत्युक्ति नहीं है कि हममें अधिकतर लोग तीन-चौथाई कपड़े केवल व्यर्थ काम में लेते हैं। जब बहुत-से लोग यह व्रत ले लेंगे, तब बहुत से चरखे और करघे काम करने लगेंगे। कारीगरों की पूँजी अटूट है। जुलाहे केवल प्रोत्साहन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। मुख्य आवश्यकताएँ दो हैं त्याग की और प्रामाणिकता की। यह तो स्वयंसिद्ध बात है कि व्रत लेने के लिए इन दोनों गुणों की जरूरत है। परन्तु स्वदेशी जैसा महाव्रत पालन करना लोगों के लिए आसान बना देने के लिए व्यापारियों को भी इन गुणों की आवश्यकता पड़ेगी। प्रामाणिक और त्यागी व्यापारी केवल देश की रुई का ही सूत कतवायेंगे और उसीसे कपड़ा बुनवायेंगे। रंग भी देश में पैदा हो सके, वही काम में लेंगे। जहाँ मनुष्य निश्चय कर लेता है, वहाँ वह कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति प्राप्त कर लेता है।

विदेशी वस्त्रों की होली जलाओ

थोड़े कपड़ों से काम चला लेने का त्याग काफी नहीं। सम्पूर्ण स्वदेशी-व्रत के लिए यह भी जरूरी है कि हमारे पास जो विदेशी कपड़े हों, उनकी होली जला दी जाय। यदि हमें साबित हो गया हो कि विदेशी वस्त्रों का उपयोग करके हमने अपराध किया है भारत को अपार हानि की है, धुनारों का नाश किया है, तो ऐसे पाप से सने हुए कपड़े आग में जाने के ही लायक हैं। इस अवसर पर स्वदेशी और बॉयकॉट का भेद समझ लेने की आवश्यकता है। स्वदेशी धर्मभावना है। यह प्रत्येक मनुष्य का स्वाभाविक कर्तव्य है। उसमें शीलसंग्रह है। स्वदेशी-व्रत बैर लेने या सजा देने के इरादे से लिया ही नहीं जा सकता। स्वदेशी-व्रत किसी अन्य घटना पर आधार नहीं रख सकता। बॉयकॉट केवल दुनियादारी का और

राजनैतिक हथियार है। उसमें द्वेष की भावना है, सजा देने की वृत्ति है। बॉयकॉट में मैं तो लोगों की अन्त में बहुत हानि ही देखता हूँ। जो सदा के लिए ही सत्याग्रही रहना चाहता है, वह बॉयकॉट की हलचल में शरीक भाग नहीं ले सकता। संपूर्ण रूप में सत्याग्रह पालन करनेवाला स्वदेशी-व्रत के सिवा-व्रत नहीं सकता। बॉयकॉट में यह अर्थ मान लिया गया है, यह सुझाव भी हुआ है कि जब तक रौलट बिल रद न हो जाय तब तक ब्रिटिश माल का बॉयकॉट किया जाय और जब वह बिल रद हो जाय तब वह बॉयकॉट उठा लिया जाय। इस बहिष्कार में जापान या दूसरे विदेशों का बना हुआ माल हो तो भी हमारे काम आ सकता है। यदि विदेशी माल ही लेना उचित है, तब तो अंग्रेजों के साथ मेरा राज्य-सम्बन्ध होने के कारण मैं अंग्रेजी माल ही लूँगा और उस स्थिति को उचित समझूँगा। अंग्रेजी माल का बहिष्कार करने में हम अंग्रेज जनता को सजा देने के दोष में फँसते हैं। हमें अंग्रेज जनता से तो कोई झगड़ा नहीं है। झगड़ा अधिकारी-वर्ग के साथ है। परन्तु सत्याग्रह के कानून के अनुसार तो हम अधिकारी वर्ग के प्रति भी द्वेष नहीं कर सकते वैरभाव नहीं रख सकते, इसलिए बहिष्कार को अंगीकार करना मुझे तो किसी भी प्रकार उचित नहीं जान पड़ता। उपर्युक्त ढंग से संकुचित स्वदेशी व्रत पूरी तरह लेना हो तो इस प्रकार लिया जा सकता है। "मैं ईश्वर को साक्षी मानकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि आज से अपने इस्तेमाल के लिए भारत की रूई, रेशम या ऊन से बने हुए कपड़े का ही उपयोग करूँगा। मैं विदेशी कपड़े का सर्वांश में त्याग करूँगा और मेरे पास जो विदेशी कपड़े होंगे, उन्हें भस्म कर दूँगा।

मुझे आशा है कि यह प्रतिज्ञा लेने को बहुत-से स्त्री-पुरुष तैयार हो जायेंगे। बहुत-से स्त्री-पुरुष तैयार हों तभी सार्वजनिक व्रत लेना ठीक होगा। थोड़े-से स्त्री-पुरुष भी ऐसा व्रत सार्वजनिक रूप में ले सकते हैं। मगर स्वदेशी को जल्दी ही व्यापक स्वरूप देने के लिए बहुत-से लोगों की जरूरत है। जिन्हें यह आन्दोलन पसन्द हो उन्हें इसे अति शीघ्र शुरू

कर देना चाहिए; व्यापारी वर्ग से मिलना चाहिए, इतने पर भी यह चेतावनी दे देने की जरूरत है कि जल्दबाजी से कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। दो दिन देर से होने में मुझे हर्ज मालूम नहीं होता, परन्तु स्वदेशी की यह पक्की पाये, यह देखने की मेरी तीव्र इच्छा है। मेरा अनुभव है कि जब सत्याग्रह का जबरदस्त आन्दोलन हो रहा है, ऐसे समय इस प्रकार की हलचल आसानी से चल सकती है।

९ ४ १९

(ग)

स्वदेशी-व्रत २

स्वदेशी-व्रत लेने की पहली चर्चा छह तारीख को जब हजारों पुरुष और कुछ स्त्रियाँ समुद्र-तट पर खड़ी थीं उस समय हुई; परन्तु उस समय व्रत नहीं लिया गया। अब स्वदेशी की चर्चा शुरू हो चुकी है और हमें दिशा भी मालूम हो गयी है। स्वदेशी व्रत लेना हमारा धर्म है। भारत की वयो सुखदायी इसीमें है। भारत में उत्पन्न होने और बननेवाली चीजों का उपयोग छोड़कर भारत से बाहर की चीजों का इस्तेमाल करना भारत का द्रोह करने के बराबर है मनमानी है। जो वस्तु हमारे देश में पैदा हो सकती हो वह हमें पसन्द न आवे और इसलिए हम विदेशी वस्तु काम में लें, यह तो विदेशी बन जाने के बराबर है। हमारे देश की आबोहवा से हमारे देश की जमीन से, दूसरे देश की आबोहवा और जमीन अच्छी होने पर भी जैसे हम देश का त्याग नहीं करते वैसे ही यह स्पष्ट मालूम होता है कि हम अपने देश की वस्तु का भी त्याग नहीं कर सकते। सन् १९१७-१८ में लगभग पचास करोड़ रुपये का विदेशी सूती माल भारत में आया था और चार करोड़ से ऊपर का रेशम आया था। हमारी आबादी तीस करोड़ है, इसलिए हमने प्रतिव्यक्ति उस साल दो रुपये कपड़े के लिए

बाहर भेज दिये। उसका बदला देश के लिए भुखमरी है। तीन करोड़ से ज्यादा आदमियों को हिन्दुस्तान में एक ही बार खाने को मिलता है। जब भारत में घर-घर रुई की कताई का काम होता था और असंख्य मनुष्य कपड़ा बुनते थे, उस समय ऐसी भुखमरी नहीं थी। अब भी लोग अपने धर्म में चूकें तभी भुखमरी आदि उपद्रव हों, तो इसमें क्या आश्चर्य! इस बीमारी का इलाज स्वदेशी-व्रत ही हो सकता है, इसलिए नीचे बताया हुआ व्रत तैयार किया गया है। उसमें दो प्रकार बताये गये हैं। पहला व्रत मात्रा में शुद्ध है। परन्तु सबसे शुद्ध व्रत तो यही हो सकता है, जिसमें हाथ कते सूत के हाथ से बुने हुए कपड़े ही पहनने की छूट हो। बुनाई का धंधा अस्तव्यस्त हो जाने से इस समय यह व्रत लेना लगभग असंभव है, परन्तु तैयार किया हुआ व्रत लेनेवाले उपर्युक्त आदर्श को स्वीकार कर लेंगे, तो थोड़े ही समय के भीतर हम हाथ-कते सूत के कपड़े प्राप्त कर सकेंगे।

मैं बता चुका हूँ कि स्वदेशी और बॉयकॉट में बहुत बड़ा अन्तर है। मुझे तो विश्वास है कि बॉयकाट से भारत का कोई लाभ नहीं होगा। यह तो बड़ों की ईर्ष्या से नाक काटने के समान है।

क्या हम रौलट बिल से होनेवाले दर्द को मिटाने के लिए अंग्रेजी माल का बहिष्कार करके शासन को पैर पैंसान देंगे? हकीकत तो यही है कि स्वदेशी का रौलट कानून के विरुद्ध आन्दोलन से कोई सम्बन्ध नहीं है। जब सत्याग्रह जैसी बड़ी हलचल हो रही हो तब लोग अपने कर्तव्य का विचार करने लग जाते हैं। यही बात स्वदेशी के बारे में हुई है। रौलट कानून मिट जायेंगे भारत ब्रिटिश साम्राज्य में एक मर्यादित हिस्सेदार की स्थिति का उपभोग करने लगेगा तब भी हमें स्वदेशी-व्रत का पालन तो करना ही पड़ेगा। उस समय हमारा स्वदेशी-व्रत सीमित नहीं होगा, परन्तु हम अपनी ज्यादा वस्तुएँ भारत में ही पूरी कर लेने की शक्ति रखते होंगे। इस स्वदेशी-व्रत में हम अंग्रेज भाइयों से भी शरीक होने का अनुरोध करेंगे।

लाखों आदमी स्वदेशी-व्रत पालन कर सकें, इसके लिए व्यापारिक प्रामाणिकता की पूरी तरह जरूरत होगी। मिल-मालिकों को स्वदेशी पर प्रीति रखकर अपने भाव तय करने होंगे। बड़े व्यापारी और छोटे व्यवसायी, जिनसे करोड़ों गरीब लोग कपड़ा खरीदते हैं, जब तक ईमानदार नहीं बनेंगे, तब तक स्वदेशी-व्रत आगे बढ़ ही नहीं सकता, इसमें हमें जरा भी शक नहीं है।

देश में व्यापारियों को भी स्वदेशाभिमान का जोश आ गया है। वे देश के कल्याण के लिए अपने व्यवहार में गरीबों पर दया करके उचाई रखेंगे, इस विश्वास पर जिन लोगों ने व्रत ले लिया है, उन्होंने यह व्रत लोगों के सामने रखने का निश्चय किया है।

जिनके पास अभी विदेशी कपड़े हैं, उन्हें व्रत लेने में संकोच होता हुआ पाया जाता है। यह बात स्वाभाविक किन्तु दुःखद है। स्वदेशी-व्रत से हम बड़े परिणाम लाना चाहते हैं। वे परिणाम कुछ भी त्याग किये बिना हरगिज नहीं आ सकते। यह आशा भी रखी जाती है कि स्वदेशी-व्रत के साथ-साथ सादगी भी आ जायगी। जो सादे और अधिक टिकाऊ कपड़े लेंगे, वे रुपये की बचत करके विदेशी कपड़ों में खर्च हुए रुपये का भाग थोड़े बरसों में पूरा कर सकेंगे। इसलिए चेतावनी दे देने की जरूरत है कि स्वदेशी कपड़ों का भण्डार एकदम कोई न भर ले, यह जरूरी है। भारत में कोई इतना कपड़ा तो तैयार नहीं है कि हम सब चार-चार, पाँच-पाँच साल का ढेर अभी से रख सकें। जब स्वदेशी को काम में लेनेवाले बहुत-से मनुष्य हो जायेंगे, तब व्यापारी हर जगह स्वदेशी कपड़ा बेचेंगे और दिन-दिन अधिक कपड़ा बुना जाने लगेगा। स्वदेशी-व्रतवालों को विश्वास रखना चाहिए कि उनकी जरूरतें पूरी होने लायक कपड़ा समय-समय पर मिल सकेगा। इतना ही नहीं, आवश्यक में देखा जाय, तो हरएक मनुष्य का यह निश्चय होना चाहिए कि वह अपना कपड़ा अपने ही घर में बुन लेगा—और ऐसा न कर सके, तो अपने बुनवा देगा और उनके

द्वारा अपना कपड़ा तैयार करा लेगा। इसमें कुछ भी खोने की गुंजाइश नहीं रहेगी और सब अपने अपने लिए टिकाऊ और पवित्र कपड़ा तैयार करा लेंगी। यह हमारी पुरानी प्रथा है।

बहनों से

स्वदेशी का आधार बहनों पर है। मुझे आशा है कि हजारों बहनें कितने ही अच्छे लगनेवाले विदेशी कपड़ों का त्यागकर इस समय जैसे भी स्वदेशी वस्त्र मिलें उनसे अपना गुजर करके व्रत लेंगी। हमने अब तक विदेशी कपड़ा पहनने की जो भूल की है, उसके लिए कुछ-न-कुछ असुविधाएँ भुगतनी ही चाहिए। जो विदेशी कपड़े हों उनका दूसरा उपयोग किया जा सकता है। वे कपड़े भेजे जा सकते हैं। विदेशों में बिकने को भी भेजे जा सकते हैं। बहनों से लोग यह भी उम्मीद रख सकते हैं कि वे बच्चों को तुरत स्वदेशी कपड़े पहनाने लगेंगी। *व्रत लेनेवालों के सुभीते के लिए दफ्तर खोल दिया जायगा।* उसका इंतजाम हो रहा है। यह सब प्रबंध पूरा होने पर समाचार दिया जायगा।

१४-५ १९

प्रतिज्ञा

शुद्ध स्वदेशी-व्रत : मैं ईश्वर को साक्षी रखकर प्रतिज्ञा लेता हूँ कि आज से मैं भारत में ऐसे कपड़ों का उपयोग नहीं करूँगा जो भारत में कते और बुने न हों।

यह व्रत मैं जीवनभर के लिए / वर्ष के लिए लेता हूँ।

मिश्र स्वदेशी-व्रत : ईश्वर को साक्षी मानकर मैं प्रतिज्ञा लेता हूँ कि आज से ऐसे कपड़ों का भारत में उपयोग नहीं करूँगा जो भारत में बुने हुए न हों।

सूत, ऊन या रेशम विदेशी हो और विदेशों में कता हो, तो उसकी इस व्रत में बाधा नहीं है।

स्पष्टीकरण : शुद्ध स्वदेशी तो यह है, जिसमें हाथ का कता सूत और हाथ का बुना कपड़ा ही काम में लिया जाय। परन्तु ऐसा कपड़ा फिल हाल इकट्ठे मनुष्यों के लिए मिलना असमव दिखाई देता है, फिर भी यह आशा रखी जाती है कि स्वदेशी और सच्ची कला को पूरी तरह चाहने वाले स्वयं कुछ अड़चन उठाकर भी हाथ-कते सूत के और हाथ के बुने हुए कपड़े ही नहीं पहनेंगे बल्कि चरखे और हाथ-करघे का प्रचार करने का भी भरसक प्रयत्न करेंगे।

टिप्पणी (१) : इतना याद रखना आवश्यक है कि स्वदेशी आन्दोलन का रौलट कानून रद्द कराने के आन्दोलन से कोई संबंध नहीं है। ये कानून मिट जाने से या और कोई अधिकार मिल जाने से या सुधार हो जाने से स्वदेशी-व्रत में या स्वदेशी के प्रचारार्थ होनेवाले आन्दोलन में कोई तब्दीली नहीं हो सकती।

टिप्पणी (२) : प्रतिज्ञा लेनेवालों के पास जो कपड़ा हो, उसे जला देने की सूचना बिल्कुल छोड़ दी गयी है, क्योंकि इस समय इस सूचना से अनर्थ होकर यूरोपियन लोगों के विरुद्ध कोप होने का डर है। इस प्रकार कोप-वृद्धि हो ऐसी जरा भी कल्पना इस स्वदेशी आन्दोलन को आरंभ करनेवालों के मन में हरगिज नहीं है। स्वदेशी-व्रत लेनेवालों को इतना तो याद रखना ही चाहिए कि प्रतिज्ञा लेते समय जो विदेशी कपड़ा उनके पास हो, उसका वे हरगिज उपयोग नहीं कर सकते।

टिप्पणी (३) : मुसलमानों, पारसियों, ईसाइयों और यहूदियों के लिए जिन कपड़ों में धार्मिक अर्थ समाया हुआ होगा उनके विदेशी होने पर इस्तेमाल करने में उपर्युक्त स्वदेशी-व्रत से प्रतिबन्ध नहीं है।

● ● ●

हाथ अपना कपड़ा तैयार करा लेगा। इसमें कुछ भी धोखे की गुंजाइश नहीं रहेगी और सब अपने अपने लिए टिकाऊ और पवित्र कपड़े तैयार करा लेंगे। यह हमारी पुरानी प्रथा है।

बहनों से

स्वदेशी का आधार बहनों पर है। मुझे आशा है कि हमारी ब[illegible] कितने ही अच्छे लगनेवाले विदेशी कपड़ों का त्यागकर इस समय भी स्वदेशी वस्त्र मिलें, उनसे अपना गुजर करके व्रत लेंगी। इ[illegible] तक विदेशी कपड़ा पहनने की जो भूल की है, उसके लिए यु[illegible] प्रायश्चित्त मुमकिन ही चाहिए। जो विदेशी कपड़े हों उ[illegible] उपयोग किया जा सकता है। वे कपड़े भेजे जा सकते हैं। बिकने को भी भेजे जा सकते हैं। बहनों से लोग उम्मीद रख सकते हैं कि वे कपड़ों को तुरन्त स्वदेशी ब[illegible] लगेंगी। व्रत लेनेवालों के सुभीते के लिए दफ्तर खोल [illegible] उसका इंतजाम हो रहा है। यह सब प्रबंध पूरा होने [illegible] दिया जायगा।

१४-५ १९

प्रतिज्ञा

शुद्ध स्वदेशी-व्रत मैं ईश्वर को साक्षी रखकर [illegible] आज से मैं भारत में ऐसे कपड़ों का उपयोग नहीं क[illegible] करूँ और बुने न हों।

यह व्रत मैं जीवनभर के लिए / वर्ष के लिए लेता [illegible] मिश्र स्वदेशी-व्रत ईश्वर को साक्षी मानकर कि आज से ऐसे कपड़ों का भारत में उपयोग नहीं [illegible] [illegible]

गिरफ्तार कर ली गयी हैं। इससे लोग और भी बिगड़े और ज्यादा उत्पात किया। ऐसा होने से पूज्य बहन का भी अपमान हुआ है। उनके निमित्त से घोर कर्म हुए हैं। इन कामों से लोगों का कोई लाभ नहीं हुआ। उनसे हानि ही हुई है। जो जायदादें जलायी गयीं, वे हमारी ही थीं और हमारे ही खर्च से वे जायदादें फिर बनेंगी। इस समय दूकानें बन्द रहती हैं, इससे जो नुकसान हो रहा है वह भी हमारा ही हो रहा है। शहर में मार्शल लॉ जारी है इसमें भी आतंक फैलता है, उसका कारण भी रक्तपात ही है। मार्शल लॉ जब-जब होता है, तभी कुछ निर्दोष मनुष्यों के प्राण जाते हैं। ऐसा ही इस बार भी हुआ बताते हैं। ऐसा हुआ हो तो उसका दोष भी उन घटनाओं पर ही है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि अहमदाबाद में हुई घटनाओं से कुछ भी लाभ नहीं हुआ, परन्तु सत्याग्रह को भारी नुकसान पहुँचा है। यदि मेरे पकड़े जाने के बाद लोगों ने केवल शान्ति रखकर आन्दोलन किया होता, तो अब तक तो रौलट-कानून उठ गये होते अथवा उठने के किनारे होते। अब यदि इन कानूनों के रद्द होने में देर हो तो क्या भी आश्चर्य की बात न होगी। जब शुक्रवार के दिन मैं छूटा, तब मेरा यह इरादा था कि मैं रविवार को वापस दिल्ली की तरफ जाकर गिरफ्तार होने का प्रयत्न करूँ। इससे सत्याग्रह को अधिक बल मिलता। अब तो दिल्ली जाने के बजाय मेरा सत्याग्रह स्वयं अपने विरुद्ध होगा और जैसे रौलट-कानून रद्द कराने के लिए सत्याग्रह करके मृत्यु पर्यन्त भी लड़ने का निश्चय है वैसे ही जो रक्तपात हुआ, उसके सम्बन्ध में मुझे स्वयं अपने विरुद्ध सत्याग्रह करने का अवसर आ गया है। यदि हम अब पूरी तरह शान्ति नहीं रख सकते, जान-माल की हानि करना बन्द नहीं कर देते तो मुझे अपने शरीर का बलिदान देकर भी अपने विरुद्ध सत्याग्रह करना होगा। जब तक मुझे इतमीनान नहीं हो जाता कि अहमदाबाद में लोग फिर भूल नहीं करेंगे, तब तक मुझसे जेल-यात्रा कैसे हो सकती है? जिन्हें सत्याग्रह में शरीक होना है अथवा शरीक न होकर भी भिन्न सत्याग्रह में मदद देनी है, उन्हें मारकाट करने से सर्वथा मुक्त

[रौलट-सत्याग्रह के समय अहमदाबाद में हुए दंगों के सम्बन्ध में भाषण तथा पत्रिकाएँ इस परिशिष्ट में दी जाती हैं।]

(क)

सत्याग्रह-आश्रम के भाषण

[साबरमती के सत्याग्रह-आश्रम में अहमदाबाद के भाइयों की सभा में ता. १४-४-१९ को दिया गया भाषण ।]

भाइयो,

आज मैं जो कहना चाहता हूँ, वह मुख्यतः भाइयों के प्रति ही है। अहमदाबाद में जो घटनाएँ पिछले पाँच दिनों में हुई हैं, उनसे अहमदाबाद की बड़ी बदनामी हुई है। ये घटनाएँ मेरे नाम पर हुई हैं इसलिए मैं लज्जित हूँ। जो घटनाएँ हुईं उनसे उनमें भाग लेनेवालों ने मेरा सम्मान नहीं, बल्कि मेरा अपमान किया है। ऐसा करने की अपेक्षा यदि वे मुझे तलवार भोंककर मार देते, तो मैं अधिक खेद न मानता। मैं सैकड़ों बार कह चुका हूँ कि सत्याग्रह में मारपीट नहीं की जा सकती किसी पर जोर-जुल्म नहीं किया जा सकता, किसीके माल को नुकसान नहीं पहुँचाया जा सकता। परन्तु इसमें तो सत्याग्रह के निमित्त से मकान जलाये, जोर-जुल्म करके हथियार ले लिये जबरन रुपया ऐंठा जबरदस्ती करके गाड़ियाँ बन्द कर दीं, तार तोड़ डाले निर्दोष मनुष्यों को मार डाले और मकान लूट लिये। ऐसे कामों से मैं यदि जेल से छूटता हूँ या फाँसी से छूटता हूँ, तो भी ऐसे छुटकारे को पसन्द नहीं करूँगा। मैं निश्चित रूप से कह देना चाहता हूँ कि मेरा छुटकारा ऐसे रक्तपात से नहीं हुआ। फिर यह निर्दय अफवाह भी अहमदाबाद में उड़ी कि पूज्य अनसूया बहन

गिरफ्तार कर ली गयी हैं। इससे लोग और भी चिढ़े और उत्पात किया। ऐसा होने से पूज्य बहन का भी अपमान हुआ है। उनके निमित्त से और कर्म हुए हैं। इन कामों से लोगों का कोई लाभ नहीं हुआ। उनसे हानि ही हुई है। जो जायदादें जलायी गयीं, वे हमारी ही थीं और हमारे ही खर्च से वे जायदादें फिर बनेंगी। इस समय दूकानें बन्द रहती हैं, इससे जो नुकसान हो रहा है वह भी हमारा ही हो रहा है। शहर में मार्शल लॉ जारी है इसमें जो आतंक फैलता है उसका कारण भी रक्तपात ही है। मार्शल लॉ जब-जब होता है, तब कुछ निर्दोष मनुष्यों के प्राण जाते हैं। ऐसा ही इस बार भी हुआ बताते हैं। ऐसा हुआ हो तो उसका दोष भी उन घटनाओं पर ही है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि अहमदाबाद में हुई घटनाओं से कुछ भी लाभ नहीं हुआ परन्तु सत्याग्रह को भारी नुकसान पहुँचा है। यदि मेरे पकड़े जाने के बाद लोगों ने केवल शान्ति रखकर आन्दोलन किया होता तो अब तक तो रौलट-कानून उड़ गये होते अथवा उड़ने के किनारे होते। अब यदि इन कानूनों के रद्द होने में देर हो, तो वह भी आश्चर्य की बात न होगी। जब शुक्रवार के दिन मैं छूटा तब मेरा यह इरादा था कि मैं रविवार को वापस दिल्ली की तरफ जाकर गिरफ्तार होने का प्रयत्न करूँ। इससे सत्याग्रह को अधिक बल मिलता। अब तो दिल्ली जाने के बजाय मेरा सत्याग्रह स्वयं अपने विरुद्ध होगा और जैसे रौलट-कानून रद्द कराने के लिए सत्याग्रह करके मृत्यु पर्यन्त भी लड़ने का निश्चय है वैसे ही जो रक्तपात हुआ, उसके सम्बन्ध में मुझे स्वयं अपने विरुद्ध सत्याग्रह करने का अवसर आ गया है। यदि हम सब पूरी तरह शान्ति नहीं रख सकें, धन-जन की हानि करना बन्द नहीं कर दें तो मुझे अपने शरीर का बलिदान देकर भी अपने विरुद्ध सत्याग्रह करना होगा। जब तक मुझे इत्मीनान नहीं हो जाए कि यह अहमदाबाद के लोग फिर भूल नहीं करेंगे तब तक मुझसे बैठ-रहना कैसे हो सकता है। जिसे सत्याग्रह में शरीर देना है उसका [illegible] भी फिर सत्याग्रह में मदद देती है उन्हें सत्याग्रह करने में आपत्ति कुछ

रहना चाहिए। मैं सुधारा पकड़ा जाऊँ या मेरा कुछ भी हो जाय तो भी सत्याग्रह की सहायता करनेवाले किसीके जान-माल को नुकसान नहीं पहुँचा सकते। इस समय हमारा अविश्वास हो जाने से अंग्रेज स्त्री-पुरुष अपने अपने बंगले छोड़कर शाही बाग में रहते हैं। हम विचार करें, तो यह हमारे लिए बड़ा कलंकास्पद है। यह स्थिति जितनी जल्दी समाप्त हो सके, कर देनी चाहिए। हमें अंग्रेजों को भी अपने भाई समझकर अभयदान देना ही चाहिए। इसके बिना सत्याग्रह दुराग्रह है।

इसमें आपके और मेरे दो तरह कर्तव्य हैं। उनमें से एक यह संकल्प कर लिया जाय कि आइंदा हमसे कुछ काम न हो और दूसरा, फर्ज यह कि जो काम हो गये हैं उनके लिए पश्चात्ताप, प्रायश्चित्त करें। जब तक हम पश्चात्ताप न करें हमें अपनी भूल मालूम न हो और उसे हम सार्वजनिक रूप में स्वीकार न करें, तब तक हम अपने कर्तव्य में सुधार न कर सकेंगे। पहला प्रायश्चित्त तो यह है कि जिन्होंने जबरन हथियार छीने हैं, वे सब हथियार वापस दे दें। यदि आप सबको सचमुच पश्चात्ताप हुआ हो, तो आप सब कम-से-कम आठ आने और अधिक-से-अधिक जितना देना हो वहाँ जमा करा दें। इस रुपये का उपयोग उन लोगों के परिवारों के सहायतार्थ होगा जो हमारे दुष्कृत्यों से मारे गये हैं। इसमें हम कितना भी रुपया क्यों न दे दें, हमने जिस द्वेष और वैर का परिचय दिया है, उसका बदला नहीं चुका सकते। फिर भी थोड़ा-बहुत भी चन्दा देना हमारे पश्चात्ताप प्रकट करने की निशानी होगी। मेरी यह आशा और प्रार्थना है कि यह कहकर कि मैंने इस घोर कर्म में भाग नहीं लिया, एक भी आदमी रुपया देने से बच नहीं निकलेगा क्योंकि जिन्होंने इस कार्य में भाग नहीं लिया, वे सब यदि हिम्मत और बहादुरी से उसे बन्द करने का निश्चय करते, तो रक्तपात का और लूट मार और दंगा करनेवालों को अपने घोर कर्म का तुरन्त भान हो जाता। मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि हमने डर के मारे जो रास्ता दिया वह न देते और मौत का भय छोड़कर इस मकानों का बचाव करेर

में लग जाते और निर्दोष मनुष्यों की रक्षा में जुट जाते, तो बहुत कुछ कर सकते थे। मैं स्त्री-पुरुष दोनों में ऐसा साहस देखना चाहता हूँ। जब तक ऐसा साहस नहीं आ जाता तब तक दुष्ट मनुष्य हमें हमेशा अपनी सुरक्षा से डराकर हमसे सुरक्षा में भाग लिवाते रहेंगे। इसमें तो हम वीर्यहीन अर्थात् धर्महीन भी बन जाते हैं। वीरता के बिना अपने धर्म की रक्षा हो ही नहीं सकती। इसलिए जो पाप हुए हैं, उनमें हम सब अपने को हिस्सेदार मानें और इसलिए सभी को थोड़े से प्रायश्चित्त के रूप में चन्दा देना चाहिए। सभी जातियाँ अपना-अपना चन्दा वसूल करके इन एक-दो दिनों के भीतर अपनी-अपनी जाति के मुखियों की मारफत यहाँ भेज सकती हैं। मेरी यह भी सलाह है कि यदि आपसे बर्दाश्त हो सके, तो इस महान् पाप के लिए चौबीस घण्टे का उपवास भी रखें। यह उपवास सभी को अपना अपना खानगी रखना है। इसके लिए झुंड बनाकर स्नानादि करने की जरूरत नहीं, क्योंकि फिलहाल समूहों के रूप में लोगों का निकलना उचित नहीं होगा।

यह तो मैंने सब भाइयों को सलाह दी है यह सुझाया है कि आप क्या प्रायश्चित्त करें। परन्तु मैं जिस पर आपसे करोड़गुनी अधिक जिम्मेदारी है, क्या प्रायश्चित्त करूँ? सत्याग्रह सुझानेवाला मैं आप लोगों में चार साल से रहता हूँ। मैंने अहमदाबाद की सेवा में खास तौर पर कुछ भाग लिया है। अहमदाबाद के लोग मेरे विचारों से बिलकुल अपरिचित नहीं हैं। मुझ पर जो यह आरोप है कि मैंने बिना विचारे सत्याग्रह की लड़ाई में हजारों मनुष्यों को डाल दिया यह कुछ हद तक सही माना जायगा। यह आलोचना हो सकती है कि लड़ाई न हुई होती, तो यह मारकाट न होती। ऐसे दोषों के लिए एक प्रायश्चित्त तो, जो मेरे जैसे के लिए असह्य लगता है, मैं कर चुका हूँ। अर्थात् फिलहाल मुझे दिल्ली जाना मुल्तवी कर देना पड़ा है, सत्याग्रह का स्वरूप मुझे संक्षिप्त करने की सलाह देनी पड़ी है। यह मुझे घाव से भी ज्यादा दुःखद प्रतीत हुआ है। फिर भी यह प्रायश्चित्त काफी नहीं है। इसलिए मैंने तीन दिन का अर्थात् बहत्तर घंटे का उपवास करने का निश्चय किया है। मैं चाहता हूँ

कि इस निश्चय से किसीको पीड़ा न हो। आपके लिए जितना चौबीस घंटे का उपवास कठिन है, उससे कम मुश्किल मेरे लिए बहत्तर घण्टे का उपवास है। मैंने उतना ही प्रायश्चित्त लिया है, जितना मुझसे सहन हो सकता है। मैं इतना कष्ट उठाऊँगा, इस पर आपको जरा भी दया आती हो तो उस दया का एक ही *परिणाम मैं सोचता हूँ* और वह यह है कि आइन्दा ऐसे घोर कार्य में कोई भी अहमदाबादी भाग न ले। सब मानिये कि रक्तपात करके, मनुष्यों को सताकर, हम स्वराज्य नहीं ले सकते भारत का कोई लाभ नहीं करेंगे। मैं स्वयं तो इस मत का हूँ कि यदि भारत को मारकाट से स्वराज्य मिलता हो यदि अंग्रेजों से द्वेष रखकर, उनकी हत्या करके ही हम जो कुछ दुःख हो उसका निवारण कर सकते हों तो मैं खुद ही इस प्रकार मिलनेवाला स्वराज्य नहीं चाहता और जो दुःख हों उन्हें सहन कर लेना चाहता हूँ। सत्य के नाम पर अहमदाबाद मारकाट करे ऐसी स्थिति में जीना मैं कैसे चाहूँगा? गुजरात को कवि ने गर्वीला गुजरात विशेषण दिया है। उस गुजरात की राजधानी अहमदाबाद है। यहाँ धार्मिक हिन्दू और मुसलमान रहते हैं। उस राजधानी में घोर कर्म हों यह तो समुद्र में आग लगने जैसा हुआ। उसे कौन बुझा सकता है? इस आग में मेरे जैसे को तो मरना हो जाने की जरूरत है। इसलिए आप सबसे *अनुनयपूर्वक माँग करता हूँ कि अपने तीन दिनों के उपवास* के मैं जो परिणाम चाहता हूँ वे लाइये। जिस प्रेम के कारण आपने होश भूल कर अकार्य किये हैं, उसे आप अब जाग्रत कीजिये और यदि वह प्रेम जाग्रत रहे तो यह सावधानी रखिये कि ऐसा उपवास करने की नौबत न आने पाये जिससे मेरा देहपात हो जाय।

मुझे लगता है कि जो काम अहमदाबाद में हुए, वे युक्तिपूर्वक हुए दीखते हैं। इसलिए मैं निश्चित मानता हूँ कि उनमें किसी पढ़े-लिखे आदमी या आदमियों का हाथ होना चाहिए। मैं सख्तपूर्वक कहूँगा कि वे पढ़े हुए भले ही हों परन्तु गुने हुए नहीं हैं। उनकी बातों में आकर हमने अकार्य किये हैं। मैं सलाह देता हूँ कि भविष्य में इस तरह बातों में

मत जाना। मैं तो ऐसे जो आदमी हों, उनसे भी अनुरोध करूँगा कि वे बार-बार विचार करें। उनसे और आप सबसे मैं अपना 'हिन्द-स्वराज्य' पढ़ने की सिफारिश करता हूँ। अब तो मुझे ऐसे समाचार मिले हैं कि हम 'हिन्द-स्वराज्य' छाप सकते हैं, उसमें कानून का कोई भंग नहीं होता।

मिलों के कताई-विभाग के मजदूर कुछ दिन से हड़ताल किये हुए हैं। उन्हें मैं सलाह देता हूँ कि वे तुरन्त काम पर चले जायँ। काम पर चले जाने के बाद जो भी माँग करनी हो सो की जाय और न्याय के तरीके से जो वृद्धि प्राप्त की जा सके, सो की जाय। मालिकों पर जोर-जुल्म करके वृद्धि कराना चाहोगे, तो अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने के समान होगा। सारी मिलों के मजदूरों को मेरी खास तौर पर सलाह है कि वे दंगों से बिल्कुल अलग रहें। यही उनका फर्ज है। मैं याद दिलाना चाहता हूँ कि ऐसा करने का उन्होंने पूज्य अनसूया बहन को और मुझे वचन दिया है।

मेरी सबसे प्रार्थना है कि सब अपने अपने कामों में लग जायँ।

(ख)

पत्रिका १

जो भाषण मैंने आपके सामने सोमवार को साबरमती आश्रम में दिया, उसमें उसी समय बहुत विस्तार नहीं कर सका था। परन्तु मैं अपने उद्गार लोगों के सामने थोड़ी-थोड़ी पत्रिकाओं द्वारा प्रकट करना चाहता हूँ। पहले तो आपको हिसाब देना चाहता हूँ। कल तक मेरे पास मेरे सूचित किये हुए फंड में ७०) आ चुके हैं। मेरा अनुरोध है कि इस फंड के बारे में अब भी ढिलाई न होनी चाहिए और अहमदाबाद में हिन्दियों को अपने कर्त्तव्य में चूकना नहीं चाहिए। इस फंड की उत्पत्ति तो प्रायश्चित्त के विचार से हुई है। परन्तु प्रायश्चित्त के लिए यह फंड जितना जरूरी है, उतना ही लोकोपयोग के लिए जरूरी है। काम में कूद

मनसुखभाई बहन तथा भाई कृष्णलाल देसाई के साथ सब पीड़ितों से अस्पताल में मिल आया। उनसे बातचीत की। मैं देखता हूँ कि हमें बहुत से घायल हुए मनुष्यों के परिवारों की सहायता करनी पड़ेगी। मृत्यु को प्राप्त हुए बाईस मनुष्यों का पता तो नहीं लगा। इनके सिवा और भी मौतें तो हुई ही हैं। इसलिए नागरिक के नाते हमारी साफ जिम्मेदारी है कि हम मृत परिवारों की खोज करें और उन्हें यथाशक्ति सहायता दें। मुझसे प्रश्न पूछा गया है कि यह रुपया किसके काम आयेगा? ऐसा लगता है कि जिन लोगों को भारी नुकसान हुआ है, उनको हम निपटा नहीं सकेंगे। इसलिए हम मृत और घायल हुए लोगों के परिवारों को थोड़ी-बहुत मदद देंगे। उनमें दो-तीन अमिल भाई हैं, उनके कुटुम्ब की सहायता करना हमारा प्रथम कर्तव्य है, क्योंकि उनकी मौत हमारे हाथों हुई है। ऐसा करने के लिए हमारे पास कोई बहाना नहीं था। ये मौतें केवल वैरभाव से ही हुई हैं। अब यदि हम पश्चात्ताप करते हों, तो हमारा फर्ज है कि हम उनके कुटुम्ब की मदद करें। यह हमारा कम-से-कम प्रायश्चित है। हमारे जो भाई मारे गये हैं, मैंने देख लिया कि उनमें से अधिकांश बिल्कुल निर्दोष थे। घायल होनेवालों में मैंने कुछ दस-बारह बरस के लड़के देखे। उन सबको मदद देना हमारा दूसरा कर्तव्य है। वीरमगाम से मेरे पास एक मनुष्य आया, जिसने अपने दो भाइयों की मृत्यु की बात कही। ऐसे और भी शायद आयें। यदि वीरमगाम अच्छा है, तो हम उन्हें भी निपटा लें। न है, तो मेरे ख्याल से हम मदद नहीं दे सकेंगे।

कुछ भाइयों का यह ख्याल है कि इस प्रकार आतंक फैलाकर नागरिकों को डराकर मनुष्यों को उखाड़कर हम हक ले सकते हैं। सत्य मार्ग में तो यह माना जाता है कि ऐसा करने से हक मिलें, तो उनका भी त्याग करना चाहिए। मैं स्वीकार करता हूँ कि जिस समय दोनों पक्ष पशुबल को माननेवाले होते हैं, तब जो ज्यादा जोर कर सके वह अपना खोया हुआ थोड़ा-सा प्राप्त कर लेता है। मेरा तीस वर्ष का अनुभव यह बताता है कि इस प्रकार प्राप्त करनेवाले को अन्त में कभी लाभ नहीं

होता। परन्तु इस विषय में भले ही दो मत हों, लेकिन इसमें तो दो मत हरगिज नहीं हैं कि पशुबल में हम सरकार से बहुत घटिया हैं। उनके शस्त्रबल के सामने हमारे पशुबल की कुछ भी बिसात नहीं। इसलिए मैं आदरपूर्वक कहना चाहता हूँ कि जो हमें ऐसा बल-प्रयोग करने की सलाह दें, वे भूल करते हैं और उनकी सलाह हम कभी न मानें। इस प्रकार लौकिक दृष्टि से देखते हुए हमारे पास एक ही वस्तु है और वह है सत्याग्रह अर्थात् धर्मबल। धर्मबल केवल सहनशक्ति से ही आ सकता है। दूसरे को दुःख देकर, पीड़ित करके, मारकर धर्मवृद्धि नहीं हो सकती। यदि हममें सचमुच धर्मवृत्ति होती, तो अहमदाबाद में हुई घटनाएँ संभव ही न होतीं। पचासी आदमी फसाद करें तो उन्हें रोकना भी हमारा काम है। अहमदाबाद के स्त्री-पुरुषों में धीरता आ जाय, तो दंगे भी शान्त हो जायँ। दंगाइयों को पशुबल से वश में करने की अपेक्षा धर्मबल अर्थात् सत्याग्रह द्वारा काबू में करना साफ तौर पर बहुत बड़ी बात है। हमने देख लिया कि अहमदाबाद के उपद्रव से लाभ तो नहीं हुआ। अपने छुटकारे के बारे में कह चुका हूँ कि उसका इन उपद्रवों से कोई सम्बन्ध नहीं। उपद्रव १ तारीख को शुरू हुए। मुझे बम्बई में छोड़ने का निश्चय ९ तारीख को हुआ। इसलिए उस निश्चय का उपद्रवों के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। फिर जिनका सत्याग्रह में विश्वास है, वे तो मुझे छुड़वाने के लिए ऐसा उपद्रव कर ही नहीं सकते। इस प्रकार उपद्रव से कुछ भी लाभ नहीं हुआ।

अब उसकी विशेष हानियों पर विचार करें। दफ्तर जलाये गये सो भी हमारे थे यह मैं सोमवार को याद दिला चुका हूँ। परन्तु उन पर हमारा अप्रत्यक्ष स्वामित्व है और उन्हें फिर से बनाने के लिए भी हमें खास तौर पर रुपया नहीं देना पड़ता इसलिए हम कह सकते हैं कि इसमें क्या हुआ? तारघर बन्द हो जाने से हमारे व्यापार को जो नुकसान पहुँचा है, उसका भी शायद हमारे मन पर असर न हो। परन्तु विद्यार्थियों का मंडप जला दिया इसका क्या अर्थ, यह जरा देखें। यह सुन रहा हूँ कि उसे किसी ठेकेदार ने बनाया था। यह सम्पत्ति

उस ठेकेदार की थी। उसका मूल्य लगभग १८) था। वह रुपया ठेकेदार की कौन दे? उसकी भावना की हम क्या कल्पना करें? उसे रुपया चुकाने का अफसरों ने तो विचार किया ही न होगा। मुझे खबर मिली है कि बहुत-सा जेवर चपूती माल के रूप में अदालत के सामने में था। उसकी कीमत का अन्दाज कोई ५) लगाते हैं, कोई इससे भी ज्यादा लगाते हैं। उस जेवर के सभी मालिकों का इसे पता नहीं है। वे यह जेवर खो बैठे हैं। सरकार तो वापस नहीं देगी और दे, तो भी हमारे रुपये से ही देगी। गरीब लोग जो अपना जेवर गँवा बैठे हैं वे तो शायद सरकार के पास जायेंगे भी नहीं। रा ब कुतबीदास का माल उनके घर से चुन-चुनकर निकाला गया और उसे जला दिया गया। यह कैसा इन्साफ? मुझे यह कहा गया है कि राय बहादुर की कारगुजारियाँ अच्छी नहीं थे लोगों को सताते हैं। यह भले ही संभव हो। परन्तु क्या ऐसे अफसरों की सम्पत्ति हम जला डालें? इस प्रकार लोग इन्साफ को अपने हाथ में ले लें तो लोक-रक्षक होने के बजाय लोग सदा के लिए केवल भयत्रासक स्थिति में ही रहेंगे। यदि हर किसी आदमी को किसी भी अफसर का कार्य अत्याचारपूर्ण मालूम हो और इसलिए उसे उस अफसर के जान-माल को हानि पहुँचाने का हक हो जाय तो एक भी अफसर सही-सलामत नहीं रह सकता। जहाँ ऐसी स्थिति हो वह देश सुखरा हुआ नहीं कहलाता। उसमें सभी लोग भयभीत दशा में रहते हैं। वीरमगाम में मुख्य क्लर्क को जिन्दा जला दिया गया यह कार्य कितना घोर है! उसने क्या अपराध किया था? अथवा किया था तो उसे अलग करने के लिए हमें साहस नहीं हुआ? निरपराध अंग्रेज सार्जेंट फ्रेजर की एक भारतीय के घर में रहा हो रही थी। वहाँ से उसे बाहर निकालकर उसके टुकड़े कर दिये गये इससे भारत को क्या फायदा हो सकता है? इतना परिणाम तो हो चुका कि हमारे और अंग्रेजों के बीच वैमनस्य बढ़ गया हमने निर्दोष मनुष्यों के प्राण गँवा दिये। उपद्रवी लोगों की संगति करके, उनकी मदद लेकर -

हक हासिल करने की कोशिश का एक ही नतीजा हो सकता है कि यह प्रयत्न सफल हो जाय तो भी हक मिले, उसे हम उपद्रवी लोगों की शर्त पर ही रख सकते हैं। इस प्रकार मिले हुए हक हक नहीं, परन्तु हमारी गुलामी की निशानी हैं। अहमदाबाद और वीरमगाम में जो हुआ है, वह हमारी बहादुरी की निशानी नहीं, उससे किसी भी प्रकार हमारी मर्दानगी साबित नहीं हो सकती। उससे तो हम केवल शर्म में डूबे हैं। जनता के कार्य को नुकसान पहुँचा है। सत्याग्रह को सीमित करना पड़ा है। यह हुक्म जिन दने में मेरा यही हेतु है कि हमारी मनुष्य, जो ऐसा रक्तपात कभी पसन्द नहीं करते, विवश होकर, दीन बनकर, बैठे रहे और इस उपद्रव को सहन करते रहे। इससे विदित होता है कि हममें इस समय धर्म और सत्य का सचमुच बल नहीं रहा। इसीलिए मैंने कहा है कि सत्याग्रह के बिना भारत का कभी छुटकारा नहीं होगा। यह सत्याग्रह क्या है, यह दूसरी पत्रिकाओं में यथाशक्ति बताने का प्रयत्न करूँगा। मैं प्रत्येक भाई और बहन से माँग करता हूँ कि वे इन पत्रिकाओं को खूब ध्यान से पढ़ें समझें, समय-समय पर विचार करें और उनमें की गयी सूचनाओं पर अमल करें।

१६ ४ १९

(ग)

पत्रिका . २

'महात्मा गांधी का सत्याग्रह' और 'महा मा गांधी के उद्गार' शीर्षक दो कविताएँ प्रकाशित हुई हैं। उन पर हस्ताक्षर शामळदास हरजीवनदास वीहोरकर के नाम से हैं। उन कविताओं में जो विचार प्रकट किये गये हैं, वे मेरे उद्गार नहीं हैं। उनमें कुछ बातें बहुत द्वेषपूर्ण हैं, वैर बढ़ानेवाली हैं और गलत उत्तेजना फैलानेवाली हैं, इसलिए सत्याग्रह के विरुद्ध हैं। इसलिए मेरा अनुरोध है कि कोई भी भाई या बहन किसी भी तहरीर को जिसमें मेरे हस्ताक्षर न हों, मेरी न मानें। यह समय ऐसा नाजुक है कि

उस ठेकेदार की थी । उसका मूल्य लगभग १८) था । यह रुपया ठेकेदार को कौन दे ? उसकी भावना की हम क्या कल्पना करें ? उसे रुपया चुकाने का बलानेवालों ने तो विचार किया ही न होगा। मुझे खबर मिली है कि बहुत-सा जेवर सबूती माल के रूप में तहसील के खजाने में था। उसकी कीमत का अन्दाज कोई ५) लगाते हैं, कोई इससे भी ज्यादा लगाते हैं। उस जेवर के सभी मालिकों का हमें पता नहीं है। वे यह जेवर खो बैठे हैं। सरकार तो वापस नहीं देगी और दे तो भी हमारे रुपये से ही देगी। गरीब लोग जो अपना जेवर गँवा बैठे हैं वे तो शायद सरकार के पास जायेंगे भी नहीं। रा ब कुलाबीदास का माल उनके घर से चुन-चुनकर निकाला गया और उसे जला दिया गया। यह कैसा इन्साफ ? मुझे यह कहा गया है कि राव बहादुर की कारगुजारियाँ अच्छी नहीं थे लोगों को सताते हैं। यह भले ही संभव हो। परन्तु क्या ऐसे अफसरों की सम्पत्ति हम जला डालें ? इस प्रकार लोग इन्साफ को अपने हाथ में ले लें तो लोक-राज्य होने के बजाय लोग सदा के लिए केवल आततायक स्थिति में ही रहेंगे। यदि हर किसी आदमी को किसी भी अफसर का कार्य अत्याचारपूर्ण मालूम हो और इसलिए उसे उस अफसर के जान-माल को हानि पहुँचाने का हक हो जाय तो एक भी अफसर सही-सलामत नहीं रह सकता। जहाँ ऐसी स्थिति हो वह देश सुखी हुआ नहीं कहलाता। उसमें सभी लोग भयभीत दशा में रहते हैं। वीरमगाम में मुख्य क्लर्क को जिन्दा जला दिया गया यह कार्य कितना घोर है ! उसने क्या अपराध किया था ? अथवा किया था, तो उसे अलग कराने के लिए हमें साहस नहीं हुआ ? निरपराध अंग्रेज सार्जेंट फ्रेजर की एक भारतीय के घर में रक्षा हो रही थी। वहाँ से उसे बाहर निकालकर उसके टुकड़े कर दिये गये इससे भारत को क्या फायदा हो सकता है ? इतना परिणाम तो हो चुका कि हमारे और अंग्रेजों के बीच वैरभाव बढ़ गया हमने निर्दोष मनुष्यों के प्राण गँवा दिये। उपद्रवी लोगों की संगति करके, उनकी मदद लेकर

एक हासिल करने की कोशिश का एक ही नतीजा हो सकता है कि यह प्रयत्न सफल हो जाय तो जो हक मिले, उसे हम उपद्रवी लोगों की बातें पर ही रख सकते हैं। इस प्रकार मिले हुए हक हक नहीं, परन्तु हमारी गुलामी की निशानी हैं। अहमदाबाद और वीरमगाम में जो हुआ है, वह हमारी बहादुरी की निशानी नहीं, उससे किसी भी प्रकार हमारी मर्दानगी साबित नहीं हो सकती। उससे तो हम बहुत शर्म में डूब हैं। जनता के कार्य को नुकसान पहुँचा है। सत्याग्रह का सीमित करना पड़ा है। यह दुखद चित्र देने में मेरा यही हेतु है कि हजारों मनुष्य, जो ऐसा रक्तपात कभी पसन्द नहीं करते, विवश होकर, दीन बनकर, बैठे रह और इस उपद्रव को सहन करते रहे। इससे विदित होता है कि हममें इस समय धर्म और सत्य का सम्मुख बल नहीं रहा। इसीलिए मैंने कहा है कि सत्याग्रह के सिवा भारत का कभी छुटकारा नहीं होगा। यह सत्याग्रह क्या है, यह दूसरी पत्रिकाओं में यथाशक्ति बताने का प्रयत्न करूँगा। मैं प्रत्येक भाई और बहन से माँग करता हूँ कि वे इन पत्रिकाओं को खूब ध्यान से पढ़ें, समझें, समय-समय पर विचार करें और उनमें दी गयी सूचनाओं पर अमल करें।

१६ ४ १९

(ग)

पत्रिका २

'महात्मा गांधी का सत्याग्रह' और 'महात्मा गांधी के उद्‌गार' शीर्षक से कविताएँ प्रकाशित हुई हैं। उन पर हस्ताक्षर सामशंकर हरजीवनदास शीहोरकर के नाम से हैं। उन कविताओं में जो विचार प्रकट किये गये हैं वे मेरे उद्‌गार नहीं हैं। उनमें कुछ बातें बहुत द्वेषपूर्ण हैं, बैर बढ़ानेवाली हैं और गलत उत्तेजना फैलानेवाली हैं, इसलिए सत्याग्रह के विरुद्ध हैं। इसलिए मेरा अनुरोध है कि कोई भी भाई या बहन किसी भी तहरीर को जिसमें मेरे हस्ताक्षर न हों, मेरी न मानें। यह समय ऐसा नाजुक है कि

प्रत्येक स्त्री-पुरुष को बड़ी सावधानी से रहने की जरूरत है। किसीको भी भावों में नहीं आना चाहिए। अधिक सावधानी के लिए निम्नलिखित विचारों की ओर भाइयों और बहनों का खास तौर पर ध्यान आकृष्ट करता हूँ। मेरे लेखों में द्वेष नहीं हो सकता, क्रोध नहीं हो सकता, क्योंकि मेरा खास तौर पर धार्मिक विश्वास है कि हम राजा के प्रति या किसीके प्रति द्वेष बढ़ाकर अपना सच्चा हित-साधन नहीं कर सकते। मेरे लेखों में असत्य के लिए गुंजाइश हो ही नहीं सकती, क्योंकि मेरा अटल विश्वास है कि सत्य के सिवा कोई और धर्म है ही नहीं। मैं मानता हूँ कि असत्य द्वारा धार्मिक या कोई और भी लाभ प्राप्त हो सकता हो, तो उसका त्याग करने की मुझमें शक्ति है। मेरे लेख में किसी भी व्यक्ति का तिरस्कार नहीं हो सकता क्योंकि मेरा ख्याल है कि यह दुनिया प्रेम पर कायम है। जहाँ प्रेम है वहाँ जीवन है, प्रेम-रहित जीवन मृत्यु के समान है। प्रेम उसी सिक्के का दूसरा पहलू है, जिसका पहला पहलू सत्य है। मेरा दृढ़ विश्वास है और चालीस वर्ष का अनुभव है कि प्रेम से सारा संसार जीता जा सकता है। मैं यह मानता हूँ कि शासकों की भूलों को भी हम सत्य और प्रेम द्वारा दूर कर सकते हैं। इस प्रकार मेरे लेखों में रक्तपात करने या किसीका माल-असबाब जला देने की अनुमति हो ही नहीं सकती। सारे लेख भी मेरे नाम से लिखे जाते हों मैं पढ़ नहीं सकता। इसलिए उपर्युक्त कसौटी पर मेरे नाम से प्रचलित होनेवाले विचारों को कस लेने की सब भाइयों से मेरी प्रार्थना है। जिन लेखों में अप्रेम असत्य वैमनस्य द्वेष, रक्तपात आदि का सुझाव हो, उनका सब भाई त्याग करें यह मैं चाहता हूँ और यही मेरी प्रार्थना है। भाई लाभशंकर हरजीवन दीक्षितकर को मैं नहीं जानता परन्तु वे यह पत्रिका देखें, तो उन्हें भी मेरी सलाह है कि किसी मनुष्य के लिए कुछ उद्‌गारों का आरोपण करने से पहले उसे वे उद्‌गार बता देना और उसकी राय ले लेना जरूरी है। यह विवेक और मर्यादा की प्रथम श्रेणी है।

१७-४ १९

(घ)

सत्याग्रह क्या है ?

पहली पत्रिका में मैं सूचित कर चुका हूँ कि हम किसी पत्रिका में इसका विचार करेंगे कि सत्याग्रह क्या है। 'सत्याग्रह' नया शब्द है, परन्तु यह जिस तत्त्व का सूचक है, वह तो अनादिकाल से है। सत्याग्रह का शब्दार्थ तो इतना ही है : सत्य का आग्रह और आग्रह से जो बल उत्पन्न होता है, वह बल। इस समय सत्याग्रह को एक शक्ति के रूप में काम में ले रहे हैं अर्थात् सत्य का आग्रह करने से उत्पन्न होनेवाली शक्ति का हम वैसट कानूनरूप संकट का निवारण करने के लिए उपयोग कर रहे हैं। सत्य ही धर्म है यह एक सिद्धान्त है। प्रेम ही धर्म है यह दूसरा सिद्धान्त है। धर्म कोई दो नहीं होते। इसलिए सत्य ही प्रेम और प्रेम ही सत्य है। अधिक विचार करने बैठें तो हमें मालूम हो जायगा कि प्रेम के बिना सत्य का आचरण असंभव है, इसलिए सत्य की शक्ति प्रेम की शक्ति है। इस प्रकार हम वैरभाव रखकर दुःखों का निवारण नहीं कर सकते। यह बात गूढ़ नहीं, बल्कि समझने में बिलकुल आसान है। हम अपने हजारों कामों के बारे में देखते हैं कि वे सत्य और प्रेम से भरे होते हैं। बाप-बेटे का सम्बन्ध, स्त्री-पुरुष के बीच का संबंध, गरज यह कि सभी कौटुम्बिक सम्बन्धों में हम अधिकतर सत्य अथवा प्रेम की शक्ति ही देखा करते हैं। इस प्रकार हम जाने-अनजाने भी सत्याग्रही होते हैं। अपनी कुल की जिन्दगी पर निगाह डाल जायें तो हम देखेंगे कि अपने सगे-सम्बन्धियों के साथ के व्यवहार में हजार में से नौ सौ निन्यानवे बार तो हम सत्य और प्रेम से ही काम लेते हैं। मनुष्य सदा सुबह से उठकर सोने तक अपने सारे कामों में झूठ ही बोलता है, झूठ ही आचरण करता है, वैरभाव से ही भरा रहता है ऐसी बात तो हरगिज नहीं है। जब परस्परविरोधी स्वार्थ उत्पन्न हो जाते हैं तभी सत्याग्रह के, प्रेमबल के कानून में खलल पड़ता

है क्योंकि परस्परविरोधी स्वार्थों का जो संघर्ष होता है, उससे रोष द्वेष आदि अवगुण की सन्तानें उत्पन्न होती हैं और उनसे केवल जहर की वर्षा होती है। हम अगर सोचेंगे तो जो तरीका हम कौटुम्बिक सम्बन्धों में लागू करते हैं, वही हमें अपने आपस के एक-दूसरे के सगे-सम्बन्धियों से लेकर राजा-प्रजा के सम्बन्धों तक और अन्त में सारी दुनिया के सम्बन्ध में लागू करना चाहिए। जो स्त्री या पुरुष पारिवारिक संबंध को नहीं जानते, वे यद्यपि मनुष्य शरीर धारण करनेवाले हैं, फिर भी वे पशु-समान अथवा जंगली माने जाते हैं। उन्होंने सत्याग्रह का कानून जाना ही नहीं। जो पारिवारिक सम्बन्ध को जानते हैं, वे उस पशु जीवन से कुछ दूर तक मुक्त हो गये। क्या उन्होंने यह मान लिया कि पारिवारिक स्वार्थ कायम रखने के लिए सारा संसार डूब जाय तो भी क्या! इस प्रकार उनका सत्याग्रह समुद्र में रहनेवाली बूँद से भी कम है। इससे ऊँची पंक्ति के मनुष्य अपने गाँववालों को अपना समझेंगे और उनके बीच सत्याग्रह के कानून पर अमल करेंगे और जैसे कुटुम्ब के आदमी एक-दूसरे के साथ हमेशा झगड़ने के बजाय प्रेम के वश होकर स्वार्थत्याग करेंगे वैसे एक गाँव के आदमी करेंगे। इससे आगे बढ़कर प्रान्तीय जीवन में सत्याग्रह का प्रवेश करके प्रान्त के सारे लोगों को अपने भाई-बहन समझकर मनुष्य आपस में प्रेमशक्ति से अपना व्यवहार चलायेंगे। इससे आगे बढ़े हुए लोग जैसे कि भारत के हैं, अलग-अलग प्रान्तों के लोगों को भी अपने भाई-बहन के समान मानकर पारस्परिक व्यवहार में सत्याग्रह का कानून लागू करेंगे। इस जमाने में आम तौर पर इससे आगे पृथ्वी के किसी भाग के लोग नहीं गये। परन्तु जब पूछा जाय तो एक देश के लोगों का दूसरे देश के लोगों से विरोध होने का क्या भी कारण नहीं होना चाहिए। यदि हमारा जीवन साधारणतः विचारहीन न हो और यदि हम प्रचलित रूढ़ियों और प्रचलित विचारों को बाड़ तिजके की तरह जाँच किये बिना स्वीकार न कर लें, तो हम अवश्य देख सकेंगे कि जिस हद तक हम दूसरे देश के लोगों के साथ द्वेष रखते हैं,

जीव-मात्र से द्वेष रखते हैं, उस हद तक हम सत्याग्रह के कानून से विमुख रहते हैं और उस हद तक हम पशुपन से मुक्त नहीं हुए। मनुष्यमात्र का पुरुषार्थ अर्थात् स्त्री-पुरुष दोनों का पुरुषार्थ पशुपन से मुक्त होने में ही है। इससे दूसरा जगत् में धर्म नहीं। संप्रदाय, दल मंदिर कलीसियाँ यदि हमें इस सत्याग्रह के मार्ग पर ही रखें, तभी और उसी हद तक साधन के रूप में काम की हैं। भारत में हमें यह चीज पुरातन काल से ही सिखा दी गयी है। इसीलिए हमें यह महावाक्य पढ़ाया गया है कि वसुधा अर्थात् जगत्-मात्र कुटुम्ब है। मैं अनुभवपूर्वक कहना चाहता हूँ कि प्रत्येक जाति अपना जातीय जीवन पूरी तरह सत्याग्रह के अनुसार पालन कर सकती है। इतना ही नहीं सत्याग्रह के अनुसार चले बिना जातीय जीवन के सम्पूर्ण रूप में पालन ही नहीं किया जा सकता। इसका नाम धार्मिक जीवन है। जो जाति दूसरी जाति के साथ लड़ाई करती है, वह थोड़ी-बहुत हद तक धार्मिक जीवन का त्याग करती है। मैं अपना यह विश्वास कभी नहीं छोड़ सकूँगा कि भारत में इस सारे संसार को देने के लिए योग्य है। मैं चाहता हूँ कि इस प्रौढ़ श्रद्धा में सभी हिन्दुस्तानी—स्त्री-पुरुष हिन्दू-मुसलमान, ईसाई पारसी यहूदी सभी हिस्सेदार बनें।

● ● ●

[हॉर्निमैन के देश-निकाले के बाद उसके बारे में तथा सत्याग्रह का रहस्य समझाने के लिए गांधीजी द्वारा प्रकाशित पत्रिकाएँ।]

(क)

हॉर्निमैन के देश निर्वासन पर पत्रिकाएँ

भाइयो और बहनो

अत्यंत खेद के साथ और उतने ही आनन्द के साथ मैं आपको बताता हूँ कि भाई हॉर्निमैन को सरकार ने बम्बई से दूर कर दिया है और आज उन्हें किसी विलायत जानेवाले जहाज के भीतर ले जाया गया है। भाई हॉर्निमैन एक अत्यंत बहादुर और उदार-हृदय के अंग्रेज हैं। उन्होंने भारत के लोगों को स्वतंत्रता का मंत्र देकर जहाँ-जहाँ अन्याय देखा, वहीं उस पर निष्पक्षतापूर्वक आलोचना करके अपनी अंग्रेजियत सुशोभित की है और अंग्रेज जाति की महान् सेवा की है। भारत की सेवा की है, यह तो सारा भारत जानता है। मुझे इस घटना पर दुःख होता है, क्योंकि एक बहादुर सत्याग्रही को देश-निकाला मिला है और मैं मुक्त बैठा हूँ। मुझे आनन्द इसलिए हो रहा है कि भाई हॉर्निमैन को अपनी सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पूरी करने का अवसर मिला।

'क्रॉनिकल' पत्र भी फिलहाल तो कुछना बन्द रहेगा, क्योंकि सरकार की अनुचित माँग डाइरेक्टरों ने बुद्धिमत्तापूर्वक अस्वीकार कर दी है। परन्तु सच पूछा जाय तो भाई हॉर्निमैन के बिना 'क्रॉनिकल' का प्रकाशित होना मैं तो आत्मा के बिना शरीर को चलाने के समान मानता हूँ।

यह स्थिति सचमुच विषम है। सत्याग्रह की भारी परीक्षा हो रही है। सत्याग्रह का शुद्धतम और अवैध स्वरूप प्रकट करने का यह सुन्दर अवसर है। इस अवसर के साथ उतना सत्याग्रहियों एवं अन्य प्रजाजनों के

हाथ में है। मैं समझ सकता हूँ कि सत्याग्रहियों के लिए एक प्यारे साथी का वियोग बड़ा दुःखदायी होगा। लोगों को निरन्तर स्वतन्त्रता का प्याला पिलानेवाले मनुष्य का वियोग तो अवश्य खटकेगा। ऐसे समय सत्याग्रही और दूसरे मार्ट-बहन मेरी राय में, शान्ति रखकर ही अपना शुद्ध प्रेम साबित कर सकेंगे। इस समय हमारा शान्तिभंग करना केवल विचारहीन कार्य होगा।

आधुनिक सुधार की प्राचीन सुधार से कुश्ती हो रही है। प्राचीन सुधार के ढंग पर सत्याग्रह इस समय भारत के सम्मुख रखा गया है। यदि भारत इस तरीके को स्वीकार करेगा, तो प्राचीन सुधार का गौरव प्रकट होगा। आधुनिक सुधार क्या चीज है, यह भी संसार देख लेगा और आधुनिक सुधार के हिमायती अपनी भूल अवश्य सुधारेंगे।

मेरी व्यावहारिक सूचनाएँ इस प्रकार हैं :

१ भारत में कहीं भी शोक प्रकट करने के लिए हड़ताल न की जाय।

२ बड़ी सार्वजनिक सभाएँ न की जायँ।

३ जुलूस न निकाले जायँ।

४ जरा भी हुल्लड़ न किया जाय। कोई हुल्लड़ करना चाहे, तो उसे रोका जाय।

जो सत्याग्रही हैं अथवा सत्याग्रह के समर्थक हैं उनसे मेरा अनुरोध है कि सत्याग्रह पर से अपनी श्रद्धा जरा भी न खोयें और यह अटल विश्वास रखें कि सत्याग्रह की प्रतिज्ञा का अवश्य पालन होगा।

२६ ४ १९

(ख)

भाई हॉर्निमैन का असह्य वियोग होने पर भी बम्बई में शान्ति बनी हुई है, इसे मैं सत्याग्रह के लिए शुभ शकुन मानता हूँ। इसी प्रकार सरकार हमारे दूसरे प्यारों को पकड़ ले, मुझे भी पकड़ ले, उस समय भी

मैं चाहता हूँ कि सब पूरी तरह शान्ति रखें। सरकार को जिस पर सन्देह हो, उसे पकड़ने का अधिकार है। हमारी लड़ाई में हम अपनी आत्मा के सामने निर्दोष हों, तो भी पकड़ा जाना और जेल जाना ही हमारा सिद्धान्त है। इसलिए किसी भी सत्याग्रही की गिरफ्तारी के समय हम क्रोध कैसे कर सकते हैं? हमें तो यह जानना चाहिए कि जैसे-जैसे उपर्युक्त निर्दोष मनुष्यों की धरपकड़ जल्दी होगी, वैसे ही लड़ाई का अन्त जल्दी आयेगा।

कुछ मनुष्यों को मैंने यों कहते सुना है कि सत्याग्रह में भी अन्त में तो रक्तपात से ही छुटकारा होता है। वे कहते हैं कि सत्याग्रहियों के पकड़े जाने से लोग उत्तेजित होते हैं, मारपीट करते हैं और ऐसा करके न्याय प्राप्त करते हैं। यह तो केवल भयंकर अंधविश्वास है। इससे उलटी बात ही सच है। सत्याग्रहियों के पकड़े जाने से अहमदाबाद में जो मारपीट हुई, उसका परिणाम हम देख चुके। लोग दब गये हैं। जिस गुजरात में कभी सेना नहीं रहती थी, वहाँ अब वह पायी जाती है। मेरा साफ खयाल है कि सत्याग्रह की विजय शुद्ध सत्य से ही किसीको भी हानि पहुँचाये बिना और स्वयं दुःख उठाकर ही हो सकती है। दक्षिण अफ्रीका, खेड़ा, चम्पारन आदि का मेरा अनुभव इस सिद्धान्त को अच्छी तरह साबित कर देता है। जब तक हम इतना सत्य न समझ लें, तब तक सत्याग्रह करने के लिए कभी भी योग्य नहीं बन सकते। तब हम अब क्या करें? 'भाई हॉर्निमैन निर्वासित हो गये और हम चुपचाप हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें?' ऐसी शंका उठ सकती है। मेरा जवाब यह है कि अपनी शान्ति में ही हम भाई हॉर्निमैन के वियोग का दुःख प्रकट करते हैं। हमारी शान्ति ही हमारी एक बड़ी हलचल है। इसके द्वारा हम अपनी मुराद पूरी करेंगे और भाई हॉर्निमैन का शीघ्र स्वागत करेंगे। हिन्दुस्तान जब इस सत्याग्रह की लड़ाई के बारे में सत्य और अहिंसा पर ही आधार रखने का आदी हो जाय तब हम कानून का सविनय भंग शुरू कर सकते हैं। कोई कहते हैं कि 'भारत को सत्य और अहिंसा

का मंत्र अपनाने में तो वर्षों बीत जायेंगे इसलिए क्या हमारे लड़ाई का निपटारा करने में भी वर्षों लगेंगे ?' मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि जब सत्य और अहिंसा प्रकट होती है, तब उसकी गति इतनी अधिक तीव्र होती है कि उसे करोड़ों में व्यापक होने में भी देर नहीं लगती। ऐसा होने के लिए जो जरूरत है, वह इतनी ही है कि लोगों के हृदय पर सत्य और अहिंसा की छाप पड़ जाय और उन्हें सत्य और अहिंसा की शक्ति पर विश्वास हो जाय। इतना होने के लिए, यदि सत्याग्रही सच्चे हों तो हमें महीने-दो महीने से ज्यादा कभी नहीं लगने चाहिए।

उपर्युक्त सूचनाओं के अनुसार सत्य और अहिंसा के अत्यन्त वेग से फैलाव के लिए मैं नम्रतापूर्वक निम्नलिखित सलाह देता हूँ। प्रत्येक देश के महान् आन्दोलनों का आधार मुख्यतः व्यापारी-वर्ग पर रहता है। बम्बई व्यापार का भारत में, संसार में महान् स्थान है। बम्बई के व्यापारी असत्य और असत्य से उत्पन्न होनेवाले दोष दूर करके, भले ही थोड़ा लाभ हो या हानि हो तो उसे भी सहन करके अपने व्यापार में प्रामाणिकता दाखिल कर दें तो सत्य को कितना वेग मिल जाय ? इससे बढ़कर सम्मान भाई हॉर्निमैन का हम और क्या कर सकते हैं ? हमारी जीत का सारा सत्य पर निर्भर है, इसलिए व्यापार में ही सत्य प्रवेश करे, तो असत्य के दूसरे किले सर करना तो बायें हाथ का खेल हो जाय। मुझे विश्वास है कि बम्बई के व्यापारियों के लिए, जिनकी भाई हॉर्निमैन के प्रति अटूट भावना है, मेरी सलाह के अनुसार चलना कठिन नहीं है। यदि हम सरकार पर सच्चाई का असर डाल सकें और अहिंसा का पालन करके अभयदान दे सकें, तो मेरा विश्वास है कि हमें कानूनों का सविनय भंग करने की झंझट में भी न पड़ना पड़े।

२७-४-१९

(ग)

मैं मित्रों की ओर से सुनता रहता हूँ कि लोगों में ऐसी बात फैली हुई है कि भाई हॉर्निमैन के निर्वासन के प्रति लोकभावना प्रकट करने के

लिए कुछ-न-कुछ रास्ता ढूँढना चाहिए। यह इच्छा बहुत स्वाभाविक है। परन्तु मैं कह चुका हूँ कि उन्होंने समझ गये हैं कि हमने जो शान्ति रखी, उसीके द्वारा अपनी भावना खूब बता दी है। मेरी खास तौर पर राय है कि जहाँ सत्याग्रह चल रहा हो वहाँ इतनी शान्ति रखी जा सकती है। मेरी मान्यता है कि सत्ताधारी भी लोगों की गम्भीर शान्ति से आश्चर्यचकित हो रहे हैं। अवश्य होंगे। सरकार समझती है कि भाई हॉर्निमैन के प्रति लोगों की भावना बहुत तीव्र है। यह भावना कहीं उमड़कर टेढ़े रास्ते न चली जाय इसलिए सरकार ने सेना का जबर्दस्त इंतजाम कर रखा है। इस सेना को कुछ काम नहीं करना पड़ा यह बम्बई के लिए बड़े सम्मान की बात है, सत्याग्रह की बड़ी विजय है। लोग समय-समय पर इसी प्रकार अपनी शांति का परिचय देते रहें, तो मुझे जरा भी शक नहीं कि लोगों की बड़ी उन्नति हो। कोई यह न मान ले कि हम भाई हॉर्निमैन को वापस लाने के उपाय नहीं कर रहे हैं अथवा आगे नहीं करेंगे। सब उपायों में बड़ा उपाय अभी जो शान्ति बनी हुई है वह है। इतने पर भी मैं लोगों को एक सुझाव देना चाहता हूँ कि जिन्हें हड़ताल करना अत्यन्त प्रिय हो, उनके लिए अपना एक दिन का नफा सार्वजनिक कार्य के लिए दे देना ही हड़ताल के बराबर है।

किन्तु इस पत्रिका में जो मुख्य वस्तु मैं बताना चाहता हूँ, वह यह है : अब तक जो आन्दोलन हुए हैं, जो सभाएँ हुई हैं उनमें और सत्याग्रह में उतना ही बड़ा फर्क है जितना उत्तर और दक्षिण में है। इतना ध्यान में रखने से लोगों की कितनी ही गुत्थियाँ अपने-आप सुलझ जायेंगी। हम देख चुके हैं कि साधारण समारोह और सत्याग्रही समारोह में बड़ा अन्तर है। सत्याग्रह धर्म-वृत्ति है, इसलिए उसमें केवल सत्य, शांति, गंभीरता धीरज, दृढ़ता निर्भयता आदि गुणों का ही दर्शन होना चाहिए। सत्याग्रही हड़ताल मामूली हड़तालों से भिन्न ही होगी। मैं ऐसा अवसर बता चुका हूँ, जब साधारण हड़ताल हो रही थी, तब सत्याग्रही हड़ताल बन्द कर देनी पड़ी है। साधारण आन्दोलन में बड़े

मारे लगाकर हम जो चीज प्राप्त करने की आशा रखते हैं, वह सत्याग्रह की हलचल में कई बार केवल चुप्पी से ही प्राप्त कर लेते हैं। सत्याग्रही के अन्तर के गहरे नाद जितनी दूर सुनाई देते हैं, उतनी दूर साधारण आवाज नहीं पहुँच सकती। ऐसे दूसरे असंख्य दृष्टान्त सब भाई-बहन अपने लिए लगा सकते हैं और उन पर से देख सकते हैं कि सत्याग्रह दूसरी ही तरह की चीज होने से कुछ दूसरे ही अनुभव हों तो उनसे लोगों को आश्चर्य नहीं होना चाहिए। इसलिए भाइयों और बहनों से मेरा अनुरोध है कि भाई हॉर्निमैन के बारे में कोई खास प्रगति दिखाई न देने के कारण वे न घबरायें, बल्कि धीरज रखें और विश्वास रखें कि सत्याग्रह-पथ पर चलकर हम उनसे जल्दी मिलेंगे।

२८ ४ १९

(घ)

भाई हॉर्निमैन के सम्बन्ध में पत्र आते रहते हैं और उनमें अनेक प्रकार के नारे होते हैं। इनमें अधिकतर पत्र गुमनाम हैं। उनमें से एक पत्र में यह कहा गया है कि हम लड़ाई वगैरह करें और उनसे कदाचित् रक्तपात हो जाय, तो भी क्या परवाह है? मारधाड़ के बिना हमें कुछ नहीं मिलेगा, इसके बिना हम भाई हॉर्निमैन को वापस नहीं ला सकेंगे।

सत्याग्रह के रास्ते चलकर तो इसका जवाब तुरंत दिया जा सकता है। रक्तपात के द्वारा ही भाई हॉर्निमैन हिन्दुस्तान लौट सकते हों तो सत्याग्रहियों को उनका वियोग सहन कर लेना चाहिए। परन्तु वास्तव में ऐसी कोई बात नहीं है। ऐसा नहीं है कि सत्याग्रह द्वारा भाई हॉर्निमैन को भारत में वापस नहीं लाया जा सकता। उन्हें जल्दी-से-जल्दी भारत लाने का उपाय सत्याग्रह ही है। यह सत्याग्रह कभी कानून तोड़कर तो कभी कानून का पालन करके किया जा सकता है। कभी हड़ताल करके

सभायें करके, जुलूस निकालकर और कभी सभायें न करके, हड़तालें न करके और जुलूस न निकालकर भी किया जा सकता है। सत्याग्रह से ऐसा एक भी काम नहीं हो सकता, जिसके द्वारा रक्तपात हो अथवा उसे प्रोत्साहन मिले। ऐसे समय जब लोग व्याकुल हो रहे हैं, क्रोधित हो रहे हैं बड़ी-बड़ी सभायें करने से जुलूस निकालने से, हड़तालें करने से लोगों का उमड़ आना संभव है। इससे रक्तपात होने में देर नहीं लगती। लोग और पुलिस दोनों से भूल हो सकती है। एक की भी भूल हो जाय तो परिणाम दोनों को भुगतना पड़ेगा। इस प्रकार हम साफ देख सकते हैं कि ऐसा परिणाम आये, इसे सत्याग्रही को हर कोशिश से रोकना ही चाहिए। इसे रोकने में ही उसका सत्याग्रह है। उसे रोकने में जो मेहनत करनी पड़े, जो अनुशासन रखना पड़े, जो आत्मबल काम में लाना पड़े उससे लोग बहुत ऊँचे उठते हैं, यही शुद्ध सत्याग्रह है। जब लोगों को शान्ति रखने की तालीम मिल जाय, लोग गुस्सा दबा सकें या जुलूस शान्ति से निकाल सकें, किसी पर दबाव डाले बिना हड़ताल कर सकें, जब ऐसे करते स्वयंसेवक काफ़ी तैयार हो जायें कि लोग उनकी सूचनायें सुनें और उन पर चलें, तब हम सभायें कर सकते हैं और हड़ताल कर सकते हैं। जो लोग इतना करने लग जायें, उनकी वाजिब माँग का विरोध कोई नहीं कर सकता, यह आसानी से देखा जा सकता है। लोग देखा करें इसीके लिए वर्तमान आन्दोलन हो रहा है। जिनके हाथों में यह पत्रिका आये और जो इस कार्य में सहायक हो सकते हैं उन सबसे मैं सत्याग्रह-सभा के कार्यालय में नाम लिखाने का अनुरोध करता हूँ।

अब हम सत्याग्रह की दृष्टि से नहीं परन्तु व्यावहारिक खयाल से इस बात पर विचार करें कि रक्तपात द्वारा भाई हॉर्निमैन को हम वापस ला सकते हैं या अपने दूसरे कार्य सिद्ध कर सकते हैं। मैं मानता हूँ कि दूसरे देशों में कुछ भी संभव हो, तो भी यह मानने का कारण नहीं कि वह भारत में भी संभव होगा। प्राचीन काल से भारत की शिक्षा भिन्न

रही है। भारत में समस्त लोग किसी भी समय पशुबल के प्रयोग में लगे हुए दिखाई नहीं देते। मेरी अपनी मान्यता तो यह है कि भारत ने जान-बूझकर सार्वजनिक शस्त्र क्रिया का त्याग किया है। अहमदाबाद अभी तक उसके परिणाम भुगत रहा है। कितने भयंकर परिणाम हुए हैं, पर अब आगे देख लेंगे। सत्याग्रहियों को कानून का सविनय भंग करना मुल्तवी करना पड़ा है यह भी एक दुःखद परिणाम है। इस प्रकार यह खयाल बिल्कुल गलत मानना चाहिए कि रक्तपात द्वारा हम भाई हॉर्निमैन को वापस ला सकते हैं अथवा और कुछ भी लाभ उठा सकते हैं।

एक पत्र में यह दलील दी गयी है कि सत्याग्रही भले ही सभाएँ वगैरह बन्द कर दें परन्तु वे दूसरों को तो ऐसी सिफारिश कर सकते हैं! इस समय भारत में यह देखा जाता है कि कानून के सविनय भंग के अतिरिक्त और सब सत्याग्रही प्रवृत्तियों में अधिकांश भारत हिस्सा लेना चाहता है। यह स्थिति जितनी आनंद उत्पन्न करनेवाली है, उतनी ही चिन्ता पैदा करती है। सत्याग्रहियों पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ जाती है और उनमें से एक जिम्मेदारी यह है। यदि लोगों को सत्याग्रह में रस आता हो, यदि लोग सत्याग्रह की चमत्कारी शक्ति का अनुभव करना चाहते हों, तो इस प्रकार व्यवहार करना सत्याग्रहियों का कर्तव्य हो जाता है कि लोग सत्याग्रह के सिद्धान्त के अनुसार ही इस प्रवृत्ति में भाग लें। सत्याग्रह का सबसे बड़ा सिद्धान्त यह है कि सत्य पर डटे रहें और किसीको या किसीके माल को हानि न पहुँचायी जाय। जब लोग इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लेंगे, तब सारा संसार सत्याग्रह की महिमा को देख सकेगा।

१-५-१९

(क)

बहुत से लोग मुझसे पूछते हैं कि सत्याग्रह फिर कब शुरू होगा? इसके दो उत्तर हैं। एक तो यह कि सत्याग्रह बिल्कुल बन्द तो हुआ

ही नहीं। जब तक हम सत्य का पालन करते हैं और दूसरों को वैसा ही करने को कहते हैं, तब तक सत्याग्रह कभी बन्द हुआ नहीं कहलायेगा। यदि सभी सत्य का पालन करें और कोई किसीके भी जान-माल का नुकसान करने से परहेज रखे, तो हम जो माँगते हैं, वह तुरन्त मिल जाय। परन्तु जब सभी ऐसा करने को तैयार नहीं और सत्याग्रही मुट्ठीभर ही हैं, तब हमें सत्याग्रह के सिद्धान्त से फलित हो सकनेवाले दूसरे उपाय ढूँढने पड़ते हैं। ऐसा एक उपाय कानून का सविनय भंग है। मैंने यह तो समझा ही दिया है कि हमने थोड़े समय के लिए सविनय कानून-भंग क्यों मुल्तवी किया है। जब तक हम जानते हैं कि सविनय कानून-भंग को अमल में लाने से दंगे और हिंसा के छिड़ जाने की बहुत संभावना है, लगभग निश्चय है, तब तक कानून का पालन न करना सविनय कानून-भंग नहीं कहलाता। बल्कि वह कानून-भंग तो विचारहीन विनयहीन और सत्यरहित कहलायेगा। सत्याग्रही ऐसा कानून-भंग कभी नहीं करेगा। इतने पर भी सत्याग्रही अपना कर्तव्य-पालन पूरी तरह करने लगे, तो यह सविनय कानून-भंग जल्दी आरम्भ क्या सकता है।

सत्याग्रहियों के प्रति मेरा विश्वास मुझे यह मानने को प्रेरित करता है कि हम लगभग दो महीने में सविनय कानून-भंग फिर आरम्भ करने के योग्य हो जायेंगे। अर्थात् यदि इस बीच रौलट-कानून रद न हुए, तो हम जुलाई के आरम्भ में कानून-भंग शुरू कर देंगे। यह मीयाद तय करने में मैं नीचे लिखे कारणों से प्रेरित हुआ हूँ। एक तो यह है कि इतने समय में हमारा सन्देशा देशभर में फैला दिया जायगा कि जब तक सविनय भंग स्थगित है, तब तक कोई भी मनुष्य सत्याग्रह की आड़ में या सत्याग्रह की सहायता करने के बहाने दंगा या मारकाट न करे। आशा रखी जाती है कि जब लोगों को यह विश्वास हो जायगा कि देश का सच्चा हित-साधन इस सन्देश का पालन करने से ही हो सकेगा तब वे शान्ति रखेंगे। इस प्रकार स्वेच्छापूर्वक रखी गयी शान्ति भारत की प्रगति में बहुत बड़ा हाथ बँटायेगी। परन्तु यह हो सकता है कि भारत इस हद

एक सत्याग्रह का रहस्य न समझ ले। ऐसा हो, तो हिंसा को फूट निकलने से रोकने की एक और आशा है। हाँ, जिस शर्त पर इस आशा का आधार है, वह हमें बहुत ही हीनता प्रदान करनेवाली है। फिर भी इस शर्त से भी सत्याग्रही लाभ उठा सकते हैं। इतना ही नहीं, ऐसी परिस्थिति में सत्याग्रह शुरू करना सत्याग्रहियों का फर्ज हो जाता है। इस समय जो सैनिक-व्यवस्था कायम हो गयी है, उससे स्वाभाविक रूप में ही हिंसा, जो देश के लिए बहुत हानिकारक है फूट निकलना असंभव हो गया है। हाल ही में फूट पड़नेवाले दंगे इतने अचानक हुए थे कि सरकार तुरन्त उनसे निपट सकने के लिए तैयार नहीं थी। परन्तु इन दो महीनों में सरकार की तैयारी पूरी हो जाना बहुत संभव है। इसलिए सार्वजनिक शान्ति-भंग का भय और सत्याग्रह का जान-बूझकर या अनजाने हुए दुरुपयोग लगभग असंभव हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में सत्याग्रही लोगों के किसी डर के बिना सविनय कानून-भंग कर सकते हैं और ऐसा करके यह दिखा सकते हैं कि हिंसा से नहीं, बल्कि केवल सत्याग्रह से ही न्याय प्राप्त किया जा सकता है।

२-५ १९

(ख)

सत्याग्रह के विषय में दो बातें अच्छी तरह समझ ली जायँ, तो हमारी बहुत-सी शंकायें अपने-आप हल हो जाती हैं। एक बात यह है कि सत्याग्रही बाहर के डर से कुछ नहीं करता। वह केवल ईश्वर का ही डर रखता है। हम यह बात ध्यान में रखें तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि हमने सविनय कानून-भंग किसलिए स्थगित किया है। हॉर्निमैन को देशनिकाला देने पर भी क्यों हड़ताल नहीं की गयी? हमने बड़ी-बड़ी सभायें क्यों न कीं? जुलूस किस कारण नहीं निकाले गये? यदि हम सच्चे सत्याग्रही हैं, तो यह बात नहीं कि हमने भय के कारण ऐसा करना

बन्द किया, बल्कि हमने शुद्ध कर्तव्य-बुद्धि से ही ऐसा किया है। सत्याग्रही जैसे-जैसे अपने कर्तव्य का अधिक पालन करने लगता है, वैसे ही वैसे वह विजय के अधिक निकट आता है। दूसरी बात याद रखने की यह है—और वह शायद मौजूदा हालत में महत्वपूर्ण है—कि सत्याग्रही अपने विरोधी के प्रति दुर्बुद्धि अथवा द्वेष-भाव रखकर अथवा बढ़ाकर अपने ध्येय तक पहुँचने की कभी इच्छा नहीं रखता। वह तो अपने विरोधी को भी मित्र समझता है। उसके प्रति द्वेष रख बिना उसके किये हुए अपकृत्यों का विरोध करता है। हम ऐसा आचरण रखें, जो सत्याग्रही को शोभा दे। इससे गुत्थी खोलने के कारण कम होते हैं दोनों पक्ष अपनी भूलें स्वीकार करने लगते हैं और उन्हें मिटाने का प्रयत्न करते हैं। हम जानते हैं कि रौलट-कानून बिल्कुल खराब है। परन्तु इस कारण हम सरकार के विरुद्ध द्वेष रखें, तो यह ठीक नहीं। द्वेष का सेवन करने से हम किसी भी तरह उन खराब कानूनों की खराबी अधिक न समझ सकेंगे और न उनके विरुद्ध अधिक आन्दोलन ही कर सकेंगे। उलटे, ऐसे द्वेष से तो हमारे आन्दोलन को हानि ही होगी क्योंकि द्वेष से भरे होने के कारण विरोधी की दलील समझने अथवा उसे पूरा महत्व देने से हम इनकार करते हैं। ऐसा करते हमें विरोधी पर जो असर डालना चाहिए, वह डालने में हम असमर्थ हो जाते हैं। इस पंथ में विजय की ही, शायद असंभव न बना दें तो भी दूर तो धकेल ही देते हैं। हम जानते हैं कि रौलट-कानून से हिन्दू, मुसलमान तथा दूसरे लोगों का जितना भी नुकसान है उससे ज्यादा दुर्भाग्य के मसले से हमारे मुसलमान भाइयों का भी नुकसान है। परन्तु वे अपने नुकसान का उपाय द्वेष का सेवन करके नहीं कर सकेंगे। अपने दुःखों का इलाज तो सच्चा विचार करने अपनी माँगें अच्छी तरह तैयार करके घोषित करने और उन पर दृढ़तापूर्वक डटे रहने से ही कर सकते हैं। ऐसा करके ही वे हिन्दू, पारसी और ईसाइयों का सारी दुनिया से मदद ले सकेंगे और अपनी माँगों को ऐसा बना सकेंगे, जिनका विरोध न हो सके। रौलट-कानून के कारण

या म्याम अथवा अन्य किसी प्रश्न के कारण हम सरकार के प्रति क्रोध करें अथवा द्वेषबुद्धि रखें और ऐसा करके हिंसा का आश्रय लें, तो ईश्वर के लोकमत की बात तो अलग रही भारतीय लोकमत को संगठित करने की शक्ति भी हममें नहीं रहेगी अंग्रेजों के और हमारे बीच का अन्तर बढ़ेगा और हम अपने ध्येय से दूर चले जायेंगे। हिंसा से प्राप्त की हुई विजय पराजय जैसी ही है, क्योंकि वह थोड़े समय ही टिकनेवाली है। उससे दोनों पक्षों में द्वेष की ही वृद्धि होती है। दोनों पक्ष एक-दूसरे से लड़ने की ही तैयारी करते रहते हैं। सत्याग्रह का अर्थ इतना विपरीत नहीं होता। सत्याग्रही तो अपने सिद्धान्तों की खातिर कष्ट सहन करके सारी दुनिया की हमदर्दी अपनी तरफ खींचता है और अपने कथित शत्रु के हृदय पर भी असर डालता है। अहमदाबाद और वीरमगाम में हमने भूलें न की होतीं तो आन्दोलन का इतिहास और ही होता। अंग्रेजों के और हमारे बीच द्वेषभाव में वृद्धि न हुई होती। हमारे आसपास जो सैनिक-व्यवस्था दिखाई दे रही है, वह न दीखती और इतने पर भी रौलट-कानून हटवाने का हमारा संकल्प उतना ही दृढ़ रहा होता। उसके विरुद्ध आन्दोलन बहुत आगे बढ़ जाता और कदाचित् अब तक तो हम विजय-संपादन करके भी बैठ गये होते। साथ-ही-साथ यह परिणाम भी आया होता कि हमारे और अंग्रेजों के बीच का अंतर घट जाता। फिर भी अभी कोई देर नहीं हुई है। हम अपनी भूलें सुधार सकते हैं। भूलें सुधारने का अर्थ है, क्रोध पर काबू पा लेना अंग्रेजों के प्रति द्वेषबुद्धि निर्मूल करने का प्रयत्न करना और हिंसा का त्याग करना। वास्तव में देखा जाय तो रौलट कानून पास करने की भूल अंग्रेज-जाति की नहीं और न भारत में रहने वाले अंग्रेजों की है। वह तो केवल सत्ताधारियों की है। जनता के नाम पर की जानेवाली बातों का अक्सर उसे ज्ञान तक नहीं होता। फिर सत्ताधारी भी जान-बूझकर भूलें नहीं करते। वे तो जो उन्हें सही जँचे, सो करते हैं। परन्तु इससे लोगों की कोई कम हानि नहीं होती। इसलिए हमें तो सत्ताधारियों के प्रति जरा भी द्वेष न रखकर उनसे हुई भूलें सुधरवाने

के बारगर उपाय करने में जरा भी कचाई नहीं रखनी चाहिए। सदा यह ध्यान में रखा जाय कि यह उनकी भूल हुई है, इससे ज्यादा कुछ नहीं। ऐसा करके हम हिंसा का त्याग करेंगे और अपने कष्ट-सहन से वे कानून रद करायेंगे।

१-५ १९

(ख)

हम पिछली पत्रिका में देख चुके हैं कि सत्याग्रह के व्यवहार पर बाहर के भय का कोई असर नहीं होता। यह तो भीतर की आवाज पर ही चलता है। सत्याग्रही अपने विरोधी के प्रति कभी द्वेषभाव न रखे, बल्कि अपने प्रेम से विरोधी को जीत ले। मैं देखता हूँ कि यह दूसरा वाक्य स्वीकार करना बहुतों को कठिन प्रतीत होता है। वे दलील देते हैं: 'दुष्कृत्य करनेवाले के प्रति क्रोध उत्पन्न हुए बगैर कैसे रहे? ऐसों के प्रति क्रोध न करना तो मनुष्य-स्वभाव के विरुद्ध है। दुष्कृत्य करनेवाला और दुष्कृत्य, दोनों को हम अलग कैसे कर सकते हैं? दुष्कृत्य करनेवाले के प्रति क्रोध किये बिना केवल दुष्कृत्य के प्रति क्रोध करना कैसे संभव है? पिता अपने पुत्र के प्रति क्रोध किये बिना कई बार उसके किये हुए दुष्कृत्यों के प्रति अपनी नाराजी खुद कष्ट सहन कर जाहिर करता है। आपस में इस प्रकार के व्यवहार से ही पिता और पुत्र के बीच का प्रेम संबंध बना रहना संभव होता है। ऐसा व्यवहार न रखा जाय तो यह संबंध टूट जाय। इस प्रकार के अनुभव हमारे दैनिक जीवन में हमें आते ही रहते हैं। इसीसे यह कहावत चली है कि 'झगड़े का मुँह काला करो'। अपने पारिवारिक जीवन का यह नियम हम सरकार के साथ अपने संबंध पर लागू करेंगे तभी हम शान्ति से रह सकेंगे और भय पूर्ण स्थिति से मुक्त होंगे। यहाँ यह शंका नहीं उठानी चाहिए कि पारिवारिक कानून सरकार के साथ के संबंध पर कैसे लागू किया जा सकता है?

प्रेम के कानून पर तभी अमल हो सकता है, यदि सामने से उसका जवाब मिले। परन्तु सत्याग्रह में दोनों पक्षों का सत्याग्रही होना जरूरी नहीं। जहाँ दोनों पक्ष सत्याग्रही हों, वहाँ तो सत्याग्रह पर अमल करने या प्रेम की परीक्षा करने की गुंजाइश ही नहीं रहती। सत्य का आग्रह करने की जरूरत तभी पैदा होती है, जब एक पक्ष असत्य का अथवा अन्याय का आचरण करता है। ऐसे मौके पर ही प्रेम की परीक्षा होती है। सच्ची मित्रता की परीक्षा तभी होती है, जब एक पक्ष मित्रता के कर्तव्यों का पालन न करता हो। सरकार के विरुद्ध हम क्रोध करेंगे तो इसमें हम घाटे में रहेंगे। ऐसा करने से एक-दूसरे के प्रति अविश्वास और द्वेषभाव बढ़ता है। परन्तु सरकार से जरा भी कुढ़ हुए बिना और साथ ही उसके सैनिक-बल से जरा भी डरे बिना तथा जिसे हम उसका अन्याय मानते हों, उसके सामने झुके बिना हम अपना व्यवहार करें तो सरकार का अन्याय अपने-आप दूर हो जायगा और उसके साथ समता प्राप्त करने का जो हमारा ध्येय है, उसे हम सहज ही प्राप्त कर लेंगे। इस समता का आधार उसके पशुबल का जवाब पशुबल से देने पर नहीं बल्कि पशुबल का डर न रखकर उसके सामने अटल खड़े रहने की हमारी शक्ति पर है। सच्ची निर्भयता प्रेम के बिना संभव नहीं। जब तक हममें द्वेषभाव है, तब तक सत्याग्रह की सच्ची विजय संभव नहीं। जो अपने को कमजोर समझते हैं, वे प्रेम नहीं कर सकते। तब प्रतिदिन प्रातः हमारा पहला काम यह हो कि उस दिन के लिए हम यह संकल्प करें : मैं पृथ्वी पर किसीसे नहीं डरूँगा। मैं अकेले ईश्वर का ही डर रखूँगा। मैं किसीके प्रति द्वेषभाव नहीं रखूँगा। मैं किसीके अन्याय के आगे नहीं झुकूँगा। मैं असत्य पर सत्य द्वारा विजय प्राप्त करूँगा और असत्य का प्रतीकार करने में जो कष्ट उठाने पड़ेंगे, उन्हें सहन करूँगा।

४-५-१९

(ख)

बम्बई ने भाई हॉर्निमैन का वियोग बड़ी शान्ति से सहन किया है। विषम परिस्थिति में भी बंबई ने इतने लम्बे समय तक शान्ति रखी है, इससे उसकी आत्मसंयम की शक्ति प्रमाणित होती है। परन्तु सत्याग्रह-सभा में हुई चर्चा से और लोगों में होनेवाली चर्चाओं के जो विवरण आते हैं, उनसे मालूम होता है कि लोगों के हृदय शान्त नहीं हुए। वे अपने शोक और अपनी भावना को किसी-न-किसी रूप में सार्वजनिक ढंग से व्यक्त करने की इच्छा रखते हैं। यह इच्छा दबायी नहीं जा सकती और दबानी चाहिए भी नहीं। भाई हॉर्निमैन ने लोगों के लिए जो कुछ किया है, उसे वे कभी नहीं भूल सकते। उन्होंने लोगों में नया जीवन भरा है और नवीन आशाओं का संचार किया है। इसमें शक नहीं कि लोग शान्त रहे हैं, तो भी आशा है कि उन्हें भाई हॉर्निमैन के प्रति अपना शुद्ध प्रेम सार्वजनिक रूप में व्यक्त करने का अवसर दिया जायगा। गंभीर विचार के बाद सत्याग्रह-सभा ने कल रात को तय किया है कि अगले रविवार ता० ११ का दिन हड़ताल रखकर और पहले दिन शाम से बराबर २४ घंटे का उपवास करके और प्रत्येक घर में खानगी तौर पर प्रार्थना करके मनाया जाय।

पहली सूचना जो हड़ताल की है, बम्बई शहर पर लागू होती है। हम इस समय अशांति के काल से गुजर रहे हैं। ऐसे समय सर्वत्र हड़ताल घोषित करना ठीक नहीं मालूम होता। दूसरे स्थानों पर हड़ताल न करना वहाँ के लोगों के लिए आत्मसंयम का काम होगा। बम्बई शहर में भी हड़ताल स्वतंत्र धंधेवाले लोगों तक ही सीमित रहेगी। जो सरकारी अथवा खानगी दफ्तरों में काम करते हैं, उन्हें छुट्टी मिले तभी वे काम पर न जायें। काम बन्द करने के लिए किसी पर कोई दबाव न डाला जाय किसीके विरुद्ध जरा भी बलप्रयोग न किया जाय, क्योंकि जबर्दस्ती काम बन्द कराना तथा खुद काम बन्द करना हर्गिज नहीं

कहलाता। किसी पर बल करके हम उसे काम पर जाने से रोकें, तब तो यह उसी काम का सवाल करना रहता है। इसलिए जिस व्यापारी को अपनी दूकान खोलने की इच्छा हो अथवा जिस गाड़ीवाले को गाड़ी चलाने की इच्छा हो उस पर दबाव न डालने को हम बँधे हुए हैं। इतना ही नहीं, उसकी रक्षा करने को भी बँधे हुए हैं। मैं आशा रखता हूँ कि बम्बई में और अन्यत्र भी जहाँ-जहाँ स्त्री-पुरुषों को धार्मिक अथवा स्वास्थ्य-सम्बन्धी कारणों से कोई आपत्ति न हो, वे उपवास करेंगे और निमग्न धार्मिक चिन्तन में और अपने धर्मशास्त्रों में से सत्याग्रह के उदाहरण याद करके यह समझने के प्रयत्न में बितायेंगे कि सत्याग्रह का सच्चा स्वरूप क्या है, राष्ट्रीय प्रगति में एक सहायता के रूप में, राष्ट्रीय आदर्शों के विकास के लिए तथा भूख आदि हमारी वासनाओं पर अंकुश रखने के लिए उपवास की शक्ति कितनी है इस विचार बाद में करेंगे। अभी तो इतना ही बस है कि बम्बई शहर में अगले रविवार को पूरी तरह ऐच्छिक सत्याग्रही हड़ताल रखें और दूसरे सब स्थानों में भी उपवास रखें और शांत प्रेम-वृत्ति से खानगी प्रार्थना और चिन्तन करें। ऐसा करने से हम अपनी इज्जत बढ़ायेंगे और भाई हॉर्निमैन को जल्दी पा सकेंगे।

५-५ १९

(ख)

हड़ताल घोषित करना कोई गजब की बात नहीं है। उसके समर्थन में मजबूत कारण चाहिए। इस पत्रिका में उन कारणों का विचार करेंगे। बम्बई के नागरिक हॉर्निमैन के प्रति अपने गहरे प्रेम का ठोस प्रमाण देने के लिए अधीर हो उठे हैं। हड़ताल द्वारा वे कारगर रूप में यह प्रमाण दे सकते हैं। उनकी भावनाओं की उसमें परीक्षा हो जायगी। फिर हड़ताल राष्ट्रव्यापी शोक प्रदर्शित करने के लिए भारत का पुराना साधन

है। इसलिए हॉर्निमैन के निर्वासन से हुए गुस्से को हम हड़ताल के जरिये जाहिर कर सकते हैं। सरकार के कृत्य के प्रति सख्त नाराजगी प्रदर्शित करने का भी हड़ताल ही सबसे उत्तम उपाय है। राष्ट्र का मत प्रकट करने के लिए विराट् सभाएं करने की अपेक्षा यह अधिक असंदिग्ध साधन है। इस प्रकार हड़ताल से हम तीन उद्देश्य पूरे कर सकते हैं। प्रत्येक उद्देश्य इतना महान् है कि हम पर यह आरोप नहीं लगाया जा सकता कि हड़ताल घोषित करने में हमने अतिशयता की है।

मगर इतना साफ है कि उपर्युक्त हेतुओं में से एक भी सिद्ध नहीं होगा, यदि लोगों की नाराजगी के डर से अथवा शारीरिक जोर-जबर्दस्ती से हम काम बंद करा देंगे। यदि हमने आतंक जमाकर काम बन्द कराया और यह भाई हॉर्निमैन को मालूम हुआ, तो इससे वे नाखुश और दुखी हुए बिना नहीं रहेंगे। साथ ही ऐसी बनावटी हड़ताल से सरकार पर हम कुछ भी असर न डाल सकेंगे। बलात् करायी गयी हड़ताल सत्याग्रही हड़ताल कहला ही नहीं सकती। कोई भी वस्तु सत्याग्रह तभी कहलाती है, जब उसमें हेतु की, साधनों की और साध्य की शुद्धता हो। इसलिए मैं आशा रखता हूँ कि किसी भाई या बहन को काम बन्द करने की अनिच्छा हो उसे कोई दबाव न देगा; इतना ही नहीं बल्कि उसे किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप अथवा हानि के विरुद्ध आश्वासन दिया जायगा। एक भी मनुष्य को काम बन्द रखने को मजबूर किया जाय, इसके बजाय तो मैं यह चाहूँगा कि बम्बई शहर में रविवार को लोग अपना काम बन्द न रखें और संचालक हँसी के पात्र न बनें। बम्बई में रविवार को किसी भी प्रकार का ऊधम न होने देने के लिए ही सार्वजनिक सभा का विचार छोड़ दिया गया है और सबको अपने अपने घरों में रहने की सलाह दी गयी है। सारी सत्याग्रही प्रवृत्तियाँ धार्मिक वृत्ति से चलनी चाहिए। इसीके लिए मैंने चौबीस घंटे का उपवास करने और दिनभर धार्मिक क्रिया में बिताने का सुझाव दिया है। मैंने आशा रखी है कि परिवार के सभी आदमी बच्चे और नौकर तक इस धर्मक्रिया में हिस्सा लेंगे। हिन्दुओं को भगवद्

गीता पढ़कर सुनायी जाय, स्पष्ट उच्चारण के साथ सारी गीता पढ़ने में चार घण्टे लगते हैं। उसके बजाय अथवा अलावा अन्य हिन्दू धार्मिक पुस्तकें भी पढ़ी जा सकती हैं। मुसलमानों और दूसरे लोगों को अपने अपने धार्मिक ग्रंथ पढ़कर सुनाये जायें। यह दिन प्रह्लाद, हरिश्चन्द्र, मीराबाई, इमाम हसन तथा हुसेन, सुकरात और दूसरे महान् सत्याग्रहियों की कथायें पढ़ने और सोचने में बिताया जाय। भाई हॉर्निमेन किस प्रकार हमारे प्रेमपात्र हैं, यह भी इकट्ठे हुए कुटुम्बीजनों को समझाना उचित होगा। मुख्य बात यह याद रखनी है कि अगला रविवार हम ताश या चौपड़ खेलने में, जुआ खेलने में अथवा केवल आलस में न गँवा दें, परन्तु इस प्रकार बितायें जिससे राष्ट्र-सेवा करने की हमारी योग्यता बढ़े। मैं आशा रखता हूँ कि अच्छी स्थितिवाले अमीर परिवार गरीब अथवा अकेले पड़ोसियों को इस धार्मिक क्रिया में भाग लेने के लिए निमन्त्रित करेंगे। भाईचारे की वृत्ति बयान से बढ़ने से नहीं, परन्तु ऐसे काम करने से विकसित होती है।

कालबादेवी रोड के एक भाई मोतीलाल शामजीभाई बजेरी अभी अभी मेरे पास आकर मुझसे कहते हैं कि अगले रविवार की हड़ताल की घोषणा के समाचार प्रकाशित होने से पहले उन्होंने अपने यहाँ विवाह के निमन्त्रण जारी कर दिये हैं। उन्होंने मुझे यह भी बताया कि उस दिन बहुत-सी शादियाँ होंगी। भाई मोतीलाल की बहुत ही इच्छा है कि खुद और उनके मित्र इस राष्ट्रीय दिवस के मनाने में भाग लें। ऐसे लोगों को मेरी सलाह है कि विवाह-विधि का जो धार्मिक भाग है, वह भले ही निपटा लिया जाय परन्तु भोजन-समारोह और दूसरे बाहरी धूमधाम के लिए स्थगित रखे जायें। भाई हॉर्निमेन के प्रति भाई मोतीलाल का देशभक्तिपूर्ण प्रेम इतना है कि उन्होंने मेरी यह सलाह एकदम मान ली है। उसे मैं उनके जैसी स्थितिवाले सभी के सामने स्वीकार करने के लिए रख रहा हूँ।

४-५-१९

(च)

अगले रविवार को हड़ताल उपवास और प्रार्थना करके लोग सत्याग्रही ढंग से सरकार को यह बता देना चाहते हैं कि सरकार अपने सैनिक-बल से देश में संतोष स्थापित नहीं कर सकेगी। जब तक रौलट कानून रद्द नहीं कर दिये जाते, जब तक भाई हॉर्निमैन जैसे लोगों को, जो सरकार के ऐसे कृत्यों के विरुद्ध निर्दोष शोर मचा रहे थे दबा देने की सरकार कोशिश करती रहेगी तब तक सरकार के प्रति सच्ची प्रीति संभव नहीं। इतना ही नहीं बल्कि अप्रीति बढ़ेगी। दुनियाभर में सच्ची शान्ति का आधार तोप-बन्दूक नहीं बल्कि शुद्ध न्याय ही होता है। सरकार एक तरफ से अन्याय करे और दूसरी ओर अपने शस्त्रबल से उसका बचाव करे, तब सरकार के ये कृत्य उसका क्रोध सूचित करते हैं। इससे तो उसके अन्याय में वृद्धि ही होती रहती है। लोग भी सरकार की ऐसी करतूतों से क्रोध में आकर हिंसा का आश्रय लें तो परिणाम दोनों के लिए बुरा होता है और परस्पर द्वेषभाव में वृद्धि होती है। परन्तु जब-जब सरकार के कुछ कृत्य लोगों को अन्यायपूर्ण प्रतीत हों तभी उसके विरुद्ध वे अपनी कष्ट-सहन द्वारा अपनी सख्त नाराजगी जाहिर करें तो सरकार को झुकना ही पड़ेगा। यह सत्याग्रह का तरीका है। अगले रविवार को अपनी इस प्रकार की नाराजगी शुद्ध रूप में जाहिर करने का बम्बई के लोगों को अवसर मिलेगा।

स्वेच्छा से और किसी दबाव के बिना की गयी हड़ताल लोगों की नाराजगी प्रकट करने का एक सबल साधन है। परन्तु उपवास उससे भी बलवान् है। लोग जब धार्मिक वृत्ति से उपवास करते हैं और अपने दुःख की पुकार ईश्वर के सामने रखते हैं, तब उन्हें अचूक जवाब मिलता ही है। कठोर-से-कठोर हृदय पर भी उसका असर होता है। सभी धर्मों में उपवास को महासंयम माना गया है। जो स्वेच्छा से उपवास करते हैं, वे उससे नम्र बनते हैं और शुद्ध होते हैं। शुद्ध उपवास बड़ी कारगर प्रार्थना है। लाखों मनुष्यों का स्वेच्छापूर्वक निराहार रहना कोई छोटी-सी बात नहीं

है। सत्याग्रही उपवास ऐसा ही उपवास है। इससे व्यक्ति और राष्ट्र दोनों ऊपर उठते हैं। इसमें सरकार पर अनुचित दबाव डालने का ज़रा भी इरादा नहीं होना चाहिए। परन्तु हम देखते हैं कि बहुत-से अच्छे कार्यों की तरह इस उपवास का भी दुरुपयोग होता है। हमारे देश में देखा जाता है कि जब तक उनकी माँग न मिल जाय, तब तक भिखारी उपवास करने की धमकी देते हैं उपवास करते भी हैं अथवा उपवास करने का ढोंग करते हैं। यह दुराग्रही उपवास कहलाता है। इस प्रकार का उपवास करनेवाले लोग अपने-आपको नीचे गिराते हैं। ऐसे आदमियों को उपवास करने देना ही उत्तम मार्ग है। ऐसे उपवासों से डरकर किसी माँग को स्वीकार करना गलत हुआ है। ऐसा न हो, तो अनुचित माँगें मनवाने के लिए भी लोग उपवास करेंगे। कोई काम न्यायपूर्ण है या नहीं, इसका निर्णय करने का प्रश्न आ जाय, वहाँ अन्तरात्मा की आवाज़ से नियंत्रित हुई बुद्धि के सिवा और कोई साधन नहीं है। इसलिए यह न समझा जाय कि अगले रविवार के उपवास का हेतु किसी भी तरह से सरकार पर दबाव डालना है।

७-२-'२१

(ट)

कल सम्पूर्ण शान्ति रखकर बम्बई ने बड़ा यश सम्पादन किया है। नागरिकों ने हड़ताल रखकर बता दिया है कि सत्याग्रह का इतना भाग वे समझ गये हैं। उन्होंने लार्ड विलिंग्डन का सच्चा आदर किया है और सरकार को दिखा दिया है कि उनके निर्वाचन की वे निन्दा करते हैं। बम्बई ने सारे भारत के लिए अच्छा उदाहरण पेश किया है। कल कुछ दूकानें खुली थीं। यह सत्याग्रह की दृष्टि से बम्बई के लिए गर्व करने की बात है। इससे सिद्ध होता है कि हड़ताल स्वेच्छापूर्वक थी। इस अद्भुत प्रसंग की सफलता के सब भागी हैं। परन्तु श्री विट्ठलदास जेराजाणी के नेतृत्व में स्वयंसेवकों द्वारा अपना काम शान्ति रूप में सम्पन्न करना मुख्य है।

हड़ताल का विचार शुरू हुआ, तभी से उन्होंने अपना कार्य आरम्भ कर दिया था। उनके प्रयत्नों का परिणाम हमने कल देख लिया। पुलिस का भी हमें आभार मानना चाहिए। यदि विरोधी स्वरूप के सैनिक प्रदर्शन किये जाते, तो लोग उत्तेजित होते और शान्ति कायम रखने का काम बड़ा कठिन हो जाता।

जो लोग स्वराज्य भोग रहे हैं या स्वराज्य का उपभोग करना चाहते हैं, उनमें नीचे के चार गुण होने चाहिए :

१ आत्म-रक्षा के लिए उन्हें पुलिस की रक्षा की कम-से कम जरूरत होनी चाहिए और पुलिस और लोगों में इत्तहाद होना चाहिए।

२ जेल में कैदियों की संख्या कम-से-कम हो।

३ अस्पतालों में बीमारों की संख्या कम-से-कम हो।

४ कानूनी अदालतों को कम-से-कम काम हो।

जहाँ लोग मारकाट करते हैं, अपराध करते हैं और अपनी इन्द्रियों पर काबू नहीं रखते और कुदरत के नियमों का भंग करके रोगी बनते हैं और आपस में झगड़े करके अदालतों में जाते हैं, वहाँ लोग मुक्त नहीं, परन्तु बन्धन में हैं। जब भारत बम्बई के प्रयोग को जीवन की एक स्थायी वस्तु के रूप में स्वीकार करेगा, तब स्वराज्य और स्वातंत्र्य का पहला पाठ सीखेगा।

१२-५-१९

०

शब्दानुक्रम

हमारे कुछ प्रकाशन

शिक्षण विचार (विनोबा)

शिक्षा के सम्बन्ध में मौलिक और क्रान्तिकारी विचार। आज की शिक्षा के मूल बदले बिना देश को स्वराज्य का पूरा आनन्द नहीं मिल सकता। चौथा परिवर्धित संस्करण। पृष्ठ १८४ मूल्य २५ ।

भूदान-गंगा (विनोबा)

भूदान-यज्ञ-आन्दोलन के आरम्भ १८ अप्रैल '५१ से ७ मई '५७ तक की ६ साल की पद-यात्रा के महत्त्वपूर्ण प्रवचनों का संकलन। छह खंडों में प्रकाशित। हरएक में पृष्ठ लगभग १ । छहों खंडों का मूल्य ९ । एक खंड का १५ । मराठी और गुजराती में भी प्राप्य।

स्त्री-शक्ति (विनोबा)

स्त्री-पुरुष अभेद, समानता की कसौटी ब्रह्मचर्य सह-शिक्षण गृहस्थाश्रम तथा उसकी आधार-भूमि स्त्री की महत्ता और श्रेष्ठता पवित्रता संन्यास आध्यात्मिक अधिकार, वैराग्य आदि विषयों पर विनोबाजी के मौलिक तथा क्रांतिकारी विचारों का यह संकलन सबके मनन करने योग्य है। चौथा परिवर्धित संस्करण। पृष्ठ ११ मूल्य १ ।

लोकनीति (विनोबा)

वर्तमान राजनीति की त्रुटियाँ खराबियाँ तथा हिंसाधिष्ठित नीति वस्तुतः सर्वोदय-समाज या अहिंसक समाज में मानव की प्राण प्रतिष्ठा को कायम नहीं रख सकती। विनोबाजी ने राजनीति की जगह 'लोकनीति' का विचार प्रस्तुत किया है। उन्होंने सुव्यवस्थित रीति से बताया है कि भारत की संस्कृति और परम्परा में अहिंसक राज्य की क्या विशेषताएँ होंगी। तीसरा संस्करण एक दम नये सिरे से सम्पादित हुआ है। मूल्य २ । उर्दू मराठी पंजाबी तमिल आदि भाषाओं में भी प्राप्य।

आत्मज्ञान और विज्ञान (विनोबा)

विज्ञान और आत्मज्ञान मिलकर मामी-भाग होता है। विज्ञान की उन्नति के इस युग में आत्मज्ञान का कितना महत्त्व है और दोनों के समन्वय की कितनी आवश्यकता है यह विनोबाजी ने अपने अनुभव और वस्तुनिरीक्षण से सिद्ध किया है। दार्शनिक और वैज्ञानिक अनुभूतियों से परिपूर्ण। दूसरा संशोधित संस्करण मूल्य १० ।

मोहब्बत का पैगाम (विनोबा)

जम्मू-कश्मीर की पदयात्रा में विनोबाजी ने वहाँ लगभग १५० प्रवचन किये। इन प्रवचनों में बाबा ने कश्मीर के सौंदर्य की सराहना के साथ साथ सियासी और मजहबी मसलों पर जो संदेश दिया है, वह हृदय को सीधा छूता है। तीसरा संस्करण प्रेस में। पृष्ठ ४५ । मूल्य २५ सजिल्द ३ । उर्दू में भी प्राप्य है ।

समग्र ग्राम-सेवा की ओर (तीसरा खंड)

(धीरेन्द्र मजूमदार)

यह ग्रंथ का तीसरा खंड है। इसमें भारत की आजादी से लेकर अब तक की शासकीय तथा रचनात्मक प्रवृत्तियोंका सूक्ष्म वर्णन तथा सन् '४५ से बापू-मिलन तक तथा स्वराज्य-प्राप्ति के बाद के १० वर्षों का जीवित इतिहास है। पृष्ठ १५१। सजिल्द पुस्तक का दाम २५ । प्रथम दोनों खंड भी उपलब्ध हैं। सजिल्द का मूल्य १५ ।

सर्वोदय-दर्शन

(दादा धर्माधिकारी)

(तीसरा संशोधित संस्करण)

सर्वोदय की सरल हृदयस्पर्शी एवं मनोमुग्धकारी व्याख्या। पढ़ने के बाद सर्वोदय का स्पष्ट चित्र सामने आ जाता है और कोई भ्रम नहीं रह जाता। तीसरा संस्करण पृष्ठ १९६, सजिल्द पुस्तक का मूल्य ३ । मराठी और गुजराती में भी प्राप्य।

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी